

OM
THE RAMAYANA
OF
VALMIKI

AYODHYA KANDA

(NORTH-WESTERN RECENSION)
CRITICALLY EDITED FOR THE FIRST TIME
FROM ORIGINAL MSS.

BY

PI. RAM LABHAYA M. A.
PROFESSOR OF SANSKRIT KHALSA COLLEGE,
AMRITSAR.



090
LAB/R

11351E/RP/R
R. R. 2

JANUARY 1928.

{ First Edition }
{ 1928 Edition }

{ Price 7-8-0. }

श्री
दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला

अनेक विद्वानों की सहायता से

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित ।

धन्वाङ्क ७ ।

श्रीमद्दयानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ७

❀ ओम् ❀

वाल्मीकीय-रामायणम्

अयोध्या-काण्डम्

(पश्चिमोत्तरशालीयम्)

सम्पादक

पं० रामलभाया एम. ए.

प्रो० खालसा कालेज, अमृतसर ।

आर्य्य संवत् १९६०अ१३०२८ ।

विक्रम सं० १९८४ ।

सन् १९२३ ई० ।

दयानन्दाब्द १०३ ।

प्रथम संस्करण १००० प्रति

मूल्य ७१) ८०



Printed by Pt. MAHAVIR PRASAD
MANAGER VIDYA PRAKASH PRESS, CHANGAR ROAD, LAHORE.
AND PUBLISHED BY
THE RESEARCH DEPARTMENT, D. A. V. COLLEGE, LAHORE.



ग्रन्थमाला के सम्पादक का निवेदन ।

पाँच से कुछ अधिक वर्ष हुए जब ६० राम छमाया पत्र० ६० मे मेरे साथ कुछ दिनों के लिये निवास किया था । उन दिनों परस्पर विचार के अनन्तर हमने निश्चित किया कि ६० राम छमाया दयानन्द काठेज के लिये वात्सीकीय रामायण की पश्चिमोत्तर शाखा का संपादन करेंगे । उस समय तक इस रामायण का एक भी हस्तलेख हमारे नहीं था ।

मेरी सम्मति से दिसम्बर १९३१ में ६० राम छमाया कैथल गये । परछोकगत छाछा रामकृष्ण बकील उन दिनों कैथल में थे । उन के संग्रह से ६० जी रामायण के दो प्राचीन ग्रन्थ छापे । यही रामायण के संशोधन का आरम्भ था । तत्पश्चात् चार वर्षों में पश्चिमोत्तर रामायण के भिन्न २ काण्डों के कोई २०० ग्रन्थ एकत्र कर लिये गये । इन में से पर्याप्त ग्रन्थ प्राचीन संस्कृत लिखित पुस्तकों के एकत्र करने वाले महाशय भजन छाल के परिश्रम से हमारे पास आये हैं । समय २ पर मैंने इन सब का तुलनात्मक ढंग से अध्ययन किया है । उस से मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ, कि इस शाखा के यथोचित सम्पादन के लिये कई विद्वानों के मूदि परिश्रम की आवश्यकता है । ६० राम-छमाया ने अपना काम उस समय तक प्राप्त सामग्री द्वारा कड़ी सावधानी से किया था । वे अथोप्याकाण्ड के अतिरिक्त बाळ, आरण्य और किष्किन्धा काण्ड के कुछ अंश भी सम्पादन कर गये थे । धन के अत्यन्ताभाव में भी मैंने अथोप्याकाण्ड तथा कथञ्चिदं छपवा दिया है । अथोप्याकाण्ड के अन्त में १० अत्यन्तोपयोगी सूचियाँ छपी गई हैं । इनको मैंने अपने निरीक्षण में रित्तर्च विभाग के शास्त्री ६० प्रेमनिधि जी से तयार करवाया है । ६० रामछमाया के बाळसा काठेज अमृतसर में नियुक्त होने के पीछे पाँचवें भाग का मुद्रण ६० प्रेमनिधि जी ने ही कराया है । उन्हीं ने ही ६० रामछमाया की वेस कापी छोपी है ।

नई सामग्री की उपस्थिति में मैंने यही उचित समझा है कि अधिक धन एकत्र करके और पूरी सामग्री को काम में लाकर ही आदि काण्ड का प्रकाशन आरम्भ करना चाहिये । यद्यपि रामायण के काम की प्रशंसा प्रो० सिल्वरू लेवी, डा० कीथ, प्रो० हॉपकिन्स आदि बड़े २ विद्वानों ने की है, परन्तु धन किसी कोने से भी नहीं आया । पञ्जाब गवर्नमेंट तो इस विषय में अत्यन्त ही उदासीन रही है । यद्यपि अपने रिसर्च विभाग में सर जान मेनार्ड के आने पर सहायता की कुछ आशा हुई थी, पर वह सफल नहीं हुई । ऐसी अवस्था में एक ठुक परमात्मा की ही सहायता की आशा है । जब तक वह सहायता किसी निमित्त द्वारा न पहुँचेगी, अगले काण्डों का छापना बन्द ही रहेगा ।

१५ नवम्बर १९२७ }
लाहौर ।

भगवद्भक्त

वाल्मीकीय रामायणम्



ABBREVIATIONS.

N=Nil=(नास्ति)

O=Omission (Psychological).=(त्यक्तम्)

from 2nd. fasciculus onwards. (द्वितीयभागप्रारम्भ) ।

पू=पूर्वार्ध=(1st. half of a verse).

उ=उत्तरार्ध=(2nd. half of a verse).

व=वङ्गशास्त्रीयं बाल्मीकीय-समाखण्डम् ।

(Gorresio's Edition).

दा=दाक्षिणात्यशास्त्रीयं बाल्मीकीय-समाखण्डम् ।

(Gujrati Press Edition Bombay, 1913)

DESCRIPTION of a MS.

This Ms. has been recently purchased for the Research Library D. A. V. College Lahore.

It is written on country paper; in Devanāgarī script; is generally correct; agrees with ^१वङ्ग; about 100 years old; obtained from Bahāvalpur state.

ॐ श्रीगणेशाय नमः

• श्रीराम •

वाल्मीकीय-रामायणम्

श्रीशोच्या-काण्डम्

(पश्चिमोत्तरशास्त्रीयम्)

THE RAMAYANA

OF

VALMIKI

(NORTH-WESTERN RECENSION)

CRITICALLY EDITED FOR THE FIRST TIME
FROM ORIGINAL MSS.

BY

PANDIT RAM LABHAYA M. A.
SOMETIME RESEARCH SCHOLAR AND PROFESSOR
IN SANSKRIT, UNIVERSITY OF THE PANJAB,
LAHORE.

AYODHYA KANDA. FASC. I.
PUBLISHED BY THE RESEARCH DEPARTMENT
D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

Printed by ~~Shri~~ Das, Manohar Lal Press, Lahore.

APRIL 1928.

First Edition
1000 Copies.

व्यय १९६०

Price 1—8—0

1. MANUSCRIPT MATERIAL.

All the MSS., collated for the present edition, are written, on country paper, in Devanāgarī script.

1. कै—about 100 years old, almost correct, writes च for न very often.
2. ल—about 100 years old, almost correct, agrees with कै.
3. म—about 100 years old, incorrect at many places, agrees with कै.
4. पं—dated Vikrama samvat 1808, incorrect at many places, sometime agrees with कै.
5. झ—dated Vikrama samvat 1875, writes च for न, very often; obtained from Alvara State.
6. कु—dated Vik. samvat 1885, writes च for न, and ल for श, very often; transcribed in kurukṣetra.
7. गु—dated Vik. sam. 1512, writes न for न often, and names बालकाण्ड as बालचरित and includes it in the Ayodhyā kāṇḍa; loan from Bh. Or. R. I. Poona. No. 123/1884-87.
8. चं—dated Vikrama samvat 1924, copied, by my maternal grandfather, from an old MS.
9. दी—dated Vikrama samvat 1869, obtained from Dirghapur (Bharatpur State).
10. रा—about 200 years old, obtained from near about Rāma Mandira (Nasik).
11. पू—about 150 years old, loan from Bh. Or. Research Institute, Poona. No. 181, Vish. col.
12. पू—about 200 years old loan from Bh. Or., Research Institute, Poona. No. 34/1883-84.

2. COLLATION.

MS. No. 1. is the basic one, collated from the beginning to the end of the Kāṇḍa.

MSS. No. 2 and 3, collated from the 16th sarga on-wards.

MS. No. 4. left out where found too divergent.

MSS. No. 5 and 6 collated from the 5th sarga on-wards, since the 1st four sargas are not to be found therein.

MSS. No. 7-12. collated for the 1st four sargas with a view to determine their affinity to the main Recension, and to enable scholars to judge their relative value for the future work on Rāmāyaṇa. These MSS. are too divergent on-wards.

3. SOURCES OF MSS.

MS. No. 1 and 6. were a loan from L. Rama Kṛṣṇa Pleader Kaithal, but later on purchased for the Library after his death.

MS. No. 2. loan from Mahanta Hari Dass, through Pt. Bhagat Rama B.A. Librarian Medical College, Lahore.

MSS. No. 3-5,9,10 belong to the D.A.V. College Research Library.

4. CLASSIFICATION OF MSS.

1. कै, छ, म—represent the main group.
2. अ, कु—represent the sub-group and, at times, exhibit a tendency to coincide with the Bengal version.
3. वं—stands midway between कै, छ, म group on one side and अ, कु group on the other.
4. सु—represents a strange Sub-Recension and preserves divergent readings.
5. वी वूं, चं, घ, पू—represent another Sub-Recension.

5. DIACRITICAL SIGNS & ABBREVIATIONS

- * indicates doubtful authenticity, when prefixed to

hemistiches, but when appended to readings, it indicates obscurity or anomaly.

? indicates uncertainty.

() indicates emendation, except in the case of uncommon portions of the readings, that, for the sake of brevity, have been enclosed within such brackets along with their respective MSS., in the critical notes.

[] when placed round readings, indicates restoration; but when placed round hemistiches, verses, and passages, it indicates insertion.

A signifies addition on-wards.

O + नास्ति + (त्यक्मस्ति or only त्यक्म्) = omission.

6. METHOD OF DEGREE FIGURES.

The degree figures invariably refer to those to which they have been appended, but when they repeat, they refer to the intervening unmarked portion as well, whenever there is any.

7. CRITICAL PRINCIPLES FOLLOWED IN THE CONSTITUTION OF THE TEXT.

The Eclectic Method has been avoided as far as possible. Emendations and Restorations have been proposed in rare cases only.

8. PROSPECTUS.

A detailed introduction will be given after the publication of the last fasciculus of this Kāṇḍa.

It is intended to add various important Indices and Appendices at the end of every Kāṇḍa.

9. EPILOGUE.

Despite my strenuous efforts, the printing errors have persisted. These have been corrected and referred to in the errata.

Research Library,
D. A. V. College, Lahore. }

Rāma Lathāyā

१. हस्तलेख सामग्री ।

समस्त हस्तलेख, जो प्रस्तुत संस्करण के लिये मिलाये गये, देही कागज पर देवनागरी में लिखे हुए हैं ।

१. कै—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'त' को बहुधा 'च' लिखता है, कैयल से प्राप्त ।
२. क—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'कै' से मिलता है । लाहौर से प्राप्त ।
३. म—लगभग १०० वर्ष पुराना, बहुधा अशुद्ध, 'कै' से मिलता है । मच्छीदहदा लाहौर से प्राप्त ।
४. पै—वि० सं० १८०८ का, बहुधा अशुद्ध, कई स्थलों में कै से मिलता है । पञ्चवटी से प्राप्त ।
५. अ—वि० सं० १८७५ का, 'ब' को बहुधा 'व' लिखता है । अलवर से प्राप्त ।
६. कु—वि० सं० १८८५ का, 'ब' को 'व' और 'श' को बहुधा 'स' लिखता है । कुवक्षेत्र से प्राप्त ।
७. शु—वि० सं० १५१२ का, प्रायः 'ग' को 'प्र' लिखता है । बालकाण्ड को बालचरित लिख के अयोध्याकाण्डान्तर्गत देता है । मण्डारकर प्राच्य अनुसन्धान समिति पूना से मांग । हस्तलेख गुजराती है । संख्या १२३/१८८४-८७ ।
८. बं—वि० सं० १९२४ का, मेरे नाना की एक पुस्तक हस्तलेख से लिखी प्रति । अपने मातुल पं० गोविन्दराम बकील 'बनियोद' से प्राप्त ।
९. दी—वि० सं० १८१९ का, दीर्घपुर (भरतपुर) से प्राप्त ।
१०. रा—लगभग २०० वर्ष पुराना, राममन्दिर, पंचवटी, वार्षिक के कमीष से प्राप्त ।
११. रू—लगभग १५० वर्ष पुराना, मण्डारकर० प्रा० ख० पूना से मांग । संख्या १८१, विद्यामन्थन संग्रह ।

१२. पूं—लगभग २०० वर्षे पुराना, म० प्रा० ख० पना से मांग । संख्या ३४/१८८३-८४ ।

२. हस्तलेखों के प्राप्तिस्थान ।

हस्तले० संख्या १, ६ का० रामकृष्ण प्लीडर कैथल से मांगे गये थे । उन की मृत्यु के पश्चात् दयानन्द महा० के अनुसन्धान पुस्तकालय के लिये मोल लिये गये ।

हस्तले० सं० २ श्री पण्डित भकराम बी० ए० पुस्तकाग्यज्ञ, मैडीकल कालेज लाहौर द्वारा महन्त हरिदास से मांगा गया । हम महन्त जी, वा पण्डित जी के बड़े कृतज्ञ हैं ।

हस्तले० सं० ३-५, ९, १० दयानन्द कालेज अनुसन्धान पुस्तकालय के हैं ।

शेष के सम्बन्ध में पहले बता दिया गया है ।

३. हस्तलेखों का विभागकरण ।

१. कै, छ, म—मूल शाखा का आदर्शविभाग दिखाते हैं ।
२. अ, कु—गौणविभाग है । इसका झुकाव अनेक स्थानों पर बङ्गशाखा की ओर है ।
३. पं—कै, छ, म तथा अ, कु के मध्य में ठहरता है । कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर झुकता है ।
४. शु—विलक्षण गौणविभाग दिखाता है । इसके पाठ बड़े मिला हैं ।
५. वी, पूं, बं, रा, पूं—एक और गौणविभाग दिखाते हैं । सम्भव है इनकी एक नयी मूलशाखा ही हो ।

४. हस्तलेखों के पाठों का मिश्रण ।

हस्तले० संख्या १ हमारा आदर्श है । काण्वात्म से अन्त तक मिश्रण गया है ।

हस्तले० सं० २, ३ पीठे मिलने के कारण लोहहर्षं सर्ग से मिळाये गये ।

हस्तले० सं० ४ अत्यन्त विभिन्न स्थानों में नहीं मिळायी गयी ।

हस्तले० सं० ५, ६ पाँचवें सर्ग से सर्ग १६ । १६ ॥ तक मिळाये गये ।

इन में पहले चार सर्ग नहीं हैं ।

हस्तले० सं० ७-१२ पहले चार सर्गों में उनका मूलशास्त्र से सम्बन्ध जानने के लिये मिळाये गये । इस का और भी प्रयोजन था, अर्थात् रामायण पर काम करने वाले भावी विद्वानों को उन के तुलनात्मक मूल्य के जानने में सुविधा हो । ये हस्तले० आधे बहुत विभिन्न हैं ।

५. चिन्ह और संक्षेप ।

* श्लोकार्थों के पहले सन्देह का घोटक है । पदों के साथ पाठ का संशय बताता है ।

! अनिश्चय प्रकटाता है ।

() सम्भावित संशोधन बताता है । पर जब टिप्पण में पाठपदों के मध्य में हस्तलेखों के लङ्के के साथ आया है, तो उक्त २ हस्तलेख का पहले पाठ से अस्वाभाविक भाग बताता है ।

[] अब पदों के साथ है, तो त्रुटि को पूरित करता है । पर जब श्लोकार्थों, एक वा अनेक श्लोकों के साथ है, तो प्रक्षेप बताता है ।

A आगे को श्लोकों का प्रक्षेप बताता है ।

⊙ +नस्ति+ (एकग्रन्थि 'अथवा' एकग्रन्थि) = पाठ का झूट जाया ।

६. बटे वाले अंकों का प्रयोग ।

बटे वाले अङ्क सर्वदा उन्हीं पदों की बताते हैं, जिन के साथ कि वे अङ्कों के बंधे हैं । परं जब एक ही अङ्क दोहराया जाता है, तो उन अनेक अङ्कित मन्थर पदों की भी साथ ही बताता है, जहाँ कहीं कि वे आजायें ।

७. ग्रन्थ—सम्पादन का प्रकार ।

अहां तक सम्भव था, विभिन्न वर्णों के हस्तलेखों के पाठों को चुन २ कर एकत्र मूलपाठ में देने से संक्षेप किया गया है । अर्थात् हस्तलेखों का पाठ ही मूल में है । सम्भावित, संशोधन वा पूर्तियां कहीं २ ही प्रस्तावित की गयी हैं ।

८. ग्रन्थ में और क्या होगा ?

इस काण्ड के अन्तिम भाग के साथ एक सुविरचित भूमिका होगी । कई अत्यन्त आवश्यक परिशिष्ट और सुचियां देने का भी विचार किया गया है ।

९. क्षमा याचना ।

अत्यन्त यत्न करने पर भी कुछ अशुद्धियां रह गई हैं । यह अशुद्धियां शुद्धिपत्र में ठीक की गयी हैं ।

अनुसन्धान पुरतकाल्य } रामलभाया
दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर । }



शुद्धिपत्रम् ।

पृष्ठ पङ्क्ति अशुद्धम्	शुद्धम्
१४—३ पूजयामास्तुस्तदा	पूजयामास्तुस्तदा
२१—२ भ्रत्वा	भ्रुत्वा
२२—१ रञ्जिताः ^१	रञ्जिताः ^२
२५—८ ंगच्छतं	ंगच्छतां ^३
३१—२ तेषामाञ्जलि०	तेषामञ्जलि०
३८—१८ इषो भाविन्यामिषेजने	इषोभाविन्यामिषेजने
३९—१८ " "	" "
४२—११ विषेशां त०	विषेशान्त०
४४१—२ संकुळ	संकुळं
४५१—३ सितान्नं	सितान्न

४६॥-५	क	कै
४७॥-१	नंदन	०नंदन
४७॥-१	०वद्वनः	०वद्वनः
४८-४	सा ^२ -द्वर्शाथ ^२	सा ^२ द्वर्शाथ ^२
४९-१७	साऽसम्यपारे	साऽसम्यपारे
५१॥-३	तेनेदं	तेनेदं
५६-६	कथ	कथं
५६-३	थेनं	थेन
६२-१२	विष्टया	विष्टया
६४-३	शुक्लवासिनी	शुक्लवासिनी ¹⁷
७०-१५]] ⁴⁸
७१॥-५	अमिशाय्य	अमिशाय्य
७२-२०	रामशुणैरियम्	रामशुणैरियम्
७२॥-२	नहाविषा	महाविषा
७५-१	गर्हयिष्यन्ति	गर्हिष्यन्ति
८१॥-१	शोडशे	षोडशे
८४-६	श्वेतपुष्पाणि	श्वेतपुष्पाणि
८४-१५	प्रतीहारो	प्रतीहारो
८५-२०	दृश्यते	दृश्यते
८६-१६	रामसाह्वय	रामसाह्वय
८८-१५	०धोपमा	०धोपमाः
९०-६	०धारिभिः	०धारिभिः ⁵
९०-१५	महाह्वेन	महाऽह्वेन
९५-१	०म	०म
९६-७	रामो-महारथः	रामो महारथः
९६॥-१	हेमकौञ्ज	हेमकौञ्जं

* ओ३५ *

वाल्मीकीय-रामायणम् ।

* अयोध्या-काण्डम् *

[प्रथमः सर्गः]

कस्यचित्त्वथ कालस्य राजा दशरथः सुतम् ।
मरतं केकयीपुत्रं समाहूयेदमग्रवीर्यं ॥ १ ॥
अयं केकयरजस्यै पुत्रो वसति पुत्रक ।
त्वां नेतुमागतो वीर युधाजिन्मातुलस्तव ॥ २ ॥
तस्मान्मातामहं द्रष्टुमितोऽग्नेन सह त्वया ।
गन्तव्यं पुत्र पश्य त्वं पुरं मातामहस्य तत्र ॥ ३ ॥
भुत्वा दशरथस्यैतद्भरतः केकयीसुतः ।
गमनेऽर्थं मतिं चक्रे क्षत्रुप्रसहितस्तदा ॥ ४ ॥
भुत्वा हृतं तुं संग्राह्यं कैकेयेभ्यो नृपात्मजम् ।
मरतं चाप्यनुज्ञातं राज्ञीं राजीवलोचनम् ॥ ५ ॥

१ शु, वी, पं—कैकेयी० । पूं, चं, प—कैकेयी० । २ पूं, शु, पूं,
पू, वी, प—इदं वचनमग्र० । पं—अग्रवीर्यपुनर्दनाः ३ चं, शु, पूं,
प—कैकेय० । पूं, वी, पं—कैकेय० । ४ प—दातातुलजगती ।
५ प—ऽस्तदा । ६ चं, शु, पूं, पूं, वी, प—गच्छति । ७ प—दाशरथं
वाच्यं भवतः । ८ पूं—कैकयात्मजः । ९ वी—गमनाय । १० चं, शु,
पूं, प—तु हृतं ११ कै—केकयस्य । पूं, कैकेयेभ्यो । १२ चं, शु, पूं, पूं,
वी, प—चाप्यनुज्ञातं । १३ पूं, पूं, प—पत्न्या ।

प्रहृष्टा तत्र कैकेयी मुदा परमया युता ।
 चिन्तयामास गमनं भरतस्य महात्मनः ॥ ६ ॥
 गमने^१ च मतिं चक्रे तदा तस्य शुमाननीं ।
 गृहे^२ मातामहकुले सन्न्यस्तं मन्यते^३ हि सा ॥ ७ ॥
 न हि कश्चिद्विशेषो^४ मे^५ तस्मिन्वापीर्हं वीं गृहे ।
 स त्वभ्यनुज्ञाय नृपः सुतं सुरसुतोपमम् ॥ ८ ॥
 समानयच्च^६ कैकेयीं^७ तदा राजगृहं प्रति ।^८
 आपृच्छथे^९ पितरं^{१०} सोऽर्थे रामं चौल्लिष्टकारिणम् ॥ ९ ॥
 मातृभैवं महाबाहुः शत्रुघ्नसहितो ययौ^{११} ।
 अमात्यैर्बहुभिर्गुप्तो^{१२} रथैश्च शुभवाजिमिः^{१३} ॥ १० ॥
 पादातेनै च मुख्येन वृतः शतसहस्रैः ।
 स पित्रा समुपाघ्रायै परिष्वक्तश्च बाहुना ॥ ११ ॥

१४ पं—गमनेच । १५ च, कै—शुमान्नः । १६ शु—०ऽसुन्न्यस्तं ।
 वी—०सुन्न्यस्तं । पूं—०सत्यसंममते । पं—०मातामहे सम्यक् सम्यस्ते ।
 रा—गृहं मातामहकुलं समानं मन्यते । १७ पूं—०शेषस्तु । १८ कै—
 तस्मिन्वापेह । पं—तस्मिन्वास्तीह । १९ रा—वै । २० वी—वास्ति ।
 २१ चं—सम्मानयच्च । शु—समागतश्च । रा—समानयच्च । पूं—
 समानयच्च । पूं—जगाम सह । २२ शु—कैकेय्या । पूं—कैकेय्या ।
 पूं—कैकेयी । २३ पं—स राजा प्रेषयामास तदा शतपु[र्हं] प्रति ।
 २४ वी—आपृच्छा । २५ कै—नृपतिं । पं—कुशलं । २६ शु, पूं, वी, पं—
 भीमात् । २७ पूं—मातृभैव । २८ पूं, वास्ति (१) । २९ पूं—अमात्यैः ।
 वं—अमरं मातृकपुर्हं शत्रुघ्नैश्च वाजिमिः । ३० शु—पदातिना ।
 ३१ वी—सहस्रैः । ३२ वी—समुपाघ्रातः । कु, पूं, समुपाघ्रातः ।
 चं, पूं, रा—समनुवातः ।

मरतः सिंहासिन्धुः सप्तसुमन्तुः ॥ ११ ॥
 संतदा प्रसिद्धं वीरं मस्तं नवतां वीरं ॥ १२ ॥
 राजा दधरथो बभूवुषुषाच ज्ञानसंसदि ॥
 प्रस्थितस्त्वं नरवर आतासहैर्गुहं शुभम् ॥ १३ ॥
 संदेधं मृषु मे वत्स तं च कुर्याः समाहितः ॥
 शत्रुप्रसहितो गच्छ माताम्रहकुलं वियो ॥ १४ ॥
 स ते सहायो भविष्यामीति नित्यमनुमतः ।
 तथापि च प्रियवरः शत्रोभ्योऽपि परं वप ॥ १५ ॥
 आत्मवत्स क्वया भ्यता अष्टमो सप्तमं च ॥
 गुणपान्नाद्यैर्ब्रह्मस्वया इति परं वप ॥ १६ ॥
 न जहाति श्री-शुभ्रं क्वसम्बिदि ॥ १७ ॥
 संदेधमीमि वै भूयस्त्वं संदेधं मृषु मे हितम् ॥ १७ ॥

११ गु. पूं—सोकास्तं वच्छदपत्रिज्ञेन प्रवर्धितम् । १४ पूं, वी—प्रसिद्धं ।
 १५—प्रवर्धितं । १५ गु. सं, पूं, वी, व—वर्तुः । १६ व—उवाच राजा राजर्षि
 सन्नेहं मरतं प्रति । १७ सं, पूं, वी—कुलं । व—कुलं प्रति ।
 १८—पुत्रे शुभे । १८ गु. पूं—सप्त । १९ सं—कुर्याः सुखमाप्नुयात् ।
 गु. वी, व—कुलं । २० सं—शत्रो । २१ गु—वत्स । २२
 केचन के प्र पक्ष । २२ सं—तथा गुण । २३ सं—शत्रुभ्योऽपि
 सहा । २४ पूं—सहायता । २५ गु—स ते भूयाः संदेधो तव वीर्यं ।
 २६—स ते भूयाः संदेधो तव वीर्यं । पूं, वी—गु (वी—व) सं—
 संदेधो तव वीर्यं । पूं—व त्वां भूयाः संदेधो तव वि— । सं—
 भूयाः संदेधो तव वीर्यं । व—व तथापि संदेधो तव वीर्यं ।

तवै वैवै महामार्गे शत्रुमस्य च मानद्वै ।
 नित्यशर्षे त्वया कार्या शुभ्रषा मातुलस्य वै ॥ १८ ॥
 आर्यकस्यै च ते १ नित्यै कौले कालेऽभिवादने ॥
 व्रतचर्या च ते २ पुत्र कर्षव्या नियतात्मने ॥ १९ ॥
 ब्राह्मणेः सह धर्मात्मन् वासैः सन्निरुदाहृतैः ।
 काले काले यथोक्तं च ब्राह्मणानभिवादये ॥ २० ॥
 ब्राह्मणा हि भ्रियो मूलं पुरुषस्य शुभार्थिनः ।
 सहायार्थे च कर्तव्याः प्रणम्य नियतात्मना ॥ २१ ॥
 सर्वविद्यान्तगा धन्या ब्राह्मणा मङ्गलार्वाहाः ।
 देवाः पुत्रभवार्थं वै प्रजानां सुरसत्तमैः ॥ २२ ॥
 प्रेषिता मांशुपं लोकं भूमिदेवा इति भ्रतिः ३ ।

४६ शुं—तवैव च । ४७ शु, पूं, वी, पं—महामार्ग । चं, पूं, रा—महा-
 बाहो । ४८ चं—सौख्यदः । पूं—मानवा । ४९ पूं—नित्यं तस्य ।
 पूं—नित्यं शस्य । ५० रा—शु । ५१ कै—आर्यकस्य । पं—अर्यकस्य ।
 रा—आर्यकर्म । ५२ कै—कर्तव्यं । ५३ शु, चं, पूं, वी, रा—कार्यं ।
 ५४ शु, पूं—०वादिनं । ५५ शु, पूं—व्रतचर्याव्रते । वी—व्रतचर्यास्तुते ।
 पं—ब्राह्मचर्याव्रते । रा—व्रतचर्या त्वया । ५६ चं, पूं, वी, रा—वै
 यतात्मना । शु—वै जितात्मना । ५७ शु—ब्रवेयाः समुदाहृतः ।
 पं—ब्रवेयाः समुदाहरणं । पूं—ब्रवेये याः समुदाहृताः । वी—ब्रवेये याः
 समुदाहृताः । ५८ कै—ब्राह्मणांश्च यथोक्तमभिवादयः । शु, पूं—
 यकोके—०वाद्ये । वी, रा—०वाद्ये । रा—यथोक्तं तु० । ५९ पूं, वी,
 पं—कार्यम् । ६० चं—मङ्गला ब्राह्मणाः सदा । शु, वी, पं, रा—
 मङ्गल्य ब्राह्मणाः सदा । पूं—मङ्गल्य ब्राह्मणाः सदा । ६१ चं—
 मनुष्ये । ६२ कै, चं—डोके । ६३ कै—भ्रताः । पूं—सुभ्रतिः ।

तेभ्यः सर्वाणि शास्त्राणि वेदाभिं वदतां वरि ॥ २३ ॥
 अर्क्षं शर्क्षं महीक्षं च विधिर्वित् पुत्र धारय ॥
 अश्वपृष्ठे रथे चैव आर्यामं कुरु नित्यथैः ॥ २४ ॥
 गन्धर्वविद्यासुं तथी पारगो मव पुत्रक ॥
 अन्येष्वपि च शिल्पेषु यत्नः कार्यः सुतं त्वया ॥ २५ ॥
 शृणुमन्वीसितुं पुत्रं वृथी नार्हसि सर्वथी ॥
 कुशलप्रेषणं पुत्रं दूतैः कार्यं सदैव मे ॥ २६ ॥
 भुत्वौ कुशलिनं त्वाऽहं संदेस्यामि सप्तान्वयः ॥
 एवमुक्त्वा तु नृपतिर्मरुतं बाष्पगद्गद्म् ॥ २७ ॥
 व्याजहार महातेजा गम्यतां मा विचारय ॥
 सोऽभिवाद्य जितक्रोधो राजानं शिरसा तदा ॥ २९ ॥
 मातरं च महामार्गिः शत्रुमसहितस्तदी ॥
 र्षं रथौ नगीरं धीमान् बलेन परिवारितः ॥ २९ ॥

२४ शु, पूं—इत्तानि । वी—दैवतं । पं—श्रेयं च । २५ शु, पूं—वरा ।
 २६ पं—अर्क्षं शर्क्षं महार्थं । २७ रा—विधिर्वित् । २८ शु, पूं—पाठ्य ।
 वी—पारय । २९ रा—आर्यामं । ७० अं, पूं, रा—नित्यथा ।
 ७१ कै—गांधर्वं० । ७२ अं, पं, रा—तदा । ७३ अं, शु, पूं, वी, रा—
 परहं० ७४ । पं—अभ्यासितुं । ७५ शु—स्यातुं पुत्र । ७६ शु—नाम्बथा ।
 कै, वी, रा—सर्वथा । ७७ पूं—कुशाळं० । ७८ अं—वापि दूतैः कुर्याः
 सदैव मे । शु, पूं—दूतैः कुर्यामेव सदैव मे । वी, रा—वापि दूतैः
 कार्यं सदैव हि (रा—मे) । ७९ वी—सुतं । ८० अं, वी—हि त्वा । शु,
 पूं, रा—हि त्वां । ८१ अं, पूं, वी, रा—मंदिष्यामि । ८२ शु, अं, पूं, वी,
 रा—स । ८३ रा—सप्तान्वयं० । ८४ शु, पूं, वी—महामार्गं । ८५ कै—
 वस्तथा । ८६ शु—मथवी । ८७ पूं, वी—मगर्षं ।

तत्राच्छुगन्वमन्त्रं जैनैः पुरनिवसिभिः ।
 रामेण च महामांगो लक्ष्मणेन च श्रीर्विवान् ॥ ३० ॥
 पुरस्त्वो ययौ धीमान् श्रीशिकिर्मेधौ हि तस्य सौ ॥
 अभिवाद्य रामं मत्तः परिभ्रज्य च लक्ष्मणम् ॥ ३१ ॥
 न्यबर्त्सयैत धर्म्म्यात्मा तदा सर्वान् सुहृज्जनान् ।
 सुहृद्भिः कैबिदेवेह सह विद्वद्भिरात्मवान् ॥ ३२ ॥
 अनुगम्यमानो विधिबल्यार्तैः कृतमङ्गलैः ।
 निवर्त्य तं जैनं सर्वं प्रययौ शीघ्रवाहनः ॥ ३३ ॥
 पुरं यातो महातेजा यमज्यांस्ते स धर्म्मवित् ।
 कथायोगेन सुहृद्वीं मनोज्ञेन महाहृजैः ॥ ३४ ॥
 दिवसैः कैबिदेवाद्य सं भ्रान्तबलमाहर्नैः ।
 सरितः ॥ ३५ ॥ वर्षतश्चैव व्यसिन्नम्य महाहृजैः ॥ ३५ ॥
 उपस्थितो वै नयरं संदिता राज्ञेष्टुं विष्टुः ।
 सं सं प्रेक्षामास तत्रो वृद्धस्य धीमतः ॥ ३६ ॥

२८-पू-व्यार्त्तम् । २९-तत्राच्छु० । २९-वं, घु, पू, वी, पं, रा-सर्वैः । ३०-रा-
 मण्यो । ३१-पू-शिकिर्मेधौ । ३१-वं, घु, पू, वी, पं, रा-सर्वैः सुहृज्जनं । ३२-रा-
 मास्तित । ३३-वी-
 शिकिर्मेधौ । ३३-पू-सर्वैः । ३४-वं, घु, पू, वी, पं, रा-सर्वैः । ३५-वी-
 शिकिर्मेधौ । ३५-पू-सर्वैः । ३६-वं, घु, पू, वी, पं, रा-सर्वैः । ३६-पू-सर्वैः ।

आर्यकस्य महातेजा भरतः प्रियदर्शनः ।
 भुत्वा दूतस्य वचनं सै' राजा सै' मन्त्रिमिः ॥ ३७ ॥
 प्रवेशयामास तदा भरतं नगरोचमम् ।
 पुष्पैर्गन्धैश्च धूपैश्च सर्वतः समलङ्कृतम् ॥ ३८ ॥
 राजमार्गस्तदाकीर्णो जलेन च समुक्षितः ।
 समुक्षितपर्वताकं च तूर्योत्कृष्टनिनादितं मे ॥ ३९ ॥
 वेश्याभिर्वारमुख्याभिर्वाघानुगतशोभितं मे ।
 पुरतो नृत्यमानाभिर्भरतस्य महात्मनः ॥ ४० ॥
 नरमुख्यैश्च बहुभिः स्रुतमागधवंदिभिः ॥ ४१ ॥
 स्तूयमानो यथान्यायं भरतः प्रविशेन्न ह ॥ ४२ ॥
 प्रविश्य च 'शुभं रम्यमभिवादिं च मातुलम् ।
 इदं मातामहं चैव तथैव नृपयोषितः ॥ ४२ ॥
 स वै मातामहगृहे सर्वकामैः सुपूजितः ॥ ४३ ॥
 उवाच स सुखी धीमान् कश्चित् कालं नृपात्मजः ॥ ४३ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतगमनं
 नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

१०७ शु—सह राजा सह । पू—स च राजार्य । १०८ शं—
 उपस्थितपताकाश्च । १०९ पू—भेषोत्कृष्टनिनोवितम् । ११० शु—
 "समुक्षितम्" इत्यारम्य स्तोकार्धस्य पाठोऽर्धविशेषकोकानन्तरं
 दृश्यते, अत्रे च "राजमार्गम्" इत्यस्वार्यस्य । १११ शु—मिर्वा-
 खानुगतशोभितः । ११२ पं—मुष्यैः स । ११३ शु—स्तुतो मागधम् ।
 ११४ कै, चं, पा—गृहे' रम्ये जम् । ११५ कै—नृपयोषितः । ११६ चं, पूं,
 पं—सुपूजितः । पं—स पूजितः । शु—पुरस्कारः । शी—सुसंस्कारः ।
 ११७ शु—किञ्चित् ॥

[द्वितीयः सर्गः]

कदाचिद्भरतः श्रीमान् वृद्धं मातामहं वृषम् ।
 अभिवाद्य महात्मानमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 आचार्याननुगच्छेयं भवतोऽनुमते प्रभो ।
 लेख्यसंस्थानशब्दज्ञाभीतिशास्त्रार्थपारगान् ॥ २ ॥
 [विधिघासुं च विघासु मुनिष्ठान् ब्राह्मणानपि ।]
 हस्त्यश्वरथयानेषु तथैव परिनिष्ठितान् ॥ ३ ॥
 गन्धर्वविघासुशलाभानाशित्यविदस्तथा ।
 नरान्विनीतान् वृद्धान् वै वेत्सुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ ४ ॥
 ब्राह्मणान्वेदविदुषो वृद्धान् परमपूजितान् ।
 व्यादिष्टान् पुरुषांस्तत्रै सर्वविधाविशारदान् ॥ ५ ॥

१ अं—भवतां प्रीतये । रा—भवतानुमते । २ पूं, पं—शास्त्र-
 स्तया० । दी—शास्त्रानुपा० । रा—शाब्देन ज्योतिः शास्त्रस्तया० ।
 ३ पूं—विधिघासुच- । ४ अं—निष्ठातान्० । दी—शित्यजातिषु चाप-
 रान् । पं—शित्यजातिषु चापरान् । ५ कै—नास्ति । पं—केनचिद-
 न्येन उत्तरपात्रे क्लिप्तम् । 'राजविघासिताम्बुजास्ते (न्ये) तुमी-
 क्षामि तत्त्वतः ।' इत्यव्यये क्लिप्तं वर्तते । ६ अं, शु, पूं, रा—विनी-
 तान् इतिविशारदु इत्यपुष्टे तथैव च । दी—नास्ति । ७ अं, शु, पूं,
 रा—वृषवीषु (शु—गांधर्वाद्यु) च विघासु शित्यजातिषु चापरान्
 (पु—पारगान्) । कै—गांधर्व० । दी—नास्ति । ८ शु—राजविघ-
 णान् वृद्धान् । पूं—राजविघासितान् वृद्धान् । दी—वृद्धान् ।
 ९ पूं—वृद्धान् । १० शु—ब्राह्मणान् । ११ अं, शु, पूं, दी, रा—भवतो-
 क्त्वमि विद्यार्थं मम वित्येताः (दी—नित्यतः) ।

॥ उपसेषिण्यिच्छन्ति केचोऽर्थी चान्तरात्मनः ।

॥ भवतोऽनुमते समन्वयेषु चान्तरात्मनि ॥ ९ ॥^{१२}

भुत्सैर्न कुपन्निर्वाणं कैकेयो यत्तस्य सः ।^{१३}

व्यादिदेशं बहुवचनं चत्सवर्णान्निवन्धितः ॥^{१४} ॥

॥ साहस्यस्य भवतोर्न यस्तः केचनीशुवः ।^{१५}

॥ वेदवेदांगान्तरात्मनां र्थेभ्यो चत्सोऽजस्र ॥^{१६} ॥^{१७}

नर्षविद्यां कुशलां परं हर्षवशात् ह ।

प्रदाय चिन्मयत्मानं सेव्यः स रघुवन्दवः ॥^{१८} ॥

आचार्येभ्यस्ततो विद्यां धर्मोपाधिदत्तव्यं ह ।^{१९}

॥ जग्राह वेदवेदांगान्तराधि गुणरूपे ॥^{२०} ॥

तोऽनुपूर्वेण सम्सर्गान् परिजग्राह कुशलः ।

सह भ्रात्रो महासेवाः शत्रुमेव चक्षतेऽपि ॥ ११ ॥^{२१}

एवमाचार्यहस्तेषु वर्तमानो नरोऽर्थी ।

१२ अं, गु, पुं, वी, रा—नास्ति । १३ अं, गु, पुं, वी, रा—

धत्वा तु मरतस्यैतद्वचः परमहृद्वान् ।

आचार्यवत्सदा यथा यदुक्तं मरतेन वै ॥

१४ अं—य एवेव । १५ अं—ग्रहणे । १६ अं, गु, पुं, वी, रा—नास्ति । १७

अं, गु, पुं, वी, रा—धत्वा तु मरतो यथा व्यादिदेशं पुनर्वाचसा । एतः

चिन्मयो । १८ अं—सह सर्वविद्यापुत्राः । कै—शुश्रूषकः । १९ गु,

पुं, वी रा—आदा विद्यां । अं—अस्तदा विद्या । २० वी—अभिजगाम् ।

२१ अं, गु, पुं, वी, रा—नास्ति । २२ कै—अनुपूर्वेण अः कर्त्तव्यः । २३ अं—

आचार्य । २४ अं—वर्तमानं यत्सत्तमं । वी—आचार्यस्य रघुवन्दवः । अं—

वर्तमानं यत्सत्तमं ।

रममाणो नरव्याघ्रः परं हर्षमवाप ह ॥ १२ ॥^{२५}

शुभ्रं पते यथान्याय्यमौचार्यं नियतेन्द्रियः ।

अर्थमानप्रदानाम्नां यथाकालमर्तन्त्रितः ॥ १३ ॥

ज्ञानार्थ्यासे प्रवृत्तस्य विज्ञानेऽभिरतस्यै चै ।

एवं कालो व्यतिक्रामत् सुमहान् भरतस्य चै ॥ १४ ॥

यदा ज्ञानेषु निर्धैः वै प्राप्तवान् रघुनन्दनः ।

ततोऽस्य बुद्धिः सजाता धर्मं श्रोतुं सनातनम् ॥ १५ ॥

ब्राह्मणेभ्योऽथ बृद्धैर्म्यो मिथुकेभ्यश्च धार्मिकः ।

ये चान्ये चै महाभागा धर्मेषु कुशलो द्विजाः ॥ १६ ॥

तान् सर्वान् स महातेजाः सेवते धर्मकारणात् ॥^{२६}

अन्तरात्मानि धर्मैर्म्यैः सततं पर्यवर्षते ॥ १७ ॥

कथायां धर्मयुक्तायो रमते रघुनन्दनः ।

२५ गु-युस्तके स्तोत्रव्यं नास्ति । "परं हर्षमवाप ह" इति स्तोकार्थं इति-
प्रमादावप्रेऽबलोक्य मध्यस्थस्तोत्रव्यं सम्भवतः परित्यक्तम् । २६ अं,
दी, रा-शुभ्रं पति । २७ गु-यथायोग्यं आचार्यान् । दी-०माचार्यान् ।
२८ रा-ज्ञानाभ्यास० । २९ कै-विज्ञानादिरतस्य च । पं-विज्ञाना-
भिरतस्य च । गु-विज्ञानं भिरतस्य च । ३० कै-व्यतिक्रामतः । पूं-
विचक्रामत् । रा-०व्यतिक्रामत् । ३१ पूं-तु । रा-ह । ३२ कु-ज्ञाने
कुशिलां । पूं-०निष्ठा । ३३ गु-यतिः प्रथमः । पूं-०थ विप्रेभ्यो । ३४
गु-०भ्योऽथ दी, रा-०भ्योच । ३५ अं, गु, पूं, रा-ऽपि । ३६ दी-
कुशला । पूं-कुशला० । ३७ कु-ये च धर्मपरवर्षणा । ३८ कु-सर्वैश्चि-
नियता दिव्यं सेवते धर्मकारणात् । १२ इत्यधिकम् । ३९ अं, गु, पूं, दी,
रा-धर्मैर्म्यैः । ४० पूं-स ततं पर्यवर्षते ॥ १५ ॥ ४१ कु-धर्मैर्बुद्ध्यां ।

तपोऽहिर्तो रतीं नित्यं वे च कर्मपरायणीः ॥ १८ ॥
 तान् सर्वान् स महत्तेजा उपालो निर्भृतः क्षुधिः ।
 शास्त्राणि च महार्थोक्तो नित्यं चो गुणवन्भवति ॥ १९ ॥
 वेदविद्यासु चान्यासु कुशलः सर्वज्ञात्नवित् ।
 कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यते धर्मसेवनात् ॥ २० ॥
 तस्य बुद्धिः समभवत् पितुः सम्प्रेक्ष्यं प्रति ।
 संदिदेच्च तदो दूतं ब्राह्मणं शुभलक्षणम् ॥ २१ ॥
 अयोच्यां गच्छ भद्रं ते दूतं क्षीप्रं नृपोत्तमम् ।
 पितरं कुशलं ब्रूहि मातृश्च भ्रातरौ तथा ॥ २२ ॥
 पृष्ट्वा च कुशलं तेभ्यो वाच्यो दक्षरथः प्रभुः ।
 मातामहगृहे तात वसते त्वदनुब्रूहात् ॥ २३ ॥
 यथाऽऽप्तं कृतं तारो महत्तमं क्षेमं प्रियम् ।
 सं त्वं तेनाभ्यनुज्ञातो भरतेन यशस्विनो ॥ २४ ॥
 दूतः परमसंहृष्टः प्रबोतो येन सा पुरी ।
 अयोच्यां नगरीं रम्यां प्रविवेक्ष्य महातपीः ॥ २५ ॥

४२ कै—तपोऽहि लेखते । ४३—ऽहिस्तालाचते । ४४ कै—धर्मो । ४५ कै—
 निभृतो भूषाम् । ४६—निभृतो बुधिः । शु—च भूषां शुधिः । दी—निर्भृता । ४७—
 निर्भृताः । ४८—शु—शैव साहसा । दी—महामानो । ४९—शु—तेजस्वी । ५०—कु-
 शास्त्रतानि ते । ५१—गुणवन्भवति । दी, रा—गुणवानपि । ५२—शु, दी, रा—क्षेत्रम् ।
 ५३—शु—तथाहं तं । ५४—शु—संसितवर्त । ५५ कै—भरोत्तमम् । ५६—शु—
 क्षीप्रम् । ५७—शु, पू—वसता । वं—वसते । ५८—शु—सर्वम् । ५९—शु—
 रम्या तथा । ६०—शु, कै—कुशलं । रा—कृतं कृतम् । ६१—शु—मातुः । ६२—
 शु—महातपी । ६३—शु—प्रबो । ६४—शु—वस । ६५—शु—महातपी नि-

धीं ईं सजीवताप्रतिभे राजा दहरभोऽभवत्सर्गं ।
 प्राप्तवान्मूर्ध्नि वां पूँणे भरतसालुकासनात् ॥ २६ ॥
 न्यवेदयते सर्गप्रभे मातृभ्योऽथ द्विजसर्थां ।
 कृतकृत्यो हिँ सजेन्द्र भरतः सत्यविग्रहः ॥ २७ ॥
 धनुर्वेदे च वेदे च नीतिशिक्षां च पारमः ।
 अर्थशास्त्रे च कुशलो व्यन्यासे च तथैव हिँ ॥
 हतिशिक्षास्तु निष्प्रांते रथशिक्षास्तु निष्ठितैः ॥ २८ ॥
 आलेख्ये चैव लक्ष्मि च लंघने पुनने तथा ।
 ज्योतिर्गणित्तु निष्प्रातस्तव बन्धनेन नोदितः ॥ २९ ॥
 एवंविधानि कर्माणि कृत्वा च सुवहन्वपि ।
 कृतार्थो भरतो राजंस्त्वत्सफाद्युपैष्यति ॥ ३० ॥

मितां पुरा । ६२ गु—वा संजीवना प्राप्ते । पूं—वां च० । ६३ गु—ऽम्ब-
 गात् । पूं, धी, वं—म्वशात् । ६४ गु—मासदानवतां हृष्टे । वं—सत्यविग्रो ।
 ६५ गु—निवेदयत । ६६ गु, पूं, धी—सद्रात्रो । वं—न्यवेदयत्सद्रात्रो ।
 ६७ गु, धी, व, वं—स्तदा । पूं—स्तदा । ६८ वं, गु, धी—च । पूं—ह ।
 ६९ वं, व—शालेषु । ७० वं, व—शालेषु । ७१ व—वामेषु ।
 ७२ वं, गु, धी—च । ७३ वं—कुशलो । व—गणित्तु । वं—निष्प्रांत ।
 ७४ वं, व—शिक्षा विदारयः । पूं—शिक्षा विपश्चिता । धी—सच
 कल्पेन नोदितः । ७५ वं—कले । गु, पूं, व—केच्ये । वं—केच्ये ।
 ७६ वं, पूं, व—केच्ये । ७७ धी—कलात् । व—केच्ये । ७८ वं, व—
 ७८ वं, पूं, धी, व—कृतार्थं । वं—कृतार्थं । ७९ वं, गु, पूं, धी, व—
 सुवहन्वपि । वं—न्यवेदयति ।

भूत्वा राजा ब्रह्मर्षिः कृतस्व वचनं संदा ।
 कौशल्यायाश्च श्रीं देवर्षिस्तपोनीं सप्तमाम् ॥ ३३ ॥
 प्रतिसंभृत्य नृपतिर्त्तं कृतं ब्रह्मवचनं ॥
 अगबन्मुदितः श्रीमर्षिर्त्तं दृश्यते कृषिः ॥ ३४ ॥
 इत्यर्थे समाचये ऽश्वीष्यान्नाण्डे भरतपूतनगर्भनं
 नाम द्वितीयः सर्गः ॥ ३ ॥



८० सु—श्रीमर्षिर्त्तं । ८१ सु—श्रीमर्षिः । ८२ सं, श्री—देवर्षिस्तपोनीं । सु,
 कृ—कौशल्यायाश्च । ८३ देवर्षिः श्रीं तपोनीं । ८४ सं, स—सप्तमी (सप्तमाम्)
 कृतस्व वचनं । सु, श्री—श्रीमर्षिर्त्तं । कृ—कृतं ब्रह्मवचनं । ८५ सु—
 अगबन् । ८६ सु—श्रीमर्षिः ।

[तृतीयः सर्गः]

गतेऽथ भरते रामो लक्ष्मणश्च महामतिः ।
 पितरं देवसङ्घातं पूजयामास्तुस्तदा ॥ १ ॥
 पितुराद्यां रघुभेद्यौ कृत्वा परमहर्षितौ ।
 पौरकार्याणि सहितौ चक्रतुः कृत्स्नशस्तदा ॥ २ ॥
 मातृणां सर्वकार्याणि कृत्वा च रघुसप्तमौ ।
 गुरोर्भ्यं गुरुकार्याणि काले काले त्ववेक्षताम् ॥ ३ ॥
 [राजा दशरथः प्रीतो वैदिकं ब्रह्मणास्तथै] ।
 रामस्य शीलवृत्ताभ्यां सर्वे च विषये जनाः ॥ ४ ॥
 तुष्टुवुः सहिताः सर्वे देवकल्पस्य धीमतः ।
 अथ राजा दशरथः सस्मार प्रेषितौ सुतौ ॥ ५ ॥
 उभौ भरतश्शत्रुभौ किञ्चिच्छोको बभूव ह ॥
 सर्व एव तु तस्मेष्टाश्चत्वारः पुरुषर्षभोः ॥ ६ ॥
 एकस्मादभिनिर्षृत्वाः शरीरादिव बाहवः ।
 तेषामिष्टतमो लोके रामो रतिकरः पितुः ॥ ७ ॥

१ कं, रा महाबलः । शु—महीपतिः । २ वी—नरभेद्यौ । ३ पूं—
 रघुसप्तमौ । ४ कै—गुरुणां । ५ कं—न्य(न्व)वैक्षतां । कै—त्ववैक्षतां ।
 शु—त्ववैक्षत । पूं—त्ववैक्ष्यतां । वी, रा—न्यवैक्षतां । ६ शु—तस्य ।
 ७ शु—ब्रह्मणा नैगमास्तथा । पूं—ब्रह्मणा नैगमास्तथा । वी, रा—ब्रह्मणा
 नैगमास्तथा । ८ कं—नस्ति । ९ शु, पूं—तथैव । १० शु—तुष्टुवुः ।
 व—वशुः । ११ कं, शु, पूं, वी, रा—महातेजाः । १२ वी—छोके ।
 १३ कं, वी, रा—सः । १४ पूं—पुत्राश्चत्वारः पुरुषर्षभ । १५ पूं—किञ्चि-
 शृत्वाः । कै—किञ्चिन्ना विन्वो । पूं—किञ्चिन्ना विन्वो । १६ शु, वी—मनुः ।

स्वर्भूरिव भूतानां बभूव गुणवत्तमैः ।^१
 स हि नित्यं प्रज्ञान्तात्मा मेन्दं धुंक्तं च भापते ॥^८ ॥
 नित्यं भेष्टगुणैर्युक्तः^२ प्रज्ञावान् पार्थिवात्मजः ।^३
 बहिश्चर इव प्राणो बभूव गुणैतैः पितुः^४ ॥ ९ ॥
 शीलवृद्धानं^५ वयोवृद्धानं^६ ज्ञानवृद्धानं^७ सज्जनसंघं ।
 कथयामासे ताभित्यमल्लयोग्यैर्न कथान्तरे^८ ॥ १० ॥
 कल्याणाभिजनः साधुरदीनः सत्यवागृष्टुः ।
 वृद्धैरपि विनीतैश्च समर्थो धर्मनैपुणे ॥ ११ ॥
 धर्मशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् धर्मकोविदः ।^९
 स्मितपूर्वाभिभाषी च कृत्येषु^{१०} व्यवसायवान् ॥^{११} १२ ॥^{११}

१७ गु, पूं, पं—गुणवत्तरः । वी—गुणवत्तमः । १८ रा—नास्ति । १९
 वी—प्रसन्नात्मा । २० वी—धर्मयुक्तं । पूं—मेदं मुक्तं । पं—वृष्टुमुक्तं ।
 २१ गु—भेष्टैर्गुणैर्युक्तः । वी—भेष्टैर्गुणैर्युक्तैः । २२ गु—सत्य भूषणं । २ ।
 २३ चं, पूं, वी—शीलविद्यावयोवृद्धान् । २४ गु—ज्ञातिवृत् । २५ वी—
 श्लेषयामास । २६ गु—अल्लविद्यास्तु चांतरे । पूं—अल्लयोग्यास्तु चांतरे ।
 वी—अल्लज्ञानं तु चांतरे । रा—योग्यान् मुनेर्गुणान् । २७ गु—भवानुष्टुः ।
 पूं—भवानुष्टुः । रा—वाग्जनाः । २८ गु, पूं वी, रा—धर्मकार्यार्थं । वी—
 धर्मकार्यार्थं । पं—धर्मकार्यार्थं । २९ गु—स्मृतिवान् । ३० चं, गु, पूं,
 वी, रा—लौकिके समुदाचारे सविकल्पे^१ विशारदः । इत्यधिकम् ।
 ३१ चं—सत्यवान् । ३२ गु—नास्ति । ३३ चं, गु, पूं, वी, रा—
 अदीर्घसूत्रो वल्लभ क्रियास्तु प्रतिपत्तिनाम् । "सुलोपसंगी" सुहृदामर्षप्राही^२ शिष्यवदः^३ ।
 विभूतः संभूताकारो^४ गुह्यमन्त्रः सहाचकार^५ । इत्यधिकम् ।

१ पूं—विकल्पवि० । वी, रा—विकल्पेवि० । २ चं—प्रतिज्ञानवाद् । ३ पूं—सुलो-
 पसंगीः । वी—सुलोपमन्त्रः । ४ पूं—सहृदः अर्षप्राही । वी—सुमहर्षप्राही । ५ गु-
 नास्ति । ६ पूं—विभूतेः । ७ पूं—संभूताकारो । वी—संभूताकारो । ८ गु—गुह्यमन्त्रं ॥

सानुक्रोशः कुतश्च स्वामी लक्ष्मणस्यसिद्धिम् ।
 पृथक्किः सित्वाज्ञो गुणप्रसन्नवद्वयैः ॥ १३ ॥
 निस्तन्प्रीत्यमर्षैश्च निर्दोषः परदोषवित् ।
 परिग्रहात्प्रहयोर्विकल्पममक्रेवित् ॥ १४ ॥
 कथञ्चिद्ब्रह्मणेन कुर्वेद्येन कम्पयित् ।
 न स्मरत्यपन्नसर्वा श्रुतमन्यात्मवचनैः ॥ १५ ॥
 अर्थकर्माण्युपायैश्चो धर्मिणावेकते सदा ।
 भैष्ट्यं चार्थप्रदानेन प्रीतिं ध्यायामिकेषु च ॥ १६ ॥^{१३}
 अर्थधर्मावसक्तश्च सुखतप्ये च मालसः ।^{१४}
 वैहृत्किंभीर्णं कर्माणां विज्ञाँतार्थो यचार्थवित् ॥ १७ ॥
 आरोहं च विनेता च बोद्धं पारणवाग्भिर्मात् ।

३४ पू-समयकाल० । ३५ अं, दी, पं-मुष्मन्प्रीति न दूषकः । गु-०शुभसुखकः ।
 ३६ गु-निस्तन्प्रीत्यामृततन्त्र । ३७ गु, पूं, धी-एषदीप० । ३८ अं, पूं-
 परिग्रहात्प्रहयो० । पूं-०च वेदिता ॥ १६ ॥ धी-०मयेकते । गु-परि-
 ग्रह स्वसैन्यं हि शत्रुसैन्यमवग्रहः ॥ १४ ॥ ३९ गु-शतमथस्यवित्तया ।
 ४० गु, पं-आर्थकर्मण्युपा० । पूं, ए-अर्थकर्मण्युपा० । धी-आयुः
 कर्मण्युपा० । ४१ गु-०वद्वयते । पूं, पं-०वेदयते । धी-०वेदिता । ४२
 कै-प्रियः । पं-भेदः । ४३ कै-प्राप्ती । ४४ धी-ध्यायामिकेषु । ४५
 गु-मालि । ४६ गु-अर्थधर्मावसक्तस्य सुखतप्यो न चालसः । १६ ।
 अं, ए-अर्थधर्मावसक्तस्य (ए-०अर्थः) सुखतप्येन मालसः (ए-
 लालसः) । पूं-अर्थधर्मावसक्तस्य सुखतप्ये च चालसः । पं-०वद्वयते
 च चालसः । धी-अर्थधर्मावसक्तस्य सुखतप्यो च चालसः । ४७ गु-
 वैहृत्किंभीर्णं च । ४८ अं, ए-विकल्पममक्रेवित् । ४९ धी, ए-अर्थवित् ।
 ५० अं, गु, पूं, धी, ए-मुष्मन् । ५१ पूं-धौ यजमानिनी । पं-यजमानः ।

वनुर्वेदपिदां शालीर्लोफानामतिसम्मेतः ॥ १८ ॥
 अभियात्ता प्रहर्ता च सेनानवविद्यारैदः ।
 अप्रपृष्यथ संग्रामे सर्वैरपि^{५२} सुरासुरैः ॥ १९ ॥
 अनद्युर्जितक्रोधो^{५३} न द्वेषा^{५४} न च मत्सरी ।
 न चावमन्ता भृत्यानां न च भृत्यवशानुगः ॥ २० ॥
 सत्यवादी महोत्साहो वृद्धसेवी जितेन्द्रियः ।
 मितवागपि कार्येषु वक्ता वाचस्पतेः समः ॥ २१ ॥
 लोकप्रियत्वे चन्द्रस्य वसुधायाः क्षमागुणैः^{५५} ।
 बुद्धया वृहस्पतेस्तुल्यो वीर्ये^{५६} च स्याच्छचीपतेः^{५७} ॥ २२ ॥
 लोके^{५८} संख्यायमानानां^{५९} प्राज्ञः^{६०} सर्वधनुष्मताम्^{६१} ।
 वीर्यवान् च वीर्येण महता तेन विस्मितः ॥ २३ ॥
 स तैः सर्वैः प्रजाकान्तैः^{६२} प्रीतिसञ्जनैः पितुः ।
 गुणैर्विरुद्धे रामो दीप्तैः^{६३} सर्व इवांशुभिः ॥ २४ ॥
 तमेवं वृत्तसम्यग्ं रामं सत्यपराक्रमम् ।
 लोकपालोपमं नाचमकामयत्^{६४} मेदिनी ॥ २५ ॥

५२ चं, शु शास्त्रे लोकेतिरथ सम्मतः । पूं—शास्त्रे लोकामिरथ संगतः ।
 चं, वी, रा—शास्त्रे (रा—श्रेष्ठो) लोकेऽतिरथ सम्मतः । ५३ शु—सेवा-
 नवम् । पूं—सेवानपिचि० । ५४ चं, शु, पूं, वी, रा—क्रुद्धैरपि । ५५ पूं—
 अनुवपुः । शु—अनुवपुः । ५६ चं, शु, पूं, वी, रा, पं—बुद्धे । ५७ शु—
 क्षमो० । पूं, पं—क्षमागुणे । ५८ कै—कैव शचीपतेः । शु—०पतिः ।
 ५९ कै, पं—०संख्यायमानां च । पूं, वी—लोकसंख्या० । रा—०संज्ञो-
 मन्तानाम् । ६० शु—प्रजावः । चं, रा—प्रजाः । पूं—प्रजावः । ६१ शु—
 ०शुष्मताम् । ६२ पं—प्रजाकान्तैः । ६३ शु, पूं, वी, रा, पं—दीप्तैः ।
 ६४ शु—रामं अकामयत् ।

अनुरक्ताः^{६५} प्रजास्तं^{६६} हि सानुक्रोशं^{६७} प्रजाहितम्^{६८} ।
^{६९} तं प्रेक्ष्यं^{७०} सुमहोत्साहं^{७१} शक्तं च परिपालने ॥ २६ ॥
 वृद्धैः^{७२} श्रुतगुणोपेतैरासौर्धम्मार्थतत्परैः ।
 सोऽतिवाल्यात्प्रमृत्येव^{७३} नृपतिः समयोजयत् ॥ २७ ॥
 स्वभावेन विशुद्धेन^{७४} सर्वशास्त्रागमेन च ।
 अमवत्सर्वभूतानामधिको गुणवत्तया^{७५} ॥ २८ ॥
 तमेवं बहुभिर्युक्तं गुणैरनुपमं सुतम्^{७६} ।
 प्रेक्ष्यं^{७७} राजा दशरथश्चिन्तयामास तं प्रति ॥^{७८} २९ ॥
 तस्य बुद्धिरियं जाता वृद्धस्य^{७९} चिरजीविनेः ।^{८०}
 बौवराज्येऽभिषिञ्चामि सुतं राममिति^{८१} स्थिरां ॥ ३० ॥
 सां तस्य परमा प्रीतिर्हृदये पर्यवर्त्तत^{८२} ।
 कदा रीमं सुतं द्रक्ष्याम्यभिषिक्तमिति^{८३} प्रैमोः ॥ ३१ ॥

६५ गु—अनुरक्तं प्रजानां । ६६ पूं—क्रोशप्रजाहिते । ६७ कै—स
 बीक्ष्य । गु—संप्रेष्य । ६८ गु—सुमनोप्राहं । ६९ सं, रा—बुद्धि । पं—बुद्धिः ।
 ७० सं, पूं, वी, रा—श्रुति० । ७१ सं, पूं, वी, रा—स हि वा० । गु—
 तं हि वा० । पं—स तं वा० । ७२ गु—विबुद्धे(दे?)न० । पं—जति-
 शुद्धेन । ७३ सं, रा—सोऽभवत् । ७४ पं—वृत्तया । रा—वृत्तयां ।
 ७५ सं—अनुपमैः सुतं । पं—अनुपमै सुतं । गु—अनुपमैशुतं । पूं—
 अन्वर्तः सुतं । वी—रजस्रैः सुतं । रा—अनुपजीविनः । ७६ गु—
 प्रेष्य । ७७ रा—मस्ति । ७८ कै—बुद्धस्याधिर० । ७९ सं—मति स्थिरं ।
 रा—मिति स्थिता । गु—स्थिरं । ८० गु—वा । ८१ गु—परिवर्त्तते ।
 ८२ सं, रा—राममहं । ८३ गु—द्रक्ष्ये ह्यभिषिक्तमिति प्रभुः । पूं—
 द्रक्ष्याम्यभिषिक्तमिति प्रभुः । वी, पं—रा—अन्वु ।

वृद्धिकामो हि^{८४} सङ्घी^{८५} सर्वभूतानुक्रमकः^{८६} ।
 मयः त्रिवचरो^{८७} लोके पर्जन्य इव वृष्टिजन्तु^{८८} ॥ ३२ ॥
 यमशक्रसमो^{८९} चीरो^{९०} बृहस्पतिसमो मती ।
 महीधरसमो धृत्वा^{९१} माम्भीरो^{९२} सागरोपमः ॥ ३३ ॥
 महीमहमिमां^{९३} कुरुत्वामधितिष्ठन्तमात्मजम् ।
 अनेन वयसा दृष्ट्वा जीवन्स्वर्गमवाप्नुवाम्^{९४} ॥^{९५} ३४ ॥
 [कुलक्रमागतं राज्यं क्रैम इवै नियुज्य हि^{९६} ।]^{९७}
 तं^{९८} समीक्ष्य महाराजैः सङ्घुपेतं सुतं^{९९} गुणैः^{१००} ।
 संह निश्चित्यं सधिवैशौबराज्यममन्त्रवद् ॥ ३५ ॥
 दिव्यं चैवान्तरिक्षं च भौमं चोत्पातजं^{१०१} मयम् ।
 आचक्षुषे सं मेधावी शरीरे^{१०२} चात्मनो^{१०३} जरायु ॥ ३६ ॥^{१०४}

८४ पूं—ह । ८५ पं—राजस्य । ८६ वं—०कपवः । ८७ कै, दी—प्रिय-
 तमो । रा—प्रियकरो । ८८ कै—०क्रोपमो । ८९ गु—धीरो । पूं, पूं,
 दी—धृत्या । पं—धृत्या । रा—धृत्या । ९० गु—महीमिमामहं । ९१
 गु—०मधिष्ठित तमात्मजं । पूं—०ममिषिकं तमा० । दी, पं—०ममि-
 तिष्ठं० । रा—०ममिषिकं तमा० । ९२ पूं—०मवाप्तवान् । ९३ वं, पूं,
 रा—नास्ति । ९४ वं, पूं, रा—कुल । ९५ पं—मेव हि युष्महि । ९६
 कै—नास्ति । ९७ गु—समीक्ष्य स तदा राजा । रा—०महापुत्र ।
 ९८ गु—गुणैः सुतं । दी—सङ्घुपेतं गुणैः । ९९ वं, गु, पूं, पूं, दी, रा—
 स हि । १०० वं, पूं, रा—संमन्त्र । १ पूं—०वत् राज्यम् । २ गु—
 योत्पातकं । पूं—चोत्पातिकं । ३ गु, दी—अथ । वं, पूं, रा—ह ।
 ४ वं, वु, पूं, रा, पं—शरीरेवात्मनो । ५ गु, पूं, पूं, दी, रा—
 एवं चितवत्सस्य रामं प्रति महात्मनः ।
 सस्य मां मां विद्वत्सु लोकाधीश्वरः । ३०
 गुरवो यं विजयीष्यन्ति तं विद्विष्यन्ति । इत्युच्यते ।

१ पूं, दी—०मवाप्तवान् । पूं, रा—दीर्घं गल हि से ।

ततस्ते मन्त्रयामासुर्बौवराज्यममीप्सवः ।

॥सस्य धर्मार्थविदुषो भावमाज्ञाय सर्वशः ॥^१ ३७ ॥

॥ब्राह्मणा मन्त्रिभ्युल्याश्च सर्वे वचनमब्रुवन् ।^१

पूर्णचन्द्राननस्यास्यं सदृशस्यात्मनो गुणैः ॥ ३८ ॥

लोकप्रियत्वं^१ रामस्य बुध्यते^२ वै^३ महात्मनः ।^३

॥आत्मनश्च प्रजानां च भ्रयसा च प्रियेण च ॥^२ ३९ ॥

॥काले^३ कांक्षति संयोगं तेन त्वरति-भूमिपः ।^३

अर्हत्येष^४ हि^५ धर्मात्मां यौवराज्यं महाबलः ॥ ४० ॥

समर्थः^६ सर्वकार्येषु^६ शक्रतुल्यपराक्रमः ।^६

एवं सम्मन्थ्य सहिता ऊचुर्दशरथं नृपम् ॥ ४१ ॥

राजेन् धर्मेण धर्मज्ञ^७ पृथिवी तेऽनुपालितां ।

गतश्च सुमहान् कालो बृद्धश्चासि^८ नरेभ्यः ॥ ४२ ॥

१ सं, शु, पूं, पूं, वी, रा—नास्ति। ७ पूं—पूर्णचंद्रनिमस्यास्य। ८ पूं—सदस्य नंविनो। ९ शु—लोकप्रियस्य। पूं, पूं, वी—लोकेभिः। १० शु, पूं—बुध्यते यं। पूं—बुध्याय तं। वी—बुध्या ते च। ११ पूं—लोकप्रियत्वे एतिमान् भूमिपालं सुखाबहं। १२ पूं—नास्ति। १३ वै—लोके। वी—कालः। १४ कै, पूं—अर्हत्येष। १५ शु—सुधर्मात्मा। १६ सं—सर्व-कार्येषु सुशक्तः। १७ पूं—०काले। १८ सं—पालने विष्णुतुल्यो हि कालाक्षिप्सुरिवेभ्यः। इत्यधिकं “०पराक्रमः” इत्यनन्तरम्। १९ कै—राजं०। सं, पूं—एतद्धर्मेण०। सं—०धर्मेण नृप। पूं—०धर्मज्ञ धर्मेण। २० कै—सङ्घुपकिता। शु—आनुषंगं०। २१ सं, पूं—बृद्धस्याय। पूं—बृद्धत्वात्(स) वी, रा, पूं—बृद्धोऽस्य। शु, पूं, पूं—नरेभ्यः।

स रामं युवराजानमिषिञ्चत्स राक्षसे ।
 तेषां तु वचनं श्रुत्वा मनोऽहं हृदयस्त्रिदशैः ॥ ४३ ॥
 अनिच्छन्निवै जिज्ञासुस्तान् जनान् प्रत्युवाच सैः ।
 कथं तु मयि धर्मेण पृथिवीमनुष्ठासति ॥ ४४ ॥
 भवन्तः कर्तुमिच्छन्ति युवराजं ममात्मजम् ।
 ते तमूचुर्महात्मैः नृद्वंदं दक्षरथं नृपम् ॥ ४५ ॥
 बहवः कृतकल्याणौ गुणौ पुत्रस्य सन्ति ते ।^{२२}
 पुत्रस्ते देवसदृशः स्वाध्यायाचारसंयुतः ॥^{२३} ४६ ॥
 प्रियकृत् प्रियवादी च प्रजानां पितृमातृवत् ।^{२४}
 बहुश्रुतानां वृद्धानां ब्राह्मणानामुपासिता ॥ ४७ ॥
 *दुर्भ्रूतानां नियन्ता च विनीतप्रतिपूजकः ।^{२५}
 न ज्ञातिषु न मित्रेषु न च जानपदेष्वपि ॥ ४८ ॥
 जनोऽस्त्यगुणवादी यो रामस्य भुवि भूपते ।^{२६}
 सद्ब्रह्मालाः पौरास्ते तथा जानपदा जनाः ॥^{२७} ४९ ॥
 गुणानुरक्ता राजेन्द्र राममिच्छन्ति भूपतिम् ।^{२८}

२२ अं, गु, पूं, वी, रा—राक्षसं । २३ गु—तद् । २४ गु—हृदयेऽस्त्रिदशैः ।
 २५ अं—अमिच्छन्निव । गु—अच्छन्निव । पूं—अमिच्छन्निव । २६ रा—सं जनं ।
 २७ अं, पूं, रा—ह । २८ पूं, वी, रा, वं—कथं तु । गु—अजस्रं (०अं ?)
 २९ पूं, पूं, रा—कृतमि० । गु—कृतमिच्छन्तु । ३० अंयो वृद्धानां । ३१ अं,
 पूं, रा—कृतकल्याणगुणौ । ३२ वी—नस्ति । ३३ गु—निर्वृता दुर्भ्रू-
 तीत्यानां च विनीतः प्रति० । अं, पूं, पूं, वी, रा—नस्ति । ३४ वं—दुष्टेषु ।
 ३५ वी—भूमिषु । ३६ गु—नस्ति । ३७ अं, गु, पूं, पूं, वी, रा—भूमिषु ।

गुणकीर्त्या नरपते प्रजा रामेव रक्षिताः^१ ॥ ५० ॥

एतच्छ्रुत्वा^२ स नृपति^३ द्विजानां मन्त्रिणामपि ।

हर्षं परममागच्छतेषां भावज्ञतां प्रति ॥^४ ५१ ॥

सह सञ्चिन्त्ये सधिवैश्वेवराज्यमचिन्तयेत् ।

सर्वाभगरवास्तव्यैः पृथग्जानपदानपि^५ ॥ ५२ ॥

आनाययामास तदा पृथिव्यैः पृथिवीपतिः ।

ततः प्रजाः समागम्य ब्रह्मत्रयुखींस्तथा ॥ ५३ ॥

अनुज्ञातांः प्रविषिञ्चुं नृपतेर्भवन्^६ महत् ।

आसीनं चापि राजानमैश्वर्यं राष्ट्रवर्द्धनम्^७ ॥ ५४ ॥

प्राच्योदीच्यप्रतीच्याधै दक्षिणात्याश्च भूमिपाः ।

३८ पूं—रक्षिताः । ३९ खं—एतच्छ्रुत्वा बभूवो राजा । रा—एतत्
 भ्रुत्वा बभूवो राजा । शु—इति भ्रुत्वा तदा राजा । पूं—एतच्छ्रुत्वा तु राजा
 वै । वी—तच्छ्रुत्वा बभूवन् तेषां । ४० पूं—जिह्वासां । पूं—प्रजातां । अत्र
 'प्रजा' इति बहिर्लक्षितं हस्तेनेतरेण विभिनमस्याञ्च । ४१ खं, पूं—हर्ष-
 तत्त्वमुपागच्छन् (पूं—रा) तेषां भावज्ञतां प्रति । रा—हर्षतत्त्वमुपागच्छ तेषां
 भावज्ञतां प्रति । शु—परं हर्षमुपागच्छत्० । पूं, वी—हर्षं परममुपागच्छत्० ।
 पं—हर्षेण भाववतां प्रति । ४२ कै, खं, शु, पूं—संचित्य । ४३ खं, पूं, पूं, वी,
 रा—अमंत्रयत् । ४४ शु, पूं, वी, पं—नामानगरं । ४५ खं, पूं, रा—ऋषीन्जान-
 पदानपि । ४६ खं, पूं—आवाहयामास । पूं, पं—आनाययामास । वी—आनाया-
 यामास । ४७ खं, पूं, रा पृथिव्याः । ४८ शु—प्रजास्तदागत्य । वी—प्रजाः
 समगमात् । ४९ पूं, पूं, वी, रा, पं—स्तथा । ५० पं—अनुज्ञात्वाथ विषिञ्चु ।
 ५१ शु—अनुभवन् । ५२ कै—शैश्वर्यं । खं, पं—शैश्वर्यं । पूं
 शैश्वर्यं । ५३ पं—राज्यं । ५४ शु, पूं—वीच्या । पूं—प्राच्यविद्याः ।
 खं, वी, रा, पं—प्राच्योदीच्याः ।

म्लेच्छान्ये^{५५} सुबर्ह्वेः पार्वतीयाश्च सङ्गताः ॥ ५५ ॥

[उपासाञ्चक्रिरे प्रीता महेन्द्रमिव देवताः ।

तेषां मध्ये महाराजो देवानामिव^{५६} वासवः ॥ ५६ ॥

विद्योतमानं प्रमया दैर्दर्श सुतमात्मनः ।

गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विभ्रुतपौरुषम् ॥ ५७ ॥

दीर्घबाहुं महासम्बन्धमत्यन्तप्रियदर्शनम् ।

शैलप्रतिमदन्तीनां ग्रहीतारं^{५८} विषाणिनाम् ॥ ५८ ॥

लोके विख्यातवीर्याणां श्रेष्ठं सर्वघनुष्मताम् ।

सुवर्षेणेव^{५९} पर्जन्यं हृद्दयन्तं प्रजौगुणैः ॥^{६०} ५९ ॥

प्रद्योतयन्तं^{६१} लोकांश्च^{६२} सहस्रांशुमिवांशुभिः ।]^{६३}

तद्राजवेभ्य मनुजैर्यथावत्प्रतिपूरितम्^{६४} ।

ददृशे भीमनिर्हादं वार्योर्धरिव^{६५} सर्गिरः ॥ ६० ॥

तं^{६६} जनौघं बहुविधं राजभिः समलङ्कृतम् ।

ददर्श घृतिमानं^{६७} राजा प्रजापतिरिवापरैः ॥ ६१ ॥

५५ रा-म्लेच्छान्ये । ५६ चं, शु, पूं, पूं, दी, रा-च बहवः । ५७ रा-ममि ।

५८ कै-मानः । पं-मान । ५९ रा-वृष्ट्युः । ६० चं, पूं, रा-शैलप्रतिमद० ।

पं-शैलमूपतिरज्ञानां । ६१ रा-प्रतीहारं । ६२ पं-सुवर्षेणेव । ६३ पं-

हृत्प्रत्यन्तमिव प्रजाः । ६४ चं, पूं, रा-हृत्प्रत्यन्तं सर्वमिच्छाणां क्षमणां शोक-

चञ्चनं । ६५ चं, पूं, रा, पं-शुणैः प्रद्योतयन्तस्तं (चं-व्यतं तु) (रा,

पं-व्यतं तं) । ६६ पूं, दी-जास्ति । ६७ पूं-प्रतीति० । पं-प्रति-

पूरितं । ६८ शु-वार्योर्धरिव । पूं, दी-वार्योर्धरिव । रा-वार्योर्धरिव ।

६९ चं, पूं, दी, रा, पं-सागरं । पूं-सागरी । ७० पूं-ते अवीरैः ।

७१ कै-प्रतीतिमात् । ७२ पं-प्रजाप्रतीतिविधामरात् ।

अथ राँहां वितीर्णेषु आसनेषु समन्ततः ।

राजानमेवामिहृत्वा निषेदुर्नियताः प्रजाः ॥ ६२ ॥

तेषां मध्ये महातेजा देवानामिव वासवः ।

शशुमे सर्वसिद्धार्थः सर्वाभरणभूषितः ॥ ६३ ॥

ते तु तं सुमहात्मानं पूर्णचन्द्रसमद्युतिम् ।

उपासाञ्चक्रिरे वीराः कुबेरमिव नैर्ऋताः ॥ ६४ ॥

सं लब्धमानैर्विनयात्समागतैः पुरालयैर्जानपदैर्धैर्मौनवैः ।

उपोषविष्टैर्धैर्नृपैर्नृपो बभौ सहस्रचक्षुर्भगवान्निवामरैः ॥ ६५ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे प्रकृतिसमागमो-

नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥



७३ शु—राजां वितीर्णेषु । पूं—राजा वितीर्णेषु । वी—राजपतिर्णेषु ।
 वं—०वितीर्णेषु । ७४ वं—आसनेषु । पं—स्वासनेषु । ७५ पं—०शुभं ।
 ७६ वं, शु, पू, वृ, वी, रा—जनाः । ७७ पूं—सिद्धार्थे । ७८ वी—सर्वा-
 युक्तिविभूषितः । ७९ वृ—०समग्रमम् । पं—पूर्वाचन्द्र समग्रम् । वी—
 राजानाः समकङ्कतं । ८० रा—कुबेरमिव नैवृताः । ८१ पूं—अलङ्कार-
 नैर्वि० । ८२ शु—पुरालयैर्० । ८३ रा—समागतैः । ८४, वृ—वापितः ।
 ८५ वं, रा—सुलोप० । १८६ पं—०वाद् ययामरैः ॥

[चतुर्थः सर्गः]

ततः परिषदः सर्वा आमन्त्र्य वसुधाधिपः ।
 हितमुद्धरणं वैवशुवाचाप्रतिमं वचः ॥ १ ॥
 दुन्दुभिस्वनकल्पेनं गम्भीरेणानुनादिनो ।
 खरेण भवनं राजा जीमूर्त इव नादयन् ॥ २ ॥
 इदमिह्वाङ्गुमिः पूर्वैर्नरेन्द्रैः परिपालितम् ।
 भ्रयसा योक्तुमिच्छामि सुखार्थमखिलं जगत् ॥ ३ ॥
 मयाप्याचरितं पूर्वैः पन्थानमनुगच्छतं ।
 प्रजा विनीताश्चोत्सेधे यथावदुपशिक्षिताः ॥ ४ ॥
 इदं शरीरं कृत्स्नस्य सुखस्य विषये चिरम् ।
 पाण्डुरस्यातपत्रस्य छायायां धारितं मया ॥ ५ ॥

१ गु—सर्वाभ्यामन्त्र्य । २ अं—हृदयोद्ध० । पं—स्फीतमु० । ३ अं,
 गु, पूं, पूं, दी, रा—वेदमु० । ४ गु, पूं—बुधुमिः० । अं, रा—०स्वर० ।
 पू—०मिनिस्वञ्चकल्पेन । ५ अं, पूं—०नुनादितं (अं—०त्से) । दी—०नुवा-
 दिना । पं—गांधर्वेणानु० । ६ अं, गु, पूं, पूं, दी, रा—स्वनेन । ७ गु, दी-
 भुवनं । अं, पूं, रा—भगवात् । ८ पं—जीमूर्तेनेव नादितां । ९ अं,
 पूं—सर्वैर्न० । रा—सर्वैर्न० । पं—पूर्वैर्न० । १० पूं—०पालिनी । अं, पं—
 प्रतिपा० । ११ अं, पूं, रा—जगत् । १२ कै—सन्निराचरितं । पं—शुवा
 छााचरितं । अं, पूं, रा—अयोध्याचरितं । १३ दी—पूर्वै । १४ अं—यथैममनु० ।
 पूं—आच्छत । १५ कै—०श्चोत्सेधं । अं—विनासिके० । गु, पूं, पूं, दी,
 रा—विनीतलोदेन । १६ पूं, दी—यथाहाकयमिरक्षिताः । पूं—यथाहाकयमि-
 रक्षितं । अं, गु, रा—यथा हाकयमिरक्षिताः । १७ पूं—विषयं ।

प्रायो^{१८} वर्षसहस्राणि बहून्वाबुध पालितम् ।
 जीर्णस्यास्य शरीरस्य विश्राममभिरोचये ॥ ६ ॥
 राजपुङ्गवगुप्तां^{१९} हि दुर्घरामजितेन्द्रियैः^{२०} ।
 परिश्रान्तश्च^{२१} लोकेऽस्मिन् गुर्वी^{२२} धर्मधुरं^{२३} बहून्^{२४} ॥ ७ ॥
 सोऽहं विश्राममिच्छामि कृत्वा सर्वप्रजाहितम् ।
 मवान्निरपि तत्सर्वमनुमन्तव्यमर्धं मे^{२५} ॥ ८ ॥
 अनुयातो^{२६} हि मे सर्वैर्गुणैर्ज्येष्ठो^{२७} ममात्मजः ।
 पुरन्दरसमो वीर्ये रामः परपुरञ्जयः ॥ ९ ॥
 तं चन्द्रमसि पुष्येण युक्ते धर्ममृतां वरम् ।
 शौवराज्ये ऽभिषेक्तासि^{२८} प्रातः क्षत्रियपुङ्गवम् ॥ १० ॥
 अनुरूपो हि राज्यस्य लक्ष्मीवान् लक्ष्मणाग्रजः ।
 त्रैलोक्यमपि नाथेन येन स्यान्नाथवत्तरम् ॥ ११ ॥

१८ अं, गु, पूं, पूं, दी, रा-प्राप्य । १९ अं, गु, पूं, पूं, दी, रा-पुंगवगुप्तां ।
 २० अं, गु, पूं, पूं, दी, ग-वृषहाम० । दी -०मरुतात्मनिः । २१ अं-
 परिक्रान्तां । पूं-परिक्रान्तश्च । रा-परिक्रान्ताः । पूं-परिश्रान्तस्य ।
 २२ पूं, पूं, पं-गुर्वी । २३ अं, पूं-०धुरंमहत् । पूं० धुराबहं ।
 २४ अं-धारयामि जना लोके बहो भूत्वा महोक्षवत् ।
 इदानीं तां समुत्तीर्य मंत्रिणा विप्रक्षत्रियाः । इत्याधिकं 'बहून्' इति पञ्चात् ।
 २५ अं, गु, रा-सर्वं० । २६ अं, पूं-०मनुवर्चस्यमप्य वै । रा-०मनु-
 वर्तय्यम० । दी-०मद्य ते । २७ पूं, पं-अनुजातो । अं, गु, पूं, दी, रा-
 अनुजाते । २८ दी-०जुष्टे० । पं-सर्वगुणज्येष्ठो महामनाः । २९ गु-
 दुःखुर० । ३० पूं, दी-मिच्छामि० । ३१ पं-प्रीतः पुंगवाः । ३२ पं-
 राजस्य । पूं-राज्या वै । अं, गु, पूं, दी, रा-राजा वै । ३३ अं, पूं, रा-
 कक्ष(रा-क्षम)पान्धितः ।

संबोज्ज रामं रान्येव भेषसाश्च महिमिहस्यै ।
 संभ्रित्यै रामस्य ह्यजौ विहर्याऽस्मि गतज्वरः ॥ १२ ॥
 इति श्रुवाणं श्रुविता अभ्यनेन्दन्तुपं प्रजाः ।
 वृष्टिमन्तं महौनादं पर्जन्यमिव बहिष्णः ॥ १३ ॥
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवकल्पस्यै धीमतः ।
 प्रियं चैवानुरूपं च वक्तुं सद्युपचक्रुः ॥ १४ ॥
 दिव्यैर्गुणैर्दक्षसमो रामः शक्रसमो बले ।
 इक्ष्वाकुभ्यो हि सर्वेभ्यो व्यतिरिक्तो विश्वापते ॥ १५ ॥
 रामस्य पुरुषो लोके सत्त्वधर्मयज्ञोबलैः ॥
 ममो न विद्यते कश्चिद्विशिष्टः कुत एव तु ॥ १६ ॥
 धर्मात्मा सत्यवादी च शीलवानस्यकः ।
 दान्तः सत्त्वहितैः प्राज्ञैः कृतज्ञो चिञ्चितेन्द्रियः ॥ १७ ॥
 मृदुश्च स्थिरबुद्धिर्नै नित्यं दीनानुकम्पकः ।

३४ कै, खं, पूं, रा—महोपानेम् । ३५ गु वी—संस्तुत्य । ३६ पूं—शुजे ।
 ३७ गु—सर्वेऽनन्दन्तुपं । पूं—सर्वे नन्दन्तुग । पूं—सर्वे वैतं वपं । वी—सर्वे
 नन्दन्तुपं । रा—सर्वे वैतं वपं । ३८ गु, पूं, पूं, वी, रा—नराः । ३९ खं, गु, पूं, वी,
 रा—बुद्धिंस्तमिवाभेदं गर्जितमिव । पूं—बुद्धिंस्तमिवाभेदं गर्जितमिव । वं—
 भर्जितमिव । ४० पूं—वर्हणः । ४१ खं—सर्वकल्पस्य । पूं—सर्व-
 कल्पस्य । रा—सर्वकल्पस्य । ४२ पूं—प्रवतन्मुपचक्रुः । वी—वक्रमे ।
 ४३ पूं—व्यतिरेको । रा—व्यतिरिक्तो । ४४ खं, रा—सत्त्वधर्मयज्ञोबलैः ।
 पूं—सत्त्वधर्मयज्ञोबलैः । ४५ पूं—समानो । ४६ रा—धर्मावाप्तमसुधी च
 सत्त्वधर्म यज्ञोबलस्य । ४७ गु, पूं, वी, वं—सर्वविद्यया शक्तः । ४८ खं,
 गु, पूं, पूं, वी, रा—स्थिरबुद्धिः । ४९ खं—कंपनः ।

प्रियवादी जितक्रोधो दीर्घदर्शी महामंतिः ॥ १८ ॥

बहुभ्रतानां वृद्धीनां ब्राह्मणानामुपासिता ।

तेन तस्यातुलाकीर्तिं र्यशस्तेजश्च वर्द्धते ॥ १९ ॥

समर्थैर्धैः धनुर्वेदे ह्येपृष्ठे गजे रथे ।

लब्धास्त्रैः शब्दवेधी च दूरपाती दृढायुधः ॥ २० ॥

देवासुरमनुष्याणां संयुगेष्वपराजितः ।

दिव्यमानवसंयुक्तेषु सर्वास्त्रेषु विशारदः ॥ २१ ॥

यं चोपयाति सङ्ग्रामे ग्रामान्ते नगरेपि वां ।

गत्वा सौमित्रिणा सार्द्धं तं जित्वा विनिवर्त्तते ॥ २२ ॥

सदाऽग्रे नगराद्गच्छन् कुञ्जरेण रथेन वां ।

राजमार्गेऽपि नो दृष्ट्वा कुशलं परिपृच्छति ॥ २३ ॥

पुत्रेष्वग्निषु दारेषु प्रेष्यशिश्यगणेषु च ।

निखिलेनानुपूर्वैर्धैः पिता पुत्रानिवारसान् ॥ २४ ॥

५० शु, महाद्युतिः । ५१ पूं—वृत्तानां । ५२ पू—बध्वातु० । ५३ शु पूं,

पूं, वी, रा, पं—समासश्च । ५४ वी अश्व० । ५५ शु, पूं, वी—लष्वकः ।

पू—लष्वकः । पं—लष्वकः । ५६ शु, पूं, पूं, वी, रा, पं—०मात्रुष० ।

शं—०मात्रुषच्छेषु । ५७ पूं, पं—च । ५८ शं, पूं—विजित्वोपनिवर्त्तते

रा—सं जित्वोपनिवर्त्तते । शु, वी—सं जित्वोपनिवर्त्तते । पूं—जित्वोपरि

निवर्त्तते । ५९ शु, पूं, वी, पं—निर्मयं गच्छन् । रा—तनूरे गच्छन् । ६०

शं, पूं, वी—च । ६१ शं, पूं, रा—राजमार्गेण । ६२ शु, पूं, वी, रा, पं—

०नुपूर्वेण । पूं—०नुपूर्वेण न ।

द्युभूपन्ति^१ वर्षेः शिष्याः कश्चित्कर्मसु^२ देखिर्ताः ।
 इति नैः पुरुषव्याघ्रिः सदा रामो ऽभिर्मापते ॥ २५ ॥
 व्यसनेषु च सर्वेषां^३ शृशं भवति दुःखितः ।
 दृष्ट्वा नो ऽभ्युदयं किञ्चित्पितेव परितुष्यति ॥ २६ ॥
 वत्संः श्रेयसि जातस्ते दिष्टयाऽसौ तव राघवैः ।
 दिष्टया रामो गुणैर्युक्तो मारीच इव कश्यपः ॥^४ २७ ॥
 बलमारोग्यमायुश्च रामस्यै विदितात्मनः ।
 आशास्ते हि जनः सर्वो राष्ट्रेषु नगरेषु च ॥^५ २८ ॥^६
 आभ्यन्तराश्रं वाह्यार्शं पौरजानपदा जनाः ।^७
 स्त्रियो वृद्धास्तकण्यश्च सायं प्रातः समाहिताः ॥ २९ ॥
 सर्वे देवान्नमस्यन्ति^८ रामस्यार्थे महात्मनः ।
 तेषामाशंसितं^९ चैव त्वत्प्रसादाच्च युज्यंताम् ॥ ३० ॥

६३ गु, पू—शुभंते । ६४ गु—च वः । ६५ गु पू रा, पं—कश्चित्क० । वी—कश्चित्क० ।
 ६६ गु—दंशिता । पू, वी—दंशिताः । रा—दंशिताः । चं, पू, पं—दंशिताः ।
 ६७ पू—तान् । ६८ गु, वी—०व्याघ्र । ६९ वी—०ऽपिमा० । ७० पं—
 सर्वेषु । ७१ चं, गु, पू, पू, वी, रा—श्रुत्वा चाभ्युदयं । ७२ पू, वी—
 वत्स । ७३ पू, पू, रा, पं—राघव । ७४ पू—नास्ति । ७५ वी—पौरा जान-
 पदा जनाः । ७६ चं, गु, पू, रा, पं—आशास्ते जनाः सर्वे । ७७ वी—
 नास्ति । ७८ गु—आभ्यांतराश्र । पू—आभ्यंतराश्र । रा—अभ्यंतराश्र । पं,
 अभ्यंतराश्र । ७९ पू, पू, रा, पं—वाह्यार्शं । ८० रा—प्रायः । ८१ गु, वी—समा-
 हितः । ८२ सर्वे देवा नम० । पू—सर्वान्देवान्नम० । रा—सर्वान् देवा-
 न्नम० । ८३ गु, पू, वी—०मायाचितं । चं—तेषामपचितं । पू, रा—
 तेषामपचितं । पं—०मसासितं ।

वीरविन्दीवरध्यामं सर्वशत्रुनिर्घणम् ।

कश्यपेन यौवराज्येण रामं राजीवलोचनम् ॥ ३१ ॥

तं देवदेवोपममात्मबन्तं सर्वस्य लोकस्य हिते निबिडम् ।

अतीवै तं हि प्रमुदारीसखं पुरेऽभिषेक्तुं वरदाहसि त्वम् ॥ ३२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ज्योत्स्नार्कान्ण्डे प्रकृतिवाक्यं

नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

८४ शं—वीरराजानं । ८५ शं—आसीत् कथं । सु, शी—असीत् वा । शं—
असीत् ते । ८६ सु—सखमुदारः । ८७ सु—अयोध्या पर्वणि ॥

[पञ्चम सर्गः]

तेषामञ्जलिमालास्ताः प्रतिगृह्य समन्वतः ।
 हृष्टो दशरथो राजा प्रोवाजेदं वचस्तदा ॥ १ ॥
 धन्यो ऽस्म्यनुगृहीतो ऽस्मि भवन्निः प्रियदादिभिः ।
 यन्मे ज्येष्ठं प्रियं पुत्रं सुवराजमिहेच्छथ ॥ २ ॥
 इति राजा ऽनुभाष्यैतानिदं वचनमब्रवीत् ।
 वसिष्ठं वामदेवं च तेषामेवोपशृण्वताम् ॥ ३ ॥
 चैत्रः श्रीमानयं मासः पुण्यः पुष्पितकाननः ।
 यौवराज्याय रामस्य सर्वमेवोपकल्प्यताम् ॥ ४ ॥
 आभिषेचनिकं द्रव्यं यत्किञ्चिद् ज्ञापयन्तु माम् ।
 यन्मया चोपहर्त्तव्यं रामराज्याऽभिषेचये ॥ ५ ॥
 तां तथेति प्रतिज्ञाय नृपतेर्वचनात्तदा ।
 लेखयाञ्चक्रतुद्रव्यं भूपस्यैवोपशृण्वतः ॥ ६ ॥
 कृतमित्येवं चाब्रूतामभिगम्य नराधिपम् ।
 सुप्रीतमनसौ प्रीतं हर्षयन्तौ पुनर्नृपम् ॥ ७ ॥
 ततः सुमन्त्रमाहूय राजा दशरथो ऽब्रवीत् ।
 रामः कृतात्मा भवता क्षीघ्रमानीयतामिति ॥ ८ ॥

१ पं—तेषां प्राञ्जलिमानस्ताः । २ अ, कु—०तानेवं भूवो ऽप्रीद्विषः ।
 ३ अ, कु—रामाय यौवराज्यं मे दातुमत्रैव रोषते । ४ कै—सर्व । ५ अ,
 कु—भवतो । ६ कै—भाषयंतु । ७ पं—०पकर्त्तव्यं । ८ अ, कु—०वचन
 तदा । ९ अ, कु—भूयस्मैतं नर्तवतु । १० पं—०मित्येवमं ब्रूतामधिगम्य ।
 ११ कै—सु तौ नृपम् । पं—पुरं नृपं ।

स तथेति प्रतिज्ञाय सुमन्त्रो राज्ञासनात् ।
 रामं तत्रानिनायार्थं रथेन रथिनां वरैः ॥ ९ ॥
 अथ तत्र समानीतास्तदौ दृश्यरथं नृपम् ।
 प्राच्योदीच्यप्रतीच्याथं दाक्षिणात्याथ भूमिपाः ॥ १० ॥
 म्लेच्छाथ यवनाथैव शर्काः शैलान्तवासिनः ।
 उपासाञ्चक्रिरे सर्वे तं देवा इव वासवम् ॥ ११ ॥
 तेषां मध्ये स राजर्षिर्मरुतामिव वासवैः ।
 प्रासादस्यो रथगतं ददर्शयान्तमात्मजम् ॥ १२ ॥
 गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विश्रुतपौरुषम् ।
 दोर्षबाहुं महासखं मत्तमातङ्गगामिनम् ॥ १३ ॥
 चन्द्रकान्ताननं राममतीवप्रियदर्शनम् ।
 रूपोदार्यगुणैः पुंसां दृष्टिचित्तापहारिणम् ॥ १४ ॥
 धर्माभितप्ताः पर्जन्यं ह्लादयन्तमिव प्रजाः ।
 नातृप्यथै तमायान्तं वीक्ष्यर्षोणो नराधिपः ॥ १५ ॥
 अबतार्य सुमन्त्रश्च राघवं स्यन्दनोत्तमात् ।
 पितुः समीपं गच्छन्तं प्राञ्जलिः पृष्ठतोऽन्वगार्तुं ॥ १६ ॥

१२ अ, कु—तत्रानयां शके । १३ अ, कु—वरं । १४ अ, कु—समा-
 सीमं तदा । १५ पं—०दीच्याञ्चप्र० । “ञ्च” इति कोपयञ्जकधिहो-
 नकृत् । १६ पं—शकः । १७ अ, कु, पं—ते । १८ पं—वासव्यं ।
 १९ पं—चन्द्रकान्ताननं । २० पं—दृष्टिचिता० । २१ अ, कु—नातृप्यत ।
 २२ पं—०यातमीसा० । २३ पं—प्राञ्जलिं । २४ कै—०न्ववात् ।

स तं कैलासमृच्छामं प्रासादं नरपुञ्जवः ।
 आरूढो नृपं द्रष्टुं सर्वं ह्यतेनै राघवः ॥ १७ ॥
 स प्राञ्जलिरभिप्रेत्य प्रणतः पितुरन्तिकैम् ।
 नाम संभावयन् रामो बबन्दे चरणौ पितुः ॥ १८ ॥
 तं दृष्ट्वा प्रणतं पार्श्वे कृताञ्जलिपुटं नृपः ।
 गृहीत्वाऽञ्जलिमाकुर्व्यं सखजे प्रियमात्मजम् ॥ १९ ॥
 तस्मै चाभ्युच्छ्रितं श्रीमान् मणिकाञ्चनभूषितम् ।
 दिदेश राजा रुचिरं रामायानुपमासनम् ॥ २० ॥
 तदासनवरं प्राप्य दीपयामौस राघवः ।
 स्वयेव प्रभया मेरुमुदये विमलो रविः ॥ २१ ॥
 तेन विभ्राजता तत्र सा सभाऽपि^{३३} व्यराजत ।
 विमलग्रहनक्षत्रौ शारदी धौरिवेन्दुना ॥ २२ ॥
 तं स पश्यन्नरपतिस्तुतोष प्रियमात्मजम् ।
 अलङ्कृतमिवात्मानमादर्शतलमास्थितम् ॥ २३ ॥
 स तं सस्मितमामाप्य पुत्रं पुत्रवतां वरः ।
 उवाचेदं बभौ राजा देवेन्द्रमिव कश्यपैः ॥ २४ ॥

२५ अ—कैलाशः । २६ कै—सहितस्तेन । २७ अ, कु—पितुरन्तिके ।
 २८ अ, कु—गृहीताः । २९ कै—स्वयमात्मजम् । ३० अ, कु—वाप्यु-
 षितं श्रीमद् । कै—चाभ्युत्थितं । ३१ अ, कु, पं—भूषणम् । ३२ अ,
 कु—व्यदीपयत । पं—खोदीपयत । ३३ अ, कु—समाति । ३४ कै—
 विवाकमहः । ३५ कै—धौरिवेन्दुना । ३६ पं—भूमिपः ।

ज्येष्ठायामसि मे पैस्व्यां सदृश्यां सदृशः सुतः ।
 उँत्यन्नः संसृगुणैः सृँज्यी मम रामात्मजः प्रियः ॥ २५ ॥
 त्वया यतः प्रजाधेमाः संसृगुणैरनुरञ्जिताः ।
 तस्मात्सं बुध्ययोगेन बीवराज्यमवाप्नुहि ॥ २६ ॥
 कौमं च त्वं^{३७} प्रकृत्यैव विनीतो गुणवीनसि ।
 गुणवत्त्वात् पितृलोहात् पुत्र वक्ष्यामि ते हितम् ॥ २७ ॥
 भूयो विनयमास्थाय मव नित्यं जितेन्द्रियः ।
 कामक्रोधसङ्कृतानि त्यज त्वं^{३८} व्यसन्नानि च ॥ २८ ॥
 परोक्षया ऽपि^{३९} संबुद्धयो राम प्रत्यक्षया तथा ।
 परमां प्रकृतिं दृष्ट्वा परिपाल्याः प्रजास्त्वैया ॥ २९ ॥
 निर्ममो^{४०} निरहङ्कारो भूत्वा राम गुणान्वितः ।
 ततः कालय पुत्रेणाः प्रजाः पुत्रनिषौरसान् ॥ ३० ॥
 योधानमात्यान् हस्त्यर्थान् कोर्ष चावेक्ष्य यत्नवान् ।
 तथा मित्राणि मर्ष्यस्नानमित्रांधानुरञ्जिय ॥ ३१ ॥
 तुष्टानुरक्तप्रकृतिर्यः पालयति मेदिनीम् ।
 तस्य नन्दन्ति मित्राणि लब्ध्वाऽमृतमिवावराः ॥ ३२ ॥

३७ कै—यत्वं । ३८ अ, कु—अपत्तत्वं गुणव्येष्टो । ३९ कै, पं—कार्ष ।
 ४० कै, पं—ते । ४१ कै—सुखदानपि । ४२ कु—सुखाकरो । अ—सुख-
 वत्से । ४३ पं—त्यजस्व । अ, कु—त्यजेत् । ४४ अ, कु—मिसं बुद्धया ।
 ४५ कै—प्रतिपांस्याः । ४६ अ, कु—त्वया प्रजाः । ४७ कु—तत्सर्वं ।
 अं—सत्परो । ४८ अ, कु—हस्त्यर्थं । ४९ कै—मर्ष्यस्नानमित्रांधानुर-
 षरंजय । पं—मर्ष्यस्या मित्रं कैधानुरंजियम् ।

तस्मात्पुत्र त्वमात्मानं त्रिभुवैवं समाचर ।
 इति राज्ञो वचः श्रुत्वा नराः त्रिबन्धिनः ।
 त्वरिताः क्षीप्रमन्वेत्य कौशल्यायै न्यवेदवत् ॥ ३३ ॥
 सा हिरण्यं च गन्धैव रत्नानि त्रिविधानि च ।
 ध्यप्रदिदेश त्रिचारुवेभ्यः कौशल्या प्रमदोद्यमा ॥ ३४ ॥
 अथाभिवाद्य राजानं रथमरुह्य राचवः ।
 ययौ स्वं द्युतिमान्नेत्रम जनैवैः पथि पूजितः ॥ ३५ ॥
 ते चापि पौरा नृपतेर्वचस्तच्छ्रुत्वा ततोलाभमनन्तसाधुः ।
 नरेन्द्रमामन्थ्य शूहाणि गत्वा देवान् समानर्चुरतीवृष्टाः ॥ ३६ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामाभिवेकव्यवसायो
 नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥



५० अ, कु—मिश्रम्वैवं । ५१ अ, कु, प—गां वैव । ५२ क—सदा देव्यः ।
 प—न्यवेदवत् । ५३ कु—मिदोद्यमाद्युः । अ—मिदोद्यमाद्युः । ५४ क—
 चर्याः ॥

[षष्ठः सर्गः]

गतेष्वथ नृपो भूयः पौरेषु सह मन्त्रिमिः ।

मन्त्रायित्वा ततश्चक्रे निश्चयज्ञः स निश्चयम् ॥ १ ॥

अथ एव पुष्यो भविता सुतो मे श्वो ऽभिषिच्यताम् ।

रामो राजीवताम्राक्षो यौवराज्य इति प्रभुः ॥ २ ॥ A

अथान्तर्गृहमाविश्य राजा दशरथस्तदा ।

द्वतमाज्ञापयामास रामं० पुनरिहानय० ॥ ३ ॥

प्रतिगृह्य० स० तद्वाक्यं द्वतः पुनरुपययौ ।

रामस्य भवनं शीघ्रं राममानयितुं पुनः ॥ ४ ॥

तेन चावेदितं तस्य रामस्यैगमनं पुनः ।

द्रष्टुमिच्छति राजा त्वां शीघ्रमागन्तुमर्हसि ॥ ०५ ॥

भ्रुत्वा प्रमाणमत्र त्वं गमनायेति राघवं ।

इति द्रुतवचः भ्रुत्वा रामो ऽपि त्वरयाऽन्वितः ॥ ६ ॥

प्रययौ राजभवनं पुनर्द्रष्टुं नरर्षभम् ।

स भ्रुत्वा समनुप्राप्तं रामं दशरथो नृपः ॥ ७ ॥

तूर्णं प्रवेशयामास विबधुः प्रियमुत्तमम् ।

प्रविशन्नेव च श्रीमान् राघवो भवनं पितुः ॥ ८ ॥

ददर्श पितरं दूरात् प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ।

प्रणमन्तं समुत्थाप्य तं परिष्वज्य भूमिपः ॥ ९ ॥

१ वं—भवति । A वं—राममवेदयत्सर्वं प्रणमन्तं पितेन न ।
 ० वं—नास्ति । (त्यक्तं भाति ।) २ वं—पुनरुत्थापयौ । ३ कै—रामस्य
 गमनं । ० वं—नास्ति । (त्यक्तम् ।) ४ कै—राघवः । ५ वं—प्रभुः ।
 ६ वं—स । ७ कु—प्रणमन्तं । अ—प्रणमन्तं ।

प्रदिश्य धास्मै रुषिरमासनं पुनरमषीत् ।
 राम वृद्धो ऽस्मि दीर्घायुर्भुक्त्वा मोगान् वधेष्वितम् ॥ १० ॥
 अश्वत्थिः क्रतुघ्नैस्तथेष्टं भूरिदक्षिणैः ।
 प्राप्तमिष्टमपत्यं मे मयाऽप्यनुपमं भुवि ॥ ११ ॥
 दत्तमिष्टमधीतं च मया पुरुषसत्तम ।
 अनुभूतानि च तेषां वीर राज्यसुखानि च ॥ १२ ॥
 देवर्षिपितृविप्राणामर्षेणो ऽस्मि तथाऽऽत्मनः ।
 न किञ्चिन्मम कर्तव्यं तवान्यत्रामिषेचनात् ॥ १३ ॥
 अतस्त्वां यदहं त्रयां तन्मे त्वं कर्तुमर्हसि ।
 अर्थं प्रकृतयः सर्वास्त्वामिच्छन्ति नराधिपम् ॥ १४ ॥
 अतस्त्वां यौवराज्ये ऽहमभिषेक्ष्यामि पुत्रकं ।
 राश्वन्तै च तयां राम स्वभ्रान् पश्यामि दारुणान् ॥ १५ ॥
 सनिर्घाता महोल्काश्च पतन्ति खरनिःस्वर्णैः ।
 उपसृष्टं च मे राम नैक्षत्रं दारुणैर्ग्रहैः ॥ १६ ॥
 आवेदयन्ति देवज्ञाः सूर्याङ्गारकराहुभिः ।
 प्रायशो हि निमित्तानामीदृशानां समुद्भवे ॥ १७ ॥

८ कै—तस्मै । ९ अ, कु—भुक्त्वा मोगा वधेष्विताः । पं—मुक्त्वा मोगा-
 न्यवेष्विताम् । १० अ, कु—मंत्रवन्निः । ११ अ, कु—जस्तमि० ।
 १२ अ, कु—त्वमप्य० । १३ अ, कु—वेद्यानि । १४ अ, कु—पितृभूता-
 नाम० । १५ अ, कु—अथ । १६ पं—पुत्रकं । १७ पं—तदा । १८ अ—
 पतितान् महास्वनाः । कु—पतितान्..... । पं—पतन्ति हि महास्वनाः ।
 १९ अ—नक्षत्रैः । २० कु—नास्ति । कुचितं मास्ति । २१ पं—एव ।

राजा वा मृत्युमाप्नोति रौज्वं वा नैव ऋण्यति ।
 त्वावदेव चिरं" मे न विदुःकति राघव ॥ १८ ॥
 तावदेवामिषिष्यस्व चला हि प्राणिनां गतिः ।
 अद्य चन्द्रो ऽभ्युपगंतः पुष्यात्पूर्वं पुनर्वसुम् ॥ १९ ॥
 यः पुष्ययोगं नियतं वक्ष्यन्ते दैवचिन्तकाः ।
 तत्र त्वमभिषिष्यस्व मनस्त्वरयतीव माम् ॥ २० ॥
 यस्त्वाऽहमभिषेक्ष्यामि यौवराज्ये परन्तप ।
 तस्मात्त्वयाऽद्य व्रतिना निश्रेयं नियतात्मना ॥ २१ ॥
 सह बन्धोपवस्तव्या दर्मास्तरणशायिनीं ।
 सुहृदस्त्वाऽप्रमत्ताश्चै रक्षन्त्वद्य प्रयत्नतः ॥ २२ ॥
 भवन्ति बहुविधानि कार्याण्येवंविधानि हि" ।
 निष्कासितर्धं भरतो यावदेव पुरादितः ॥ २३ ॥
 तावदेवाग्निषेकस्ते प्राप्तकालो मतो मम ।
 कामं खलु सतां वृषे भ्राता ते भरतः खितः ॥ २४ ॥
 ज्येष्ठानुवर्त्ती धर्मात्मा सानुक्रोशो जितेन्द्रियः ।
 किन्तु चिरं मनुष्याणां जानाम्येवं यथा वैलम् ॥ २५ ॥
 सुतां च धर्मकृत्यानि कृतशोभानि राघव ।
 इत्युक्त्वा सो" ऽभ्यनुवर्त्तैः श्वो यामिन्यग्निषेकने ॥ २६ ॥

२२ अ. कु—रघु वायव्यमुचति । पं—ऋण्यति । २३ अ. कु—कृती ।
 २४ अ. कु—वृषे । २५ अ. कु—ऽत्वाग्निषिष्येयमि । २६ अ. कु—
 दर्मात्तरणशायिनीं । २७ अ. कु—सुहृदस्त्वाऽप्रमत्ताः । पं—सुहृदस्त्वाः
 प्रमत्ताः । २८ अ. कु, पं—सु । २९ अ. कु—मिषिष्यस्व । ३० अ. कु—
 यामिन्यग्निषेकने । पं—जानाम्येवं । ३१ अ. कु—सुहृदस्त्वाः
 (कु—कृती) । ३२ अ. कु—व्यनु ।

ब्रजेति राज्ञीं कञ्जुस्त्री जयन्त संनिषेक्यते ॥
 प्रविश्य चात्मनो वेश्म राज्ञाऽऽदिष्टेऽभिषेकने ॥ २७ ॥
 तस्मिन् क्षणेऽभिनिर्गम्ये मत्तुस्तःपुरं ययौ ।
 प्रणतस्तत्र तामेवं मातरं क्षौमकासतम् ॥ २८ ॥
 ददर्श याचमानां तां देवतापेक्षानि श्रियम् ।
 प्राग्मेव चागता तत्र सुमित्रा लक्ष्मणस्तथा ॥ २९ ॥
 सीता वैवापि^१ तच्छ्रुत्वा प्रियं रामाभिषेकम् ।
 तस्मिन् काले हि कौशल्या तस्याकमीलितेक्षणा ॥ ३० ॥
 सुमित्रयोपास्यमाना सीतया लक्ष्मणेन च ।
 भ्रुत्वा पुष्येण पुत्रस्व यौवराज्याभिषेकम् ॥ ३१ ॥
 प्राणायामेन पुरुषं ध्यायन्ती सा जनार्दनम् ।
 तथा स नियतामेवमभिगम्यामिवाद्य च ॥ ३२ ॥
 उवाच मातरं राज्ञो हर्षविष्यभिर्द वचः ।
 अम्यं मित्रा निवृत्तोऽस्मि प्रजापालनकर्मणि ॥ ३३ ॥
 भविता श्वेऽभिषेको मे वया वै क्षासनं पितुः ।
 सीतया यौववस्तव्या रजनीर्ष मया सह ॥ ३४ ॥
 एवमृत्पितुस्तथावैः सह मत्तुस्तथान् वृषः ।
 यानि चात्यन्तबोण्यानि श्वे माविन्यभिषेकने ॥ ३५ ॥

३३ अ, कु, पं—रामा पितरामनिवासात्प्रसूतम् । ३४ अ—विनिर्गम्य ।
 कु—विनिर्गम्य । पं—विनिर्गम्य । ३५ अ, कु—तत्र तां प्रवृत्तानि च ।
 पं—तत्र तां प्रवृत्तानि च । ३६ अ, कु, पं—आनापिता (पं—आनापिता) भ्रुत्वा ।
 ३७ अ, कु—अद्य ।

तानि मे मङ्गलान्यद्य सीतायाश्चापि कारय ।
 एतच्छ्रुत्वा तु कौशल्या चिरकालामिकांश्चितम् ॥ ३६ ॥
 हर्षवाष्पाकुलं वाक्यमिदं राममभाषत ।
 वत्स राम चिरं जीव हतास्ते परिपंथिनः ॥ ३७ ॥
 ज्ञातीन् मे त्वं^{३६} श्रिया युक्तः सुमित्रायाश्चनन्दयं ।
 कैल्याणे त्वं^{३७} नक्षत्रे मयि जातो ऽसि पुत्रक ॥ ३८ ॥
 येन त्वया दशरथो गुणैराराधितः पिता ।
 अमोघा चार्त्रं मे^{३८} भक्तिः पुरुषे पुष्करेक्षणे ॥ ३९ ॥
 सेयमिक्ष्वाकुराजर्षिंश्रीस्त्वामघाश्रयिष्येति ।
 इत्येवमुक्तो मात्रेदं रामो लक्ष्मणमंत्रवीत् ॥ ४० ॥
 प्राञ्जलिं प्रह्वमासीनमभिवीक्ष्य स्मितान्वितः ।
 लक्ष्मणेमां मया सार्द्धं प्रशाधि त्वं वसुन्धराम् ॥ ४१ ॥
 द्वितीयो मे ऽन्तरात्मा त्वं त्वामियं श्रीरूपस्थिता ।
 सौमित्रे^{४०} ह्येक्ष्व मोगांस्त्वमिष्टान् राज्यफलानि च ॥ ४२ ॥
 जीवितं चापि राज्यं च त्वदर्थमभिकामये ।
 इत्युत्त्वा लक्ष्मणं रामो मातरावभिवाद्य च ।
 अम्यनुज्ञाय सीतां च जगाम स्वं निवेशनम् ॥ ४३ ॥
 इत्यार्षे-रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामराज्योपनिमंत्रणं
 नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

३८ अ, कु, प-वैदेह्याश्चापि(कु-मि) । ३९ अ, कु-ज्ञातीनां । ४० अ,
 कु-मन्वम । ४१ अ, कु-कल्याणवति । पं-०त्वं तु । ४२ अ, कु-वत ।
 ४३ पं-घा । ४४ अ, कु-०राजर्षिः० । ४५ अ, कु-ज्ञातरामः० । ४६ अ,
 कु-वैव । ४७ पं-०मिकांश्चिते । ४८ अ, कु-०ज्ञाप्य ।

[सप्तमः सर्गः]

स चिन्तयानो^१ नृमतिःश्लोभाविन्यमिवेचने ।
 पुरोहितं समाहूय बसिष्ठमिदमब्रवीत् ॥१॥
 गच्छोपवासं काकुत्स्थं कारयाद्य तपोधन ।
 श्रीयशोराज्यलामाय बध्वा सह यत्प्रव्रतम् ॥२॥
 तथेति च स राजानमुक्त्वा वेदविदां वरः ।
 स्वयं बसिष्ठो भगवान् ययौ रामनिवेशनम् ॥३॥
 उपवासयितुं रामं मंत्रविन्मंत्रपारगः ।
 ब्राह्मं रथवरं युक्तमास्थाय स^२ धृतव्रतः^३ ॥४॥
 स रामभवनं प्राप्य पांडुराभ्रचयोपमम् ।
 तिस्रः कक्षा^४ रथेनैव विवेश मुनिपुंगवः^५ ॥ ५ ॥
 तमागतमृषिं रामस्त्वरमाणः ससंभ्रमः ।
 मानयिष्यन्स मानार्हं निश्चक्राम निवेशनात् ॥ ६ ॥
 अभ्येत्य त्वरमाणश्च रथाभ्याशं मनीषिणः ।
 ततोऽवतारयामास परिगृह्य रथात्स्त्रयम् ॥ ७ ॥ A1
 म चैनं प्रश्रितं दृष्ट्वा प्रसंभाप्य^६ प्रशस्य^७ च ।^१

1 कै—चिन्तमानो । 2 कै—मधुनव्रतः 'च' इत्युपरिलिखितं मकार-
 स्थाने केनचित्, अन्यथा लेखिन्या । अ, कु—सुधृत० । 3 कै—कक्षा ।
 4 अ, कु, पं—०सप्तमः ।

A1 कै—सं रथात्स्त्रयरोहंतं चिद्धानभ्यागतं गुरुम्
 आलोकात्तरयामास प्रत्युदच्छन् स राधवः
 प्रहो बध्मममार्कासस्त्रयौ रामः कृताञ्जलिः
 कामाद्भिमुखास्तस्थौ संभाष्यामिप्रशस्य च

5 कै—स संभोग्य । 6 पं—प्रहस्य । 7 कै—स तु प्रविष्य भवनं रामस्य
 मुनिपुंगवः ।

प्रियार्हं हर्षयन् राममित्युवाच पुरोहितः ॥ ८ ॥
 प्रसन्नस्ते पिता राम यौवराज्यमवाप्स्यसि ।
 उपवासं भवानद्य करोतु सह सीतया ॥ ९ ॥
 प्रातस्त्वामभिषेक्ता हि यौवराज्ये नराधिपः ।
 पिता दक्षरथः प्रीत्या ययातिं नहुषो यथा ॥ १० ॥
 इत्युक्त्वा स तदा राममुपवासं यतव्रतम् ।
 मंत्रवत्कारयामास वैदेद्या सहितं धुनिः ॥ ११ ॥
 ततो यथावद्रामेण स राज्ञो^{१०} गुरुरर्चितः ।^{A2}
 अभ्यनुज्ञाय^{११} काकुत्स्थं ययौ राजनिवेशनम् ॥ १२ ॥
 सुहृद्भिस्तत्र रामो ऽपि महार्यश्च^{१२} प्रियंवदः ।
 सभाजितो विवेशां तस्ताननुज्ञाय^{१३} सर्वशः ॥ १३ ॥
 हृष्टनारीनरयुतं राजवेश्म तदा बभौ ।
 यथा मत्तडिजगणं प्रफुल्लनलिनं सरः ॥ १४ ॥
 स राजभवनं गच्छन् धुनिः कैलाससभिमम् ।^{१४}
 सर्वतो दृष्ट्वा मार्गं वसिष्ठो जनसंकुलम् ॥ १५ ॥
 वन्दिद्वन्दैरथोध्यायां^{१५} राजमार्गाः समन्ततः ।

८ अ, कु—मंत्रवित० । ९ कु—गजा । अ—राज- ।

A2 पं—स्वस्ति पुण्याहधेषु देवनात्रमथेषु च ॥

प्रसादं गणेषु राज्ञः शिग्मा प्रतिगृह्य च ।

स्पर्शयामास गुग्मे सहस्राणि गणां दद्या ॥

१० अ, कु—०ज्ञाप्य । ११ अ, कु—सहासीनैः । १२ अ, कु—०ज्ञाप्य ।

१३ अ, कु—स रामभवनाभिर्यामुनिः कैलाससभिमात् । १४ अ, कु—

सुंदर० । पं—वेदिद्व० ।

बभूवुरतिसंवाधा^१ जर्नर्जातकुतूहलं ॥^{०-१६} ॥

तदा^१ हि^१ मृगमानस्य^१ हर्षोद्भूतोर्मिभिर्जनैः ।^(०)

बभूव राजमार्गस्य सागरस्येव निस्वनः ॥ १७ ॥

मिक्तसंमृष्टरथ्या हि मा राजपथमालिनी^{११} ।

आसीदयोध्या नगरी समुच्छ्रितगृहध्वजा^{११} ॥ १८ ॥

तदा ह्ययोध्यानिलयः स्त्रीबालसहितो^{११} जनः^{११} । A३

रामाभिवेकमाकांक्षन्नाकांक्षन्नुदयं^{११} रवेः ॥ १९ ॥

प्रजालंकारभृतं च^१ जनस्यानन्दवर्द्धनम् ।

उत्सुको ऽभूज्जनो द्रष्टुं तमयोध्यामहोत्सवम् ॥ २० ॥

एवं तं^{११} जनसंवाधं राजमार्गं पुरोहितः ।

व्यूहभिव जनौधं तं^{११} तदा राजकुलं ययौ ॥ २१ ॥

सिताभ्रशिखरप्रख्यं प्रामादमधिरुद्धं^{११} सः ।

समियाय नरेन्द्रेण शक्रेणेव बृहस्पतिः ॥ २२ ॥

तमागतमभिप्रेक्ष्य हिन्वा राजासनं नृपः ।

पप्रच्छ स च तस्मै तत्कृतमित्यभ्यवेदयत् ॥ २३ ॥

तेनैव च तदा तुल्याः सहासीनाः सभासदः ।

आसनेभ्यः समुत्सस्थुः पूजयन्तः पुरोहितम् ॥ २४ ॥

1) पं - संवाधा । 16 पं - तथा । 17 कु - मित्तुज्यमानस्य । 0अ -
स्यकम् । 18 कै - शालिनी । 19 अ, कु - बभूवजा । 20 अ, कु -
सस्त्रीबालजनो । ११ - सस्त्रीबालयुवा । 21 कु - जनः । A३ पं - न सुव्याप
तदा दारौ महर्षोःस्तुकमानसः । 22 पं - माकांक्षन्नुदयं च तथा । 23 अ,
कु - हि । 24 अ, कु - तु । पं - स । 25 पं - तु । 26 अ, कु -
मामेवम् ।

गुरुषा सोऽन्वनुज्ञातो मनुजौषं विसृज्य तम् ।
 विवेशान्तःपुरं राज्ञां सिंहो गिरिगुहामिव ॥ २५ ॥
 तदत्सुदप्रमदाजनाकुलं^{२७} महेन्द्रवेशमप्रतिमं निवेशनम् ।
 सुशोभनं^{२८} चारुं^{२९} विवेश पार्थिवःशश्रीव तारागणमण्डितं^{३०} नमः । २६ ।
 इत्यायं रामायणेऽथोध्याकाण्डे रामोत्सवो^{३०}
 नाम सप्तमः सर्गः^{३०} ॥ ७ ॥

२७ अ, कु-तदत्सुदप्रं प्रमदा० । पं-तदत्सुदप्रं प्रमदा० । २८ अ, कु-
 संशोभनं चारुम् । पं-सुशोभनं चारुम् । २९ अ, कु, पं-चारुं चारुम् ।
 ३० अ, कु-रामायणेऽथोध्याकाण्डे रामोत्सवो नाम सप्तमः । पं-रामायणेऽथो
 ध्याकाण्डे रामोत्सवो नाम सप्तमः ।

[अष्टमः सर्गः]

गते पुरोहिते रामः स्नातः ब्रह्मन्मानसः ।
 सह पत्न्या विवेक्षाद्य लक्ष्म्या नारायणो वधा ॥ १ ॥
 प्रगृह्य क्षिरसा पात्रं^१ हविषो विधिवत्तदा ।
 महते दैवतायाज्यं जुहाव ज्वलिते ऽजले ॥ २ ॥
 शेषं च हविषस्तस्य प्राश्याशास्यात्मनो^२ हितम्^३ ।
 ध्यायन्नारायणं देवं स्वास्तीर्णे^४ कुञ्जसंस्तरे ॥ ३ ॥
 वाग्यतः सह वैदेह्या भूत्वा नियतमैयुनः^५ ।
 श्रीमत्यायतने विष्णोः शिष्ये नरवरात्मजः ॥ ४ ॥
 एकयामावशिष्टायां रांश्यां च प्रतिबुद्ध्य सः^६ ।
 अलंकारविधिं कृत्स्नं कारयामाम वेश्मनः ॥ ५ ॥
 ततः शृण्वन् शुभा वाचः स्रुतमागधवन्दिनाम् ।
 पूर्वा मन्ध्यासुपामीनो जज्ञाप यतमानमः ॥ ६ ॥
 तुष्टाव^७ प्रणतर्ध्वं^८ प्रणम्य मधुसूदनम् ।
 विमलक्षौमसंबीतो वाचयामाम च द्विजान् ॥ ७ ॥
 तेषां पुण्याहघोषो ऽथ गंभीरमधुरस्तदा ।
 अयोध्यां पूरयामास तूर्ध्वोषधिमिश्रितः ॥ ८ ॥
 कृतोपवासं च^९ तदा^{१०} वैदेह्या^{११} सह^{१२} राघवम्^{१३} ।
 अयोध्यानिलयः श्रुत्वा सर्वः प्रमुमुदे जनः ॥ १० ॥
 सतः पौरजनः सर्वः श्रुत्वा रामामिषेचनम्^{१४} ।
 प्रभासां रजनीं दृष्ट्वा चक्रे क्षोभां परां पुनः ॥ १० ॥

1 अ, कु-सात्री । 2 पं-सात्रवाचन्यत्समहितः । 3 पं-हृत्तीर्थ ।
 4 कै-अश्वत्थः । 5 कै-राशौ च प्रतिबुद्ध्य ह । 6 कै-सतः स । 7 अ-अपवा-
 ह-अपवा- । 8 पं-“च तदा” इत्यारभ्य “क्षितासी” इत्यन्तं समाप्तम् ।

सिताम्न^०-शिखराग्रेषु^९ देवतायतनेषु च ।
 चतुष्पथेषु रथ्यासु चैत्येष्वट्टालकेषु^{१०} च ॥ ११ ॥
 नानापण्यसमृद्धेषु बणिजामापणेषु च ।
 कटुंविनां समृद्धानां श्रीमत्सु भवनेषु च ॥ १२ ॥
 सभासु च^{१०} सुरम्यासु सभ्यानामालयेषु च^{१०} ।
 ध्वजाः समुच्छ्रिताश्चित्राः पताकाश्चाभवंस्तदा^{११} ॥ १३ ॥
 नटनर्तकमंथानां गायकानां^{१२} च गायताम् ।
 मनःकर्णसुखा वाचः श्रयन्ते स्म समन्ततः ॥ १४ ॥
 रामामिष्टवसंयुक्ताः कथाश्चक्रमिथो जनाः ।
 रामामिषेके संग्राप्ते चत्वरेषु गृहेषु च ॥ १५ ॥
 बालाश्चापि क्रीडमाना गृहद्वारेषु सर्वशः^{१३} ।
 रामामिषेकमंयुक्ताश्चक्रिरे^{१४} ते मिथः कथाः ॥ १६ ॥
 छतपुष्पोपहारश्च धूपगन्धाधिवासितः^{१५} ।
 राजमार्गः कृतः श्रीमान् पौरैः रामामिषेचने ॥ १७ ॥
 प्रकाशगमनार्थं च निशागमनशंकया ।
 दीपवृक्षांस्तथा चक्ररनुरथ्यासु सर्वशः^{१६} ॥ १८ ॥
 अलंकारं पुरस्फेवं कृत्वा तत्पुरवासिनः ।
 आकांक्षन्तो^{१७} हि^{१४} रामस्य यौवराज्यामिषेचनम् ॥ १९ ॥
 समेत्य संबशः^{१८} सर्वे चत्वरेषु^{१९} सभासु च ।
 कथयन्तो मिथस्तत्र प्रशशंसुर्नराधिपम्^{२०} ॥ २० ॥

8 अ, कु-०पग्रेषु । 9 अ, कु-शिखराग्रेषु । 10 अ, कु-चैव सर्वासु बृक्षेषु-
 कक्षितेषु च । पै-च समस्तासु बृक्षेषूपवनेषु च । 11 अ, कु-०स्तथा ।
 12 अ, कु, पै-गायनामां । 13 अ-सर्वतः । 14 अ, कु, पै-रामामिष्टव० ।
 15 अ-००वृक्षादिषु । 16 अ, कु-सर्वतः । 17 अ, कु-आर्षांसमाचर ।
 18 सद्दशा । 19 क-चत्वर्येषु । 20 अ, कु-प्रायःसंस्तौ नराधिपम् ।

अहो महानयं राजा इक्ष्वाकुकुलनन्दनः^{२१} ।
 ज्ञात्वा^{२२} यो^{२३} वृद्धमात्मानं रामं राज्ये ऽभिषिचति^{२४} ॥ २१ ॥
 सर्वे सनुगृहीताः स्मो^{२५} यन्ने रामो महीपतिः ।
 चिराय भविता गोप्ता दृष्टतत्त्वपरावरः ॥ २२ ॥
 अनुद्धतमना विद्वान् धर्मात्मा भ्रातृवत्सलः ।
 यथा भ्रातृष्वपि^{२६} स्निग्धस्तथास्मास्वपि^{२७} राघवः ॥ २३ ॥
 चिरं जीवतु धर्मात्मा राजा दक्षरथो ऽनघः^{२८} ।
 यत्प्रसादादभिषिक्तं द्रक्ष्यामो राघवं वयम् ॥ २४ ॥
 मिथः कथयतामेवं पौराणां शुश्रुवे^{२९} तदा ।
 दिग्भ्यो ऽपि श्रुतवृत्तान्तः प्राप्तो जानपदो जनः ॥ २५ ॥
 स तु दिग्भ्यः पुरं^{३०} प्राप्तो द्रष्टुं^{३१} रामाभिषेचनम्^{३०} ।
 सर्वं^{३२} च^{३३} पूरयामास पुरं^{३४} जानपदो जनः ॥ २६ ॥
 जनौघैस्तौर्विसर्पाङ्घ्रिः शुश्रुवे तत्र निःस्वनः^{३५} ।
 पर्वश्वदीर्णवेगस्य सागरस्येव गर्जतः^{३६} ॥ २७ ॥
 ततस्तदिन्द्रक्षयसभिभं पुरं दिदृक्षुभिर्जानपदैरुपागतैः ।
 समन्ततः सस्वनमाकुलं बभावनेकयादोभिरिवार्णवं^{३७} पयः ॥ २८ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे पुरालंकरणं^{३८}
 नामाष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

२१ अ, कु—०वन्दनः । पं—नेदन । २२ अ—ज्ञात्वात्सौ । २३ अ, कु—
 भिषेक्षति । २४ पं—स्म । २५ पं—च भ्रातृषु । २६ पं—० स्मास्तु च ।
 २७ अ, कु—वपः । २८ पं—शुश्रुवे । २९ अ, कु, पं—पुरीं । ३० अ कु,
 पं—द्रष्टुकामोभिषेचनं । ३१ अ, कु, पं—रामस्य । ३२ अ, कु, पं—पुरीं ।
 ३३ अ, कु, पं—निस्वनः । ३४ अ, कु—निस्वनः ३५ अ—०वार्णव—
 कु—० वार्णवे । ३६ अ, कु, पं—पुरशोभाविधानं ।

[नवमः सर्गः]

ज्ञातिदास्यथ कैकेय्याः सहोढा परिचारिका ।
 प्रासादाग्रमथारूढा^१ तस्मिन् काले यदृच्छया ॥ १ ॥
 सा^२-ददर्शाथ^३ तत्रस्था श्रीमद्राजपथां^४ पुरीम् ।
 समुच्छ्रितध्वजवतीं हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २ ॥
 तां च दृष्ट्वा पुरीं रम्यामलंकृतजनाकुलाम् ।
 सुदूरस्थां समासाद्य धात्रीं काञ्चिदपृच्छत्^५ ॥ ३ ॥
 कस्मात् पौरजनस्यायमतिहर्षो^६ ऽद्य^७ शंभ मे ।
 विकीर्षितं किं नृपतेः कार्यं पौरजनाप्रियम् ॥ ४ ॥
 उत्तमेन च हर्षेण हर्षिताऽद्य विशेषतः ।
 राममाता धनोत्सर्गं कुरुते केन हेतुना ॥ ५ ॥
 इति पृष्ट्वा तथा धात्री कुब्जया भृशहर्षिता ।
 आचक्षे यथावृत्तं यौवराज्याभिषेचनम्^८ ॥ ६ ॥
 श्वः^९ पुण्ययोगेन^१ किल^२ यौवराज्ये स्वमात्मजम् ।
 अभिषेचयिता राजा^३ रामं^४ गुणगणाकरम् ॥ ७ ॥
 तेनाथ^५ हर्षितः सर्वो जनो ऽयमभिषेचने^६ ।
 पुरी चालंकृता पौरै राममाता च हर्षिता ॥ ८ ॥
 इति श्रुत्वाऽप्रियं पापा कुब्जा क्षिप्रममर्षिता ।
 तस्मात्प्रासादक्षिस्वरादवतीर्य त्वरान्विता ॥ ९ ॥

- 1 अ, कु, पं-०प्रमुपाकृता । 2 अ, कु-ददर्श साथ । 3 पं-०जकर्यां ।
 4 अ, कु-०इभाषत । 5 कै-हि । ०पं-नास्ति । त्यक्तं भाति ।
 6 अ, कु-रामं राजा । 7 अ, कु-सर्वगुणाकरम् । 8 अ, कु-तेनाथं ।
 9 अ, कु-रामामि० ।

संरक्तनयना कोपान् मन्थरा पापनिश्चया ।
 शयानामेव कैकेयीमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
 उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे मयं घोरमुपागतम्^{१०} ।
 समभिप्लुतमात्मानं^{११} दुर्मगे नावबुध्यसे ॥ ११ ॥
 वृथा^{१२} सौभाग्यमानेन दुर्मगे त्वं विदस्यसे^{१३} ।
 गिरिनद्या इव स्रोतस्तव सौभाग्यमस्थिरम् ॥ १२ ॥
 तथैवमुक्त्वा कैकेयी संश्रुत्य^{१४} परुषं वचः ।
 कुञ्जायाः^{१५} पापदर्शिन्याः^{१६} प्रदुःसमुपचक्रमे ॥ १३ ॥
 मन्थरे किं^{१७} नु क्रुद्धाऽसि^{१८} कश्चित्क्षेमं निवेदय ।
 विषण्णवदनां^{१९} हि त्वां लक्षयामि सुदुःखिताम् ॥ १४ ॥
 मन्थरा तद्वचः श्रुत्वा कैकेय्याः^{२०} पुनरब्रवीत् ।
 संरंभामर्षताम्राक्षी वाक्यं वाक्यविशारदा ॥ १५ ॥
 भूयो विषादयिष्यन्ती कैकेयीं पापनिश्चया ।
 रामाद्विभेदयिष्यन्ती किल तस्याहितैषिणी ॥ १६ ॥
 अक्षेमं सुमहदेवि तवेदं समुपस्थितम् ।
 रामं दशरथो राजा यौवराज्ये ऽभिषेक्ष्यति ॥ १७ ॥
 साऽस्म्यपारे^{१९} भृशं मग्ना दुःखशोकमहार्णवे ।
 दक्षमानाऽनलेनेव^{२०} त्वद्वितार्थमुपागता ॥^० १८ ॥

10 अ, कु, पं—ते घोरमागतम् । 11 कै—०भिप्लुतमा० । अ, कु—
 समुपप्लु० । 12 अ, कु—तथा । 13 कै—विमुह्यसि । 14 अ, कु—संरंभ—
 15 अ, कु—कुञ्जया पापदर्शिन्या । 16 अ, कु—किमसि क्रुद्धा । पं—
 किमु० । 17 कै—विबर्णा० । पं—विषमवच० । 18 अ, कु—कैकेयीं । कै,
 पं—कैकेय्या । 19 कु—सात्वापारे । 20 अ, कु—प्रतप्ताऽस्म्यनलेनेव ।

तव दुःखेन कैकेयी मम दुःखं" महद्" भवेत् ।
 त्वद्बुद्ध्या मम वृद्धिश्च भवेदिति न संशयः ॥^{२१} ॥^(१)
 [महीपतिकुले जाता महिषी पृथिवीपतेः ।
 उग्रत्वं राजधर्माणां कथं देवि न बुध्यसे ॥ २० ॥
 धर्मवादी शठो भर्ता श्लक्ष्णवक्ता च दारुणः ।
 शुद्धभावे न जानीषे तेनैवमभिर्हिसिता ॥ २१ ॥
 उपस्थितं प्रयुंक्ते ऽमां त्वयि सर्वमनर्थकम् ।
 अर्थेनैवाद्य ते भर्ता कौमल्यां योजयिष्यति ॥ २२ ॥
 अवरुध्य हि शायेन* भगतं तव बंधुषु ।
 कल्पे स्थापयिता रामं राज्ये निहतकंटके ॥ २३ ॥
 शत्रुः पतिप्रवादेन पुत्रेव हितकाम्यया ।
 आशीविष इवाकेन भर्ता परिभृतस्त्वया ॥ २४ ॥
 यथा हि कुर्यात्मपो वा शत्रुर्वाप्यनवेक्षितः ।
 राज्ञा दशरथेनाद्य तथा ते सहसा कृतम् ॥ २५ ॥
 पापेनानृतसत्त्वेन बाला राज्यसुखे स्थिता ।
 'रामं स्थापयिता राज्ये सानुबंधा हता ह्यसि ॥ २६ ॥]^{२३}
 संग्राहकालं कैकेयि क्षिप्रं कुर्वात्मनो हितम् ।^{२४}
 त्रायस्व" सुतमात्मानं" मां^{२५} चैवामित्रकर्षणि^{२६} ॥ २७ ॥

21 अ, कु—दुःखतरं । 22 अ, कु—नव वृद्धी हि मे (कु-मम) वृद्धि-
 हि रिनि मे निश्चिता मतिः । ०पं—नास्ति 23 अ, कु, पं—नास्ति ।
 24 अ, कु, पं—तत्राप्तकालं कैकेयि कर्तुमर्हसि मे वचः । 25 अ, कु, पं-
 रक्ष पुत्रं तथात्मानं । 26 अ, कु—०कर्षणे । पं—जात्येवामित्रकर्षणी ।

तथा कुरु यथा रामं नाभिर्षिञ्चति ते पतिः ।

सकामां कुरु कौशल्यां मा सपत्नीमनिन्दिते ॥ २८ ॥

मन्थराया वचः श्रुत्वा कैकेयी परया^{२७} मुदा^{२८} ।

एकमाभरणं तस्याः^{२९} कुञ्जायाः^{३०} प्रददौ शुभम् ॥ २९ ॥

दत्त्वा चामरणं श्रीमत् प्रीतिदायं प्रहर्षिता ।

कैकेयी मन्थरामेतत् पुनर्वचनमब्रवीत्^{३१} ॥ ३० ॥

यदिदं मन्थरे मस्यमाख्यातं मत्प्रियं हितम् ।

एतत्ते प्रियमाख्यातुं किं वा भूयः करोमि ते ॥ ३१ ॥^{३२}

[दत्त्वा चामरणं तस्याः स्थापनीयकमुत्तमम् ।

कैकेयी मन्थरां दृष्ट्वा पुनरेवाब्रवीद्वचः ॥ ३२ ॥]^{३३}

रामे वा मरते बाहं^{३४} विशेषं नोपलक्ष्ये^{३५} ।

तस्माद्धन्यास्मि^{३६} यद्राजा रामं^{३७} राज्ये ऽभिषेक्षति ॥ ३३ ॥

न मे प्रियं^{३८} किञ्चिदतः परं भवेद् यदद्य राजा सुतमेकमात्मजम्^{३९} ।

गुणाकरं राममुदारविक्रमं स यौवराज्ये^{४०} प्रतिपादयिष्यति ॥ ३४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मन्थराप्रतिबोधनं^{४१}

नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

२७ अ, कु, पं—हर्षिता ततः । २८ अ, कु, पं—मुक्त्वा कुञ्जायै ।

२९ पं—मन्थरां वाक्यमिदं तत्राब्रवीत्पुनः । ३० अ, कु, पं—मन्थरे यस्त्वया

मेथ प्रियमाख्यातमीक्षितं । तत्रेदं (पं—तत्रेदं) प्रीतिदायं ते (कु—प्रिय-

माख्यातु) प्रीत्या (पं—प्रीता) भूयो ववामि ते (पं—व) । ३१ अ, कु,

पं—नास्ति । ३२ अ, कु, पं—वापि विशेषो नास्ति कश्चन । ३३ अ, कु-

तस्मात्प्रियं मे यद्रामं राजा । पं—तस्मात्प्रियतरं रामं राजा । ३४ पं-

ऽप्रियं । ३५ कै—सुतमिहमात्मजम् । ३६ अ, कु—यौवराज्यं । ३७ अ,

कु—मन्थरापरिबोधनं सर्गः । पं—परिबोधनो नाम सर्गः ।

[दशमः सर्गः]

इत्युक्त्वा तत्र कैकेय्या तत्परिक्षिप्य^१ भूषणम् ।
 साद्वयं मन्थरा वाक्यमिदं भूयो ऽभ्यभाषत ॥ १ ॥
 भयस्थाने किमबले हर्षिता त्वमपण्डिते ।
 शोकसागरसंमग्नमात्मानं नावबुध्यमे ॥ २ ॥
 आशीविषस्त्वां दशतु मूढे पण्डितमानिनि ।
 दुर्मगे चाकृतप्रज्ञे^२ विपरीतार्थदर्शिनि ॥ ३ ॥
 कौशल्यां सुभगां मन्ये यस्याः पुत्रो ऽभिषिच्यते ।
 यौवराज्ये पैतृके ऽस्मिन् पुष्येण कृतलक्षणः ॥ ४ ॥
 प्राप्तां सुमहर्दश्वर्यमृद्धामृद्धिविवर्जिता^३ ।
 उपस्थान्यसि कौशल्यां दासीव त्वमपण्डिते ॥ ५ ॥
 ऋद्धियुक्ता श्रियाजुष्टा^४ रामपत्नी भविष्यति ।
 अहृष्टाश्च भविष्यन्ति स्नुषाम्ते करुणालये ॥ ६ ॥
 तां तथा भृशमप्रीतां भ्रवतीं वीक्ष्य मन्थराम् ।
 प्रीता रामगुणानेव कैकेयी प्रशशंस ह^५ ॥ ७ ॥
 घर्मात्मा गुरुवती च कृतज्ञः सत्यवाक् शुचिः ।
 रामो राज्ञः सुतो ज्येष्ठो युवराजत्वमर्हति ॥ ८ ॥

१ अ, कु—तत्परित्यज्य । २ कै-हकृतप्रज्ञे । पं-अकृतप्रज्ञे । ३ कै,
 पं—पुष्येण । ४ पं—वर्जिते । ५ अ, कु—श्रियाविष्टा । ६ अ, कु—
 अधीमती त्वमबुद्धा (अ नृद्धा) स्वजनेन विवर्जिता । पं—अधी-
 त्वयप्रबुद्ध स्वजनेन च वर्जितां । ७ अ, कु, पं—प्रेक्ष्य । ८ अ, कु पं—वै ।

भ्रातृन् सर्वान् स दीर्घायुः पितृवत् पालयिष्यति ।
 मातृणां चैव सर्वासां प्रियाण्युपहरिष्यति^० ॥०६ ॥
 विशेषतः पूजयति^{१०} कौशल्यामप्यतीत्य^{११} माम् ।
 रामो राजीवताम्राक्षः सर्वत्र^{१२} समदर्शनः^{१३} ॥ १० ॥
 अकल्याणं नास्ति रामे प्रदेषश्च महात्मनि ।
 संतापं मा कृथास्तस्माच्छ्रुत्वा रामामिषेचनम् ॥ ११ ॥
 भरतश्चापि रामस्य ध्रुवं वर्षशतात्परम् ।
 पितृपैतामहं राज्यं क्रमप्राप्तमवाप्स्यति^{१४} ॥ १२ ॥
 मा त्वमभ्युदये प्राप्ते ममानन्दे च मन्थरे ।
 भविष्यति च कल्याणे^{१५} कथं^{१६} नु^{१७} परितप्यसे ॥ १३ ॥
 इत्येद्वचनं श्रुत्वा मन्थरा भृशदुःखिता ।
 दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य कैकेयीं पुनरब्रवीत् ॥ १४ ॥
 अनर्थदक्षिण्यप्रद्रे^{१८} नात्मानमवबुध्यसे ।
 अगाधे दुःखपाताले मज्जन्ती^{१७} त्वमनन्तके ॥ १५ ॥
 भविता राघवो राजा रामस्य च सुतस्ततः ।
 तस्यान्यस्तस्य^{१८} चाप्यन्यो^{१९} वंश्यो^{१९} राजा^{१९} भविष्यति ॥ १६ ॥

१० कै—शुभ्रवां स करिष्यति । ०अ—नास्ति । त्यक्तं भाति । १०

कै—पूजयिता । ११ कै—कौशल्यामथवापि । १२ अ, कु, सर्वस्य
 प्रियदर्शनः । १३ अ, कु, क्रमात्प्राप्त० । १४ पं—कल्याणि । १५ कै—
 कस्मात्त्वं । पं—कथं त्वं । १६ कै, पं—क्षालिनी मूढे । १७ अ, कु—
 मज्जते । १८ पं—तस्याप्यन्यतमो वंश्यो । १९ कै—वंशे० । पं—महाराजो ।

राज्यवंशात्^{२०} कैकेयी भरतः परिहास्यते^{२१} ।
 न हि राज्ञां सुतः सर्वे राज्ये तिष्ठन्ति भामिनि^{२२} ॥ १७ ॥
 बहूनामपि पुत्राणमेको राज्ये ऽभिषिच्यते ।
 स्थाप्यमानेषु सर्वेषु सुमहाननयो भवेत् ॥ १८ ॥
 तस्माज्ज्येष्ठेषु पुत्रेषु राज्यतन्त्राणि पार्थिवाः ।
 आसज्जन्त्यनवधानि गुणवत्स्वितरेषु वा^{२३} ॥ १९ ॥
 ते^{२४} च ज्येष्ठाः स्वपुत्रेषु ज्येष्ठेष्वेव^{२५} न संशयः^{२६} ।
 आसज्जन्त्यखिलं राज्यं न भ्रातृषु कथंचन ॥ २० ॥
 अतो^{२६} ऽस्थन्तमपूजार्हस्तव^{२७} पुत्रो भविष्यति ।
 अनाथवत्सुखादीनो राजवंशाच्च शाश्वतात्^{२८} ॥ २१ ॥
 साऽहं^{२९} त्वदर्थं संप्राप्ता त्वं च मोहात्^{३०} बुध्यसे^{३०} ।
 सपत्निवृद्धौ^{३१} या मे त्वं^{३२} प्रदेयं^{३२} दातुमिच्छसि ॥ २२ ॥
 ध्रुवं च भरतं रामः प्राप्य राज्यमकण्ठम् ।
 देशान्तरं वासयिता^{३३} देहान्तरमथापि वा ॥ २३ ॥
 बाल एव हि^{३४} मातुल्यं^{३४} भरतो नायितस्त्वया^{३५} ।
 सभिकर्षाच्चानुरागो देवि सर्वस्य जायते ॥ २४ ॥

20 अ, पं—राज० । 21 अ, पं—० हास्यति । 22 अ, कु—भामिनी ।
 पं—भामिनि । 23 पं, कु—च । 24 अ, कु—राज्याभिषेकं कुर्वति ते च
 ज्येष्ठे । पं—०ज्येष्ठेषु च । 25 पं—संशयम् । 26 पं, कै—अहो । 27
 कै—मित्यमपूजा० । 28 कै, पं—हास्यति । 29 अ, कु—त्वदर्थे । 30 अ,
 कु—मां नावबुध्यसे । 31 अ, कु—सपत्न्य० । पं—सपत्न्यवृद्धौ । 32 कै—
 त्वमदेयं । पं—वं अदेयं । 33 अ—वासयिता । 34 कै—महसुखैर्
 पं—मातुल्ये । 35 पं—वापित० ।

शत्रुघ्नो^{३६} भरते रक्तो^{३७} लक्ष्मणश्चापि राघवे^{३८} ।
 अधिनोरिव सौभ्रात्रमन्योर्लोकविभ्रतम् ॥ २५ ॥
 तस्मान्न लक्ष्मणे किञ्चित्पापं रामः करिष्यति ।
 रामस्तु भरते पापं कुर्यादिति न संशयः ॥ २६ ॥
 मातामहगृहादोवे^{३९} तस्मादयातु^{४०} ते सुतः ।
 वनमाश्रयितुं शीघ्रमेतद्व्यस्य^{४१} क्षमं भवन् ॥ २७ ॥
 एतत्ते^{४२} ज्ञातिपक्षस्य श्रेयः स्यादिति मे मतिः ।
 यदि वा भरतो राज्यं पित्रर्थं^{४३} समवाप्स्यति^{४४} ॥ २८ ॥
 म ते^{४५} मुखोचितो बालो रामस्य सहजो रिपुः ।
 ममृद्धान्यस्य हीनार्थः कथं जीवेत्तवात्मजः ॥ २९ ॥
 अभिद्रुतमिवारण्ये सिंहेन गजयूथपम् ।
 उच्छिद्यमानं^{४६} रामेण भरतं त्रातुमर्हामि ॥ ३० ॥
 दर्पाद्धि नित्यनिकृता^{४७} त्वया सौभाग्यमत्तया ।
 राममाता सपत्नी ते कथं वैरं न यातयेत् ॥ ३१ ॥
 कृते हि रामे ऽद्य^{४८} महीपतौ क्षितौ गमिष्यसि त्वं ससुता परामवम् ।
 अतो ऽनुसंचितय^{४९} राज्यमात्मजे परस्य चैवाद्य विवासकारणम् ॥ ३२ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मन्थरावाक्यं
 नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

३६ अ, कु—मत्तो हि रामः सौमित्रि । ३७ अ कु—राघवं । ३८ अ,
 कु—०हावेव । ३९ अ, कु—०रुगच्छतु । ४० अ, कु—०मेतद्वस्य । ४१
 अ, कु—पथं ते । ४२ अ, कु—पैश्यं धर्मं (कु—धर्म्यं) मवाप्स्यति । ४३
 अ, कु—मे । ४४ कै—उच्छिद्यमानं । ४५ अ, कु—मित्यं निकृता । ४६
 अ, कु—च । ४७ कै—हि सं० ।

[एकादशः सर्गः]

एवमुक्त्वा तु कैकेयी विनिश्चस्याब्रवीद्वचः ।

सत्यं वदसि मे' कुञ्जे जाने ते भक्तिमुत्तमाम् ॥ १ ॥

न तु' पश्याम्युपायं' तं० वेनं० शक्येत० मे० सुतः०

इदं प्रापयितुं राज्यं पितृपैतामहं बलात् ॥ २ ॥

अनुरक्तो नृपश्चापि' रामं गुणगणान्वितम् ।०

स० कथ० राममुत्सृज्य' प्राणेष्वपि प्रियं सुतम् ॥ ३ ॥

भरतं नाम मे पुत्रमभिषिञ्चेदकारणम् ।

प्रव्राजयेच्चापि' नृपः कथं राममकारणं ॥ ४ ॥

इत्येतद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या मन्थरा ततः ।

उवाचेदं विनिश्चित्य स्वबुद्ध्या' पापनिश्चया' ॥ ५ ॥

इमं राममहं'१० क्षिप्रं वनं प्रस्थापयामि ते ।

भरतस्याभिषेकं च कारयामि यदीच्छसि ॥ ६ ॥

श्रुत्वैतन्मन्थरावाक्यं कैकेयी हृष्टमानसा ।

किञ्चिदुत्थाय शयनात् स्वास्तीर्णादिदमब्रवीत् ॥ ७ ॥

कथय त्वं महाप्राज्ञे केनोपायेन मन्थरे ।

भरतः प्राप्नुयाद्राज्यं रामश्चैव वनं व्रजेत् ॥ ८ ॥

एवमुक्त्वा तथा देव्या मन्थरा पापनिश्चया ।

वाक्यं दुःस्त्राय रामस्य कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ ९ ॥

1 कै-मां । 2 अ, कु-इमां वाचमनुत्तमां । 3 अ-व । 4 पं-०मुपा ।
 ०पं-त्येकं । 5 अ, कु-श्चायं । 6 प-त्सृज्य । 7 कु-०येहा तं ।
 अ, पं-०येहापि । 8 कु-०मकारणं । अ-रामस्य कारणम् । 9 अ,
 कु-बुद्ध्या पापनिश्चया । 10 कै-राममहो ।

बन्धिवदानीमात्सङ्घितं¹¹ शृणु मे त्वमिदं¹² वचः ।
 यथा ते भरतः पुत्रो राज्यं प्राप्स्वत्वसंघचक्षु¹³ ॥ १० ॥
 पुरा देवासुरे युद्धे युद्धसज्जः¹⁴ पतिस्तव ।
 याचितो देवराजेन युद्धं कर्तुमितो गतः ॥ ११ ॥
 दिशमास्थाय कैकेयिं दक्षिणां दण्डका¹⁵ प्रति ।
 वैजयन्तमिति ख्यातं पुरं यत्र तिमिष्वजः ॥ १२ ॥
 स शंबर इति ख्यातो बहुमायो महासुरः ।
 ददौ शक्राय संग्रामं दैवसंघैर्विनिर्जितः¹⁶ ॥ १३ ॥
 तस्मिन्महति संग्रामे राजा शक्रपरिष्वतः ।
 विजित्याम्यागतो¹⁷ देवि त्वयोपचरितः स्वयम् ॥ १४ ॥
 व्रणसंरोपणं¹⁸ चास्य तत्र देवि त्वया कृतम् ।
 परितुष्टेन ते दत्तौ वरौ द्वौ ननु¹⁹ भामिनि²⁰ ॥ १५ ॥
 स त्वयोक्तः प्रतिभृत्य²¹ यदेच्छेयं²² तदा वरौ ।
 गृहीयामिति तत्रैवं²³ तथेत्युक्तं महात्मना ॥ १६ ॥
 अन्यमिच्छा साहं देवि त्वयैव कथितं पुरा ।
 पतिं²⁴ वरौ तौ याचस्व²⁴ भरतस्याभिषेचनम् ॥ १७ ॥

11 अ, कु-हंतेदा० । 12 अ, कु-तदिवं । 13 अ, कु-प्राप्तोत्व० ।
 14 अ, कु-सज्जः । 15 कै-दाडकां । 16 अ, कु-वैरमि० । 17
 कै-स विजयगतो । १८-स विजितागतो 18 अ, कु, १८-संरोपणं ।
 19 अ, कु-तत्र । 20 अ, कु, १९-भामिनि 21 अ, कु, १९-पतिस्तव ।
 22 कै, १९-यदेच्छेयं । 23 अ, कु-तथैव । 24 अ, कु-तौ वरौ वच
 भर्तारं । १९-पतिं याचस्व च वरौ ।

प्रव्राजने च रामस्य वर्षाणि हि चतुर्दश ।
 क्रोधागारं प्रविश्याद्य" भूत्वा" क्रुद्धा" नृपात्मजे ॥ १८ ॥
 शेष्वानन्तर्हितायां" त्वं" भूमौ मलिनवासिनी ।
 राजानं मा निरीक्षिष्ठा" मा माषिष्ठाः" कथंचन ॥ १९ ॥
 सुप्ता भूमावनाथेव दुःखितेव" च भामिनि" ।
 तत्र त्वां शयितां" राजा स्वयं दुःखसमन्वितः ॥ २० ॥
 प्रसादयिष्यति क्षिप्रं प्रष्टा" चार्थविनिर्णयम्" ।
 दयिता त्वं भृशं भर्तुरत्र मे नास्ति संशयः ॥ २१ ॥
 त्वदर्थं हि महाराजः श्रियं दीप्तमपि त्यजेत् ।
 मणिमुक्तासुवर्णानि" रत्नानि विविधानि च ॥ २२ ॥
 यदि दद्याच्च ते राजा" मा स्म तेषु मनः कृथाः ।
 यदा तु तौ वरौ दित्सुः स्वयमुत्थापयिष्यति" ॥ २३ ॥
 सत्येन परिगृह्येनं याचेथास्त्वं" तदा वरौ ।
 रामप्रव्राजनायैकं नववर्षाणि पंच च ॥ २४ ॥
 द्वितीयं शौवराज्याय भरतस्य वरं श्रुमे ।
 तौ" यौ" देवासुरे युद्धे वरौ दशरथो ददौ ॥ २५ ॥

२५ कै—प्रविश्याद्य । २६ अ, कु—क्रुद्धा भूत्वा । २७ कै—शया-
 नांतर्हिता चालं । पं—शयनांमन्तरितायास्त्वं । २८ अ, कु, पं—निरीक्षस्व ।
 २९ पं—आचस्व । ३० अ, कु, पं—दुःखिता नाम (पं—राग) भामिनी
 (अ—०नि) । ३१ कु—शयितां । ३२ अ, कु—प्रक्षयत्वपि च निर्णयं ।
 पं—दृष्ट्वा चाप्यवनिगतां । ३३ कै—यदि नु० । पं—यदा नु० । ३४ अ,
 कु, पं—भर्ता । ३५ अ, कु—०पयेत्यतिः । ३६ अ, कु—०थास्तु । ३७ अ,
 कु—यौ तौ ।

तौ स्मारयित्वा याचेथाः पश्चादेतव्" वरद्वयम् ।
 रामप्रव्राज्जनं देवि" राज्यप्राप्तिं सुतस्य च ॥ २६ ॥
 याचेथा भुवि" कल्याणि मा त्वां कालो ऽस्वगादयम्" ।
 ध्रुवं प्रव्राजितश्चैव रामो मद्रे भविष्यति ॥ २७ ॥
 भोक्ष्यते चापि पुत्रस्ते ध्रुवं राज्यमकंटकम् ।
 येन कालेन काकुत्स्थो वनात्प्रत्यागमिष्यति ॥^० २८ ॥
 मरतो ऽनेन कालेन बद्धमूलो भविष्यति ।
 संगृहीतमनुष्यश्च कोषवांश्च भिया युतः ॥ २९ ॥
 ऋजुस्वभावे बुध्यस्व सौभाग्यबलमात्मनः" ।
 न त्वां क्रोधयितुं शक्तो न च क्रुद्धाहपेक्षितम् ॥ ३० ॥
 तव प्रियार्थे राजा हि प्राणानपि परित्यजेत् ।
 न व्यतिक्रमितुं" शक्तस्तव वाक्यं महीपतिः ॥ ३१ ॥
 प्राप्तकालं तु" ते" मन्ये राजानं" जितसाध्वसा ।
 रामाभिषेकसंकल्पात् तं" विगृह्य निवर्तय" ॥ ३२ ॥
 *पथ्यरूपमर्ध्वं तदधर्म्यं मन्यरावचः ।
 *जिह्वास्वभावा कैकेयी प्रतिजग्राह मोहिता" ॥ ३३ ॥
 *स्वभाव एव नारीणां मूर्खो ऽपि स्वजनो जनः ।
 *यद्वृत्रवीति तदेवाशु संगृह्णन्त्यविमृश्य" हि ॥ ३४ ॥

38 अ, कु—पश्चादेव । 39 अ, कु—चैव । 40 अ, कु—भावि-
 कल्याणं ध्रुवं प्राप्स्यति ते सुतः । ० कै, पं—नास्ति । त्यक्तं माति । 41
 अ, कु—०कल० । 42 अ, कु—क्षति० । 43 अ, कु—ततो । 44 अ,
 कु—राजन्त्ये । 45 अ, कु—राजानं विनिवर्तय । पं—विगृह्य विनिवर्तय ।
 46 पं—भेदिता । 47 पृष्ठात्पथ्यवि० । कै—०विमृश्य । *अ, कु—नास्ति ।

- *सा तेन कुब्जा वाक्येन मृगीवोत्कुललोचना ।
 *व्याधेन गीतसंलोमादनर्थे सञ्जिवेशिता ॥ ३५ ॥
 *अर्थाधानर्थरूपेण " अनर्थाधार्यरूपिणः " ।
 *आविशन्ति विनाशाय नरं तथास्य रोचते ॥ ३६ ॥
 अनर्थमर्थरूपेण सा ददर्श तयोदिता ।
 नहि तद्बुधे पापं श्वापदोषेण मोहिता ॥ ३७ ॥
 केकयेषु^{५०} हि सा^{५१} बाल्ये^{५२} ब्राह्मणं मूर्खरूपिणम्^{५३} ।
 असूयितवती बाला तेन शप्ता महात्मनः ॥ ३८ ॥
 यस्मादसूयसे विप्रं त्वं रूपमददर्पिता ।
 तस्मादसूयां त्वमपि लोके प्राप्स्यसि कुत्सिताम् ॥ ३९ ॥
 इति शापसमाच्छ्रमा मन्थरावशमागता ।
 अवीचदृष्टा कैकेयी मन्थरां परिपस्वजे ॥ ४० ॥
 परिष्वज्य ततो गाढं कैकेयी हर्षविह्वला^{५४} ।
 उवाच वचनं धीरा कुब्जां तां पापदर्शिनीम् ॥ ४१ ॥
 *सम्यगुक्तं त्वया कुब्जे मया च प्रतिपूजितं^{५५} ।
 *साहमेतद्विजानामि पूर्वं ते वाक्यमुत्तमम् ॥ ४२ ॥
 *उपायश्चितितः सम्यक् त्वया बुद्धया^{५६} तु^{५७} पण्डिते ।
 *सुप्तु संस्मारिता ते ऽहं बन्धे दधरन्नो वदौ ॥ ४३ ॥
 *वरौ दवासुरे युद्धे प्राणत्यागं गतो नृपः ।

48 पं—अर्थास्त्वनर्थं । 49 पं—त्वन्नर्थां । *अ, कु—नास्ति ।

50 अ, कु, पं—कैकेयेषु । 51 पं—बाल्ये च । 52 अ, कु—कृत्वा । 53

अ—विह्वला । *अ, कु—नास्ति । 54 पं—प्रतिपाकितं । 55 पं—दुष्वा कु-

- #मम संकगतो राजा तदाऽऽप्सीच्छरपीडितः ॥ ४४ ॥
 #मया च राक्षसमयात् पतिस्नेहेन रक्षितः ।
 #न खलवस्ति बलं किञ्चिन्मम राक्षसवारणे ॥ ४५ ॥
 #मम विद्याबलं त्वस्ति येनाहं दुष्प्रवर्षणा^० ।
 #विद्यायाश्चागमं कुञ्जे शृणु वक्ष्याम्यहं स्वयम् ॥ ४६ ॥
 #परं रहस्यमपि यत्सुहृदां तदधेषतः ।
 #आख्येयमिति^१ धर्मज्ञाः कथयन्ति मनीषिणः ॥ ४७ ॥
 #न हि मे त्वद्विद्या लोके काचिदस्ति हितेषिणी ।
 #मया प्रहसितो बाल्ये मूर्खवेशो द्विजोत्तमः ॥ ४८ ॥
 #जीर्णवस्त्रपरिच्छन्नः श्मश्रुलस्तृणभूषणः ।
 #भस्मभूषितसर्वाङ्गो वृद्धो हर्षवशं गतः ॥ ४९ ॥
 #अविज्ञातकथामापथेष्टामिरनवस्थितः ।
 #प्रसन्नवाह विप्रस्त सस्मितां मधुरां गिरम् ॥ ५० ॥
 #प्रीतो ऽस्मि^२ नृपतेः कन्ये ग्रहि किं करवाणि ते ।
 #स मया प्रह्वया भूत्वा बध्ना चाञ्जलिकुण्डलम् ॥ ५१ ॥
 #उक्तो वाक्यमिदं कुञ्जे लज्जया ग्रथिताक्षरम् ।
 #न किञ्चिदहमिच्छामि कृतमेतावता मम ॥ ५२ ॥
 #यन्मे क्रोधं परित्यज्य प्रसन्नस्त्वं द्विजोत्तम ।
 #एवमुक्तेन तु मया तेन हर्षितचेतसा ॥ ५३ ॥
 #ममातिसृष्टा^३ विद्येयं बहुमानान्मया घृता^४ ।

^१अ, कु—वस्ति । 56 घ—०र्षिणी । 57, घ—०द्यमपि । 58 क—ह ।

59 कै—०तिसृष्ट । 60 कै—घृता ।

- *तदिदं सुष्ठु ते कुञ्जे प्रणीतं बुद्धिनिश्चयात् ॥ ५४ ॥
 *विमृष(श्)न्त्या स्वयं बुद्ध्या ममापि रुचितं दृढम् ।
 *रामो यद्यपि धर्मात्मा गुणवान् आतृवत्सलः ॥ ५५ ॥
 *बौवराज्यं महत्प्राप्य व्यथाम्यति^० न संशयः ।
 *राज्यभीर्हि मनुष्याणां बंधुस्नेहापहारिणी ॥ ५६ ॥
 *यथा^० कार्यमकार्यं वा संसृष्टो नावबुध्यते ।
 *रक्षणार्थं च पुत्रस्य भरतस्य महात्मनः ॥ ५७ ॥
 *अवश्यमेतत्कर्तव्यं वचनं मन्थरे^{००} तव ।
 *सा त्वेवमुक्ता कैकेय्या प्रहृष्टा मन्थरामवत् ॥ ५८ ॥
 *प्रत्युवाचाथ कैकेयीमिदं प्रीतिसमन्विता ।
 *दिष्टयाऽवगच्छसि हितं दिष्टया मे सफलःश्रमः ॥ ५९ ॥
 *दिष्टया पुत्रहितं कर्म कर्तुमद्य व्यवस्यसि ।
 *इदं वचोयुक्तमुदाहृतं मया तवालुरागेण सुखायतिथमम् ।
 *अलं विसृष्टेन सुतप्रतीक्षया^० कुरुष्व मूर्धना प्रणतः^० प्रसादये ॥६०॥
 ❀इत्याद्यं रामायणे ऽयोच्याकाण्डे कैकेयीवाक्यं

❀नामैकादशः सर्गः ॥ ११ ॥



* अ, कु—नास्ति । 61 पं—संमेत्य । 62 कै—यथा । 63 पं—
 मन्थरे वचनं । 64 पं—०तीक्ष्णं । 65 पं—प्रणयात् ।

[द्वादशः सर्गः]

*मन्थरायै ततः प्रीता केकेयी प्रमदोत्तमा ।
 *कुण्डले भ्रवणान्मुक्त्वा प्रददौ प्रीतिलक्षणम् ॥ १ ॥
 *दत्त्वा तु कुण्डले देवी तापनीये अनुत्तमे ।
 *अव्यक्तं सुस्मितं कृत्वा मन्थरां प्रशङ्कस ह ॥ २ ॥
 प्रज्ञां ते नावजानामि^१ भेष्टां भेष्टामिभाषिणि^४ ।
 अस्यां पृथिव्यां कुञ्जासु^३ बुद्ध्या नास्ति समा^५ त्वया^६ ॥३॥
 त्वमेव हि^७ ममार्येषु^८ नित्ययुक्ता हितैषिणी ।
 नाज्ञासिपमहं^९ पूर्वं कुञ्जे^{१०} राज्ञधिकीर्षितम्^{११} ॥ ४ ॥
 सन्ति दुःसंस्थिताः कुञ्जे वक्राः परमपापिकाः ।^{१०}
 त्वं पद्ममिव^० वातेन^० नामिता प्रियदर्शना ॥^{११} ५ ॥
 उरस्ते समविस्पष्टं^{१२} शवत्स्कन्धौ समुपतौ^{१३} ।
 अघस्ताबोदरं शान्तं सुनाममवलञ्छितम्^{१३} ॥ ६ ॥

1 पं—त्वदु० । * अ, कु—नास्ति । 3 अ, कु, पं—नामिजानामि ।
 4 अ, कु, पं—भेष्टामिभाषिणि (पं—नी) । 5 अ, कु—कुञ्जेऽप्या । पं—
 कुञ्जेतु । 6 पं—त्वया समा । 7 अ, कु—वैव मको मे । 8 अ, कु—नाहं
 जानामि कुटिलं कुञ्जे । पं—जानासि त्वमहं सर्व्वे । 9 कु—रामश्चकी-
 र्षितं । अ—स्यकं । 10 पं—परमपापिनः । कु—सन्ति दुःसंस्थिताः
 कुञ्जा विरुपा विरुताननाः । ० अ—नास्ति । त्यकमस्ति । 11 कु—त्वं
 तु पद्मातरनिमा कुञ्जे तिमि० । अ—त्वं कुञ्जे तिमि० । पं—वातेन
 सप्तमः प्रिय० । 12 पं—तु वितिह्यं शवत्० । अ, कु—नास्तिनि-
 श्चुण्ममार्कंडामुक्तमुत्तं । 13 अ, कु—विकर्णं च यथा शुभः ।

जघनं तव¹⁴ विस्पर्ष्टं रङ्गनागुणशोभितम्¹⁵ ।
 जंघे मृद्यसमन्यस्ते¹⁶ पादौ च वितताङ्गुली¹⁷ ॥ ७ ॥
 त्वमायताभ्यां सकृद्यभ्यां¹⁸ मन्बरे ह्युल्कवासिनी ।
 अग्रतो मम गच्छन्ती सारसीव¹⁹ विराजसे ॥ ८ ॥
 यदिदं²⁰ ककुदाकारं²¹ कुब्जं ते चारुशोभने²² ।
 मतयः क्षत्रविद्याश्च मायाश्चात्र वसन्ति ते ॥ ९ ॥
 अत्र ते प्रतिमोक्ष्यामि कुब्जे मालां हिरण्मयीम् ।
 अभिषिक्ते च²³ मरते राघवे²⁴ च²⁵ वनं गच्छे ॥ १० ॥
 एतेन²⁶ ते²⁷ सुवर्णेन मणियुक्तेन²⁸ सुंदरि ।
 समृद्धार्था प्रतीताऽहं भूषयिष्यामि ते तनुम्²⁹ ॥ ११ ॥
 मूले च तिलकं कान्तं³⁰ कांचनं कनकप्रमे ।
 कारयिष्यामि ते कुब्जे श्रुमान्यामरणानि च ॥ १२ ॥
 यावदग्रनखं³¹ लिप्ता चन्दनेन सुगन्धिना ।
 परिधाय शुभे वस्त्रे देवतेव³² चरिष्यसि³³ ॥ १३ ॥
 चन्द्रं विस्पर्द्धमानेन मूलेन त्वं³⁴ श्रुमानने ।

14 पं—रसमोगुण० । अ, कु—ते सु—(कु—स) निम्नार्धं रसमादात्मशो० ।

15 कै—दशासम० । पं—प्रतताङ्गुली । अ, कु—दीर्घं तनु कैच पादौ

चाभ्यायती कृदौ । 16 कै, पं—शक्तिभ्यां । 17 अ, कु—गङ्गिका० ।

18 अ, कु—दिहिमीव । 19 अ, कु—यथेदं । 20 कु—कुदाकारं । 21 अ,

कु—वाक्वासीनी । (कु—ना) । 22 अ, कु, पं—सु । 23 अ, कु, पं—रते कैच ।

24 अ—सुजातेन । कु—सुजातेन । पं—जातेन ते । 26 अ, कु—अनुम् ।

27 अ, कु—धिचं । 28 कै—० मूला । 29 अ, कु, पं—देवीव विच० ।

30 अ, कु—च ।

गमिष्यस्यनवर्षाणि नन्दवन्ती^{३१} कुञ्जवनम् ॥ १४ ॥
 तथापि कुञ्जे दास्यो ऽन्याः सर्वाभरणभूषिताः^{३२} ।
 पादौ परिचरिष्यन्ति बभैव मम भामिनि^{३३} ॥०१५ ॥
 एवं^{३४} प्रशस्ता^{३५} कैकेय्या^{३६} कुञ्जा^{३७} भूयोऽब्रवीदिदम् ।
 शवानां शयने ह्युभे^{३८} त्वरयन्तीव तां मृशम्^{३९} ॥ १६ ॥
 गतोदके सेतुबन्धः^{३४} कल्याणि न विधीयते^{३५} ।
 उत्तिष्ठ कुरु कल्याणं राजानं परिमोहय ॥ १७ ॥
 तथेत्यथ प्रतिज्ञाय मन्थरावचनं तदा^{३६} ।
 मरतस्याभिषेकाय कैकेयी कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
 महार्हमणिरत्नाढ्यं मुक्ताहारं वरांगना ।
 अवमुच्य तथाऽन्यानि सर्वाण्याभरणानि च ॥ १९ ॥
 भृशं विभेदिता देवी तथा मन्थरया तदा ।
 क्रोधागारं प्रविरथैका^{३६} सौभाग्यबलगर्विता^{३७} ॥ २० ॥
 तप्तहेमोपमतनुः कुञ्जावाक्यबध्नं^{३८} गता^{३९} ।
 संविश्य भूमौ कैकेयी मन्थरामिदमब्रवीत् ॥ २१ ॥
 अत्र^{३९} वा मां मृतां कुञ्जे मर्तुरावेदयिष्यसि ।
 वनं वा राषवे याते मरतः प्राप्स्यति भिन्नम् ॥ २२ ॥
 न वनानि न वस्त्राणि नालंकाराश्च भोजनम् ।

३१ अ, कु, पं—गर्भवन्ती । ३२ अ, पं—भामिनि । ० कु—“भरण०”
 इत्यादिभ्य “कुञ्जा भू” इत्यन्तं स्वकमस्ति । ३३ अ, कु, पं—देवी
 कैकेयी त्वरयन्तीव । ३४ अ, कु, पं—न कल्याणि प्रशस्तवते । ३५ अ,
 कु—ततः । ३६ कै—प्रविश्यैव । ३७ अ, कु, पं—गर्विता । ३८ अ,
 कु, पं—वधप्रतुगा । ३९ अ, कु—इह ।

आसेवयिष्ये“ ऽहं तावद्यावद्रामो वनं गतः” ॥ २३ ॥
 इतीदमुक्तवा वचनं सुदारुणं निघाय सर्वाभरणानि भामिनी” ।
 असंहृतामास्तरणेन” मेदिनीमथाभिशिष्ये पतितेव किमरी ॥२४॥
 उदीर्णसंरंभमना“ वृत्तानना,” तदा विमुक्तोत्तमदामभूषणा ।
 नरेन्द्रपत्नी विमना बभूव सा तमोहृता घौरिवनष्टमास्करा ॥ २५ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे“ मन्थरावाक्यं
 नाम द्वादशः सर्गः” ॥ १२ ॥

40 अ, कु-आ (कु-अ) सेविष्ये ह्यहं । 41 अ, कु-अजेद् । 42
 र्णं, कु-अभिनी । 43 अ, कु-असंहृतां संस्तरणेन । 44 अ, कु-
 संरंभमोहृता० । 45 अ, कु-यम प्रमाजनोपावधितासर्गः । कै-द्वादशः
 सर्गः ।

[अयोदशः सर्गः]

आज्ञाप्य^१ तु महाराजो राघवस्यामिवेषनम् ।
 कैकेय्याः प्रियमाख्यातुं विवेशान्तःपुरं ततः^२ ॥ १ ॥
 तां तत्र पतितां भूमौ शयानामतथोचिताम् ।
 प्रतप्त इव दुःखेन शुभाब जगतीपतिः ॥ २ ॥
 स वृद्धस्तरुणीं मार्यां प्राणेभ्यो ऽपि गरीयसीम् ।
 अपापः पापसंकल्पामुपचक्राम दुःखितः ॥ ३ ॥
 सर्वलोकाप्रियं मृढामनर्थमपि^३ चात्मनः^४ ।
 कर्तुं^५ प्रयतमानां तां ददर्श पतितां भुवि ॥ ४ ॥
 [लतामिव विनिष्कृष्टां पतितां देवतामिव ।
 प्रतप्तामिव दुःखेन विज्ञाय जगतीपतिः ॥ ५ ॥]^६
 करेणुं^७ विषदिग्धेन^८ विद्धां^९ व्याधेन दुःखिताम् ।
 महागज इवासाद्य स्नेहात् पस्पर्शं^{१०} तां नृपः^{११} ॥ ६ ॥
 स तां विमृज्य^{१२} पाणिभ्यामतिसन्नस्तचेतनः^{१३} ।
 उवाच राजा कैकेयीं श्वसन्तीश्वरगीमिव^{१४} ॥ ७ ॥
 न ते ऽहमिजानामि क्रोधमात्मनि संयतम् ।

1 कै—आज्ञाप्य । 2 अ, कु, पं—नृपः । 3 अ, कु—०मनर्थं लोक-
 गर्हितम् । पं—०मनर्थं लोकविभ्रतं । 4 अ, कु, पं—अर्थासमाप्तां
 संप्राप्तो । 5 अ, कु, पं—नास्ति । 6 अ, कु, पं—करेणुमिव दिग्धेन ।
 7 पं—विद्धामत्यंत- । 8 अ, कु—परिमार्जं तां । 9 पं—विमृज्य । 10
 अ, कु—०स्तलोचनः । पं—०मस्तुशतश्वचेतनः । 11 पं—०तीं कुरपे-
 मिव ।

देवि केनामिश्रस्ताऽसि^{१२} केन वाऽसि विमानिता ॥ ८ ॥
 यदिदं मम दुःखाय शेषे कल्याणि दुःखिता ।
 सति^{१३} देवि महाराज्ञि^{१४} मयि कल्याणचेतसि ॥ ९ ॥
 भूतोपहतचितेव मम चित्तप्रमाथिनी ।
 सन्ति मे कुशला वैद्याः सुविमक्ताश्च^{१५} वृत्तिभिः ॥ १० ॥
 अगदां त्वां^{१६} करिष्यन्ति व्याधिमाचक्ष्व^{१७} मामिनि^{१८} ।
 यस्य^{१९} वाते प्रियं कार्यं येन^{२०} वा विप्रियं^{२१} कृतम् ॥ ११ ॥
 कः प्रियं लभतामद्य को वा सुमहदप्रियम् ।
 केन देव्यमिश्रस्ताऽसि^{२२} केन वाऽसि^{२३} विमानिता ॥ १२ ॥
 अवध्यो वध्यतां को ऽद्य^{२४} वध्यो^{२५} वा को^{२६} विमुच्यताम् ।
 दरिद्रः को भवत्वाढ्यो धनवान् को ऽस्त्वर्किचनः ॥ १३ ॥
 यदस्ति मे धनं किञ्चिद्यस्य देवि त्वमीश्वरी ।
 यावदावर्तते^{२७} चक्रं तावती^{२८} मे^{२९} वसुन्धरा ॥ १४ ॥
 प्राच्याश्च सिन्धुसौवीराः^{३०} सुरसावर्त्तयस्तथा ।
 वंगांगमगधा देशाः समृद्धाः काशिकोसलाः^{३०} ॥ १५ ॥

12 अ, पं—शस्तासि । 13 अ, कु—भूमौ पांशुष्वनाथेव । 14 अ, कु—
 क्षत्रि० । 15 अ, कु—ते । 16 अ, कु—न्यकमाचक्ष्व । 17 कु—भाषिणि ।
 पं—भाषिनी । अ—मामिनी । 18 अ, कु—कस्य । 19 अ, कु, पं—केन ।
 20 अ, कु—ते प्रियं । 21 अ, कु, पं—देव्यमिश्रस्तासि । 22 अ, कु,
 पं—वाप्य । 23 अ, कु—वा । 24 कै—वदो । पं—वदो । अ, कु—वध्यो ।
 25 कै—ऽद्य । 26 अ, कु—वत्यव० । 27 अ, कु—तावतेषा । 28
 पं—सौवीराः 29 पं—सुराष्ट्रव्यवर्त्तयस्तथा । 30 पं—काशिकोशकमेकल ।

तत्र जातं बहु द्रव्यं धनधान्यमनन्तकम्^{३१} ।
 ततो वृणीष्व कैकेयि यावत्त्वं मम शंकरे ॥ १६ ॥
 वयं चैव मदीयाश्च सर्वे तव वशानुगाः ।^{३२}
 न ते किञ्चिदभिप्रायं व्याहन्तुमहमुत्सहे ॥^{३३} १७ ॥
 आत्मनो जीवितेनापि ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।^{३४}
 बलमात्मनि जानामि न मां शंक्तिमर्हसि^{३५} ॥^{३६} १८ ॥
 करिष्यामि तव प्रीतिं सुकृतेनापि ते शपे ।
 किमायासेन ते भीरु शीघ्रमुत्तिष्ठ शोमने ॥ १९ ॥
 तत्त्वं मे ब्रूहि कैकेयि यतस्ते मयमागतम् ।
 तत्ते ऽहमपनेष्यामि नीहारमिव रश्मिवान् ॥ २० ॥
 पृथिव्यां सर्वराजोऽस्मि^{३७} सम्राडस्मि^{३८} महीक्षिताम् ।
 पृथिव्यां वररत्नानां प्रभुरस्मि शुचिस्मिते ॥ २१ ॥^{३९}
 ददामि^{४०} यत्ते रुचितं^{४०} कोपं मैवं^{४०} कृथाः प्रिये ।^{A1}
 [तं मन्मथशरैर्विद्धं कामवेगवशानुगम् ॥ २२ ॥

३१ पं—घनं० । ३२ पं—नास्ति । ३३ पं—“आत्मनो” इत्यारब्ध
 “शपे” इत्यन्तं, “त्वमीश्वरी” इत्यनन्तरं पठ्यते । ३४ कै—किं मंतुमर्हसि ।
 ३५ अ, कु—राजराजो । ३६ अ, कु—सम्राट् सर्व । ३७ पं—नास्ति ।
 ३८ अ, कु—दवानि । ३९ अ, कु—मिमत्तं । ४० अ, कु—मात्वं ।
 पं—माव ।

A1. अ, कु—न ते किञ्चिदभिप्रेतं न कर्तुमहमुत्सहे ।

आत्मनो जीवितेनापि करिष्ये ते प्रियं प्रिये [१]

अ, कु, पं—यद्यमुक्ता समुत्थाय विबभूवुर्धृष्टमप्रियं ।

परिपीडयितुं भूयो मर्त्यां साम्यभाषत [२] ॥

उवाच पृथिवीपालं कैकेयी दारुणं वचः ।] ¹
 नास्मि विप्रकृता² देव केनचिन्नावमानितं ³ ॥ २३ ॥
 अमिप्रायोऽस्ति मे कश्चितं मे त्वं कर्तुमर्हसि⁴ ।
 प्रतिजानीहि तावत् त्वं यदि मे⁵ कर्तुमिच्छसि⁶ ॥ २४ ॥
 प्रतिज्ञाते ततोऽहं त्वां वरयिष्यामि काञ्चितम् ।
 एवमुक्तस्तथा राजा प्रियया स्त्रीवशं गतः ॥⁰ २५ ॥
 प्रविवेश विनाशाय मृगः पाशमिवाशुषः ।⁰
 प्रियां प्रियहिते युक्तां भार्या नित्यमनुव्रताम् ॥ २६ ॥
 स तां विज्ञाय सन्तप्तां कैकेयीं पार्थिवो ऽब्रवीत् ।
 अबलिप्ते न जानासि त्वत्तः प्रियतरो मम् ॥ २७ ॥
 राममेकं वर्जयित्वा लोकेष्वन्यो⁷ न विद्यते ।
 [तेन ज्येष्ठेन रामेण मुख्येन च महात्मना ॥ २८ ॥
 क्षपेयं जीवतार्हेण ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।
 यं ब्रूहूर्त्तमपश्यंस्तु न जीवेयमहं शुभे ॥ २९ ॥
 तेन रामेण कैकेयि क्षपे ब्रूहि किमिच्छसि ।]
 दद्यामहं⁸ प्रिये सर्वं स्वीयं⁹ हृदयमप्यहम् ॥ ३० ॥
 अतः समीक्ष्य कैकेयि ब्रूहि यत्साधु मन्यसे ।

41 अ, कु, पं—नास्ति । 42 पं—निर्मसिता । 43 अ, कु, पं—०चिन्ना-
 विमानिता । 44 अ, कु, पं—अमीप्यितं च (पं-तु) मे किञ्चित् प्रियं कर्तु-
 मिहार्हसि । 45 पं—त्वं । 46 अ, कु—सपुत्राणुमिच्छसि । 0पं—नास्ति ।
 47 पं—लोके ऽन्यो । 48 अ, कु, पं—नास्ति । 49 अ, कु—दक्षि ते
 परिहृत्यैव प्रिये । पं—दद्याहं प्रत्येद् प्रिये ।

बलमात्मनि पश्यन्ती न विशंकितुमर्हसि^{५०} ॥ ३१ ॥
 करिष्यामि तव धीतिं सुकृतेनात्मनः क्षये ।
 तुष्टा तेनैव^{५१} वाक्येन दृष्ट्वाऽतिप्रियमात्मनः^{५२} ॥ ३२ ॥
 व्याजहार महाघोरं कैकेयी भृशमप्रियम् ।
 यथा च^{५३} धर्मं^{५४} क्षपसे^{५५} वरं ममं ददासि च ॥ ३३ ॥
 तच्छृण्वन्तु समागम्य देवाः शक्रपुरोगमाः ।
 चन्द्रादित्यौ ग्रहाश्चैव नमो रात्र्यहनी दिशः ॥ ३४ ॥
 जगत् पृथिवी चैव सह गन्धर्वराक्षसैः ।
 निशाचराणि भूतानि गृहेषु गृहदेवताः ॥ ३५ ॥
 यानि चान्यानि सत्त्वानि जानीयुर्माषितं तव^{५६} ।
 सत्यसन्धो महामागो^{५७} धर्मज्ञः सुसमाहितः ॥ ३६ ॥
 वरं ममं ददात्येतं^{५८} तन्मे शृणुत देवताः ।
 इति देवी महेष्वासं परिगृह्णाभिगम्य^{५९} च ॥ ३७ ॥
 ततो वाचमुवाचेदं^{६०} वरदं काममोहितम् ।
 पुरा देवासुरे शुद्धे वरौ दत्तौ त्वया^{६०} नृप^{६०} ॥ ३८ ॥
 परितुष्टेन मे देव^{६१} तौ वरौ त्वं प्रपच्छ मे ।
 यस्त्वयाऽयं समारंभो रामं प्रति समाहितः ॥ ३९ ॥

50 कै, पं—विशंकितुं० । 51 अ, कु, पं—तेनाथ । 52 कै—दृष्ट्वा-
 पिप्रिय० । 53 अ, कु—धर्मेण । पं—तु धर्मं । 54 पं—क्षपसे । कै—
 'क्षपसे' इति विभिन्नमस्यां पाठवै लिखितम् । 55 अ, कु—वचः । 56
 अ, कु—महापते । 57 अ, कु—स्येव । पं—स्येतत् । 58 अ, कु—
 ०मिश्राण्य । 59 अ, कु—वच उवाचेदं । 60 पं—स्वयाम्ब । 61 अ,
 कु—वेदानी ।

अनेनाभोतु भरती यौवराज्यामिषेचनम् ।
 वनं गच्छतु रामश्च वीराजिनजटाधरः ॥ ४० ॥
 नव पंच च वर्षाणि वरावेतौ वृणोम्यहम् ।
 यदि सत्यप्रतिज्ञोऽसि वनं रामं विसर्जय ॥ ४१ ॥
 भरतं चापि मे पुत्रं यौवराज्ये ऽमिषेचय^{६२} ।
 एभिर्वचोभिः कैकेय्या हृदि विद्धो नराधिपः ॥ ४२ ॥
 भयेन हृष्टरोमाऽभूव्याधी वीक्ष्य^{६३} यथा मृगः ।
 सीदन् दुःखेन महता स तेनामिहतो नृपः ॥ ४३ ॥
 असंबृतायां विमना भूमावुपविवेश सः ।
 अहो धिगिति चाप्युक्त्वा शोकार्तः पतितः क्षितौ ॥ ४४ ॥
 मोहमभ्यागमत्सद्यो वाक्शल्यामिहतो हृदि ।
 चिरेण च पुनः संज्ञां प्रतिलभ्यार्तमानसः ॥ ४५ ॥
 कैकेयीमप्रवीत् क्रुद्धो दुःखशोकसमन्वितः ।
 नृशंसे भ्रष्टचारित्रे^{६४} कुलस्यास्य विनाशिनि ॥ ४६ ॥
 किं कृतं तव रामेण मया वा पापदर्शने^{६५} ।
 यदतीत्यापि कौशल्यां रामस्त्वामनुवर्त्तये ॥ ४७ ॥
 तस्यैव स्वमनर्थाय किमर्थं वै सद्ब्रुवता ।
 त्वं मया ऽत्मविनाशाय भवनं संप्रवेशिता^{६६} ॥ ४८ ॥
 राजपुत्रीति विज्ञाय व्याली तीक्ष्णविषा^{६७} यथा^{६८} ।
 औषढोको यदा सर्वो रक्तो रामगुणैरियम् ॥ ४९ ॥

४२ ६—मिषेचय । ६३ अ, कु, पं—हृष्ट्या । ६४ अ, कु—पुष्टौ । ६५

अ—दर्शिने । ६६ अ, कु, त्वं प्र० । ६७ अ, कु, पं—महाविषा ।

अपराधं कमुदिश्य त्वास्वामीष्टमहं सुतम् ।

कौशल्यां वा सुमित्रां वा त्यजेयमपि वा भियम् ॥ ५० ॥

जीवितं चात्मनो⁶⁸ रामं नैवाहं⁶⁹ पितृवत्सलम् ।

नन्दामि हि प्रियं पुत्रं दृष्ट्वा राममहं सदा ॥ ५१ ॥

अपश्यतः क्षणं तं मे न भवेदिह चेतना ।

तिष्ठेच्छोको विना भूमिं सस्यं च⁷⁰ सलिलं विना ॥ ५२ ॥

न तु⁷¹ रामं विना लोके⁷² तिष्ठेत्⁷³ प्राणो मम क्षणम्⁷³ ।

तदलं⁷⁴ त्यज्यतामेष निश्चयः पापनिश्चये ॥ ५३ ॥

अपि ते चरणौ मूर्द्धना स्पृशाम्येष प्रसीद मे ।

स⁷⁵ तेन⁷⁵ वाक्येन महाऽप्रियेण घोरेण राजा हृदये गृहीतः ।

अहृष्टरूपो विमना बभूव व्याघ्राभिपन्नो बलवानिवोक्षा ॥५४॥

लोकस्य नाथोऽपि विपन्ननाथो भृशं गृहीतो हृदये तथैव ।

पपात भूमौ चरणौ परिस्पृशन् प्रसीद देवीति बभोऽभ्युदीरयन् ॥५५

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे बराम्भियाचनं

नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

68 अ, कु—चात्मनो । 69 अ, कु—न त्वेवं । पं—न वैव । 70 अ,
कु—वा । 71 कै—च । 72 अ, कु—देहे । 73 अ, कु—तिष्ठेत्पुनरप्ये
मम । पं—ऽप्यप्यस्यै मम । 74 कै—तदलं । 75 कै, पं—सत्येन ।

[चतुर्विंशः सर्गः]

अतदर्हं महाराजं पतितं पादयोरपि ।

ययातिमिव पुण्यान्ते^१ देवलोकात्परिच्युतम् ॥ १ ॥

कैकेयी पुनरेवेदं धोरं वचनमब्रवीत् ।

अनन्तदुःखसंवीतमतीवभयदर्शनम्^२ ॥ २ ॥कीर्त्यसे त्वं सदा^३ सद्भिः सत्यवादी दृढव्रतः ।मम धेमौ^४ वरौ दत्त्वा किं विचारयसि प्रभो ॥ ३ ॥

एवमुक्तस्तु कैकेय्या राजा दशरथस्तदा ।

प्रत्युवाच ततः क्रुद्धो निःश्वसन्नतिविह्वलः^५ ॥ ४ ॥मृते मयि गते रामे वनं मनुजपुंगवे^६ ।हन्तानार्ये ममामित्रे सकामा भव कैकयि^७ ॥ ५ ॥

यदा मां गुरवो वृद्धा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।

परिप्रक्षयन्ति^८ काकुत्स्थं वक्ष्यामि किमहं तदा ॥ ६ ॥

कैकेय्याः प्रियकामेन रामः प्रव्राजितो मया ।

यदि सत्यं वदिष्यामि हास्यं तेषां भविष्यति ॥ ७ ॥^{A1}

१ पं—दुर्धरे । २ अ, कु—०संविन्नममीता मय० । पं—०संवि-
न्नममिते मय० । ३ पं—यदा । ४ अ, कु—धेमौ । ५ कै, पं—०त्रिसि-
विह्वलः । ६ अ, कु, पं—०कुंजरे । ७ अ, कु, पं—7=9 । ८ अ, कु,
पं—कैकयि । ९ अ, कु, पं—9=7 । १० अ, कु—०प्रवृत्ति ।

A1 अ, कु, पं—वाक्यो वत कामात्मा राज्यं दशरथो ऽप्यहात्^१ ।

व्राजितो यस्य जेतुर्भं प्रियं ज्येष्ठमकार्षे ॥

गर्हयिष्यन्ति¹¹ च मां नित्यं¹² स्त्रीजितं सर्वसाधवः ।
 गर्हितस्य च मे भयो नेह¹³ नामुत्र विद्यते¹⁴ ॥ ८ ॥
 स्त्रीजितेन¹⁵ नृशंसेन¹⁶ रामः सर्वगुणान्वितः ।
 मया विवासितः¹⁷ पुत्रः स महात्माऽन्तरात्मना¹⁸ ॥ ९ ॥
 व्रतैश्च ब्रह्मचर्यैश्च¹⁹ गुरुभिश्चापि कर्षितः²⁰ ।
 सुखकालेऽद्य मे पुत्रः कथं वत्स्यति वै वने ॥²¹ १० ॥
 अनियोज्यैव तं कृच्छ्रे यदि मे मरणं भवेत् ।
 अनुग्रहः परो मे स्यादिति चैवाभिकांक्षये²² ॥ ११ ॥
 प्रियार्हं च सुखार्हं च प्रियं पुत्रं गुणान्वितम् ।
 कथं वक्ष्याम्यहं पापो²³ वनं गच्छेति राघवम् ॥ १२ ॥
 नृशंसमकृतात्मानं स्त्रीवसत्त्वं स्त्रिया जितम् ।
 निरमर्षं²⁴ निरुत्साहमल्पवीर्यं धिगस्तु माम् ॥ १३ ॥
 अकीर्तिरतुला लोके ध्रुवं²⁵ परिमवश्च मे । A2
 इति राज्ञो विलपतः शोकसंविमचेतसः ॥ १४ ॥

11 अ, कु, पं—इति मां गर्हयिष्यन्ति । 12 कु—नेहामुत्र निगद्यते ।

13 कै—स्त्रीजितेनाचूशंसेन । 14 अ, कु—च पितृमान् । पं—च पितृ-
 बान् । 15 अ, कु—दुरात्मना । पं—त्यक्तम् । 16 कै—व्रत० । 17 अ,
 कु—०भ्यातिकर्षितः । पं—०भ्यामिकर्षितः ।

18 अ, कु—सुखकालेन मे पुत्रो वने कृच्छ्रमवाप्स्यति ।

पं—सुखकालोद्य ,, ,, ,, ,,

19 अ, कु—वाक्याभिकांक्षितं । पं—वाक्याभिकांक्षितं । 20 कै—पापे ।

21 अ, कु—निरामर्षं । 22 अ, कु—व्रतः ।

A2 अ, कु—सर्वभूतेषु चावद्या यथा पापकृतस्तथा ।

अस्तमभ्यगमत्सूर्यो^{२३} रजनी चाम्यवर्षत ।
 त्रियामा तु शृशार्त्तस्य सा रात्रिरभवत्तदा ॥ १५ ॥
 तथा विलपतस्तस्य राज्ञो वर्षशतोपमा ।
 दीर्घमुष्णं^{२४} च^{२५} निःश्वस्य वृद्धो दशरथो नृपः ॥ १६ ॥
 करुणं विललापात्तो गगनासक्तलोचनः ।
 कैकेयि हा नृशंसाऽसि यन्मामिच्छसि बाधितुम् ॥ १७ ॥
 राज्यलोभाच्चया त्यक्तः प्राणांस्त्यक्ष्याम्यसंशयम् ।
 हा पुत्र राम घर्मात्मन्^{२६} सद्भक्तं^{२७} गुरुवत्सलम्^{२८} ॥ १८ ॥
 कथं त्वामल्पपुण्योऽहं परित्यक्ष्याम्यसंशयम् ।
 हा^{२९} रात्रे^{३०} सर्वभूतानां जीवितार्द्धापहारिणि ॥ १९ ॥
 नेच्छामि^{३१} हि^{३२} प्रमातां त्वां^{३०} तवायं रचितोऽञ्जलिः^{३०} ।
 अथवा गम्यतां शीघ्रं नेमामिच्छामि निर्घृणाम् ॥ २० ॥
 अकृतज्ञां चिरं द्रष्टुं कैकेयीं मर्तृघातिनीम् ।
 विलप्यैवं ततो राजा कैकेयीमुद्यताञ्जलिः ॥ २१ ॥
 प्रसादयामास पुनर्वाक्यं चेदमथाब्रवीत्^{३१} ।
 साधुवृद्धस्य^{३२} दीनस्य मादृशस्याल्पचेतसः^{३३} ॥ २२ ॥

२३ अ, कु—०मभ्यागम० । २४ अ, कु, पं—स दीर्घमुष्णं । २५ अ,
 कु—भद्रात्मन् । २६ अ, कु—मद्भक्त । पं—सद्भक्त । २७ अ, कु—
 गुरुवत्सल । पं—गु[रु]वत्सलः । २८ अ, कु—हे रात्रि । २९ अ, कु,
 पं—नेच्छाम्यद्य । ३० अ, कु, पं—त्वामभियाचे कृताञ्जलिः । ३१ पं—
 वैषम्य० । ३२ अ, कु—साध्वि० । पं—प्रवृद्धस्य च । ३३ अ, कु—
 त्वद्दृशस्याल्पतेजसः ।

प्रसादः क्रियतां देवि राज्ञो मर्त्तुर्विशेषतः ।^{३४}

कृता ते यदि जिज्ञासा मदीया^{३५} चारुहासिनि ॥०२३ ॥

सत्यमेष स्वभावो मे त्वदधीनो ऽस्मि सर्वदा^{३६} ।०

यद्यदिच्छसि संप्राप्तुं रामप्रव्राजनादृते ॥ २४ ॥

सर्वस्वमपि च^{३७} प्राणांस्ते ददानि^{३८} प्रसीद मे ।

शून्येन^{३९} खलु कैकेयि मयैतद् वाक्यमीरितम् ॥ २५ ॥

कुरु साध्वि प्रसादं मे भीतस्य शरणैषिणः^{४०} ।

विशुद्धभावस्य^{४१} सुदुष्टभावा^{४१} दुःखातुरस्याभुकलस्य^{४२} राज्ञः ।

कृताभ्रपातस्य तथाऽभिधावतोमर्त्तु^{४३} नृशंसा^{४४} न चकार संज्ञाम्^{४५} ।२६

ततः स राजा पुनरेव मूर्च्छितः प्रियां सुदुष्टां प्रतिकूलभाषिणीम् ।

ममीक्ष्य पुत्रस्य विवासकारणं क्षितौ विषण्णो^{४६} विललाप पार्थिवः^{४७} २७

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

३४ अ, कु, पं—शरणागतस्य सुमगे कुरु प्राणं प्रसीद मे । ३५ कु—
मदीयं । ३६ कु, पं—सर्वथा । ० अ—नास्ति । ३७ अ, कु—वा । पं—
श्रुतितम् । ३८ अ, कु, पं—ददामि । कै—“नि” इति लिखित्वा पश्चात्
तत्रैव “मि” इति कृतम् । ३९ अ, कु—सत्येन । ४० अ, कु, पं—शरणा-
र्थिनः । ४१ अ, कु—०हि दुष्टभावा । पं—विशुद्धबुद्धेरपि शुद्धभावा ।
४२ अ, कु—भृशार्थरूपस्य च तस्य । कै—दुःखार्थक*स्य वि*क-
लस्य । “क*” इति पश्चादुपरि विहितम् । “*वि” इत्यपि विहितम् । ४३
अ, कु, पं—०मियाचतो । ४४ कै—मर्त्तुर्भृशं सा । ४५ अ, कु—साक्षां ।
४६ पं—निषणो । ४७ अ, कु—दुःक्षितः ।

[पञ्चदशः सर्गः]

पुत्रशोकात्तरं^१ दीनं विसंभ्रं पतितं भुवि ।
 विचेष्टमानं भर्तारं कैकेयी वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥
 पापं कृत्वेव^२ मो भर्तर्मम दत्त्वा^३ वरद्वयम् ।
 शेषे किं भूतले स्वस्थः^४ सत्ये^५ त्वं स्थातुमर्हसि^६ ॥ २ ॥
 आहुः सत्यं परं धर्मं धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ।
 सत्यवादीति^७ च ज्ञात्वा मया त्वमिह^८ याचितः ॥ ३ ॥
 कपोतायामयं दत्त्वा शिविः^९ किल महीपतिः ।
 उत्कृत्य^{१०} च स्वमांसानि दत्त्वा स्वर्गमितो गतः ॥ ४ ॥^{A1}
 अलर्कश्चापि राजर्षिर्ब्राह्मणेनाभियाचितः ।
 प्रदायोत्कृत्य नेत्रे द्वे^{११} नाकपृष्ठमितो गतः ॥ ५ ॥
 सत्यप्रतिज्ञस्तस्मात्त्वं^{१०} प्राक् प्रतिज्ञाय मे वरौ । ^{A2}

1 कै—पुत्रशोकात्तरं । 2 पं—०मो भर्तर्ममत्वाव । अ, कु—कृत्वेवम-
 परं मम० । कै—०मो भर्तर्मम० । 3 अ, कु—सन्नः । 4 पं—०स्थातुं-
 त्वमर्हसि । अ, कु—स्थातुं सत्ये त्वमर्हसि । 5 अ, कु—०वागिति ।
 6 अ, कु—त्वमभि- । 7 अ, कु—शैव्यः । 8 पं—उत्कृत्य ।

A 1 अ, कु, पं—सतितां च पतिः सत्यां^१ मर्यादां स्थापितां^२ पुरा ।
 समयं पालयन्^३ वेलां^४ न^५ क्लृप्तयति^६ वेगवान् ॥ ५ ॥

9 अ, कु—स्ये । 10 पं—स चाप्रतिज्ञ० । A2 अ, कु—न ददासि च^१
 कस्मात्त्वं कुण्डः कायुरयो यथा ।

१ पं—सत्यं । २ पं—स्थापितः । ३ पं—पालयद् । ४ कु—वेलां । ५ नोक्लृप्तयति ।
 ६ अ—न ।

परित्यज¹¹ सुतं रामं वनवासाय पार्थिव¹² ॥ ६ ॥
 न करिष्यासि वेदय वचनं मम काञ्चित् ।
 अग्रतस्ते महाराज¹³ परित्यक्ष्यामि जीवितम् ॥ ७ ॥
 छलपाशेन कैकेय्या बद्ध एवं¹⁴ नराधिपः ।
 न शशाक तदा छेपुं बलिः प्रागिव विष्णुना ॥ ८ ॥
 विवर्णवदनथापि विभ्रान्तनयनो¹⁵ ऽभवत् ।
 महाधुर्यः भ्रमासक्तो¹⁶ युक्तश्चक्रान्तरे यथा ॥ ९ ॥
 विभ्रान्तचित्तनयनो नष्टसंज्ञो ऽतिदुःखितः¹⁷ ।
 कृच्छ्रादिव¹⁸ स धैर्येण संस्तम्यात्मानमात्मना¹⁹ ॥ १० ॥
 शोकसंरंभताम्राक्षः कैकेयीमिदमब्रवीत्²⁰ ।
 धिगस्तु पापशीले त्वां नृशंसे पतिषातेनि⁰ ॥ ११ ॥
 त्यजामि त्वामहं²¹ पापे²¹ निर्घृणां निरपत्रयाम् ।⁰
 न मे त्वया कृत्यमंस्ति क्षुद्रया²² पापलुब्धया²³ ॥१२॥^{Δ3}
 त्वत्कृते चापि भरतं त्यजाम्यनपकारिणम् ।
 एवं विलपतस्तस्य राज्ञो दशरथस्य च ॥ १३ ॥

11 अ, कु, पं-परित्यज । 12 अ, कु, पं-राजवं । 13 अ, कु, पं-ततो राजन् । 14 पं-एव । 15 अ-विभ्रान्तः । 16 अ, कु-भ्रमासक्तो । पं-भ्रमासक्तो । 17 कु-अहममिषीद्व निः दुःखितः । अ-अहसंसोतिदुःखितः । 18 अ, कु, पं-कृच्छ्रादेव । 19 अ, कु-०भ्यात्मानमब्रवीत् । 20 अ, कु, पं-०ममिषीद्व तां । 21 पं-त्वां महापापां । कु-०पापो । 0अ-नास्ति । 22 पं-क्षुद्रया । 23 अ, कु, पं-राजलुब्धया (कु-क्षुब्धया) ^{Δ3} अ, कु, पं-अम्ब (पं-जु) बन्ध मया पाथिर्युद्धीतो यस्यत्यजाम्यहम् । 24 अ, कु-तु ।

अगाम सा निशा कृत्स्ना दुःखार्तस्य महात्मनः ।
 अथोपसि प्रमातायां शर्वर्यां द्वारमागतः ॥ १४ ॥
 सुमन्त्रः प्राञ्जलिर्भूत्वा बोधयामास पार्थिवम् ।
 सुप्रमाता निशा राजंस्तवेयं भद्रमस्तु ते ॥ १५ ॥
 पुष्यस्य नरशार्दूल भ्रियं मद्राणि चाप्नुहि ।
 पूर्णचन्द्रोदये पूर्णो वर्द्धते सागरो यथा ॥ १६ ॥
 सर्वदिविभवैः पूर्णैस्तथा" वर्द्धस्य भूपते ।
 यथा रविर्यथा सोमो यथेन्द्रो वरुणो यथा ॥ १७ ॥
 नन्दन्त्यृद्धया भ्रिया चैव तथा नन्दस्य" भूपते ।
 ततः स राजा हतस्य प्रतिबोधनमङ्गलम् ॥ १८ ॥
 भुत्वाऽतिशोकसंतप्तस्तमामाप्येदमब्रवीत्" ।
 हत किं दुःखितं त्वं मामस्तुत्यं" स्तोतुमिच्छसि ॥ १९ ॥
 वचोभिरेमिरार्चं" मां" भूयस्त्वं" परिक्रन्तासि" ।
 सुमन्त्रस्तु" तदा" भुत्वा मर्तुर्दानस्य माषितम् ॥ २० ॥
 सहसा व्रीडितः" किञ्चित्सादेशादपागमत् ।
 अत्रान्तरे पापशीला कैकेयी पुनरब्रवीत् ॥ २१ ॥
 वाक्प्रसोदेन" मर्गारं" सीदन्तं तुदतीष स ।

25 अ, कु, पं—पूर्वस्तथा । 26 अ, कु, पं—त्वं मेव । 27 अ, कु—
 भुत्वा हि दुःखितं । पं—भुत्वास्तिदुःखितं । 28 कै—मस्तोत्सवं ।
 29 कै—श्रीव शक्यते । 30 अ, कु, पं—स्त्यमनुकंशासि । 31 अ, कु,
 पं—स्त्यमनुकंशासि । 32 पं—पीडितः । 33 अ, कु, पं—मर्गारं शक्यते ।

- *किमेवं मापसे दीनं वाक्यं त्वं" प्राकृतो" वचा ॥ २२ ॥
 *राममाहूय वि ऋषं वनायाशु" विसर्जय ।
 *यदि सत्यप्रतिज्ञो ऽसि कुरु मे वचनं प्रियम् ॥ २३ ॥
 *नार्यं कालो विषादस्य न मोहस्योपपद्यते ।
 *प्रब्राज्य रामं भरतं यौवराज्ये ऽभिषिच्य" च" ॥ २४ ॥
 *निःसपत्नी" च मां कृत्वा मवाप विगतज्वरः ।
 *स पुनर्वाक्प्रतोदेन पीडितो नरपुंगवः ॥^{३६}२५ ॥
 *राजा शोकार्तिसन्तप्तः" सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ।
 *सत्यपाशनिबद्धो" ऽस्मि ह्यत संभ्रान्तमानसः^{३७} ॥ २६ ॥
 *रामं द्रष्टुमिहेच्छामि तं च शीघ्रमिहानय ।
 इति राज्ञो वचः श्रुत्वा कैकेयी तदनन्तरम् ॥ २७ ॥
 स्वयमेवाब्रवीत्प्रतमिदं सा" त्वरयन्त्युत" ।
 नरेन्द्रवचनात्प्रत गच्छ रामं^{३८} त्वमानय" ॥ २८ ॥
 यथा च शीघ्रमेवैति तथैव त्वरयस्व" च" ।
 कैकेय्या वचनं श्रुत्वा सुमंत्रः प्रीतमानसः ॥ २९ ॥

*यते श्लोकाः शोडशे सर्गे (३७—४२) किञ्चित्पाठभेदेन पुनरुक्ताः ।
 ३४ अ, कु, पं—सुप्राकृतो (पं—सं) । ३५ अ, कु, पं—वनायाशु । ३६
 अ—मिषेवपत । पं—मिषिषयत । ३७ पं—०पत्नी । ३८ अ, कु—स
 सुषो वाक्प्रतोदेन प्रतोदेनेव पुङ्गवः । ३९ अ, कु—०कासिखं० । पं—
 ०कामिखं० । ४० अ, कु—०पाशाविष० । ४१ अं, कु, पं—०स्य वि० । ४२
 अ, कु—संत्वरयन्त्युत । ४३ अ, कु, पं—सं राममानय । ४४ कु—अ-
 वल्लवम् । अ—स्वरयस्वम् । पं—स्वरयस्व तं ।

ततः स रामानवने सङ्गस्तुको वृतः सुमंत्रोऽन्वततामन्विरत् ।
 रथं समायोजय योजयति वै ऋषंस्तुरंगाधिकुर्वे वरेण्यम् ॥ ३० ॥
 ततः सुमन्त्रः प्रययौ रथेन^{४५} महीपतेर्द्वारमतीत्य सत्वरः ।
 विनिर्गतश्चापि दृदर्शं विहितानपाश्रुतान्^{४६} मन्त्रिपुरोद्दितांस्तदा ॥ ३१ ॥

इत्यार्षे हाम्नायणे ऽथोऽध्याकाण्डे सुमन्त्रप्रवचनं^{४७}

नाम सञ्जज्ञाः इर्गः ॥ १५ ॥



45 अ, कु, व—स्वर्गितो विनिर्गवी महीपतीन् (व—पतेः) द्वारंति
 विजोऽयम् । 46 अ, कु—विहितानुपांगतान् । 47 अ, व—वर्गित ।
 अ, कु—कौस्तुभपाठमी (अ-वै) । व—रामानवने ।

[श्रीरघुः स्वर्गः]

ततस्ते मन्विणः स्रुतं सुमन्त्रं सपुरोहेिताः ।
 ऊचुरम्यागतानस्मन् राक्ष जावेदवस्व ह ॥ १ ॥
 पश्यामो न च राजानमुदादिष्व दिवाकरः ।
 आभिवेचनिकं सर्वं द्रव्यमेवोपकल्पितम् ॥ २ ॥
 औदुम्बरं मद्रपीठं क्षातकौम-विभूषितम् ।
 गङ्गायद्भुनयोश्चैव सङ्गमादाहृतं पयः ॥ ३ ॥
 याश्चान्याः सरितः पुण्यास्ताम्यथ जलमाहृत्सु ।
 समुद्रेभ्यश्च सर्वेभ्यः सलिलं समुपाहृतम् ॥ ४ ॥
 सर्वबीजानि गन्धश्च रत्नानि विविधानि च ।
 वाहनं नरसंयुक्तं दर्माः सुमनसः प्रियाः ॥ ५ ॥
 अहतानि च वासांसि भृंगारं च हिरण्यम् ।
 क्षीरिबृक्षप्रवालाश्च पद्मोत्पलविभूषिताः ॥ ६ ॥
 पूर्णकुंभाः स्वलंकृत्य काञ्चना उपकल्पिताः ।
 मञ्जूकारोचना* चैव लाजा दधि घृतं मधु ॥ ७ ॥
 तथैव पुण्यतीर्थेभ्यो मृदापो मंगलानि च ।
 चन्द्रांशुमिमलं चांशु मण्डिदण्डे स्वलङ्कृते ॥ ८ ॥
 चामरव्यजने भीमद्रामार्चशुपकल्पिते ।
 पूर्णेन्दुमण्डलामं च भीमन्मात्स्यविभूषितम् ॥ ०९ ॥

०म—स्यकम् । १ म—गंधाश्च । २ म—क्षीर० । ३ म, क—वि-
 मिश्रिताः । ४ म, क—काञ्चना उपकल्पिताः । केसकम् छिपिभिमिश्रकः
 यमादः प्रतीयते । * कै—...कारोचना । म—कारोचना । ० म—स्यकम् ।

रामस्य यौवराज्यार्थकल्पपत्रं प्रकल्पितम् ।^०
 मन्तो गजवरश्चैव रथश्चैव प्रतीक्षते ॥^०१० ॥
 श्वेतस्तुरङ्गमश्चैव रामार्थमुपकल्पितः ।^०
 अष्टौ कन्याश्च मंगल्याः सर्वाभरणभूषिताः ॥ ११ ॥
 रुपयौवनसंपन्ना गणिकाश्च स्वलङ्कृताः ।
 श्वेतपुष्पाणि वेणुश्च^१ निखिलेशो धनुरेव च ॥ १२ ॥
 हेमदाम्नाऽभ्यलङ्कृत्य ककुष्णान् पाण्डुरो वृषः ।
 सिंहासनं व्याघ्रचर्म संसिद्धश्च हुताशनः ॥ १३ ॥
 वादित्राणि च सर्वाणि सूतमागधवन्दिनः ।
 आचार्या ब्राह्मणा गावः पुण्याश्च मृगपक्षिणः ॥ १४ ॥
 पौरजानपदश्रेण्यो नैगमानां गणैः सह ।
 एते चान्ये च बहवः प्रीयमाणाः^२ प्रियंवचः ॥ १५ ॥
 इक्ष्वाकुराजाम्युदये यथान्यदपि किञ्चन ।
 तत्सर्वं कृतमस्माभिः सूत राज्ञे निवेदय ॥ १६ ॥
 इति तरेवमाह्वसः प्रतीहारो महीपतेः ।
 अग्रर्वात् तानिदं वाक्यं सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ १७ ॥
 अहं पृच्छामि वचनात् सुखमायुष्मतां नृपम् ।
 राजसन्दर्धनार्थित्वमयमावेदयामि वः ॥ १८ ॥
 इत्युक्त्वाऽन्तःपुरद्वारमासाद्य स नरेश्वरम् ।
 सुमन्त्रो नृपार्ते सुप्तं मत्वा भूयो व्यबोधयत् ॥ १९ ॥
 वाग्मिः परमजुष्टाभिरमितुष्टाव पार्थिवम् ।

१ कै—“धूपकं” इति पञ्चाङ्गेकृतम् । ० म—प्रियमाना ।

सोमः सूर्यश्च काकुत्स्थ शिशो वैश्रवणोऽपि च ॥ २० ॥
 अनिलश्चाग्निरिन्द्रश्च विजयं प्रदिशन्तु ते ।
 गता मगवती रात्रिरहः शिवमुपस्थितम् ॥ २१ ॥
 प्रतिबुध्यस्व नृपते सर्वकर्याणसिद्धये ।
 इन्द्रमस्यां हि वेलायामभितुष्टाव मातलिः ॥ २२ ॥
 सोऽजयदानवान् सर्वास्तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।
 वेदाः सांगास्सर्विगणा यथा कमलसंभवम् ॥ २३ ॥
 ब्रह्माणं बोधयन्त्यद्य तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।
 आदित्यः सह चन्द्रेण यथा भूतधरामिमाम् ॥ २४ ॥
 बोधयन्त्यद्य पृथिवीं तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।
 उचिष्ट त्वं महामाग कृतकौतुकमंगलः ॥ २५ ॥
 विरोचमानो वपुषा मेरोरिव दिवाकरः ।
 इदं तिष्ठति रामस्य सर्वमेवाभिषेचने ॥ २६ ॥
 पीरजानपदश्रेणी नैगमश्चागतो जनः ।
 असौ वसिष्ठो मगवान् ब्राह्मणैः सह तिष्ठति ॥ २७ ॥
 क्षिप्रमाह्वयतां शीघ्रं राघवस्याभिषेचनम् ।
 यथा ह्यगोपाः पशवो यथा सैन्यमनायकम् ॥ २८ ॥
 एवं प्रजाः प्रजापाल भवन्ति ह्यनधिष्ठिताः ।
 चन्द्रहीना यथा रात्रिः सूर्यहीनमहो यथा ॥ २९ ॥
 तथा भवति तद्गाण्डूं यत्र राजा न इर्हयते ।

यथा निश्चयं काश्चित् सुखेन नृपसत्तम ॥ ३० ॥
 प्रतिबुध्यस्व राजर्षे^{१०} राजकार्याणि कारय ।
 पुरोवतो मन्त्रिणश्च पौरजानपदास्तथा ॥ ३१ ॥
 दर्शनं तेऽमिकांक्षन्ति प्रतिबोद्धुं त्वमर्हासि ।
 तं तथा पुनरेत्यात्र बोधयन्तं नराधिपम् ॥ ३२ ॥
 अनु(न्व ?)भूयत^{११} श्लोकेन भूय एव नराधिपः ।
 स तु श्लोकामिसन्तप्तः सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ३३ ॥
 श्लोकरक्तेक्षणो धीमान् वीक्ष्य वाचाञ्ज्वचारितम् ।
 हत किं इतरूपं^{१२} मामस्तुत्यं स्तोतुमिच्छसि ॥ ३४ ॥
 वाक्यैस्तावत्तु मर्माणि मम भूयो निकृन्तसि ।
 सुमन्त्रः कुत्सनां कृत्वा दृष्ट्वा दीनं च पार्थिवम् ॥ ३५ ॥
 प्रगृहीताञ्जलिस्तत्र ततः किञ्चिदपाक्रमत् ।
 ततः पापसमाचारा कैकेयी पार्थिवं वचः ॥ ३६ ॥
 उवाच परमं तीक्ष्णं वाक्यञ्चा वाक्यमूर्जितम् ।
 किमेतद्ब्रह्मसे वाक्यं राजंस्त्वं प्राकृतो यथा ॥ ३७ ॥
 *रामसाहस्य विसृग्धं वनप्रस्य विसर्जय ।
 *यदि सत्यप्रतिश्रोऽसि कुरुष्व वचनं मम ॥ ३८ ॥
 *नार्यं कालो हि श्लोकस्य न मोहस्योपपद्यते ।
 *प्रप्राञ्च रामं भरतं यौवराज्येऽमिपिष्व च ॥ ३९ ॥

१ म—यथा नायकहीनी वै मुकन्तमावली यथा । १० म—राजर्षे ।

११ म—अनु(?)भूयत । क—अर्थ(?)भूयत । १२ कै—इतरूपं । पञ्चात्
 इतिश्लोकेन ब्रह्मण “किमनुकृतं” श्लोकं विकृतम् ।

*निस्सपत्नीं च वाः । सुताः स्यात्प्राणिमत्तकम् ॥ ४९ ॥
 स तुभो कर्मस्योपेक्षितोऽपि सत्तमः ॥ ४९ ॥
 *ततः स शशाङ्कः शंभुः शंभुः शंभुः शंभुः ॥
 सुमन्त्र नैव सुतोऽस्मिन् समं स्वं विमन्त्रम् ॥ ४९ ॥
 *सत्यपाद्यविमदोऽस्मिन् सत्त संभ्रमन्तगणकः ।
 *शमं द्रष्टुमिहेच्छामि वं च शीघ्रमिच्छामि ॥ ४९ ॥
 सुमन्त्रस्तु वचः भुत्वा सप्तार्चस्य वृत्तम् ॥
 निर्जगाम सुसंभ्रमन्तस्वस्वद्वाजनिवेशनात् ॥ ४९ ॥
 निष्कम्प्य चैव त्वरितं शम्भुमिच्छुं तदा ।
 रथेन जविताग्नेन समसन्तयितुं शुक्रम् ॥ ४९ ॥
 जनौषं रामवार्मस्यं मतिभूदुत्पत्तनात् ॥
 शृण्वन् वाचः कथयन्तं समान्मुद्रवर्तुलकः ॥ ४९ ॥
 रामोऽप्य युवराजत्वं प्राप्स्यन्ने नृपसत्तनम् ॥
 *अहो शृणुस्वामि" अस्माक्यधर्मं श्रित्वा गुरे ॥ ४९ ॥
 अद्याहोऽनुगृहीताः स्म यत्प्राप्नुवन्वत्तलः ।
 मुक्त्वाः किलाप्यन्यस्यार्कं यदित्वा गुरे ॥ ४९ ॥
 पालयिष्यति नो रामः पिता पुत्रानिवोरसान् ।
 इति शस्य जनौषस्य वचः" शृण्वन्" सप्तस्तवः ॥ ४९ ॥
 यसौ सुमन्त्रस्त्वरितो रामवानयितुं शुक्रम् ।
 सतो ददर्श कथिरं" कैलासस्तत्त्वप्रमम् ॥ ४९ ॥

१३ कै—अहोत्साहो । १४ अ—अनुगृह्यन् वाचः । १५ कै—"कथिरं" इति
 पूर्वं किलितं, एवात् "कथिरं" इति लिख्यम् ।

[रामवेश्म सुमंत्रस्तु त्रिषिष्टपसमप्रमम्]¹⁶
 महाकवाटपिहितं¹⁷ वितर्दिशतशोमितम् ॥
 कांचनप्रतिमैकाग्रं¹⁸ मणिविद्रुमतोरणम् ॥ ५० ॥
 शारदाअचनप्रख्यं दीप्तपावकसप्रमम्¹⁹ ।
 दामभिर्घरमाल्यैश्च सुमहन्निरलंकृतम् ॥ ५१ ॥
 शुक्लामणिमिराकीर्णं जनैरंजलिसंहितैः²⁰ ।
 गन्धान् मनोज्ञान् विसृजद्यथा मलयपर्वतः ॥ ५२ ॥
 सारसैश्च मयूरैश्च विनदाङ्गिर्विराजितम् ।
 मनश्शुभ्रश्च भूतानामाददानमिव भिया²¹ ॥ ५३ ॥
 चन्द्रभास्करसंकाशं कुबेरसदनोपमम् ।
 महेन्द्रसन्नप्रतिमं नानापथिसमाकुलम् ॥ ५४ ॥
 मेख्वेम्भोपमं स्रुतो रामवेश्म ददर्श ह ।

ततः समासाद्यमहाचनं महत् प्रहृष्टरोमा स बभूव सारथिः ।
 शुर्गैर्मयूरैश्च समाकुलं सदा गृहं च रामस्य शाचीपतेरिव ॥ ५५ ॥
 स तत्र कैलासनिभाः स्वलंकृताः प्रविश्य कक्ष्यास्त्रिदशालयोपमा ।
 उपस्थितैर्मागधद्यतवन्दिमिस्तथैव वैतालिकसौख्यशाधिकैः ॥ ५६ ॥

16 म, छ—नास्ति । 17 कै—“कवाट०” इति पूर्वं क्विचित् पञ्चात्
 “कवाट०” इति शो. धितम् । 18 कै—“प्रतिमेकाग्रं” । 19 कै—“दीप्त
 ...समप्रमम्” इति त्रुटितं क्विचित्, पञ्चात् “दीप्तवंतसमप्रमम्” इत्यं
 कुरितम् । 20 कै—“पंजलि०” । 21 कै—भिया ।

अमिष्टुषन्निर्गुणतो नृपात्मजं समाहृतं राजपथं ददर्श सः ।
समस्तकक्ष्यं पुरुषैर्लंकृतं विनीतवैशैर्बहुभिः सुरजितम् ॥ ५८ ॥
विवेक्ष रामस्य महात्मनो गृहं महीचमानो नृपमन्त्रिसचमैः ।
सितं च शैलोत्तमशृंगसन्निभं महाविमानप्रतिभं जनौषधत् ।
स मोज्यमानः प्रविवेक्ष तद्गृहं संपूज्यमानो नृपमन्त्रिसचमैः ॥ ५९ ॥
इत्यार्षे रामायणे श्योष्याकाण्डे सुमन्त्रप्रेषणं
नाम षोडशाः सर्गः ॥ १६ ॥

[सप्तदशः सर्गः]

जनौषधत्यः^१ सोऽतीत्य षट्कक्ष्यास्तस्य^२ वेष्मनः ।
 प्रविभक्ता^३ ततः कक्ष्यां^४ सप्तमीमाससाद् इ^५ ॥ १ ॥
 युवभिः पुरुषैर्गुप्तां प्रासकार्मुकधारिभिः^६ ।
 अप्रमादिभिरेकाग्रैर्मक्तिमान्निरलंकृतैः ॥ २ ॥
 तथा कञ्चुकिभिः^७ शुद्धैः^८ कषायाम्बरधारिभिः ।
 रक्षितामनलंकारैः स्त्र्यप्यर्क्षर्वेत्रपाणिभिः ॥ ३ ॥
 ते दृष्ट्वागतं सूतं रामप्रियचिकीर्षवः^९ ।
 समार्याय^{१०} च^{१०} रामाय समुपेत्याचचक्षिरे^{११} ॥ ४ ॥
 भ्रुत्वैवाभ्यागतं तं^{१२} तु दूतमभ्यर्हितं^{१३} पितुः ।
 रामः प्रवेशयामास सत्कृत्य^{१४} गृहमात्मनः^{१४} ॥ ५ ॥
 स तं धनदसंकाशमुपविष्टं स्वलंकृतम् ।
 ददर्श सूतः पर्यङ्के^{१५} सौवर्णे^{१६} राङ्गवाश्रिते^{१७} ॥ ६ ॥
 बराहलुचिरामेण सुश्लक्ष्णेन महाभुजम् ।
 अनुलिप्तं महार्णेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥ ७ ॥

1 अ, कु—०कीर्णाः । पं—०कीर्णः । 2 अ, कु—कक्षास्तस्य । 3
 अ, कु—अविभक्तां । 4 अ, कु, पं—कक्षां । 5 कु—शः । अ, पं—सः ।
 6 अ, कु, पं—०पाणिभिः । 7 अ, कु, पं—०दृष्टैः । 8 पं—०वासिभिः ।
 अ, कु—काषायांबरवासिभिः । 9 पं—०चिकीर्षया । 10 अ, कु, पं—
 सह भार्याय । 11 अ, कु, पं—प्रणिपत्य न्यवेदयम् । 12 अ, कु, पं—
 च । 13 अ, कु, पं—सूतमभ्यर्हितं । 14 अ, कु, पं—सत्कृत्यात्मनः ।
 15 अ, कु, पं—सौवर्णे । 16 अ, कु, पं—पर्यङ्के । 17 कु—०वाश्रिते ।
 अ—०वाश्रिते । पं—०वास्तुते । कु—०वाश्रिते ।

बालम्यजनधारिण्या सीतया पार्श्वसंस्थया ।
 सपद्मया सेव्यमानं शिवेव मधुसूदनम् ॥ ८ ॥
 तरुणादित्यसदृशमुज्ज्वलन्तमिब¹⁸ भ्रिया ।
 बबन्दे राममभ्येत्य सुमन्त्रो विनयान्वितः ॥ ९ ॥
 दृष्ट्वा¹⁹ चैनं सुखं प्रह्वो विहारशयनासने ।
 उवाचानन्तरमिदं सुमन्त्रो राजघ्नासनात्²⁰ ॥ १० ॥
 कौशल्या सुप्रजा देवी देव²¹ त्वां द्रष्टुमिच्छति ।
 कैकेयीसहितो राजा²² गम्यतां यदि रोचते ॥ ११ ॥
 एवमुक्तः सुमन्त्रेण रामो राजीवलोचनः ।
 शिरसा प्रतिगृह्णाज्ञां पितुः सीतामथाग्रवीत् ॥ १२ ॥
 सीते देवश्च देवी च समागम्य परस्परम् ।
 मम चिन्तयतो²³ नूनं यौवराज्याभिवेचनम् ॥ १३ ॥
 भ्रुवं मे²⁴ वतते माता²⁵ कैकेयी मत्प्रियेप्सवा²⁵ ।
 अद्यैव मां²⁶ यौवराज्ये²⁶ प्रतिपादयितुं स्वयम् ॥ १४ ॥
 नूनं रहसि राजानं त्यरयत्येव²⁷ मत्कृते²⁷ ।
 अथवा सहिता राज्ञा मां त्रियं वक्तुमिच्छति ॥ १५ ॥

18 अ, कु, पं—प्रज्वलन्तमिब । 19 अ, कु—पृष्ट्वा । 20 अ, कु—
 शास्त्रम् । 21 अ, कु—देवम् । पं—देवप्रेषम् । म—देवस्य । 22 अ,
 कु—पत्न । 23 अ, कु—मंचयतो । 24 पं—वतसि माता मे । 25 अ,
 कु—प्रेषया । 26 अ, कु—मे यौवराज्यम् । 27 पं—प्रदायत्येव । अ,
 कु—प्रकृते स्वयत्त्वही ।

वादशीरिवत्सीते दूतश्चायं प्रथाविधः^{२८} ।
 ध्रुवं^{२९} संप्रति मां राजा^{२९} यौवराज्यं^{३०} भिषेक्ष्यति^{३१} ॥ १६ ॥
 तस्माच्छीघ्रमहं गत्वा पश्यामि जगतीपतिम् ।
 एकं रहसि कैकेय्या सुखासीनं गतज्वरम् ॥ १७ ॥
 इह त्वं परिवारेण सुभ्रमास्व रमस्व च ।
 इति सम्मानिता सीता मर्त्रा त्वासितलोचना ॥ १८ ॥
 द्वारान्तमनुवव्राज^{३१} मंगलान्यपि दध्युषः^{३२} ।
 राज्यं द्विजातिभिर्जुष्टं राजद्वयामभेकवत् ॥ १९ ॥
 कर्तुमर्हति ते राजा चासवस्येव लोककृत् ।
 दीक्षितं व्रतसंपन्नं वराजिनधरं शुचिम ॥ २० ॥
 कुरंगशृंगपाणं च पश्यन्ती त्वां मयस्म्यहम् ।
 पूर्वा दिशं ब्रह्मचरो दक्षिणां पातु ते यमः ॥ २१ ॥
 शकृणः पश्चिमामाक्षां धनेशस्तुपरां दिक्षम् ।
 जय सीतामनुज्ञाम्य कृतकौतुकमंगलः ॥ २२ ॥
 निष्काम सुमन्त्रेण सह रामो निवेश्यन्मत् ।
 पर्वतादिव निष्क्रम्य^{३३} सिंहो गिरिगुहसङ्घः ॥ २३ ॥
 मध्यमायां समेयाय कक्ष्यायामर्थिभिर्द्विजैः ।
 स सर्वार्थिनो दृष्ट्वा समेत्य प्रसन्नित्तु^{३४} च ॥ २४ ॥
 श्रेयसादसमारारवं मृगिहोमविभूषितम् ।

२८ अ. कु-अथ० । २९ अ. कु-अथमपि राजा मां । २९-अथ राजा ध्रुवं
 पश्यति । ३० कै-०वेक्ष्यते । ३-मं(तां) संवत्सरेभ्यश्चि । ३१ अ-अहं
 समनुत् (व) ब्राह्म । क-द्वारान्तमनुवव्राज । ३२ कै-दध्युषी । अ-
 दध्युषी । ३३ अ-निष्क्रान्ता । ३४ अ-०जम् ।

तथा पावकसंज्ञासमाकृतेह रथीचक्रः ॥ २५ ॥
 पंचामं पुरुषव्याघ्रो रात्रितं सज्जनन्दनः ।
 द्युष्यन्तमिव चक्षुषि प्रमया सूर्यवर्षसत् ॥ २६ ॥
 करेषुशिष्टकल्पैश्च युक्तं परमव्यभिचिः ।
 सहस्रहयसंयुक्तं रथमिन्द्र इवाद्युगम् ॥ २७ ॥
 प्रययौ तूर्णमास्थाय राधवो ज्वलितं भिषा ।
 स पर्जन्य इवाकाशे स्वनवान् वै निनादयन् ॥ २८ ॥
 फेतेन भिर्ययौ भीमान्^{३५} सहाऽभ्रादिव चन्द्रमाः ।
 छत्रचामरपणिस्तु राधवो लक्ष्मणोऽस्तुजः ॥ २९ ॥
 जुगोप भ्रातरं भ्राता रथमास्थाय पृष्ठतः ।
 ततो हलहलाश्रुदस्तुमुलः समपद्यत ॥ ३० ॥
 तस्य निष्कामतस्तत्र जनौषस्य समन्ततः ।
 ततो हयवरा द्युल्या वायाश्च वनसभियाः^{३६} ॥ ३१ ॥
 जलुजग्यस्ततो रायं शतशोऽथ सहस्रशः ।
 जप्रतथास्व सद्यद्वाशन्दनामुखासिवाः ॥ ३२ ॥
 लङ्घनर्मधराः शूरा जग्मु रामस्व पृष्ठतः ।
 जय वादिप्रशब्दांश्च स्तुतिशब्दांश्च वदित्वा ॥ ३३ ॥
 सिंहनादांश्च शूराणां तदा द्युभ्याव वै पथि ।
 हर्म्यपातावनेनस्थासि भूषिताभिः समन्ततः ॥ ३४ ॥
 जाप्तीर्यमाणः पुष्पैश्च ययौ क्षीमिरीरेन्दसः ।
 रायं सर्वाङ्गव्याजं रामाश्च प्रीतिसंयुक्तः ॥ ३५ ॥

वचोभिरग्र्यैर्हर्म्यस्थाः क्षितिस्थं तं वन्दिरे ।
 नूनं नन्दति ते माता कौशल्या भ्रातृनन्दन ॥ ३६ ॥
 पश्यन्ती सिद्धमत्र त्वां पित्र्यं^{३७} राज्यमुपस्थितम् ।
 सर्वसीमंतिनीम्यश्च सांतां सीमंतिनीं वराम् ॥ ३७ ॥
 अभ्यनन्दत वै नार्यो रामस्य हृदयप्रियाम् ।
 तथा सुचरितं देव्या पुरा नूनं महत्तपः ।
 रोहिण्या शशिनो बेह रामसंयोगङ्गाम्भया ॥ ३८ ॥
 ततो हलहलाशब्दस्तुमुलस्समजायत ।

उपस्थाने नरेन्द्रस्य विमन्दः सुमहान्याथि ॥ ३९ ॥

स रावत्रस्तत्र कथामेरामः^{३८} शुश्राव लोकस्य समागतस्य ।
 आत्माधिकरैर्विचिञ्चाश्च वाचः प्रहृष्टरूपस्य पुरे जनस्य ॥ ४० ॥
 एष स्वयं गच्छति रावत्रोज्य राज्ञः प्रसादात्पृथिवीमलप्स्यत् ।
 जाता वयं सर्वसमृद्धकामा येषामयं नो भविता प्रज्ञास्ता ॥ ४१ ॥
 लामो जनस्याथ यदेव सर्वं प्रपत्स्यते राष्ट्रमिदं चिराय ।
 न क्षप्रियं कश्चन जातु किञ्चित्पश्येत दुःखं मनुजाधिपेऽस्मिन् ॥ ४२ ॥
 सुषोषवाग्निश्च ह्यैस्ससाराथिः पुरःस्थितैरार्थिकघ्नतमागवैः ।
 महीबमानः प्रवरैश्च वाजनैरभिष्टुतो वैश्रवणो यथा वयौ ॥ ४३ ॥
 करेणुसारंमरुवाप्यसंकुलं महाजनौषप्रतिपन्नचत्वरम् ।
 प्रसूतरर्त्नं बहुवक्त्रसंघर्षं ददर्श रामो रुचिरं महापथम् ॥ ४४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽधोध्याकाण्डे रामायणम् -

माम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

[अष्टावशाः सर्गः]

प्रायादेव च काकुत्स्थः संप्रहृष्टसुहृज्जनः ।
 शुभ्राव राजमार्गस्थः प्रिया वाचो ऽभ्युदीरिताः ॥ १ ॥
 एष राज्ञः प्रसादेन राषवो रघुनन्दनः ।
 ह्लादयन् पौरहृदयान्यतुलां प्राप्स्यति श्रियम् ॥ २ ॥
 जनस्यास्य महानेष लामो यद्राषवो बली ।
 राज्यं प्राप्स्यति दुर्धर्षः सकोशबलवाहनम् ॥ ३ ॥
 सुगृहैरभ्रसंकाशैः^१ पाण्डुरैरुपशोमितम् ।
 राजमार्गं ययौ रामो मध्येनागुरुधूपितम् ॥ ४ ॥
 उत्तमानां च गंधानां क्षौमपट्टांबरस्य च ।^०
 चन्दनानां च मुख्यानामगुरूणां च धूपितम् ॥ ५ ॥
 आबद्धामिश्रं मुख्यामि भ्रंणिभिः स्फटिकैरपि ।
 शोभमानमसंबाधं नरेन्द्रपथमुत्तमम् ॥ ६ ॥
 संबृतं विविधैः पण्यै^२ भक्ष्यैरुच्चावचैस्तथा^३ ।
 ददर्श तं राजमार्गं दिव्यं राजसुतस्तथा ॥ ७ ॥
 आशीर्वादान् बहून् शृण्वन् सुहृन्निः समुदीरितान् ।
 यथाहं तांश्च संपूज्य सर्वानेव नरान् ययौ ॥ ८ ॥
 पितामहैराचरितं तथैव प्रपितामहैः ।
 अद्य^४ संप्राप्य तं मार्गमभिषिक्तोऽनुपालय ॥ ९ ॥
 यथा स्म लालिताः पित्रा यथा सर्वैः पितामहैः ।

1 म, क—स्वगु० । ०म—स्वकम् । 2 म, क—पुण्यै । 3 म—
 बधैरपि । 4 कै—अन्य- ।

ततः सुखतरं सर्वे वस्त्यामस्त्वदि राजनि ॥ १० ॥
 अलमघामियुक्तेन परमार्यैरलं च नः ।
 साधु पश्याम निर्यातं रामं राज्ये प्रतिष्ठितम् ॥ ११ ॥
 अतो हि नः त्रियतरं नान्यत् किञ्चिद् भविष्यति ।
 रामाभिषेकान्दन्वत्र जीवितादपि च त्रिभम् ॥ १२ ॥
 एतावान्याथ सुहृदासुदासीनकथाः श्रुमाः ।
 आत्मसंपूजिनीः शृण्वन् ययौ रामो-ग्रहारथः ॥ १३ ॥
 न हि तस्मान्नमनः कश्चिच्छुषी वा नरोत्तमात् ।
 नरः क्षत्राक चाक्रन्दुमतिक्रान्तेऽपि राषवे ॥ १४ ॥
 न पश्यति च यो रामं न वा दृश्येत तेन यः ।
 स निन्दितमिवास्थानमवबोधे जवस्तदा ॥ १५ ॥
 सर्वेष्वेव च धर्मात्मा वर्णेष्यासीद्दयापरः ।
 आत्मनो विषयस्थेषु तेन ते तमनुव्रताः ॥ १६ ॥
 स राजकुलमासाद्य वृतं मेषोपमैः श्रुमैः ।
 प्रासादभृंगैर्विविधैः कैलासशिखरप्रमैः ॥ १७ ॥
 आवारयन्निर्गगनं विमानैरिव पाण्डुरैः ।
 वर्षमानगृहैश्चैव हेमलाजपरिष्कृतैः ॥ १८ ॥
 तत्पृथिव्यां गृहं भेष्टं महेन्द्रसदनोपमम् ।
 राजपुत्रः पितुः श्रुत्रं प्रविशेन्न गृहोत्तमम् ॥ १९ ॥

४ कै—हेमलाज० इति पूर्व किञ्चित् पश्चात् विभिन्नमस्यां 'हेमलाज'
 (= "हेमलाज") उपलब्धिम् ।

AN APPEAL FROM THE GENERAL EDITOR OF THE SERIES.

The D.A.V. College Sanskrit series has already placed six important works before the public. This is the first fasciculus of the seventh. It is a huge work and unattempted before. We have taken our best care to entrust it to a scholar who has spent over six years in studying the various recensions of the Rāmāyaṇa under Dr. A. Venis and Principal A. C. Woolner, and who officiated as a University Professor in the University of the Panjab, Lahore. Moreover the fine collection of the Rāmāyaṇa Mss. of our Library, which is increasing every day, is costing us a good deal. Thus a large sum of money is needed, to bring the work to a successful ending. Will generous readers help us with money, and ask their friends to buy our publications.

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला ।

१—अथर्ववेदीया पञ्चपटलिका	१॥)
२—ऋग्वेद पर व्याख्यान	१।)
३—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मणम्	२॥)
४—दन्त्योष्ठविधिः	॥)
५—अथर्ववेदीया माण्डूकी शिक्षा	१)
६—अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणिका	४)

यन्त्रस्थ

१—काठकगृह्यसूत्रम् with extracts from three com. Ed. by Dr. W. Caland.	
२—रामायणम् अयोध्याकाण्डम्, Fasc II. खं० पं० रामकथा	
३—वैदिक कोषः, सम्पादक श्री ईसरज पुस्तकालयः ।	
४—शांखायणीय शाखा मन्त्रार्थाख्यायः । सम्पादक मन्वदत्त	
५—रामायणम् बालकाण्डम् । सम्पादक पं० रामकथा खं० पं०	

BHAGAVAD DATTA,

Supdt. Research Dept. D. A. V. College, Lahore.

॥ दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत ग्रन्थमाला, सं० ७ ॥

* ओ३म् *

वाल्मीकीय-रामायणम्

अयोध्या-काण्डम्

(पश्चिमोत्तरशाब्दीयम्)

THE RAMAYANA

OF

VALMIKI

(NORTH-WESTERN REVISION)

CRITICALLY EDITED FOR THE FIRST TIME
FROM ORIGINAL MSS

BY

PANDIT RAM LABHAYA M. A.

SUBLIME RESEARCH SCHOLAR AND PROFESSOR
IN SANSKRIT, UNIVERSITY OF THE PANJAB,
LAHORE

AYODHYA KANDA. FASC. II.

PUBLISHED BY THE RESEARCH DEPARTMENT
D. A. V. COLLEGE, LAHORE

Printed by Lalji Dass, Manager Hindi Press, Lahore

JUNE 1923.

First Edition }
1000 Copies. }

आषाढ १९८०

{ Price 1—8—0

स कस्यां धर्मिणीं प्रियं मन्त्रिणं सुतं च ।

पदातिरपरे तस्मिन्ने प्रजासु सुतं च ।

स सर्वाः सपत्न्यस्तथा सुतं च ।

स भिवार्य जनः सर्वं सुतं च ।

ततः प्रविष्टेः पितुश्चिकित्सां तदा जनः सः सर्वो सुतं च ।

प्रतीक्षमाणः पुनरस्य विभ्रमं यतोदयं च सुतं च ।

इत्यार्षे रामायणेऽवोप्यावाचते रामोपयानं

नामाष्टादशः सर्गः ॥ १६ ॥



[एकोनविंशः सर्गः]

स ददर्शासने रामो निषण्णं पितरं तु तम् ।
 कैकेयीसहितं दीनं मुखेन^१ परिश्रुष्यता ॥ १ ॥
 स पितृशरणौ पूर्वमभिवाद्य विनीतवत्^२ ।
 ततो बबन्दे चरणौ कैकेय्याः सुसमाहितः^३ ॥ २ ॥
 सौमित्रिरपरिभ्रान्तः पितुः पादावनन्तरम् ।
 बबन्दे परमप्रीतः कैकेय्याश्च तदा पुनः ॥ ३ ॥
 अम्बागतं प्राञ्जलिं तं रामं दृष्ट्वा नराधिपः ।
 न शशाकाप्रियं वक्तुं समीपस्थमरिन्दमम् ॥ ४ ॥
 रामेत्युक्त्वा च वचनं बाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
 न शक्तो नृपतिर्दीनः प्रेक्षितुं नाभिमापितुम् ॥ ५ ॥
 तदपूर्वं नरपते दृष्ट्वा रूपं मयावहम् ।
 रामोऽपि मयमापेदे यथा स्मृष्ट्वैव^४ पन्नगम् ॥ ६ ॥
 इन्द्रियैरग्रहृष्टैस्तं शोकसन्तापकर्षितम् ।
 निःशसन्तं महाराजं व्यथिताकुलचेतसम् ॥ ७ ॥
 ऊर्मिमालापरिक्षिप्तं क्षुम्बमाणमिवार्णवम् ।
 उपप्लुतमिवादित्यशुक्लानृतमूर्षिं यथा ॥ ८ ॥
 अशित्यकल्पं हि पितुस्तं शोकमवधारयन् ।
 बभूव संरम्भतरः समुद्र इव पर्वणि ॥ ९ ॥
 चिन्तयामास च तदा रामः पितृहिते^५ रतः ।

१ म, क—मुखेन । २ कै, म—वान् । ३ क—ससमाहितः । ४ (स्मृष्ट्वैव)

५ क—विबहिते ।

किंस्विदथैव नृपतिर्न मां प्रेक्ष्यामिनन्दति ॥ १० ॥

तस्य मामद्य संप्रेक्ष्य किमायासः प्रवर्तते ।

ततस्तु पितुरग्रीत्या व्यथितः पितृवत्सलः ॥ ११ ॥

चिन्तयामास धर्मात्मा रामस्तद्ब्रह्मणा पितुः ।

स दीन इव श्लोकार्तो विवर्णवदनघृतिः ॥ १२ ॥

कैकेयीमभिवाचैवं रामो वचनमब्रवीत् ।

देवि किं नु मयाऽज्ञानादपराद्धं महीपतेः ॥ १३ ॥

विवर्णवदनो दीनो न हि मामभिमाषते ।

घारीरो मानसो वाऽपि कश्चिद्देवि न वाषते ॥ १४ ॥

सन्तापो वाऽनुतापो वा दुर्लभं हि सदा सुखम् ।

कश्चिद्भुं किञ्चिद्भरते कृमारे प्रियदर्शने ॥ १५ ॥

शत्रुमे वाप्यकुञ्चलं देवि मातृषु वा पुनः ।

कश्चिन्मया नापकृतमज्ञानादेव मे पिता ॥ १६ ॥

कृपितस्तत्त्वमाचक्ष्व त्वं चैवैनं प्रसादय ।

अतोषयित्वा राजानमकृत्वा च पितुर्वचः ॥ १७ ॥

ब्रह्मर्तमपि नेच्छेयं जीवितुं कृपिते नृपे ।

यतोमूलं नरैः पश्येत् प्रादुर्भावमिहात्मनः ॥ १८ ॥

कथं तस्मिन् न वर्तेत प्रत्यक्षमिव दैवते ।

कश्चिन्न परुषं किञ्चिदभिमानात् पिता मम ॥ १९ ॥

उक्तो भद्रस्या कोपेन वेनास्य ह्युल्लिप्तं मनः ।

एवदाचक्ष्व मे देवि तस्मेन परिपृच्छतः ॥ २० ॥

किमिमितानपूर्वे अयं विकारो मनुजाधिपे ।
 एवमुक्त्वा तु कैकेयी राघवेण महात्मना ॥ २१ ॥
 अङ्गतार्यमना देवी भर्तुं रामस्य वीक्ष्य तम् ।
 वीतचिन्ता प्रहृष्टा च रामं बन्धनमब्रवीत् ॥ २२ ॥
 राजा न ह्यपितो राम व्यसर्गं न च किञ्चन ।
 किञ्चिन्मनोगतं त्वस्य त्वद्गमयाञ्च भाषते ॥ २३ ॥
 प्रियत्वादप्रियं वक्तुं नास्य वाणी प्रवर्तते ।
 यथावश्यं त्वया कार्यं यथानेन प्रतिभुतम् ॥ २४ ॥
 एष मह्यं वरं दत्त्वा त्वदर्शमभिमृश्य च ।
 पश्चात्सन्तप्स्यते राजा यथाऽश्वः प्राकृतस्तथा ॥ २५ ॥
 अतिसूज्यं ददानीति वरं मह्यं विष्ठांसतिः ।
 स निरर्थं गतजले सेतुबंधनमिच्छति ॥ २६ ॥
 त्वत्कृते न त्यजेद्राजा यथा सत्यं तथा कुरु ।
 यदयं वक्ष्यति तृपः क्षुभं वा यदि वाऽक्षुभम् ॥ २७ ॥
 तत्करिष्यासि चेत्सर्वमाख्यास्यामि तवस्त्वहम् ।
 यदा त्वभिहितं राज्ञा राम सत्यादमिष्यसि ॥ २८ ॥
 ततोऽहमभिधास्यामि न क्षेप त्वां प्रवक्ष्यति ।
 एतच्च वचनं श्रुत्वा कैकेय्या सहदाहृतम् ॥ २९ ॥
 उवाच व्यथितो रामस्तां देवीं नृपसंजिवी ।
 महो विस्मर्हसीदं मां वक्तुं देवीपद्यो वधः ॥ ३० ॥

अहं हि वचनान्नाहं कथयन्ति वचनानि ।
 मङ्गलैर्न विचं वानि मङ्गलैश्च वानि वा जले ॥ ३१ ॥
 नियुक्तो गुणना विना वृषेण च हितेन च ।
 तद् व्रद्धिं वचनं दंमि यद्वाहः^९ प्रसमीहितस्^{१०} ॥ ३२ ॥
 प्रतिज्ञातं करिष्ये च रामो ऽसत्त्वं न भाषते ।
 तमार्जवसमायुक्तमनार्थं सत्ववादिनम् ॥ ३३ ॥
 उवाच रामं कैकेयी मन्धरावाक्यमोहिता ।
 पुरा वेवास्तुरे बुद्धे पित्रा ते नव राघव ॥ ३४ ॥
 रक्षितेन वरौ ह्यौ सद्यत्वेन महारणे ।
 द्वौ वरौ वाञ्छितो राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥ ३५ ॥
 दण्डकारण्यगमनं भवतो ऽथैव राघव ।
 यदि सत्वप्रजिह्वं त्वं पितरं कर्तुमिच्छसि ॥ ३६ ॥
 आत्मानं च नरभेष्ट मम वाक्यमिदं शृणु ।
 सन्निदेशः पितुस्ते ऽयं प्रतिज्ञातं क्षणेन^{११} मे ॥ ३७ ॥
 त्वया त्वरण्ये वस्तव्यं नव वर्षाणि यत्र च ।
 भरतस्याभिषेचेत् यदेतदभिषेचनम् ॥ ३८ ॥
 त्वदर्थं विहितं राज्ञा तेन सर्वेण राघव ।
 सप्त सप्त च वर्षाणि दण्डकारण्यमाश्रितः ॥ ३९ ॥
 अभिषेकमिमं^{१२} त्यज्या जटाश्रीरघरो भव ।
 भरतः कोशलापुरे^{१३} प्रजास्तु वल्लवाश्रितम् ॥ ४० ॥

९ न-राज्ञा । १० कै-मङ्गलैश्चिह्नान् । न-प्रसमीहितं । ११ कै-क्षणेन ।
 १२ क-मिदं । १३ कै, क, न-कोशला ।

नानारत्नसमाकीर्णां सबाजिरयकुञ्जराम् ।
 एवं ते पितुरादेशः कृतो राम भविष्यति ॥ ४१ ॥
 स तु तद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या समुदाहृतम् ।
 प्रहस्यानन्तरं वाक्यमुवाच रघुनन्दनः ॥ ४२ ॥
 देव्येवमस्तु वत्स्यामि नव वर्षाणि पञ्च च ।
 जटाचीरधरो ऽरण्ये प्रतिज्ञां पालयन् पितुः ॥ ४३ ॥
 इदं तु ज्ञातुमिच्छामि किमर्थं नाभिभाषसे ।
 महीपति मां दुर्घर्षो यथापूर्वमरिन्दमः ॥ ४४ ॥
 मन्युर्नात्र त्वया कार्यो ब्रवीम्येष तवाग्रतः ।
 वास्यामि भव सुप्रीता वनं चीरजटाधरः ॥ ४५ ॥
 हितेन गुरुणा पित्रा कृतज्ञेन नृपेण च ।
 नियुज्यमानो विस्रग्धं किं न कुर्यामहं प्रियम् ॥ ४६ ॥
 व्यलीकं मानसं त्वेकं हृदयं दहतीव मे ।
 स्वयं मां नाह यद्राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥ ४७ ॥
 यद् व्रते न महाराजा मम चैव प्रवासनम् ।
 अहं हि सीतां राज्यं च प्राणानिष्टान् वनानि च ॥ ४८ ॥
 हृष्टो भ्रात्रे स्वयं दद्यां भरताय* प्रणोदतः ।
 किं पुनर्मनुजेन्द्रेण स्वयं पित्रा प्रणोदितः ॥ ४९ ॥
 देव्याश्च प्रियमाकाङ्क्षन् प्रतिज्ञामनुपालयन् ।
 तदात्पदासय मां देवि किं निन्दं^१ वन्महीपतिः ॥ ५० ॥

वसुधाऽऽसक्तनयनो" शुभमभ्रणि" मुञ्चति ।
 गच्छन्तु चैवानयितुं दूताः शीघ्रजवैर्हयैः ॥ ५१ ॥
 भरतं मातुलगृहादथैव नृपज्ञासनात् ।
 आनीयतां" महामागे" राज्ये चैवामिषिच्यताम्" ॥ ५२ ॥
 दण्डकारण्यमेषो ऽहमितो गच्छामि सत्वरः ।
 अविचार्य पितुर्वाक्यं समा वस्तुं चतुर्दश ॥ ५३ ॥
 संहृष्टा तस्य तद्वाक्यं कैकेयो सभिन्नम्य ह ।
 प्रस्थापनं भ्रष्टती त्वरयामास राघवम् ॥ ५४ ॥
 एवं भवतु यास्यन्ति दूताः शीघ्रजवैर्हयैः ।
 भरतं मातुलकुलादुपार्धतयितुं दूताः" ॥ ५५ ॥
 नैव त्वहं क्षमं मन्ये औत्सुक्याद्धि बिलंबनम्" ।
 राम तस्मादितः क्षिप्रं वनं त्वं गन्तुमर्हसि ॥ ५६ ॥
 ग्रीडान्वितः स्वयं यच्च" नृपस्त्वां नामिमापते ।
 मा च" ते संशयो ऽस्त्वन्यो मा मन्युं कुरु राघव ॥ ५७ ॥
 यावत्त्वं न वनं यातः पुरादस्मादपि त्वरन् ।
 तावन् न ते पिता राम स्वास्थ्यं" प्राप्नोति" दुःखितः ॥५८॥
 निमीलितेक्षणो राजा भ्रुत्वैतदारुणं वचः ।
 कैकेय्यां हृद्भ्रमानायां सुब्धायां रामनिषयम् ॥ ५९ ॥

5 क-वसुधासंयत् । 16 कै, क, म-भ्रमणि । 17 कै, म-आनीय
 । 18 म-भ्रमणे । 19 म-भ्रम् । 20 म-वुक्तम् । 21 म-
 वदन्त्याम् । 22 कै, क, म-वचः । 23 कै-वं । 24 म-वचः ।
 ५-स्वात्त्वं (१) । 25 म-व्रजति ।

सुदीर्घं हा हतोऽस्मीति वाक्पुत्रपुत्रा-सुमुःशिवः ॥
 मूर्च्छार्द्रपागमद् भूयः श्लोकवाप्यपरिमुक्तः ॥ ६० ॥
 मूर्च्छितथापतत्तस्मिन् पर्यङ्गे-हेमभूतिरे ॥
 अथ रामोऽपि दुर्धरः कैकेयाऽभिप्रचोदितः ॥ ६१ ॥
 कश्यपेवाहो वाञ्छी पर्व-गन्तुं कुरुत्परः ॥
 तदभिप्रदविभ्रान्तो वचनं मत्स्योपमद् ॥ ६२ ॥
 भुत्वाऽप्यव्यथितो रामः कैकेयीं विद्वज्जपीत् ॥
 नाहमर्थपरो देवि लोकानापरसुमुत्सहे ॥ ६३ ॥
 विद्धि मामृषिमिन्दुर्व्यं केवलं धर्ममास्मिन्नहम् ॥
 यदत्र भवतां किञ्चिच्छक्यं कर्तुं प्रियं मया ॥ ६४ ॥
 प्राणानपि पस्तिष्वेव सर्वथा कृतमेव तत् ॥
 न ह्यतो धर्मपरणादप्यदस्त्वधिकं भुवि ॥ ६५ ॥
 यथा पितरि भुञ्जतास्तस्य वा वचनाक्रिया ॥
 अनुक्तोऽप्यत्र गुह्या मपत्या वचनादहम् ॥ ६६ ॥
 वने वत्स्यामि विद्यने नम वर्तयिष्ये पञ्च-वा ॥
 ह्यं त्वयपि वत्स्यामि संजावयसि किञ्चन ॥ ६७ ॥
 यत्पथा भरतस्वार्थे राजा विद्यापितः स्वयम् ॥
 इहोक्तं नोभ्याम् विद्याम् दासतामपि वा जीवितं विवद् ॥ ६८ ॥
 सर्वं वचनादस्यं यदस्यं व्याख्येने ॥
 यत्कर्म दुःकृतं कृतं पुण्यं राज्यदुःखदा ॥ ६९ ॥
 अहं किं नम्यं संजातं ज्ञानं वत्स्यामीतिवद् ॥
 अहं मातरमापृच्छय वेदेही मर्विहाय च ॥ ७० ॥

अद्यैव वनवासाय गच्छामि सुखिनी भव ।
 भरतः पालयन् राज्यं शुभ्रुषेत यथा नृपम् ॥ ७१ ॥
 तथा भवत्या कर्तव्यमेष धर्मः सनातनः ।
 इति रामवचः श्रुत्वा शोकवाष्पपरिप्लुतः ॥ ७२ ॥
 ईषत्ससंज्ञो नृपति भूयो मोहहृत्पागमत् ।
 श्रुत्वा चैवाप्रियाख्यानं राममातुस्तदप्रियम् ॥ ७३ ॥
 अन्तःपुरचरा नार्यः प्रद्वेषभयशङ्किताः ।
 अतो नाभ्यागमंस्तत्र कौशल्यायै निवेदितुम् ॥ ७४ ॥
 निपीड्य चरणौ रामो विसंज्ञस्य महीपतेः ।
 कैकेय्याश्चापि धर्मात्मा निर्जगाम महाद्युतिः ॥ ७५ ॥
 तं वाष्पपरिरुद्धाक्षो लक्ष्मणो पृष्ठतो ऽन्वगात् ।
 लक्ष्मणः परमक्रुद्धः सुमित्राकुलनन्दनः ॥ ७६ ॥
 गमने च मतिं चक्रे वनवासाय चैव हि ।
 आभिषेचनिकं भाण्डं कृत्वा रामः प्रदक्षिणम् ॥ ७७ ॥
 शनैर्जगाम साक्षेपो" दृष्टिं तत्राविधारयन् ।
 स रामः पितरं कृत्वा कैकेयीं च प्रदक्षिणम् ॥ ७८ ॥
 निष्क्रम्यान्तःपुरात्तस्मार्त्तं ददर्श सुहृज्जनम् ।
 दृष्ट्वा च सस्मितमुखः प्रतिपूज्य यथाऽर्हतः ॥ ७९ ॥
 जगाम त्वरितं द्रष्टुं मातरं स्वं निवेशनम् ।
 दुःखमन्तर्गतं तस्य न कश्चिद्बुधे जनः ॥ ८० ॥

लक्ष्मणं वर्जयित्वैकं धृत्तिसंयतचेतसम् ।

न ह्यस्य राजलक्ष्मीं तां राज्यनाशोऽपकर्षति ॥ ८१ ॥

लोककान्तस्य कान्तत्वाच्छीतरश्मेरिव क्षयः ।

न चापि धनसंपूर्णां त्यजतोऽस्य वसुन्धराम् ॥ ८२ ॥

यतेरिव विमुक्तस्य लक्ष्यते चित्तविक्रिया ।

धारयन् मनसा दुःखमिन्द्रियाणि नियम्य च ॥ ८३ ॥

जगाम चात्मवान् वेष्म मातुरप्रियशंसकः ।

तथैव रामः स्वजनं समागमे प्रहर्षयन् हृष्टमना रघूद्वहः ।

जगाम तामर्यविपत्तिमात्मनो विचिन्तयन्मातुरथो निवेशनम् । ८४ ।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वनवासप्रतिज्ञानाम

एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

[विंशः सर्गः]

रामो ऽथ दुःखसन्तप्तः स्वसभिव श्रुजङ्गमः ।
 जगाम सहितो भ्रात्रा कौशल्याया निवेशनम् ॥ १ ॥
 सो ऽपश्यत् पुरुषांस्तत्र वृद्धान् बन्धुवरांस्तथा ।
 स्वस्थान् विनयसम्पन्नान् विष्टितान् पितुराङ्गया ॥ २ ॥
 तैः कृताञ्जलिभिस्तत्र विवेशाप्रतिवारितः ।
 प्रथमां राषवः कक्ष्यां मातरं द्रष्टुमातुरः^१ ॥ ३ ॥
 प्रविश्य प्रथमां कक्ष्यां द्वितीयायां ददर्श सः ।
 ब्राह्मणतन् वेदविदुषो वृद्धान् राजपुरस्कृतान् ॥ ४ ॥
 विवेश मातुर्भवनं रामस्त्वरितमानसः ।
 कौशल्याऽपि तदा देवी परं नियममास्थिता ॥ ५ ॥
 अकरोत् प्रयत्ना पूजां देवानां नियतव्रता ।
 आशंसन्ती च पुत्रस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ६ ॥
 सा शृङ्खाम्बरसंवीता तत्पराऽनन्यमानसा ।
 प्रविश्य चैव त्वरितो रामो मातुर्निवेशनम् ॥ ७ ॥
 ददर्श मातरं तत्र देवागारे यतव्रताम् ।
 कृताञ्जलिपुटां चैव स्थितां मङ्गलवादिनीम् ॥ ८ ॥
 अर्चयन्तीं पितृभ्यैव देवांश्चानन्यमानसाम् ।
 तामवेक्ष्य ततो रामो बबन्दे विनयात् ततः ॥ ९ ॥
 उवाच चैनामभ्येत्य रामोऽहमिति नन्दयन् ।

१ म-वृद्धबंधुवरांस्तथा । २ म, छ-विष्टितान् । ३ कै, छ-द्रष्टुमातुरः ।

साऽथ हृद्वैव तनयं मातृनन्दनमागतम् ॥ १० ॥
 अभ्यनन्दत वात्सल्याद् वत्सं गौरिव वत्सला ।
 स मात्रा समभिप्रेत्य परिष्वज्याभिनन्दितः ॥ ११ ॥
 पूजयामास तां देवीमदितिं मघधानिष ।
 तमुवाच ततो हृष्टा कौशल्या प्रियमात्मजम् ॥ १२ ॥
 प्रपूजयन्ती पुत्रस्य शिववृद्धार्थमाशिवः ।
 वृद्धानां पुत्र सर्वेषां राजर्षीणां महात्मनाम् ॥ १३ ॥
 प्राप्नुस्त्रायुध कीर्तिं धर्मं च स्वकुलोचितम् ।
 पित्रा निसृष्टामतुलामव्ययां श्रियमाप्नुहि ॥ १४ ॥
 हतामित्रः श्रियायुक्तः पितृन् नन्दय पुत्रक ।
 सत्यप्रतिज्ञं पितरं पश्य राघव मा चिरम् ॥ १५ ॥
 अथ हि त्वां पिता राम यौवराज्येऽभिषेक्ष्यति ।
 एवं त्रुवाणां कौशल्यां रामो वचनमब्रवीत् ॥ १६ ॥
 कैकेयीवाक्यसन्तप्तं ईषद्व्याकुलचेतनः ।
 अभ्य. न त्वं प्रजानासि महवृभयमुपागतम् ॥ १७ ॥
 तव दुःखाय महते वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।
 कैकेय्या भरतस्यार्थे राज्यं राजाऽभियाचितः ॥ १८ ॥
 सत्सेन परिगृह्णादौ तेन चास्यै प्रतिभ्रुतम् ।
 भरताय महाराजो यौवराज्यं प्रदास्यति ॥ १९ ॥
 मां पुनर्वनवासाय नियोजयति साम्प्रतम् ।
 सोऽहं वत्स्यामि वर्षाणि वने देवि चतुर्दश ॥ २० ॥

स्वप्नानि हित्वा मोक्षानि कल्पमूढवाचिनः ।
 इति रामकथः भुत्वा सा पपात तपस्विनी ॥ ३१ ॥
 कौशल्या दुःखसन्तप्ता निकृष्टा कदली यथा ।
 स वां निवसितां दृष्ट्वा भूमौ मातरमातुरसम् ॥ २२ ॥
 राम उत्थापयामास दुःखिवां मतचेतनाम् ।
 उपावृत्त्योत्थितां दीनां बहवसिब विह्वलाम् ॥ २३ ॥
 संमार्ज्य पाणिना रामः पांसुना परिगुण्ठिताम् ।
 अथ किञ्चित्समाश्वस्य कौशल्या दुःखमोहिता ॥ २४ ॥
 उदीक्ष्य रामं प्रोक्ष्य वाप्यमद्भया गिरा ।
 नैव राम यदि त्वं मे ज्ञायेथाः श्लोकवर्द्धनः ॥ २५ ॥
 न चैवाहभिदं दुःखं प्राप्नुयां त्वादियोगजम् ।
 एकमेव हि बन्ध्याया दुःखं भवति पुत्रक ॥ २६ ॥
 अप्रजाऽस्मीति न त्वाद्यगिहापत्यविमोक्षजम् ।
 न प्राप्तपूर्वं कल्याणं मया पतिपरिग्रहात् ॥ २७ ॥
 अशङ्किताऽस्मि रुचिरं त्वद्योऽपि प्राप्नुयामिति ।
 कस्य विकलं जाते मम राम विचिन्तितम् ॥ २८ ॥
 दुःखान्यमेव पुत्रार्हं विहिताऽत्यन्तमाग्निनी ।
 सा बहून्मनोर्झानि वाचथ हृदयच्छिदः ॥ २९ ॥
 सहिष्ये न सपत्नीनामवराणां वरा सती ।
 इतोऽपि वै दुःखतरं मम राम भविष्यति ॥ ३० ॥
 त्वयि सभिहिते तावदियं मे राम विफ्रिया ।
 शोषिते त्वयि सुख्यकं नैव शङ्कामि जीषितुम् ॥ ३१ ॥

यदि मां प्रीयते काचित् सम्यङ् न (च ?) परिवर्तते ।
 सर्वा एव तु ता द्वेष्टि कैकेयी वीक्ष्य मत्कृते ॥ ३२ ॥
 साऽहं बहून्यनिष्टानि वाचश्च हृदयच्छिदः ।
 सहिष्ये खलु कैकेय्यास्त्वधि राम वनं गते ॥ ३३ ॥
 तदसह्यमहं दुःखं सोढुं पुत्रक नोत्सहे ।
 अद्यैव मरणं मेऽस्तु को वाऽर्थो जीवितेन मे ॥ ३४ ॥
 अद्य जातस्य वर्षाणि दश चाष्टौ च ते ऽनघ ।
 क्षपितानीह कांक्षन्त्या त्वत्तो दुःखपरिह्वयम् ॥ ३५ ॥
 नियमैरुपवासैश्च कर्षयन्त्या^७ कलेवरम्^० ।
 दुःखं संवर्द्धितो राम मया दुःखितया ह्यसि ॥ ०३६ ॥
 नियमाश्रोपवासाश्च^० ये मया त्वत्कृते कृताः ।
 त एते विफला जाता वनं संप्रस्थिते त्वयि ॥ ३७ ॥
 दुःखाधेन परिक्लिष्टं हृदयं सीदतीव मे ।
 दुर्बलं विपरिक्लिष्टं नदीकूलमिवांभसा ॥ ३८ ॥
 ममैव नूनं मरणं न विद्यते न चावकाशोऽस्ति ममक्षये* काचित् ।
 यदन्तकोऽद्यैव न मां प्रधर्षते गृहीतशोकाऽस्मि निगृह्य जीवितम् ३९।
 यदि ह्यकाले मरणं स्वयेच्छया लभेयं कथिंद्मद्दुःखदुःखिता ।
 भवेयमद्यैव सजीविता ध्रुवं^१ सुदुःखिता राम विनाकृता त्वया । ४०।
 दृढं च नूनं हृदयं सुमंहतं ममायसं यच्छतधा न दीर्यते ।
 त्वयैवमुक्ते च तदा मृता ह्यहं ध्रुवं हि मृत्युर्मम नैव विद्यते ॥४१॥

इदं तु ते दुःखमतीव बन्मया सुदुष्करं दुःखमनर्थकं तु* यः* ।
 प्रसादिता ये च कृताश्रया मया निरर्थकं पुत्र इति ग्रहर्षती ॥४२॥
 मृशमसुखमवाप्य तत्तु सा नृपमहिषी बिललाप दुःखिता ।
 म्यसनिनमिव वीक्ष्य राघवं सुतमिव बद्धमवेक्ष्य केसरी' ॥ ४३ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याबिलापो
 नाम विंशः सर्गः ॥ २० ॥

[एकविंशः सर्गः]

पुनरेव सुदुःखार्ता कौशल्या राममब्रवीत् ।
 न श्रोतव्यं त्वया राम पितुः कामवतो वचः ॥ १ ॥
 इहैव वस किं तेऽसौ राजा वृद्धः करिष्यति ।
 न गन्तव्यं त्वया वत्स जीवन्तीं मां यदीच्छसि ॥ २ ॥
 तथा तामातुरां दृष्ट्वा कौशल्यां राममातरम् ।
 उवाच लक्ष्मणः श्रीमांस्तत्कालसदृशं वचः ॥ ३ ॥
 न रोचते ममाप्येतद् यदार्ये राघवो वनम् ।
 त्यक्त्वा राज्यश्रियं गच्छेद् वृद्धवाक्यवशं गतः ॥ ४ ॥
 विपरीतश्च वृद्धश्च विषयैश्च प्रघर्षितः ।
 नृपः किमिव न ब्रयाद् बोध्यमानः समन्मथः ॥ ५ ॥
 देवसखं मृदुं शान्तं^१ रिपूणामपि वत्सलम् ।
 अवेक्षमाणः को धर्मं त्यजेत्पुत्रमकारणम् ॥ ६ ॥
 पुनर्बालस्य वृद्धस्य स्त्रीजितस्य विशेषतः ।
 कः कुर्याद्बचनं तस्य राजघर्मार्थविद्बुधः ॥ ७ ॥
 यावदेव न जानाति कश्चिदर्थमिमं नरः ।
 तावदेव मया सार्द्धमात्मस्थं^२ कुरु शासनम् ॥ ८ ॥
 मृत्ये ते मयि पार्श्वस्थे राज्यकार्यार्थमुद्यते^३ ।
 यौवराज्याभिषेकस्य विधातं कः करिष्यति ॥ ९ ॥
 निर्मनुष्यामयोष्यां हि कुर्यां राम शितैः क्षरैः ।

1 म—दाह्यं । 2 कै, छ, म—साधं० । 3 कै—०मुष्यते । छ, म—०मुद्यते ।

बौधराज्ये विघातं ते कः कुर्वीत नृपाङ्गया ॥ १० ॥
 मरतस्यापि वा पक्षं यो गृह्णीयादचेतनः ।
 तं पापमहमद्यैव प्रेषयामि यमक्षयम् ॥ ११ ॥
 नायमव्यक्तिकालस्ते तेजो दर्शय राघव ।
 क्षमी होकरसो राम लोकेन परिभूयते ॥ १२ ॥
 कैकेय्या नियतं राजा मेदितो ऽयं भविष्यति ।
 त्वया तस्य विमिश्रस्य भ्रोतव्यं न कथञ्चन ॥ १३ ॥
 कं च धर्मं समाश्रित्य त्वामसौ त्यक्तुमिच्छति ।
 विग्रहो ऽयं कृतो ऽनेन त्वया सह मयैव च ॥ १४ ॥
 कस्य शक्तिः श्रियं दातुं मरताय बलादिव ।
 प्रविविद्यति रामोऽयं यदि दीप्तं हुताशनम् ॥ १५ ॥
 पूर्वेष्वेव ततो देवि प्रविष्टं मोपचारय ।
 सर्वभावानुरक्तोऽस्मि रामं भ्रातरमग्रजम् ॥ १६ ॥
 न्यायवृत्तेन सत्येन पादौ वैवालमे तव ।
 जय पश्यन्तु मे वीर्यं सर्वशो युधि मानवाः ॥ १७ ॥
 रामाङ्गया दुःखश्लथमहमद्योद्धारामि ते ।
 इत्येतद्वचनं श्रुत्वा लक्ष्मणस्य महात्मनः ॥ १८ ॥
 उवाच रामं कौशल्या दुःखशोकपरिप्लुता ।
 आस्तुस्ते वचनं राम श्रुतं भक्तिश्रुतं हितम् ॥ १९ ॥
 एतदेव विसृज्वाह्यु किञ्चिदां यदि रोषते ।

न मे सपत्न्या वचनाद् वनं गन्तुमितोऽर्हसि ॥ २० ॥
 शोकपावकसन्तप्तां मां विमुच्यारिर्षय ॥
 धर्मं च यदि धर्मात्मन् पुराणमनुवर्तसे ॥ २१ ॥
 शुभ्रपुर्माभिहस्वथ चर धर्ममनुत्तमम् ॥
 पुरा मातुर्नियोगाद्धि शाक्रः^५ परपुरञ्जय ॥ २२ ॥
 भ्रातृन् जघान सापत्न्याद्राज्यं चापि^६ दिवोकसाम् ॥
 शुभ्रपुर्जननीं तत्र स्वगृहे नियतो वसन् ॥ २३ ॥
 परेषु तपसा युक्तः काश्यपस्त्रिदिवं गतः ॥
 यथैव राजा पूज्यस्ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ २४ ॥
 त्वया ममापि वचनात् गन्तव्यमितो वनम् ॥
 न चैव त्वद्विहीनाऽहं जीवेयमिति मे मतिः ॥ २५ ॥
 माण्डोपेक्ष्य च राम त्वं न वनं गन्तुमर्हसि ॥
 गन्तव्यं यदि चावश्यं मयैव सहितो ब्रज ॥ २६ ॥
 त्वया सह मम भ्रयस्तृणानामपि भक्षणम् ॥
 यदि मां सम्परित्यज्य वनं यास्यसि राघव ॥ २७ ॥
 ततोऽहं प्रायमासिन्धे न हि क्षम्यामि जीषितुम् ॥
 मातृहा निरयं^७ घोरं तेनवाप्स्यसि^८ कल्मषम् ॥ २८ ॥
 विलयन्तीं तथा दीनां क्रौञ्चस्थां शोकमूर्च्छिताम् ॥
 उवाच रामो धर्मात्मा वचनं धर्मसंहितम् ॥ २९ ॥

५ क—शक्रः । म—शुक्रा । ६ कै, क, म—चाप । कै कोणे “चापि”
 इत्येवं पञ्चात् संशोधितम् । ७ क—निर्गम्य । ८ क—तेनवाप्स्यसि ।

किमेतदेवि धर्मज्ञे स्नेहविह्वलवया त्वया ।
 माषितं स्मर धर्मं त्वमात्मानं स्वकुलं तथा ॥ ३० ॥
 मर्तारं परमोदारं ततो मातः प्रशाधि माम् ।
 जानतोऽपि हि मातृणां दुःखं पुत्रप्रवासजम् ॥ ३१ ॥
 नास्ति शक्तिः पितुर्वाक्यं प्रतिकूलयितुं मम ।
 प्रसादये त्वा शिरसा मन्तुमिच्छाम्यहं वनम् ॥ ३२ ॥
 न खल्वेतन्मयैतेन क्रियते पितृशासनम् ।
 अरण्यवासः साधूनां विशेषेण प्रशस्यते ॥ ३३ ॥
 इदं च मे कथयतां ब्राह्मणानां परिभ्रुतम् ।
 पुरा कृतं पितृवचो यदन्यैरपि साधुभिः ॥ ३४ ॥
 जामदग्न्येन रामेण जनन्याः किल धीमता ।
 शिरश्छिन्नं परशुना क्रुद्धस्य पितुराज्ञया ॥ ३५ ॥
 कण्डुना^{१०} चाऽपि सिद्धेन वनाभ्रमनिवासिना ।
 महर्षिणा गौर्विशस्ता तथैव पितुराज्ञया ॥ ३६ ॥
 अस्माकं पूर्वकैश्चापि खनद्भिः पितुराज्ञया ।^०
 भूतलं सगरापत्यैर्महासप्त्तवधः कृतः ॥ ३७ ॥
 तदेतन्न मयैकेन क्रियते पितृशासनम् ।
 प्रायश्चः पितृभिः सद्भिर्गतो मार्गोऽनुगम्यते ॥ ३८ ॥
 करिष्ये वचनं तस्मात्पितुरथ प्रसीद मे ।
 पितुर्हि वचनं कुर्वन्न कश्चिज्^{११} प्रशस्यते ॥ ३९ ॥
 इत्सुक्त्वा वैव कौशल्यां रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।

जानामि लक्ष्मणाहं ते भक्तिभावमनुत्तमम् ॥ ४० ॥
 मदर्धमपि ते प्राणा अपि जानामि राघव ।
 दुःखशल्यमिवाज्ञानात्संघट्टयसि मे पुनः ॥ ४१ ॥
 तदेव तावद्दुःखं मे यदसौ मत्कृते नृपः ।
 दुःखेन महताऽऽविष्टः शेते मोहमुपागतः ॥ ४२ ॥
 कैकेय्या स्त्रीस्वभावेन पातितो धर्मसङ्कटे ।
 अहो कृच्छ्रमहो दुःखं तत्पापं कर्तुमिच्छसि ॥ ४३ ॥
 धर्मज्ञस्य पितुः कोऽत्र मादृशो राज्यलिप्सया ।
 उत्क्रम्य शासनं जीवेत्सर्वलोकविगर्हितः ॥ ४४ ॥
 मा भूत्स कालः सौमित्रे यदहं शासनं पितुः ।
 इच्छेयं समतिक्रम्य मुहूर्त्तमपि जीवितुम् ॥ ४५ ॥
 अभिप्रायमविज्ञाय नैवं मां वक्तुमर्हसि ।
 साधु लक्ष्मण संशाम्य मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥ ४६ ॥
 धर्मस्थितिः परो लामो धर्मो धारयते धृतः ।
 न च धर्मो धृतो मेऽन्यः पितुराज्ञामृतेऽनघ ॥ ४७ ॥
 करिष्यामीति संभ्रुत्व यदहं पितृशासनम् ।
 न कुर्या यदि सौमित्रे सर्वथैव धिगस्तु माम् ॥ ४८ ॥
 सोऽहं न शक्यामि पितुर्नियोगमतिवर्तितुम् ।
 पितुर्बलुमतं तन्मे कैकेय्या समुदाहृतम् ॥ ४९ ॥
 तदेतामृतसृजानार्या क्षत्रविद्याऽऽकुलां मतिम् ।
 धर्ममाश्रित्य सद्-बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ॥ ५० ॥

इत्युक्त्वा वचनं रामो लक्ष्मणं लक्ष्मीवर्द्धनम् ।

उवाच भूयः कौशल्यां प्राञ्जलिः शिरसा नतः ॥ ५१ ॥

अनुजानीहि मां देवि करिष्ये शासनं पितुः ।

शाषिताऽसि मया प्राणैः पुनराममनेन च ॥ ५२ ॥

तीर्णप्रतिज्ञः कुशली पादौ द्रक्ष्यामि ते पुनः ।

गच्छेयं त्वदनुज्ञातो निर्भ्यलीकेन चेतसा ॥ ५३ ॥

यशो ब्रह्मं देवि न राज्यकारणात् परित्यजेयं सुकृतेन ते श्ये ।

अदीर्घकाले नरलोकजीविते वृणोमि घर्म न-महीमघर्मतः ॥५४॥

प्रसादये त्वां शिरसा यतव्रते प्रसीद मे कर्तुमविभ्रमर्हसि ।

वनं गमिष्यामि नृपाज्ञया ब्रह्मप्रदेशानुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥५५॥

प्रसादयन्नरवृषभः स मातरं बहूक्तवान् जिगमिपुरेव दण्डकम्^{१८} ।

अथात्मजं शृण्वति^{१४} -देविनं सदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः ॥५६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो

नाम एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

[द्वाविंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा मातरं रामो भूयो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 दृष्ट्वा तथैव सामर्षं निःश्वसन्तमिवोरगम् ॥ १ ॥
 यो ऽयं मदभिषेकार्थं तव लक्ष्मण संभ्रमः ।
 तमेवार्हसि कर्तुं त्वं मत्प्रस्थाने ससंभ्रमम् ॥ २ ॥
 यस्या मदभिषेकार्थं मनो विपरितप्यते ।
 माता मे सा यथा भूयः शङ्कते न तथा कुरु ॥ ३ ॥
 न बुद्धिपूर्वं नाज्ञानान्मातृणां मातृनन्दन ।
 कृतपूर्वमहं वोरः* स्मरामि क्वचिदाप्रियम् ॥ ४ ॥
 तस्माच्छङ्काकृतं दुःखं गृहूर्त्तमपि लक्ष्मण ।
 गच्छेन्न वेति मा चाभूच्छङ्का मयि महीपतेः ॥ ०५ ॥
 अभिषेकाभिलाषं च गृञ्चेमं मम लक्ष्मण ।^०
 संप्रत्येवाहमिच्छामि वनं गन्तुमितः पुरात् ॥ ६ ॥
 मयि चीराजिनघरे जटामण्डलधारिणि ।
 गतेऽरण्यं च कैकेय्या भविष्यति मनःसुखम् ॥ ७ ॥
 मयि प्रव्रजिते देवो कृतकृत्यं सुनिर्घृतम् ।
 आत्मानमपि जानातु पितृभानृष्यमस्तु मे' ॥ ८ ॥
 एवं मे निश्चिता बुद्धिर्मनश्चैव समाहितम् ।
 न विलंबितुमिच्छामि गृहूर्त्तमपि क्वचिद् ॥ ९ ॥
 फारणं तु कृतान्तोऽत्र सौमित्रे महिनिग्रहे ।
 वीरराज्याभिषेकस्य तथैवास्य चिनिग्रहे ॥ १० ॥

कैकेयी च प्रकृत्यैव सदा मां प्रति वत्सला ।
 सत्यं मत्परिपीडार्थं बलादेव विमोहिता ॥ ११ ॥
 यदुक्तं परुषं यच्च तत्कृतान्तकृतं स्मर ।
 नित्यं मातृषु मे प्रीतिरविशेषेण लक्ष्मण ॥ १२ ॥
 सर्वासामविशेषेण तासामपि तथा मयि ।
 अनुक्तपूर्वं कैकेय्या यदुक्तं परुषं रुचा ॥ १३ ॥
 कथं प्रकृतिकल्याणी राजर्षिकुलजा संती ।
 त्र्याह्निकप्राकृतस्त्रीव मां तथा पितृसन्धिषी ॥ १४ ॥
 दैवस्वभावसंसिद्धिरर्षित्त्वेति च मे प्रतिः ।
 तन्नूनं पतितं मूर्ध्नि मम माण्डविपर्ययात् ॥ १५ ॥
 कथं दैवेन सौमित्रे योद्धुस्तस्यहते सह ।
 यस्येह निग्रहोपायः कथंचन न विद्यते ॥ १६ ॥
 सुखदुःखमयोद्वेगलामालामन्त्रामयाः ।
 नृणां भवन्ति दैवेन न भवन्ति च लक्ष्मण ॥ १७ ॥
 अवश्यमावि व्यसनं ममैतदिति पश्यतः ।
 व्याहते ऽप्याभिपेक्षे मे परितोषो न विद्यते ॥ १८ ॥
 तस्मात्त्वमपि मे बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ।
 प्रतिसंधितवात्मानं मा च ह्योके मनः कुषाः ॥ १९ ॥
 न लक्ष्मणास्मिन्मम राज्ञश्चित्रे क्वशा यवीयस्वमिच्छन्नीया ।
 न चैव राज्ञश्च विद्यन्नीयो दैवं हि कोऽसि कश्चित्तुं सदर्शः ॥२०॥
 इत्वार्यं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनयो
 श्रीमद्भागवतः सर्गः ॥ २१ ॥

[अयोर्बिंशः सर्गः]

इति भ्रुवति रामे तु लक्ष्मणो ऽघोमुत्थः स्थितः ।
 दुःखामर्षपरीतात्मा दध्यौ विप्रुतचेजनः ॥ १ ॥
 स बद्ध्वा भ्रुकुटिं रोषाद् भ्रुवोर्मध्ये नरर्षभः ।
 निशश्वास महासर्पो विलस्य इव रोषितः ॥ २ ॥
 लपितस्य तथा साक्षाद् भ्रुकुटीकुटिलं मुखम् ।
 क्रुद्धस्येव मृगेन्द्रस्य विषमौ भूरितेजसः ॥ ३ ॥
 विनिर्धूयाग्रहस्तं च प्रमिष इव कुञ्जरः ।
 तिर्यगूर्ध्वं च संभ्रम्य शिरः संकम्प्य चासकृत् ॥ ४ ॥
 खड्गं परिमृषन् रोषाच्छत्रुपक्षपिदारणम् ।
 संरंभामर्षताम्राक्षस्ततो आतरमब्रवीत् ॥ ५ ॥
 जस्थाने संभ्रमो वस्ते जातो ऽयं गमनं प्रति ।
 धर्मलोपमवादेव' लोकवाद्मयेन वा ॥ ६ ॥
 कथमीदृगसंभ्रान्तस्त्वद्विधो वक्तुमर्हति ।
 ह्रीवं वाक्यमश्रीटीर्यं श्रीटीरः' क्षत्रियान्वयः ॥ ७ ॥
 तेजःधात्रं समालम्ब्य' भ्रमाद्भक्तुं न चार्हसि ।
 ह्रीवा हि देवमेवैकं प्रष्टसन्ति न पौरुषम् ॥ ८ ॥
 प्रतीचमपि क्षत्रोपि ष्यसनायाम्युपागतम् ।
 दैवं पुरुषकारेण प्रतिबोद्धुरिन्दम ॥ ९ ॥
 कैकेयी च नरेन्द्रं च कस्मात्कार्षेण व्रंससि ।

स्वानं प्रतिपद्यन् तस्मात्पापानुबन्धवोः ॥ १० ॥
 धर्माभ्युपायाः सन्त्यन्ये कुशलैः परिचिन्विताः ।
 तैरुपायैरर्थसिद्धैर्माञ्जन्यं नेतुमर्हसि ॥ ११ ॥
 यदि वाऽऽर्यं स्वयं कर्तुं स्वमेवं न व्यवस्यसि ।
 दां नियुङ्क्व करिष्ये ऽहं वचनं यदनन्तरम् ॥ १२ ॥
 लोकविद्विष्टमुत्सृज्य तस्माच्छोकप्रियं कुरु ।
 यदर्थं बुद्धिमोहो ऽयमीदृशस्त्वामुपागतः ॥ १३ ॥
 सो ऽपि धर्मो मम द्वेष्यो यत्प्रसंगाद्विद्विष्टासि ।
 लोकस्याप्रियमारब्धं कैकेय्याः केवलं प्रियम् ॥ १४ ॥
 एतत् कार्यं नरेन्द्रेण कामतो न तु धर्मतः ।
 अतिसृष्ट्वाऽभिषेकं ते पुनः प्रत्यवगृह्यतः ॥ १५ ॥
 तत्प्रतीये कृते ह्यत्र क्लृप्तं नोपपद्यते ।
 क्षुद्रायाः पापभावायाः प्रद्विषन्त्या विशेषतः ॥ १६ ॥
 कैकेय्या वचनं क्षुद्रं नैव त्वं कर्तुमर्हसि ।
 यौवराज्याभिषेके च त्वाद्युपामन्त्र्य धर्मतः ॥ १७ ॥
 कथं नाम स्थितो धर्मे कुर्यात्तदनुतं नृपः ।
 पापबुद्धिरियं राज्ञो दैवेनापकृता यदि ॥ १८ ॥
 तदाऽप्युपेक्षणीयो ऽर्थो नैव बुद्धिमतां भवेत् ।
 विद्वानो हीनवीर्यो यः स दैवमनुवर्तते ॥ १९ ॥
 अविद्वानस्तु तेजस्वी न दैवमनुवर्तते ।
 दैवं पुरुषकारेण यतते यो ऽतिवर्तितुम् ॥ २० ॥

न स दैवविपर्ययः कदाचिदपि सीदति ।
 लोकः पश्यतु कृत्स्नो ऽथ दैवपौरुषयोरिदं ॥ २१ ॥
 अन्तरं कार्यसंसिद्धौ यद्युत्थातुं त्वमिच्छसि ।
 अथ तत्पौरुषहतं दैवं पश्यन्तु मानवाः ॥ २२ ॥
 तव राज्यविघाताय प्रतीपं समुपागतम् ।
 निरङ्कुशमित्रोदारमं गजं मदबलोद्धतम् ॥ २३ ॥
 प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निर्वृतये ।
 लोकपालाः सहेन्द्रेण यौवराज्यामिषेचनम् ॥ २४ ॥
 प्रतिहन्तुं न शक्तास्ते किमुतैको नराधिपः ।
 वैर्निवासंस्तवारण्ये मिथ्या राम समर्थितः ॥ २५ ॥
 अहं विवासयिष्यामि तानेशथ बलान्वितः ।
 प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निर्वर्तये । ० २६ ॥
 प्रतीपमपि दुःखाय तव दैवमुपागतम् ।
 प्रमविष्यति राम त्वां मत्पौरुषपूराहतम् ॥ २७ ॥
 बहुवर्षसहस्रान्तं प्रजापान्यमनुत्तमम् ।
 आर्यपुत्राः करिष्यन्ति वनवासं गते स्वयि ॥ २८ ॥
 पूर्वराजार्षेष्टेन वनवासो विधीयते ।
 पुत्रेष्वन्ते त्रिनिक्षिप्य राज्यं वयसि पथिमे ॥ २९ ॥
 स एवं समर्थां धर्मज्ञ धर्मलोपविघ्नहृया ।
 कैकेय्या वचनाद् धर्मं स्वं राज्यं स्वक्तुमिच्छसि ॥ ३० ॥
 प्रतिजानामि ते सत्यं मा भूवं वीरशब्दमाह ।

यदि प्रतीपं दैवं ते न हरिष्याम्युपागतम्^६ ॥ ३१ ॥
 फलमेवास्य दैवस्य प्रतीपस्य निवर्तये ।
 तवैव तेजसेच्छामि दैवं लोकाभिवर्षितुम् ॥ ३२ ॥
 अविषद्यतमं लोके विषद्यं केन किंचन ।
 त्वदर्थमुत्सहे श्लोकः परिवर्षयितुं जगत् ॥ ३३ ॥
 मङ्गलैरभिविच्यस्व तत्र त्वं निर्भृतो भव ।
 अलमेको^७ महीपाल महीं पालयितुं बलात् ॥ ३४ ॥
 न शोभार्थमिमौ बाहू न धनुर्भूषणाय मे ।
 नासिरा बन्धनार्थं मे न शराः^७ स्थाणहेतवः^७ ॥ ३५ ॥
 अभिन्नदमनार्थं मे सर्वभेतश्चतुष्टयम् ।
 न चार्थमभिकाक्षेयं यज्ञः शत्रुवधो मम ॥ ३६ ॥
 अक्षिना तीक्ष्णधारेण विद्युच्चलितवर्षसा ।
 प्रगृहीतेन कः शक्तो वज्री वा मत्समो न च ॥ ३७ ॥
 खड्गधाराहता मेऽद्य पतन्तु नरराशयः ।
 प्राणुदकाले समागम्य विद्युतेव समाहताः । ३८ ॥
 खड्गनिष्पेषनिष्पिष्टैर्गहनास्तदुरास्तथा ।
 पत्न्यश्वरथमातङ्गैर्मही भवतु सर्वज्ञः ॥ ३९ ॥
 बद्धगोघांगुलित्राणे प्रगृहीतश्वरासने ।
 कथं पुरुषकारस्स्यात् पुरुषाणां मयि स्थिते ॥ ४० ॥
 अम्यस्तान् विविधे काले निक्षितान् रुधिराश्वान् ।

६ क—इतिष्य० । म—वि[ह]र्ष्यनुपा० ।

७ कै, क—आहमेको महीपाल । ४ म—श्वरास्तुप० ।

विप्रमोक्ष्याम्यहं वाणान् नृवाजिगजमर्मसु ॥ ४१ ॥

अद्य मे सुप्रभावस्य प्रभावः प्रभविष्यति ।

राज्ञश्चाप्रभृतां कर्तुं प्रभृत्वं च तव प्रभो ॥ ४२ ॥

अद्य चन्दनसाराणां केयूराणां धनस्य च ।

वसुनां च विमोक्षस्य सुहृदां पूजनस्य च ॥ ४३ ॥

अभिरूपमिमौ बाहू राजन् कर्म करिष्यतः ।

अभिषेकं तु विघ्नस्य शत्रूणां ते निबर्हणम् ॥ ४४ ॥

तद्ब्रूहि को ऽद्यैव वियोज्यतां मया तवासुहृत्प्राणयज्ञः सुहृज्जनैः ।

यथा तवेयं वसुधा वशे भवेत् तथाऽद्य मां शाधि तवास्मि किंकरः ॥४५

प्रगृह्य मन्थुं परिगृह्य पौरुषं स लक्ष्मणो राममभिप्रसादयन् ।

उवाच भूयोऽपि पितुर्विनिग्रहे यतस्व रामैष विनिश्चयो मम ॥४६॥

इति वचनमुदारसम्बुक्तं तदमिसमीक्ष्य तु लक्ष्मणस्य रामः ।

मधुरतरमुवाच सोऽर्थयुक्तं परिक्लृपितं पितरं प्रति प्रतीतः ॥ ४७ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसंरंभो

नाम अयोर्षिंशः सर्गः ॥ २३ ॥

[चतुर्विंशः सर्गः]

भक्त्या रामस्य संरब्धं लक्ष्मणं पितरं प्रति ।
 श्लुङ्गणैःसानुनयैर्वाक्यैः श्रमयामास राघवः ॥ १ ॥
 सौमित्रे नैतदाश्चर्यं मद्भक्त्या त्वं' यदिच्छसि' ।
 व्यसनार्णवसंमग्नमुद्धर्तुं मां बलादिषु ॥ २ ॥
 पुण्यशीलस्तु घर्मात्मा सत्यव्रतपरायणः ।
 पार्थिवो नावृतः कर्तुं न्याय्यो लोके गुरुर्मया ॥ ३ ॥
 सत्यप्रतिज्ञं कृत्वा हि पितरं घर्मवत्सलम् ।
 पुण्यां कोर्तिमवाप्स्यामि प्रेत्य चेह च शाश्वतीम् ॥ ४ ॥
 यदि त्वस्ति मयि स्नेहो भक्तिर्वा यदि' लक्ष्मण ।
 ततो निवर्तयैनां त्वं पापां बुद्धिं समुत्थिताम् ॥ ५ ॥
 घर्मात्मनः भ्रुतवतः कृतज्ञस्य महात्मनः ।
 पितुरस्माप्रियं कर्तुं वेच्छामि मनसाऽप्यहम् ॥ ६ ॥
 यदीच्छसि प्रियं कर्तुं मम त्वं यदभीप्सितम् ।
 इतो' मयि गते भक्त्या श्लुङ्गण्यो नृपतिस्त्वया ॥ ७ ॥
 निर्घृलीकेन मनसा प्रत्यक्षं दैवतं यथा ।
 *एतन्मे परमं वाक्यं भक्तितः कर्तुमर्हसि ॥ ८ ॥
 *यथा मां प्रति नोत्कण्ठां करोति वसुधाधिपः ।
 तथा श्लुङ्गणयितव्योऽसौ त्वया मयि विनिर्गते ॥ ९ ॥

1 म—यदुमिच्छसि । 2 म—तव । 3 म—इते । क—ततो । *म—
वाञ्छि ।

मातरश्च विशेषेण शुभ्रप्याः सर्वथा त्वया ।
 तथा यथा न तप्येषु बन्वासं गते मायि ॥ १० ॥
 भरतश्चापि धर्मात्मा द्रष्टव्यो ऽहमिव त्वया ।
 परिपाल्यश्च यत्नेन मम प्रियचिकीर्षुणा ॥ ११ ॥
 इमां धर्मधुरं गुर्वीमहं वक्ष्यामि लक्ष्मण ।
 भरतेन सहेमां त्वं गुर्वीं राज्यधुरं वह ॥ १२ ॥
 इत्युक्तवचनं रामं बभाषे लक्ष्मणस्तदा ।
 अग्रकंप्यं स्थितं धर्मो पुरन्दरमिवानुजः ॥ १३ ॥
 लोकनाथ गतिर्या ते सा ममापि भविष्यति ।
 बन् वत्स्याम्यहमपि शुभ्रपूषानिरतम्पत्र ॥ १४ ॥
 त्वया त्यक्तामहमपि परित्यक्ष्ये पुरीमिमास् ।
 स्वदंते न हि वस्तुं मे स्वर्गे ऽपि रमते मनः ॥ १५ ॥
 यद्यस्ति मायि ते स्नेहो भक्तौऽयं वीर मामिति ।
 ततो मामनुगच्छन्तं न निवर्तयितुमर्हसि ॥ १६ ॥
 बने निषसतस्तेऽहं नानाबनविचारिणः ।
 जाहरिष्यामि स्वादूनि मूलानि च फलानि च ॥ १७ ॥
 सहायस्ते भविष्यामि दुर्गेषु विषमेषु च ।
 आश्वाकरस्ते मृत्यो ऽहं भविष्यामि महाबने ॥ १८ ॥
 सर्वभाषानुरक्तं मां न परित्यक्तुमर्हसि ।
 पश्य मामार्यपुत्र त्वं पूज्यथासि गुरुश्च मे ॥ १९ ॥

गनीयमाहरिष्यामि सुखं कुरुकलानि च ।
 साधयिष्यामि चाहारं वनेषु वसतः प्रभो ॥ २० ॥
 अनुजानीहि मामार्यं निधितं धर्मवत्सलम् ।
 अनुगन्तुं कृतमर्तिं कृतज्ञं क्षरणागतम् ॥ २१ ॥
 न निवर्तयितव्यां ऽहं सर्वथा रघुनन्दन ।
 न हि राम त्वया त्यक्तो जीवेयमिति मे मतिः ॥ २२ ॥
 न निवर्तयितुं क्षम्या बुद्धिरेषा मम स्थिरा ।
 स भवाननुजानातु ममाप्यागमनं वने ॥ २३ ॥
 सो ऽनुर्नातो बहुविधं लक्ष्मणेन यद्यश्विना ।
 बाढमित्यप्रवाद्रामो लक्ष्मणं ब्रातृवत्सलम् ॥ २४ ॥
 सह यास्यामि साँमित्रे त्वया दुर्गे महद्गनम् ।
 भवान् हि मे परो बन्धुः सखा भक्तः प्रियश्च मे ॥ २५ ॥
 तथा तु रामं गमने घृतव्रतं समीक्ष्य देवी वचनं श्रुत्वाह्वया ।
 उवाच भूयो हृदयेन' तप्यता सुखोचिता दुःखपरिप्लुता सुश्रम् । २६
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनय-
 अतुर्विधाः सर्गः ॥ २४ ॥

तं समीप्य चर्षितं विदुः कथं च ॥ १ ॥
 कौशल्या' वाग्धनिर्गमं पुत्रं कथं च ॥ २ ॥
 यदि धर्मं पुत्रं कथं पुत्रं विदुः कथं च ॥ ३ ॥
 ततो मद्रचनं धर्मं शृणु धर्ममृता' वर ॥ ४ ॥
 त्वं हि लब्धो भवा कृच्छ्रेस्तपोभिर्निर्गमैः ॥ ५ ॥
 वचनं मे त्वया कार्यमतः पुत्र विद्योपक ॥ ६ ॥
 आश्रया परया राम शिशुश्च परिपालितः ॥ ७ ॥
 तत्समर्थो ऽद्य मां दीनां परिरक्षितुमर्हसि ॥ ८ ॥
 पश्याद्य पुत्र मां चाद्यजोवितेन' वियोषिष्यात् ॥ ९ ॥
 न सकामां सपत्नीं मे कैकेयीं कर्तुमर्हसि ॥ १० ॥
 न चापि परिशक्ता ऽर्द्धं विप्रकारान् पृथग्निष्यात् ॥ ११ ॥
 सोढुं सकाशात् कैकेय्याः' परिभृता विद्योपक ॥ १२ ॥
 नित्यं कालं सपत्नीमिर्भृशं विप्रकृता सती ।
 दुःखच्छायां समाभित्य भवाम्यद्य समाहितः ॥ १३ ॥
 साऽहमद्य न क्षम्यामि जीवितुं शर्वरीमिमाम् ।
 कश्चिनी' पादपंनेव फलकाले वियोषिता ॥ १४ ॥
 न दुष्क वचः कार्यं क्षीविषेयस्य भूत्सेः ।
 कामचारप्रवृत्तस्य दुष्कृतेष्वप्युपेतिव' ॥ १५ ॥

१ कै, क, म—कौशल्या । २ म—धर्ममृतं । ३ म, क—काय— ।

४ म—यत्र शक्यं । ५ कै, म—कैकेय्या । ६ कै—कौशल्या । ७ क—
कालता । ८ म, क—दुष्कृतेषु सुवेतिव ।

यो ऽतीत्य धर्मं पौराणमिद्वाकूणां कुलोचितम् ।

त्वामतिक्रम्य भरतमभिषेक्तुमिहेच्छति ॥ १० ॥

अपि चेयं पुरा गीता गाथा सर्वत्र विश्रुता ।

मनुना मानवेन्द्रेण तां श्रुत्वा मे वचः कुरु ॥ ११ ॥

गुरोरप्यवलितस्य कार्याकार्यमजानतः ।

कामचारप्रवृत्तस्य न कार्यं ब्रुवतो वचः ॥ १२ ॥

दश विप्रानुपाध्यायो गौरवेणातिरिच्यते ।

उपाध्यायाद्दश^१पिता गौरवेणातिरिच्यते ॥ १३ ॥

पितॄन् दश च मार्तका सर्वा च पृथिवीमपि ।

गौरवेणाभिभवति को ऽस्ति मातृसमो गुरुः ॥ १४ ॥

पतिता गुरवस्त्याज्या न तु माता कदाचन ।

गर्भधारणपोषाम्यां तेन माता गरीयसी ॥ १५ ॥

साऽहं ते^{१०} पितृतो राम धर्मतो गौरवाधिका ।

माननीया विशेषेण यथा धर्मविदो विदुः ॥ १६ ॥

अतो ममापि ते कार्यं शासनं गुरुवत्सल ।

अभिषिच्यस्व धर्मेण राज्ये राजीवलोचन ॥ १७ ॥

यदि त्वमेतन्मम भाषितं हितं कुलोचितं सत्पुरुषैर्निषेवितम् ।

यथावदुक्तं न करिष्यसे ततश्चिराय यास्यामि यमक्षयं ततः ॥१८॥

इत्याषं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यावाक्यं

नाम पञ्चविंशः सर्गः ॥ २५ ॥

^१ (उपाध्यायान् दश) । १० ल—हि ।

[षड्विंशः सर्गः]

अथानुनेतुं चक्रे ऽसौ मातरं यत्नमास्थितः ।
 प्रभित्तमधुरैर्वाक्यै हंतुमङ्गिश्च राघवः ॥ १ ॥
 मम चैव भवत्याश्च राजा प्रभवति प्रभुः ।
 न प्रभुत्वमतस्ते ऽस्ति मम देवि निवर्तने ॥ २ ॥
 दातुमर्हसि मे ऽनुज्ञां देवि धर्मभृतां वरे ।
 वनवासाय वर्षाणि नवपञ्च च सुव्रते ॥ ३ ॥
 भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्ता चेश्वर उच्यते ।
 अतस्ते शासनं भर्तु न व्याहन्तव्यमेव हि ॥ ४ ॥
 पुनरागमनं मे ऽद्य त्वमाशांसितुमर्हसि ।
 यतव्रता नित्यमेव भर्तुराराधनं रता ॥ ५ ॥
 तीर्णप्रतिज्ञ एष्यामि त्वत्प्रसादादहं पुनः ।
 अरिष्टं कुशली चैव तस्मात्संशाम्य मा शुचः ॥ ६ ॥
 कुले जाताऽसि विस्तीर्णे राज्ञामभिततेजसाम् ।
 सद्गुणाख्यातयशसां कोशलानां महात्मनाम् ॥ ७ ॥
 कुलशीलसमाचारैर्धर्मिष्ठा नियतव्रता ।
 सा कथं शासनं भर्तुरतिवर्तितुमर्हसि ॥ ८ ॥
 दैवतं ते गुरुश्चैव भर्ता देवि प्रसीद मे ।
 मत्त्वेहाकार्हसे तस्य मतभुत्क्रम्य वर्तितुम् ॥ ९ ॥
 निर्विचारं मया कार्वा गुरोराज्ञा महात्मनः ।
 श्रेयो ज्ञेवं भवत्याश्च मम चैव विशेषतः ॥ १० ॥
 कार्पण्याद्बालभावाद्वा न कुर्या चेत्पितुर्बन्धुः ।

ततो ऽहं प्रेषितव्यः स्यां भवत्या विनयज्ञया ॥ ११ ॥
 किं पुनर्यस्य मे देवि स्वभावनियता मतिः ।
 भूयो विवर्धनीयैव भवत्या विनयज्ञया ॥ १२ ॥^०
 न ते राजा किञ्चिदपि वक्तव्यो मदपेक्षया ।
 प्रतीपमप्रियं वापि न वक्तव्यः प्रसीद मे ॥ १३ ॥
 कैकेयी वा महाभागा भरतो वा महायज्ञाः ।
 स्वल्पमप्यप्रियं वाक्यं न वक्तव्यौ प्रसीद मे ॥ १४ ॥^०
 यथाऽहमेवं द्रष्टव्यो भरतः सर्वदा त्वया ।
 कैकेयी भगिनीवच्च^१ द्रष्टव्या सर्वदा त्वया ॥ १५ ॥
 विरुध्यन्ते न बलिभिर्बुद्धिमन्तः कथञ्चन ।
 बलहीनैरपि तथा विरुध्यन्ते न संहतैः ॥ १६ ॥
 तत्कथं सह पित्राऽहं विरुध्येयं महात्मना ।
 भ्रात्रा वा भरतेनाद्य भक्तेनानपकारिणा ॥ १७ ॥
 धर्मात्मना विनीतेन प्राणेभ्योऽपि प्रियेण च ।
 कथं नाम विरुध्येयं सह तेन महात्मना ॥ १८ ॥
 पित्रा दत्तं यौवराज्यं भरतो यद्यवाप्स्यति ।
 तत्र दोषो ऽस्ति कस्तस्य भरतस्य महात्मनः ॥ १९ ॥
 अतिसृष्टं पुरा राज्ञा कैकेयी भर्तृतो वरम् ।
 यदि शृक्णाति कस्तस्या दोषस्तत्र ब्रवीहि मे ॥ २० ॥
 राजा च प्राक्प्रतिश्रुत्य ददावस्यै यदा वरम् ।
 भीतो ऽनृतात्ततो राज्ञः को दोषः सत्यवादिनः ॥ २१ ॥

व्यक्तमेव परं धर्मं भर्ता ते देवि मन्यते ।

चलेद्धि राजा धर्माच्चेन्न सकामो भविष्यति ॥ २२ ॥

सा त्वं सद्वृत्तकुशला छिन्नधर्मार्थसंशया ।

न धर्मज्ञं नरपतिं दोषतो गन्तुमर्हसि ॥ २३ ॥

प्रसीदानुनयामि त्वां नानुशास्मि कथञ्चन ।

अनुजानीहि मां देवि वनवासाय दीक्षितम् ॥ २४ ॥

एवं स रामो गतबुद्धिभावो वनं प्रवेष्टुं सह लक्ष्मणेन ।

भूयो वचः सानुनयं बभाषे स्वां मातरं धर्मभृतां वरिष्ठः ॥ २५ ॥

यशो ह्यहं केवलराज्यकारणात्न पृष्ठतः कर्तुमलं महोदयम् ।

अदीर्घकाले नरलोकजीविते वृणे बलात्प्राद्य महोमधर्मतः ॥ २६ ॥

प्रसादये त्वां शिरसा यतत्रते प्रसीद मे कर्तुमविघ्नमस्तु ते ।

वनं गमिष्याम्यहमाज्ञया पितुः प्रदेह्यनुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥ २७ ॥

प्रसादयन्नरवृषभः स मातरं बहुक्तवान्जिगमिषुरेव दण्डकाम् ।

अथात्मजं शृशपरिदेवितं तदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः २८

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो-

नाम षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

[सप्तविंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा जननीं रामो धर्मात्माऽनुनयं वचः ।
 स्थितां धर्मपरां दीनां पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 त्वया देवि मया चैव स्थेयं नृपतिशासने ।
 राजा भर्ता गुरुश्चैव सर्वेषामीश्वरेश्वरः ॥ २ ॥
 इमानि तु विहृत्यैव नववर्षाणि पञ्च च ।
 वने पुनरुपाश्रुतः स्थास्यामि वचने तव ॥ ३ ॥
 इत्युक्त्वा सा प्रियं पुत्रं वाष्पपर्याकुलं वचः ।
 उवाचेदं सपत्नीनां वस्तु मध्ये न मे क्षमम् ॥ ४ ॥
 नय मामपि पुत्र त्वं वनं वन्यमृगाकुलम् ।
 यदि ते गमने बुद्धिः कृता पितुरवेक्षया ॥ ५ ॥
 तां तथा ब्रुवतीं रामः पुनर्वचनमब्रवीत् ।
 जीवत्पत्न्याः स्त्रिया भर्ता दैवतं परमं स्मृतः ॥ ६ ॥
 भवत्या मम चैवाद्य राजा प्रभवति प्रभुः ।
 अतो नार्हाम्यहं नेतुं त्वामितो नगराद्गनम् ॥ ७ ॥
 न चानुगन्तुं न्याय्यो ऽहं जीवत्पत्न्या त्वयापि वा ।
 महात्मा वाऽमहात्मा वा पतिरेव गतिः स्त्रियाः^१ ॥ ८ ॥
 किं पुनर्नृपति देवि महात्मा दयितश्च ते ।
 भरतश्चापि धर्मात्मा विनीतो गुरुवत्सलः ॥ ९ ॥
 असंशयं यथैवाहं पुत्रस्ते धर्मतस्तथा ।
 मत्तो ऽधिकतरां पूजां भरतास्त्वमवाप्स्यसि ॥ १० ॥

न हि किञ्चिदकल्याणं तस्मादाशंसयाम्यहम् ।
 यथा तु मयि निष्क्रान्ते पुत्रशोकेन मे पिता ॥ ११ ॥
 अतिमात्रं न सन्तप्येत्तथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
 कार्यः प्रत्यग्रवयसि न तथा वाऽप्यपह्ववः ॥ १२ ॥^०
 पत्यौ वृद्धे यथा कार्यस्त्वया मच्छोककषिते ।
 या धर्मचारिणी नारी पतिं पतिपरायणा ॥ १३ ॥
 नानुवर्त्तत यत्नेन न सा सद्भिः प्रशस्यते ।
 भर्तृव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा ॥ १४ ॥
 इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गे महीयते ।
 तस्मात्सदैव भर्तुस्त्वं शुश्रूषानिरता गृहे ॥ १५ ॥
 स्थातुमर्हसि धर्मो हि सन्स्त्रीणामेष शाश्वतः ।
 गार्हस्थ्यधर्मरतया देवाराधनशीलया ॥ १६ ॥
 भर्तृचित्तानुवर्त्तिन्या भर्ता सेव्य इह त्वया ।
 ब्राह्मणान् वेदविदुषः पूजयन्ती यतव्रता ॥ १७ ॥
 वसेह भर्तृसहिता ममागमनकाक्षिणी ।
 द्रक्ष्यसे भर्तृसहिता ममाभ्यागमनं पुनः ॥^० १८ ॥-
 यदि राजा मद्विहीनो धारयिष्यति जीवितम् ।
 इति सानुनयं वाक्यं श्रुत्वा धर्मार्थसंहितम् ॥ १९ ॥^०
 रामेणोक्ता वभाषेऽथ कौशल्या साश्रुलोचना^० ।
 गच्छ पुत्र शिवं तेऽस्तु कुरुष्व पितृशासनम् ॥ २० ॥^०

म्वस्तिमन्तमरिष्टं त्वां द्रक्ष्यामि पुनरागतम् ।

शुश्रूषा निरता भर्तुं भविष्यामि यथाऽऽत्थ माम् ॥ २१ ॥

यच्चान्यदपि कर्तव्यं करिष्ये तत्सुखी ब्रज ।

तथा तु रामं वनवासनिश्चितं समीक्ष्य देवी गतसत्त्वचेतना ।

बभूव भूयः सहसैव दुःखिता सगद्गदं वाष्पकलप्रलापिनी ॥ २२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं

नाम सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

[अष्टविंशः सर्गः]

समाश्वस्य ततो भूयः कौशल्या राममब्रवीत् ।
 सास्त्राक्षरपदं^१ वाक्यमिदं वाष्पाकुलेक्षणा ॥ १ ॥
 अदृष्टदुःखो धर्मात्मा सर्वभूतहिते रतः ।
 मया दशरथाज्जातः^२ कथं दुःखमवाप्स्यमि ॥ २ ॥
 यस्य प्रेष्याश्च दामाश्च स्वादन्यन्नानि^३ भुञ्जते ।
 तस्य पुत्रः प्रियो वन्यं भोक्ष्यसे मुनिभोजनम् ॥ ३ ॥
 कः श्रद्ध्यादिदं श्रुत्वा कस्य वा न भयं भवेत् ।
 राज्ञा निर्वासितः पुत्रः प्रियो ऽतिगुणवानिति ॥ ४ ॥
 अयं धक्ष्यति मां पुत्र लोकवाक्यहृताशनः ।
 वियोगार्तिसमुद्भूतस्त्वद्गुणौघमयन्धनः^४ ॥ ५ ॥
 चिन्ताऽऽयासमहाभ्रमस्त्वद्वियोगानिलेरितः ।
 मां प्रधक्ष्यत्ययं नूनं निःश्वासायासपावकः ॥ ६ ॥
 त्वया विहीनामवशां शोकाग्निरनिशं ज्वलन् ।
 प्रधक्ष्यति यथा कक्ष्यं चित्रभानुहिमान्यये ॥ ७ ॥
 वन्सलत्वाद्यथा धेनुः स्वं पुत्रमभिधावति ।
 तथा त्वामनुयास्यामि वान्सल्यादभिधावती^० ॥ ८ ॥
 इति मातुर्निर्गदितं मातुः सकरुणाक्षरम् ।^(१)
 श्रुत्वा^०रामा^(१)ब्रवीद्वाक्यं^(०)कौशल्यां शोककर्षिताम् ॥ ९ ॥
 कंकेत्या वञ्चितो राजा मयि चारण्यमाश्रिते ।

१ कै—सास्त्राक्षर० । ल --मास्त्राक्षर० । म—सस्त्राक्षर । २ ल—दश-
 रथाज्जातः । म—दशरथो जातः । ३ म स्वादन्यन्नानि । ४ कै—स्त्वद्गुणौघ० ।

भवत्या च परित्यक्तो न मन्ये वर्तयिष्यति ॥ १० ॥
 भर्तुश्चैव परित्यागः शस्यते न कथञ्चन ।
 स भवत्या न कर्तव्यो मनसाऽपि विगर्हितः ॥ ११ ॥
 यावज्जीवति ते भर्ता भर्ता हि तव दैवतम् ।
 मर्वात्मना सयत्नात्तमाराधयितुमर्हसि ॥ १२ ॥
 राजा हि ते प्रभविता प्राणानां जीवितस्य च ।
 अनुगन्तु मतो देवि न मामर्हसि सर्वथा ॥ १३ ॥
 इत्येवमुक्त्वा गमेण कौशल्या धर्मदर्शिनी ।
 तथेत्युवाच दुःखार्ता गमं संप्रस्थितं वनम् ॥ १४ ॥
 विनिश्चितं तथा रामं विज्ञाय गमनोन्मुखम् ।
 प्रास्थानिकं राममाता^१ कर्तुं समुपचक्रमे^२ ॥ १५ ॥
 सा निगृह्य ततो वाष्पमुपस्पृश्य जलं शुचि ।
 चकार देवी रामस्य ततः स्वस्त्ययनक्रियाम् ॥ १६ ॥
 सुमनोभिश्च गन्धैश्च मनोज्ञैर्बलिभिस्तथा ।
 देवानभ्यर्च्य विधिवत्प्रणम्य च शुभव्रता ॥ १७ ॥
 गन्धमाल्यहविःशेषं रामाय प्रतिपाद्य च ।
 मूर्ध्नि चैनमुपाग्राय परिष्वज्य च पीडितम् ॥ १८ ॥
 रक्षोघ्नीमोषधीं पाणौ दक्षिणे च बबन्ध सा ।
 रामस्वस्त्ययनार्थं हि मन्त्रमेनं जजाप च ॥ १९ ॥
 स्वस्ति ते कुरुतां ब्रह्मा शिवो विष्णुः प्रजापतिः ।

१ म—०कर्तुं संघाप्रचक्रमे । २ क—स्वस्त्य राममाता कर्तुं प्रचक्रमे ।

स्वस्ति कुर्वन्तु ते साध्या^१ मरुतश्च महर्षिभिः^१ ॥ २० ॥
 स्वस्ति धाता विधाता च स्वस्ति पूषा भगोऽर्ष्यमा ।
 वरुणः स्वस्ति राजा च करोतु मनुभिः सह ॥ २१ ॥
 स्वस्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति रुद्रा दिशन्तु ते ।
 दिशश्च विदिशश्च मासाः संवत्सराः क्षपाः ॥ २२ ॥
 दिनानि च गृहूर्त्ताश्च स्वस्ति पुत्र दिशन्तु ते ।
 यन्मंगलं महेन्द्रस्य सर्वैः देवैः वृतं पुरा ॥ २३ ॥
 षृत्वं हन्तुं प्रयातस्य वत्स तत्ते ऽस्तु मंगलम् ।
 यन्मंगलं सुपर्णस्य विनताऽकल्पयत्पुरा ॥ २४ ॥^०
 अमृतार्थं प्रयातस्य तत्ते भवतु मंगलम् ।
 वेदाः^१ सांगास्तथा ऽऽदित्या मन्त्रा आथर्वणाश्च ये^२ ॥
 धृतिः^१ स्मृतिश्च^१ मेधा च पान्तु त्वां पुत्र सर्वशः ।
 सिद्धा देवर्षयः सर्वे तथा ब्रह्मर्षयोऽमलाः ॥ २६ ॥
 नागाः सुपर्णाः पितरो रक्षन्तु त्वां समन्ततः ।
 स्कन्दश्च सुरसेनानीस्तथैव च महेश्वरः ॥ २७ ॥
 सप्तर्षयो नारदश्च सोमः शुक्रो बृहस्पतिः ।
 नक्षत्राणि ग्रहाश्चान्ये तथा नक्षत्रदेवताः ॥ २८ ॥
 ज्योतींषि चैव दिव्यानि पान्तु त्वां पुत्र सर्वतः ।
 महावने विचरतो ह्यनिवेशधरस्य ते ॥ २९ ॥
 उग्ररूपविषा नागाः सौम्यरूपा भवन्तु ते ।
 राक्षसाश्च पिशाचाश्च यक्षाश्च पिशिताशनाः ॥ ३० ॥

शिवा भवन्तु ते पुत्र व्यालाश्वारण्यवासिनः^{१०} ।
 पतंगा वृश्चिकाः कीटा दंशाश्च मषकैः सह ॥ ३१ ॥
 मरीचृपाश्वोग्रविषाः शिवाय विचरन्तु ते ।
 महागजा वराहाश्च खड्गयः^{११} सिंहास्तथैव च ॥ ३२ ॥
 ऋक्षाश्च महिषाश्चैव शिवास्ते सन्तु पुत्रक ।
 ये चामिषाशिनो रौद्रा नानारूपा मृगद्विजाः ॥ ३३ ॥
 मयाऽभियाचितास्त्वेते शिवाः सन्तु वने चराः ।
 स्वस्ति तेऽस्त्वान्तरिक्षेभ्यः पार्थिवेभ्यश्च पुत्रक ॥ ३४ ॥
 दिव्येभ्यश्चैव भूतेभ्यो वनचारिभ्य एव च ।
 सर्वलोकप्रसुर्ब्रह्मा वृषभांकस्तथैव च ॥ ३५ ॥
 त्रिलोकनाथश्च वने रक्षन्तु त्वां जनार्दनः ।
 आगमास्ने शिवाः सन्तु सिध्यन्तु च मनोरथाः ॥ ३६ ॥
 सुखेन यातु कालस्ते स्वस्ति प्राप्नुहि राघव ।
 संसिद्धार्थमरागं त्वामयोध्यां पुनरागतम् ॥ ३७ ॥
 द्रक्ष्यामि त्वां कदा पुत्र जुष्टं राजश्रिया पुनः ।
 इत्युक्त्वा मूर्ध्न्युपाग्राय परिष्वज्याभिनन्द्य च ॥ ३८ ॥
 पुनरागमनायेह गच्छ पुत्रेत्युवाच तम् ।
 शीघ्रं त्वां पुनरायातं पश्येयं सह लक्ष्मणम् ॥ ३९ ॥
 वनवाससम्युत्तीर्णं नवं चन्द्रमिवोदितम् ॥ ४० ॥
 मयाऽर्चिता देवगणाः शिवाद्यो महर्षयश्चैव पितामहो महान् ।
 इतः प्रयातस्य वनं चिराय ते हितैषिणः सन्तु मयाऽभियाचिताः । ४१

इत्येवमश्रुप्रतिपूर्णलोचना समाप्य च स्वस्त्ययनं कृताञ्जलिः ।
 प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं पुनः पुनः सा परिपीड्य सस्वजे ॥४२॥
 तथा तु देव्या स कृतप्रदक्षिणश्चकार मूर्ध्ना चरणाभिवन्दनम् ।
 स चापि सौमित्रिरभिन्नकर्षणो जगाम चामंत्र्य च तां स्वमालयम् ॥४३॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यास्वस्त्ययनं
 नाम अष्टविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

[एकोनत्रिंशः सर्गः]

कौशल्यामभिवाधैवमनुमान्य च राघवः ।
 कृतस्वस्त्ययनो मात्रा प्रतस्थे सहलक्ष्मणः ॥ १ ॥
 विराजयन् राजमार्गं राजपुत्रो जनैर्घृतम् ।
 हरन्निव जनौघस्य हृदयानि जगाम सः ॥ २ ॥
 वंदेह्यपि च तत्कालं तत्पराऽनन्यमानसा ।
 आशंमन्ती च सा भर्तुर्योवराज्याभिषेचनम् ॥०३ ॥
 देवान् पितृंश्च सत्कृत्य तथा नियतमानसा ।^०
 अभिज्ञा राजधर्माणां राजपुत्री धृतव्रता ॥ ४ ॥
 प्रद्वारासक्तनयना भर्तृदर्शनलालसा ।
 तस्थौ स्ववेश्ममध्ये सा रामागमनकाक्षिणी ॥ ५ ॥
 प्रविवेशाथ सहसा रामो वेष्मात्मनस्तदा ।
 भक्तिमद्भिर्जनैः कीर्णं हिया किञ्चिदधोमुखः ॥ ६ ॥
 ईषद्दीनमुखः क्षामो मनोदुःखसमन्वितः ।
 नातिहृष्टमनाः सीतां प्रविश्याथ ददर्श सः ॥ ७ ॥
 तत्परां वेष्ममध्यस्थां विनयावनतां स्थिताम् ।
 विनयाचारसंपन्नां प्राणेभ्योऽपि प्रियां प्रियाम् ॥ ८ ॥
 सा च दृष्ट्वैव भर्तारं प्रत्युद्गम्य प्रणम्य च ।
 वामपार्श्वे स्थिता देवी रामं दीनमुखं तदा ॥ ९ ॥
 अभिवीक्ष्य वरारोहा वेपमानेदमब्रवीत् ।
 दृष्ट्वान्तर्गतदुःखार्त्तं किमेतदिति विह्वला ॥ १० ॥

किं न बार्हस्पतो योगो युक्तः पुष्येण राघव ।
 प्रोच्यते ब्राह्मणैस्तज्ज्ञैर्येन त्वमतिदुर्मनाः ॥ ११ ॥
 कस्माच्छतशलाकेन पूर्णेन्दुप्रतिमेन ते ।
 आवृतं वदनं चारु छत्रेण न विराजते ॥ १२ ॥
 चामरव्यजनाभ्यां च चारुपद्मदलेक्षणम् ।
 न वीज्यते ते ऽद्य मुखं कस्मात् पूर्णेन्दुसुप्रभम् ॥ १३ ॥
 यौवराज्याभिषिक्तं च सूतमागधवन्दिनः ।
 वागिमनो न स्तुवन्ति त्वां कस्माद्राघव शंस मे ॥ १४ ॥
 न ते क्षौद्रं च दधि च ब्राह्मणा वेदपारगाः ।
 मूर्ध्नि राज्याभिषेकार्थं दच्युश्च विधिवन्न किम् ॥ १५ ॥
 कस्मात्प्रकृतिमुख्यास्ते श्रेणिमुख्याश्च राघव ।
 किंकरा नाद्य तिष्ठन्ति यौवराज्याभिषेचने ॥ १६ ॥
 त्रिप्रसूता गजवृषाः शुभलक्षणलाक्षिताः ।
 पृष्ठतो नानुयान्ति त्वां कस्मादद्याभिषेचने ॥ १७ ॥
 शुभलक्षणसंपन्नः श्वेतश्च तुरगोत्तमः ।
 न ते ऽद्य याति पुरतः कस्माच्छ्रीविजयावहः ॥ १८ ॥
 एवं ब्रुवाणां तां रामो जातशंकां च मैथिलीम् ।
 उवाचेदं वचो वीरः सत्त्वगांभीर्यमास्थितः ॥ १९ ॥
 राजर्षिकुलसंभूते धर्मज्ञे सत्यवादिनि ।
 शृणु मैथिलि घोरा त्वं भूत्वा वाक्यमिदं मम ॥ २० ॥
 राज्ञा सत्यप्रतिज्ञेन पित्रा दशरथेन मे ।

केकेय्यै प्रीतमनसा दत्तौ किल वरौ पुग ॥ २१ ॥
 ममोपकृत्य चैवाद्य यौवराज्याभिषेचनम् ।
 प्रचोदितेन समये धर्मज्ञेनापवर्जितौ । २२ ॥
 मया वर्षाणि वस्तव्यं चतुर्दश वने प्रिये ।
 भरतेनाप्ययोध्यायां राज्ञा भाव्यमनिन्दिते ॥ २३ ॥
 सो ऽहं त्वामागतो द्रष्टुं प्रस्थितो विजनं वनम् ।
 आपृच्छे धैर्यमालंब्यं मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ २४ ॥
 श्वश्रूं च^४ श्वशुरं चैव वस त्वं समुपाश्रिता ।
 शुश्रूषा परमा भूत्वा यावदागमनं मम ॥ २५ ॥
 मद्द्वयपाश्रयजं^५ मानमाश्रित्य वरवर्णिनि ।
 भरतस्य समीपे ऽहं न ते स्तुत्यः कथञ्चन ॥ २६ ॥
 ऐश्वर्यमदमत्ता हि न सहन्ते परस्तवम् ।
 तस्मात्त्वया गुणाः स्तुत्या भरतस्याग्रतो न मे ॥ २७ ॥
 अहं हि^६ पितरं सत्यं चिकीर्षुस्तभियोगतः ।
 वनमर्द्यव यास्यामि कुरु त्वं हृदयं स्थिरम् ॥ २८ ॥
 मयि याते च कल्याणि वनं मुनिजनप्रियम् ।
 व्रतोपवासरतया भवितव्यं त्वया प्रिये ॥ २९ ॥
 कल्यउत्थाय देवानां कृत्वा पूजाभिवादनम् ।
 नन्दितव्यो दशरथः पिता मे दैवतं यथा ॥ ३० ॥
 मातरश्चैव मे सर्वा यथाक्रममशेषतः ।

4 कै, ल—०मालंभ्य । म—०मालमय । 5 कै, ल—भवभ्रू । 6 ल—
 ०श्वश्रू । 7 ल—च ।

त्वयाऽर्चनीयाः सततं समा हि मम मातरः ॥ ३१ ॥
 भ्रातरौ चापि मे सीते प्राणेभ्यो ऽपि प्रियाबुभौ ।
 त्वया भरतशत्रुघ्नौ द्रष्टव्यां भ्रातृपुत्रवत् ॥ ३२ ॥
 न वक्तव्यां ऽप्रियं सीते मत्प्रीत्या भरतस्त्वया ।
 स हि राजा गुरुश्चैव देशस्यास्य प्रियश्च मे ॥ ३३ ॥
 आराधिता हि राजानो देवताश्चोपसेविताः ।
 अनुग्रहैर्योजयन्ते भक्तान् भ्रान्ति विपर्यये ॥ ३४ ॥
 आरसानपि पुत्रांश्च विहिंसन्त्यपकारिणः ।
 अनुगृह्णन्ति च प्रीत्या परानप्युपकारिणः ॥ ३५ ॥
 त्वं च तेनेह वर्तव्या वनं हि प्रोषिते मयि ।
 तस्मात् सार्धैव लिप्सेथाश्चैलपिण्डभृतिं ततः ॥ ३६ ॥
 मम माता च कौशल्या वृद्धा मच्छोक्कषिता ।
 मत्प्रियार्थं प्रिये सीते शुभ्रप्याऽनन्यचिन्तया ॥ ३७ ॥
 सोऽहं गमिष्यामि महावनं प्रिये त्वयाऽपि वस्तव्यमिहाज्ञया मम ।
 यथा व्यलीकं न करोमि कस्यचित् तथा त्वया कार्यमितो गते मयि ॥ ३८ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽध्याकाण्डे सीतानुशासनं
 नाम एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

[त्रिंशः सर्गः]

इत्यप्रियमिदं वाक्यं श्रुत्वा मा प्रियभाषिणी ।
 माम्प्रियमिव भर्तारं मीता वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 आर्यपुत्र पिता माता भ्रातरौ बान्धवाः सुताः ।
 प्रेत्य चैवह चाश्रन्ति स्वं स्वं कर्मफलं पृथक् ॥ २ ॥
 न पितुः कर्मणा पुत्रः पिता वा पुत्रकर्मणा ।
 सुखमाप्नोति दुःखं वा स्वं स्वं कर्माभिजायते ॥ ३ ॥
 भार्यका पतिभोज्यानि भुङ्क्ते पतिपरायणा ।
 माऽहं त्वामनुयास्यामि यत्र यत्र गमिष्यमि ॥ ४ ॥
 शपे ऽहं ते प्रसादेन जीवितेन च गधव ।
 यथा नेच्छाम्यहं वस्तुं स्वर्गे ऽपि रहिता त्वया ॥ ५ ॥
 त्वं मे नाथो गुरुश्चैव गतिर्देवतमेव च ।
 गमिष्यामि त्वया मार्गमेष मे निश्चयः परः ॥ ६ ॥
 यदि त्वमुद्यतो गन्तुं दुर्गं कण्टकितं वनम् ।
 अहं तवाग्रे यास्यामि मृद्वन्ती^१ कुशकण्टकम् ॥ ७ ॥
 न पिता नात्मजो नात्मा न माता न सुहृज्जनः ।
 गतिर्भवति मत्स्त्रीणां पतिस्त्वेकः परा गतिः ॥ ८ ॥
 ईर्ष्यादोषं ममुत्सृज्य पीतशेषमिबोदकम् ।
 नय मां वीर विस्रब्धां पापं मयि न विद्यते ॥ ९ ॥
 हर्म्यप्रासादभवनविमानेभ्यो ऽपि मे प्रभो ।
 त्वत्पादाश्रेयणं^२ श्रेयः स्वर्गादपि च दुर्लभम् ॥ १० ॥

१ कै-मृद्वन्ति । २ ल-०कण्टकान् । ३ ल-०श्रेयणं ।

कुरु प्रसादं गच्छेयं त्वयाऽद्य सहिता वनम् ।
 सिंहकुञ्जरशार्दूलवरार्हर्षनिषेवितम् ॥ ११ ॥
 सुखं वने ऽपि वत्स्यामि तव^०पादव्यपाश्रयात्^० ।
 विहरन्ती त्वया सार्धं यथेन्द्रभवने तथा ॥^०१२ ॥
 शुश्रूषमाणा^०वत्स्यामि^०पादौ तं नियतव्रता ।
 रममाणा त्वया सार्धं काननेषु सुगन्धिषु ॥ १३ ॥
 न ममाभिभवे शक्तो महेन्द्रो ऽपि त्वदाश्रयात् ।
 अतो नार्हसि मां भक्तां निवर्त्तयितुमातुराम् ॥ १४ ॥
 शनक्रतुसमः शौर्ये विष्णुतुल्यपराक्रमः ।
 त्वं हि लोकत्रयस्यास्य समर्थः प्रतिपालने ॥ १५ ॥
 त्वया सह भविष्यामि फलमूलकृताशना ।
 दुर्मरा न भविष्यामि वने ते ऽहं कथञ्चन ॥ १६ ॥
 इच्छामि सारितः शैलान् सरांसि च वनानि च ।
 द्रष्टुं वल्कलसंवीता त्वया नाथेन रक्षिता ॥ १७ ॥
 हंसकारण्डवाकीर्णाः पश्चिन्यो विमलोदकाः ।
 अवगाह्यामिरंस्ये ऽहं त्वयैव सह राघव ॥ १८ ॥
 वनोद्देशेषु रम्येषु नानाकुसुमगन्धिषु^१ ।
 रन्तुमिच्छामि^१ श्रुदिता त्वयाऽहं सह राघव ॥ १९ ॥^०
 सहस्राण्यपि वर्षाणि बहूनि सहिता त्वया ।
 समतीतानि मन्ये ऽहं यथैकदिवसं तथा ॥ २० ॥
 स्वर्गे ऽपि वासं रहिता त्वया वीर न कामये ।

नरकश्चापि मे स्वर्गाद्विशिष्टः स्याच्चया सह ॥ २१ ॥
 पित्रा चाप्यनुशिष्टाऽस्मि मात्रा च स्वजनेन च ।
 विना भर्त्रा न वस्तव्यं त्वयेति रघुनन्दन ॥ २२ ॥
 अतः प्रणम्य याचे त्वां गमने कृतनिश्चया ।
 न मामर्हसि सन्देष्टुमितिकर्तव्यतां प्रति ॥ २३ ॥
 वनं गमिष्यामि सह त्वयाऽहं न मां नृवीर प्रतिषेद्धुमर्हसि ।
 वने निवत्स्यामि यथा पितुर्गृहे तथैव पद्भ्यामभिरक्षिता त्वया ॥ २४ ॥
 अनन्यभावामनुरक्तचेतसां त्वया वियुक्तां मरणाय निश्चिताम् ।
 नयस्व मां साधु कुरु प्रियं च मे मया न भारो गुरुतामुपैष्यति ॥ २५ ॥
 इति ब्रुवाणामपि धर्मवादिनीं नेतुं न रामो दयितां व्यवस्यति ।
 निवर्त्तयिष्यन् हि स तां तदा प्रियाशुवाच दोषान् वनवासिनामथ २६ ।
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतावाक्यं
 नाम त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

[एकत्रिंशः सर्गः]

तां तथा ब्रुवतीं रामः प्रियां भार्यामनुव्रताम् ।
 उवाचदं बहून् दोषान् वनवासमुदाहरन् ॥ १ ॥
 सीते महाकुलीनाऽसि धर्मज्ञाऽसि यशस्विनि ।
 सत्यं मद्बचनं कार्यं श्रोतुमर्हस्यनिन्दिते ॥ २ ॥
 मनो हि त्वयि निक्षिप्य शरीरेणैव केवलम् ।
 गमिष्याम्यवशः सीते काननं पितुराज्ञया ॥ ३ ॥
 तस्माद् यथा वदामि त्वां तथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
 वनवासे हि बहव इमे दोषा महात्यया ॥ ४ ॥
 तच्छ्रुत्वा त्यज्यतां भीरु वनवासकृता मतिः ।
 तवानुकंपयैवाहं वनदोषान् सुदारुणान् ॥ ५ ॥
 संजानानो ह्यहं न त्वां वनं नेतुं समुत्सहे ।
 वनेषु सन्ति शार्दूला आसन्नजनघातिनः ॥ ६ ॥
 भेतव्यं हि सदा तेभ्यस्तेन दुःखं प्रिये वनम् ।
 तथैव हरयो नागा बहवः सन्ति कानने ॥ ७ ॥
 अतिमात्रं विनिघ्नन्ति तेन दुःखं वनं प्रिये ।
 अत्यम्बु चातिशीतं च तृद्बुधुक्षे तथैव च ॥ ८ ॥^०
 भयानि च बहून्यत्र तेन दुःखं प्रिये वनम् ।^(०)
 सर्पाः सरीसृपाश्चान्ये वृक्षिकाश्च महाविषाः ॥ ९ ॥^०
 चरन्ति गहने ऽरण्ये तेन दुःखं प्रिये वनम् ।^०
 गिरिकन्दरजातानां नानाऽरण्यनिवासिनाम् ॥ १० ॥

उद्वजनानां सिंहानां श्रयन्ते निनदा वने ।
 सिंहर्क्षमृगशार्दूलबराहैरगवारणाः ॥ ११ ॥
 प्राणाभिघातिनो घोरास्तथाऽन्या मृगजातयः ।
 बह्व्यः] सन्ति वने दुर्गे न गन्तव्यं ततो वनम् ॥ १२ ॥
 तथा कुटिलगा नागा महाविवरशायिनः ।
 दृश्यन्तं चात्र मार्गेषु वृश्चिकाश्च महाविषाः ॥ १३ ॥
 पतंगा मक्षिकाः कीटा दंशाश्च मशकैः सह ।
 सन्त्यरण्येषु वंदेहि तेन दुःखं महावनम् ॥ १४ ॥
 अगाधाः पङ्कवत्यश्च महानक्रकुलाकुलाः ।
 सरितः सन्त्यरण्यानि नदीकंदरवन्ति च ॥ १५ ॥
 कक्ष्यवृक्षक्षपलता गहनानि शुचिस्मिते ।
 सन्त्यटव्यश्च वंदेहि तस्माद्दुःखतरं वनम् ॥ १६ ॥
 सुप्यते तृणशय्यासु पर्णशय्यासु चाबले ।
 स्वयंकृतासु दुःखासु भूतले निर्जने वने ॥ १७ ॥
 आहाराश्चैव कर्तव्या बदरामलकैर्गुर्दः ।
 तथा श्यामाकनीवारपियालकडुतिन्दुकैः^१ ॥ १८ ॥
 वन्येष्वलभ्यमानेषु वने मूलफलेषु वै ।
 बहून्यहानि वस्तव्यं निराहारैर्वनप्रियैः ॥ १९ ॥
 वल्कलाजिनपर्णानि वसितव्यानि कानने ।
 वनेषु भवितव्यं च दीर्घश्मश्रुजटाधरैः ॥ २० ॥
 दीर्घरोमधरैश्चैव मलपङ्कसमाचितैः ।

वातातपविशुक्लाङ्गः प्रिये दुःखमतो वनम् ॥ २१ ॥

स्थाने वीरासनं सेव्यमृपचाराश्च मैथिलि ।

कर्तव्या दुश्चराश्चैव नियमा वनवासिभिः ॥ २२ ॥

ग्रीष्मे पञ्चतपोभिश्च वर्षास्वभ्रावकाशकैः^१ ।

जलवासैश्च शिशिरे भाव्यं वनचरैः प्रिये ॥ २३ ॥

त्वगस्थिमात्रशेषेण तपसा कर्षितेन च ।

मया ते तत्र का प्रीतिः का रतिर्वा भविष्यति ॥ २४ ॥

*मां वा समनुगच्छन्त्या नियमत्रतशीलया ।

*त्वयापि हि वने तत्र का रतिर्मे भविष्यति ॥ २५ ॥

वातातपविशीर्णाङ्गीं तपोनियमकर्षिताम् ।

कथं द्रक्ष्याम्यरण्ये त्वां भृशं हि दयिताऽसि मे ॥ २६ ॥

तदलं ते वनं गन्तुं वनचर्या न ते क्षमा ।

विमृषन् वनदोषं हि पश्यामि दयिते वनम् ॥ २७ ॥

तत्र स्थास्यापि मे नित्यं हृदये त्वं निवत्स्यसि ।

इहस्थाऽपि न दूरे त्वं प्रिया हि भवती^२ मम ॥ २८ ॥

एवं वने नेतुमनिश्चितो ऽसावुक्त्वा प्रियां तां विरराम रामः ।

अथोत्तरं सा सुदती सुदीना सीता पुनर्वाक्यमिदं जगाद ॥ २९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतावनदोषदर्शनं

नाम एकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

१ कै—वर्षेष्व० । ल—वर्षस्व० । * कै, ल—नास्ति । ३ कै—भवतो ।

पश्चात् “भवती” इति कृतम् । ल—भवतो ।

[द्वात्रिंशः सर्गः]

अथ तद्वचनं श्रुत्वा सीता रामस्य दुःखिता ।
 प्रसक्ताश्रुमुखी वाक्यं मर्तारमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥
 वनवामे त्वया दोषा य एते परिकीर्तिताः ।
 तानार्यपुत्र मन्ये ऽहं त्वद्भक्त्या सर्वशो गुणान् ॥ २ ॥
 त्वद्बाहुगुप्तां न च मामपि देवः शतक्रतुः ।
 शक्तो ऽभिभवितुं लोके कुतो ऽन्ये वनचारिणः ॥ ३ ॥
 सिंहव्याघ्रवराहादीनुक्तवानामि यान्वने ।
 दुरामदान्न मे तेभ्यो भयं किञ्चन^१ विद्यते ॥ ४ ॥
 त्वद्बाहुबलगुप्तायाः कुतो मे ऽनुबलं^२ भवेत् ।
 विपात्तिरपि वा तत्र श्रेयो मे नेह जीवितम् ॥ ५ ॥
 त्वया वा सह गन्तव्यं त्वदनुज्ञातया वनम् ।
 त्वत्परित्यक्ता वापि त्यक्तव्यं जीवितं मया ॥ ६ ॥
 नारी भर्तृपरित्यक्ता जीवन्त्यपि सुदुःखिता ।
 मृता भवत्यार्यपुत्र तस्माच्छ्रेयो ऽद्य मे मृतम् ॥ ७ ॥
 अपि चैवाहमादिष्टा लक्षणज्ञैर्द्रिजातिभिः ।
 वने ते विजने सीते वस्तव्यमिति राघव ॥ ८ ॥
 तेषां लक्षणिनां श्रुत्वा वचस्तत्सत्यवादिनाम् ।
 वनवासस्पृहा नित्यं हृदि मे परिवर्त्तते ॥ ९ ॥
 स चेदवश्यं प्राप्तव्यः सिद्धादेशस्तथा मया ।
 सह त्वया भवतु मे न हीच्छामि तमन्यथा ॥ १० ॥

१ क—किञ्चिन्न । २ म, क—नुभयं ।

प्रामादेशा भविष्यामि गत्वाऽहं महिता त्वया ।
 कालश्चायं समुत्पन्नः मन्त्यास्ते मन्तु वै द्विजाः ॥ ११ ॥
 वनवासे च जानामि दुःखानि विविधान्यहम् ।
 प्राप्यन्ते यानि मुनिभिर्वनवासे यतात्मभिः ॥ १२ ॥
 कन्ययैव मया सर्वे वनदोषाः श्रुताः पुग ।
 भिक्षुक्याः माधुवृत्तायाः कथयन्त्याः पितुर्गृहे ॥ १३ ॥
 प्रमादये त्वां शिरसा नय मामपि गधव ।
 वनवामो हि सुभृशं कांक्षितां मे त्वया मह ॥ १४ ॥
 कृतकृत्यो ऽसि भद्रं ते गमनं प्रति राघव ।
 पुण्या हि वनचर्ययं त्वया मे मह कांक्षिता ॥ १५ ॥
 पूताऽनया भविष्यामि पुण्यया वनचर्यया ।
 विहरन्ती त्वया सार्धं हृदयोऽत्मवभूतया ॥ १६ ॥
 स्पृहणीया भविष्यामि लोके ऽमुष्मिर्बिहव च ।
 भर्तारमनुगच्छन्ती भर्ता स्त्रीणां हि देवतम् ॥ १७ ॥
 त्वयैव सह संयोगः प्रेत्यभावे ऽपि मे भवेत् ।
 इति चानुगमिष्यामि त्वामहं कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
 मया कथयतां पूर्वं श्रुतं प्रत्यक्षदर्शिनाम् ।
 ब्राह्मणानां निमर्गेण धर्मनिश्चयवादिनाम् ॥ १९ ॥
 भर्तारं किल या नारी छायेवानुगता सदा ।
 अनुगच्छति गच्छन्तं तिष्ठन्तमनुतिष्ठति ॥ २० ॥
 तद्भावनिरता नित्यं तत्संयोगपरायणा ।
 तमेव भूयो भर्तारं मा प्रेत्याप्यनुगच्छति ॥ २१ ॥

अनुरक्तां प्रियां भार्यां सुव्रतां पतिदेवताम् ।
 न त्वं रोचयसे नेतुं मामितः केन हेतुना ॥ २२ ॥
 तुल्यशीलव्रताचारां छायामनुगतामिव ।
 नेतुमर्हसि मां वीर वनं मुनिजनप्रियम् । २३ ॥
 यदि मां निश्चितां गच्छन्न नेतुं त्वमिहेच्छसि ।
 मत्प्रेनालभ्य ते पादौ न भविष्याम्यसंशयम् ॥ ॥ २४ ॥
 इत्युक्त्वा प्ररुरोदाथ मैथिली शोककर्षिता ।
 शोकोष्णैरभिवर्षन्ती दुःखजैरश्रुविन्दुभिः ॥ २५ ॥
 पीनोन्नतावपतितां स्नपयन्तीं पयोधरी ।
 दुःखामर्षपरीताङ्गी सुस्वरं कलभाषिणी ॥ २६ ॥
 एवमार्त्तामपि तु तां विलपन्तीं सुदुःखिताम् ।
 रामः प्रियामनुगतां नेतुं नैव व्यवस्यति ॥ २७ ॥
 दध्यौ चाधोमुखः किञ्चिद्विप्लुतामभिवीक्ष्य ताम् ।
 वनवासगतान् दोषान् बहुधाऽपि विचारयन् ॥ २८ ॥
 विमनसमभिवीक्ष्य चिन्तयन्तं जनकसुता पतिमप्रतीतरूपम् ।
 भृशतरमभिरोषताम्रनेत्रा वचनमुवाच पुनर्निगृह्य वाष्पम् ॥ २९ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतानुनयो
 नाम द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

[त्रयस्त्रिंशः सर्गः]

रामस्य तां मतिं बुद्ध्वा मैथिली कृतनिश्चया ।
 रोषात्प्रस्फुरमाणौष्ठी पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 उन्मत्तेवातिपश्यन्तो भर्तारं विपुलेक्षणा ।
 रोषावेशात् क्षिपन्तीव प्रणयादभिमानिनी ॥ २ ॥
 कृतार्थं मन्यते मूढः स आत्मानं पिता मम ।
 रामं जामातरं लब्ध्वा क्लीवं पुरुषमग्निनम् ॥ ३ ॥
 अनृतं वत लोको ऽयमज्ञानादनुपश्यति ।
 तेजस्वी राम एवैकः सूर्यो वा द्युतिमानिति ॥ ४ ॥
 किं वा पश्यन् विषण्णस्त्वं कुतो वा भयमस्ति ते ।
 त्यक्तुमिच्छसि मां येन प्रियां नान्यपराधणाम् ॥ ५ ॥
 द्युमत्सेनसुतं धीरं सत्यवन्तमनुव्रताम् ।
 सावित्त्रेमिव मां विद्धि भर्तृगतिपरायणाम् ॥ ६ ॥
 त्वत्तो ऽन्यां हि गतिं गन्तुं मनसा ऽपि न कामये ।
 त्वया नीथ परित्यक्ता नेच्छामि भरताद् भृतिम् ॥ ७ ॥
 कौमारीं दयितां भार्या स्वयमाहृत्य मां कथम् ।
 शैलषीमिव योषार्थमन्यस्मै दातुमिच्छसि ॥ ८ ॥
 न ते ऽहमपराध्यामि कर्मणा मनसा ऽपि वा ।
 वाचा वा स कथं मां त्वं त्यक्तुमिच्छस्यकारणात् ॥ ९ ॥
 यदि वाप्यपराधस्ते मया कश्चित्पुरा कृतः ।
 अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानात् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥

आर्यपुत्र परित्यज्य न मां त्वं गन्तुमर्हसि' ।
 वासः स मे स्वर्गभूतस्त्वया सह भविष्यति ॥ ११ ॥
 पृष्ठतस्तव गच्छन्त्या विहारे शयने ऽपि वा ।
 न भविष्यति मे नाथ मार्गे ऽप्यञ्चपरिश्रमः ॥ १२ ॥
 कुशकाशशरेपीकास्तथैव द्रुमकण्टकाः ।
 मार्गे मम भविष्यन्ति स्पर्शं कांशेयसन्निभाः ॥ १३ ॥
 श्रुत्याश्च वनवामे मे वन्यपर्णतृणास्तृताः ।
 रांकावाजिनसंस्पृशा भविष्यन्ति सह त्वया ॥ १४ ॥
 महावातसमुद्भूतं यन्मामवकरिष्यति ।
 रजो रमण तन्मे ऽङ्गे परार्घ्यमिव चन्दनम् ॥ १५ ॥
 शाब्द्वलेषु यदा शेष्ये विविक्तेषु च राघव ।
 कुशास्तरणतल्पेषु किं मे सुखतरं ततः ॥ १६ ॥
 यन्मे मूलफलं वन्यं वने दास्यसि राघव ।
 स्वादु वा यदि वाऽस्वादु तद्भवत्यमृतोपमम् ॥ १७ ॥
 न बन्धूनां स्मरिष्यामि न मातुर्न पितुर्वने ।
 वसन्ती भवता सार्धं स्वादुमूलफलाशना ॥ १८ ॥
 न' मत्कृतं व्यलीकं ते तत्र किञ्चिद् भविष्यति ।
 भविष्यामि न चैवाहं तत्र भारस्तवानघ ॥ १९ ॥
 यस्त्वया सह स स्वर्गो नरकश्च त्वया विना ।
 कुरु मे दयितं कामं गच्छेयं सहिता त्वया ॥ २० ॥
 त्वया त्यक्त्वा हि नेच्छामि जीवितुं रघुनन्दन ।

त्वद्वियोगभयोद्विग्नां त्रायस्व शरणागताम् ॥ २१ ॥
 अथ नेच्छसि चेन्नेतुं मामेवं ममनुव्रताम् ।
 विषमद्यैव भोक्ष्ये ऽहं पश्यतस्ते नृपात्मज ॥ २२ ॥
 इदं हि दुःखं संसोढुं मुहूर्त्तमपि नोत्सहे ।
 किं पुनर्दशवर्षाणि त्रीणि चैकं च राघव ॥ २३ ॥
 इति शोकाग्निमन्तप्ता विलप्य जनकात्मजा ।
 पादयोर्निपपाताथ भर्तुर्गमनलालसा ॥ २४ ॥
 उक्त्वा वाक्यं सकरुणं त्रायस्व नृप मामिति ।
 रुरोद पतिता तत्र मुखरं मृदुभाषिणी ॥ २५ ॥
 स तस्याः करुणैर्वाक्यैर्हृदि क्षत इवातुरः ।
 मुमांच वाष्पं शोकोष्णं वाष्पमंरुद्धलोचनः ॥ २६ ॥
 तस्य शोकाश्रुपूर्णाभ्यां प्रियाकारुण्यजं तदा ।
 सुस्राव वारि नेत्राभ्यां पङ्कजाभ्यामिवोदकम् ॥ २७ ॥
 स तामुत्थाप्य शनैः पादयोः पतितां प्रियाम् ।
 उवाच वचनं रामो मधुरं परिसान्त्वयन् ॥ २८ ॥
 न कामये स्वर्गमपि त्वदृते ऽहमपि प्रिये ।
 न च मे ऽस्ति भयं किञ्चिदपि साक्षात् स्वयंभुवः ॥ २९ ॥
 धर्मं तु वर्त्तितं भीरु सद्भिराचरितं जनैः ।
 नातिवर्त्तितुमिच्छामि वलामिव महोदधिः ॥ ३० ॥
 तथा गुरुनियोगं च परं धर्मं विदुर्बुधाः ।
 तं चातिक्रामितुं नालमहं शक्तः कदाचन ॥ ३१ ॥
 स यथैवानुशिष्टो ऽस्मि पित्राऽऽहूय महात्मना ।

तथा व्रतितुमिच्छामि स हि धर्मः सनातनः ॥ ३२ ॥
 तथा तव च जिज्ञासु निश्चयं शुभनिश्चये ।
 उक्तवान्न नयिष्ये ऽहमिति शक्तो ऽपि रक्षितुम् ॥ ३३ ॥
 यदर्थं चैव सीते त्वां नेच्छामि शुभदर्शने ।
 वनवामभर्वदुःखैर्योक्तुं त्वां सुखभागिनीम् ॥ ३४ ॥
 कृतनिश्चया महाभागा वनाय मदपेक्षया ।
 न त्यक्तुं त्वं मया शक्या कीर्तिरात्मवता यथा ॥ ३५ ॥
 एहि गच्छ मया सार्धं यथा ते रुचितं प्रिये ।
 इच्छामि हि प्रियं कर्तुं नित्यं ते ऽहमनिन्दिते ॥ ३६ ॥
 ब्राह्मणेभ्यस्तु साधुभ्यो वासांस्याभरणानि च ।
 संश्रितेभ्यस्तथाऽन्येभ्यो देहि दानानि जानकि ॥ ३७ ॥
 गुरुं चामन्त्रय शुभे ततो ब्रज मया सह ।
 इति भर्त्राऽभ्यनुज्ञाता मत्वा गमनमात्मनः ॥ ३८ ॥
 क्षिप्रमेव च सा देवी दातुमेवोपचक्रमे ।
 ततः प्रहृष्टा परिपूर्णमानसा यशस्विनी भर्तुरवेक्ष्य मानसम् ।
 प्रचक्रमे दातुमथो मनीषिणां धनानि वासांसि च भूषणानि च ॥ ३९ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीताऽभिप्राय-
 जिज्ञासा नाम त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥

[चतुस्त्रिंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा राघवः सीतां समाहूय च लक्ष्मणम् ।
 उवाचेदं वचः श्रीमानवेक्ष्य प्रश्रयानतम् ॥ १ ॥
 प्रियः प्राणसमो भ्राता सहायश्च सखा च मे ।
 तस्मात्प्रणयतो ऽहं त्वां यद्ब्रवीमि कुरुष्व तत् ॥ २ ॥
 वनं त्वया न गन्तव्यं मया सह कथञ्चन ।
 इहैव हि महाभारो^१ वोढव्यो भवताऽनघ ॥ ३ ॥
 इति रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणो दीनमानसः ।
 वाष्पपर्याकुलमुत्स्रः शोकं सोढुमशक्रुवत् ॥ ४ ॥
 प्रणम्य चरणौ भ्रातुः परिरम्य च पीडितम् ।
 सीतायाश्च महाप्राज्ञस्ततो राघवमब्रवीत् ॥ ५ ॥
 अनुज्ञातो ऽस्मि भवता पूर्वमेव वनं प्रति ।
 वनं गन्तुमितः कस्माभिवर्तयामि मां पुनः ॥ ६ ॥
 न निवर्त्तयितव्यो ऽहं जीवन्तं मां यदीच्छामि ।
 शरणं त्वां प्रपन्नो ऽस्मि प्रसीदार्य क्षमस्व माम् ॥ ७ ॥
 इति ब्रुवन्तं तं गमस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 प्रह्वं नतेन शिरसा वेपमानं कृताञ्जलिम् ॥ ८ ॥
 गते त्वयि मया सार्धं यथा ते ऽप्युचितं^२ प्रियम् ।
 को भरिष्यति कौशल्यां सुमित्रां च यशस्विनीम् ॥ ९ ॥
 अभिवर्षति कर्मणो मातरौ नौ नराधिपः ।
 स कामवशगो व्यक्तं न द्रक्ष्यति यथा पुरा ॥ १० ॥
 स कामवशमापन्नो महाराजः पिताऽऽवयोः ।

भरते राज्यमासज्य कैकेय्या वशमागतः ॥ ११ ॥
 राज्यैश्वर्यमदान्धा हि कदाचिदपि कैकयी ।
 अमाधु प्रतिपद्येत सपत्नीनामचेतना ॥ १२ ॥
 ते मातराविहस्थेन ममाश्वास्य विशेषतः ।
 परिपाल्ये च मांमित्रे यावदागमनं मम ॥ १३ ॥
 यथैवाहं तथैव त्वं तयोरिह भविष्यसि ।
 बंधुरर्त्तायनं चैव दुःखेभ्यश्चैव रक्षिता ॥ १४ ॥
 इति रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणः श्रीमतां वरः ।
 कृताञ्जलिरिदं भूयो रामं वचनमब्रवीत् ॥ १५ ॥
 मद्विधानां सहस्राणि कौशल्या विभ्रयाद्विभो ।
 यस्याः महस्रं ग्रामाणां निसृष्टमुपजीवनम् ॥ १६ ॥
 त्वदपेक्षश्च भरतः पूजयिष्यत्यसंशयम् ।
 कौशल्यां च सुमित्रां च परमं यत्नमास्थितः ॥ १७ ॥
 नय मामनपेक्षस्त्वं वनवासकृतोद्यमम् ।
 शिष्यः प्रेष्यः सहायश्च भविष्यामि वने तव ॥ १८ ॥
 खानित्रपिटके गृह्य खड्गपाणिघनुर्धरः ।
 अग्रतस्ते गमिष्यामि पन्थानं परिशोधयन् ॥ १९ ॥
 वन्यानि चाहरिष्यामि पुष्पमूलफलानि च ।
 शय्योपकरणार्थं च द्रुमपणतृणानि च ॥ २० ॥
 त्वमार्थं सह वैदेह्या वनवासे ऽभिरंस्यसे ।
 रक्षतस्त्वां गमिष्यन्ति जाग्रतो मम रात्रयः ॥ २१ ॥
 आर्यं शिष्यो ऽस्मि दासो ऽस्मि भक्तो ऽस्म्यनुगतस्तथा ।
 तवाहं सर्वदा साधो प्रसीद नय मामपि ॥ २२ ॥

वाक्येनानेन तु प्रीतो रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 आगच्छ ब्रज सौमित्रे आपृच्छस्व सुहृज्जनम् ॥ २३ ॥
 ये च राज्ञे ददौ दिव्ये महात्मा बरुणः स्वयम् ।
 धनुषी ते गृहाण त्वमक्षय्यानिषुधींश्च तान् ॥ २४ ॥
 अमेघे च तनुत्राणे गृहाण लघुनी शुभे ।
 खड्गौ च विमलाक्षशसदृशौ विमलच्छदौ ॥ २५ ॥
 यश्चाचार्यगृहे नित्यं धनुस्तिष्ठति मे ऽर्चितम् ।
 तदानयाथ गत्वा त्वं त्वरावानिह लक्ष्मण ॥ २५ ॥
 इत्युक्तो लक्ष्मणः शीघ्रं स्वमापृच्छथ सुहृज्जनम् ।
 आचार्यकुलमागम्य ते जग्राहायुधोत्तमे ॥ २७ ॥
 स ते आदाय धनुषी स खड्गे शुचिवन्धने ।
 दर्शयामास रामाय निर्वबन्ध च यत्नवान् ॥ २८ ॥
 तद्बुवाचागतं रामो लक्ष्मणं प्रियदर्शनम् ।
 काले त्वमागतः शीघ्रं कांक्षिते मम लक्ष्मण ॥ २९ ॥
 दातुमिच्छामि विभ्रेभ्यो धनरत्नार्थसञ्चयम् ।
 बहुमृत्यानल्यधनांस्तस्मादानय मे द्विजान् ॥ ३१ ॥
 ये चास्मत्सुहृदो भक्ता निवसन्तीह लक्ष्मण ।
 तेषां चापि प्रदास्यामि सर्वेषामुपजीवनम् ॥ ३१ ॥
 बालिष्ठपुत्रं च सुयज्ञमार्यं तमानयाशु प्रवरं द्विजानाम् ।
 प्रियं सखायं मम वीर्यवन्तं तं तर्पयिष्ये प्रथमं प्रदानैः ॥ ३२ ॥
 इत्याखं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो
 नाम अतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

[पञ्चत्रिंशः सर्गः]

भ्रातुः शासनमाज्ञाय लक्ष्मणस्त्वरितः स्वयम् ।
 सुयज्ञगृहमागम्य प्रविश्य च विनीतवत् ॥ १ ॥
 अग्न्यागारमभ्येत्य सुयज्ञं लक्ष्मणो ऽब्रवीत् ।
 हे सुयज्ञ द्विजश्रेष्ठ सखा ते द्रष्टुमिच्छति ॥ २ ॥
 श्रुत्वैतल्लक्ष्मणवचः सुयज्ञो ऽतित्वरान्वितः ।
 प्रविवेशाम्युपागम्य रामवेश्म सलक्ष्मणः ॥ ३ ॥
 तमागतं वेदाविदं सीतया सह राघवः ।
 अभ्युत्थायार्चयामास प्रदानैरमिकांक्षितैः ॥ ४ ॥
 कुण्डलांगदकेयूरमुक्ताहारविभूषणैः ।
 सुमहाहैश्च वासोभिर्घनधान्यैश्च पुष्कलैः ॥ ५ ॥
 तमुवाच ततो रामः सीतयाभिप्रचोदितः ।
 सखायं दयितं काले सुयज्ञं वेदपारगम् ॥ ६ ॥
 हारं च ते हेमसूत्रं शुभान्याभरणानि च ।
 वासांसि चैव दिव्यानि ब्राह्मणैतान् प्रयच्छति ॥ ७ ॥
 रांकवास्तरणं चैव पर्यकं सर्वकाञ्चनम् ।
 सपादपीठं भार्यायै सखे सीता ददाति च ॥ ८ ॥
 नागं शत्रुंजयं नाम यं मम मातुलो ददौ ।
 तं ते ददाम्यलंकृत्य सहस्रेण गवां सह ॥ ९ ॥
 प्रतिगृह्य च तत्सर्वं सुयज्ञो मन्त्राविद्धनम् ।
 रामाय सह वैदेह्या संप्रायुंक्ताशिवः शुभाः ॥ १० ॥
 सुयज्ञं संविमज्जैषमन्याश्चैव हितान् द्विजान् ।

अन्येभ्यो ऽपि ददौ रामः सुहृद्भ्यःकामतो धनम् ॥ ११ ॥

भृत्यप्रेष्यजनेभ्यश्च विभवस्यानुरूपतः ।

शिल्पिभ्यश्चोपकारिभ्यो ददौ रामो महायशाः ॥ १२ ॥

ततो भ्रातरमाभाष्य लक्ष्मणं राघवो ऽब्रवीत् ।

ददस्व त्वमपि क्षिप्रं द्विजाग्नेभ्यो ऽर्हतो धनम् ॥ १३ ॥

सुहृद्भ्यश्चात्मना कामानीप्सितानपवर्जय ।

गोभिर्धनैश्च धान्यैश्च भोजनाच्छदनं च ॥ १४ ॥

इष्टांस्तर्पय सौमित्रे ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।

सुहृदश्चार्हतः सर्वान् कामैः संविभजेप्सितैः ॥ १५ ॥

अगस्त्यं कौशिकं चैव गार्ग्यं शाण्डिल्यमेव च ।

समाहूयाभिवर्ष त्वं धनरत्नाघट्टाष्टिभिः ॥ १६ ॥

*सुहृन्मां परया भक्त्या य उपास्ते सदैव सः ।

*आचार्यस्मैत्तिरीयाणां तमानय यतव्रतम् ॥ १७ ॥

*तस्मै दानानि दास्यामि रत्नानि विविधानि च ।

*रुचिराणि च वासांसि यावन्मत्तो ऽभिकांक्षति ॥ १८ ॥

स्रुतं चिञ्चरथं नाम सखायं मे त्वमानय ।

तस्मै दास्यामि विभवान् यथार्हानभिकांक्षितान् ॥ १९ ॥

ये च मे वन्दिनः सन्ति ये चान्ये परिचारिकाः ।

सर्वास्तर्पय कामैस्तान् समाहूयाशु लक्ष्मण ॥ २० ॥

चैलग्रक्षालका ये च ये च नः इमश्रुयोजकाः ।

अनुलेपकाः सेवकाश्च हासकाः स्त्रापकाश्च ये ॥ २१ ॥

संवाहकाः सलिलदाः पुरतोवाचकाश्च ये ।^०
 तेषां निष्कसहस्रं त्वं वृत्त्यर्थमुपकल्पय ॥ २२ ॥
 भोजनार्थं दशशतं शालीनां पृथगुत्सृज ।
 व्यञ्जनार्थं च सौमित्रे गोसहस्रमुपाकुरु ॥ २३ ॥
 मल्लानां योधकानां च रथोदत्तनशालिनाम् ।
 क्रीडकानां च निष्कानां सहस्रमपवर्जय ॥ २४ ॥
 कौशल्यां प्रेष्यवर्गश्च यः शुश्रूषति लक्ष्मण ।
 सुमित्रां चैव तस्मै त्वं सहस्रे द्वे समुत्सृज ॥ २५ ॥
 भिक्षाभुजो द्विजा ये च कौशल्यां मातरं मम ।
 पर्युपासन्ति ये तेभ्यो द्वे सहस्रे समुत्सृज ॥ २६ ॥
 तथैव च सुमित्रां ये भिक्षवः समुपासते ।
 तेभ्यश्चैव द्विजातिभ्यः सहस्रमपवर्जय ॥ २७ ॥
 न सीदति यथा कश्चिन्मयि विप्रोपिते वनम् ।
 अनुजीविजनः सौम्य तथा त्वं कर्तुमर्हसि ॥ २८ ॥
 न मे ऽस्त्यदेयं साधुभ्यो मन्त्रविद्भ्यो हि लक्ष्मण ।
 यो मे ऽस्ति विभवः कश्चित्तं विश्राणय सर्वशः ॥ २९ ॥
 यथोद्दिष्टं ददौ तेभ्यः क्रमवित्क्रमजीवितम् ।
 संविमज्य ततो रामः सर्वानाहूय सो ऽब्रवीत् ॥ ३० ॥
 कार्या भवद्भिर्नोत्कण्ठा रक्ष्यं चेदं गृहं मम ।
 लक्ष्मणस्य च यत्नेन यावदागमनं मम ॥०३१ ॥
 अनुजीविजनं राम इत्युक्त्वा शोककर्षितम् ।

धनाध्यक्षानुवाचेदं समाहूय पुनर्वचः ॥ ३२ ॥
 यदस्ति वित्तशेषं मे सर्वमेवावशेषतः ।
 आनयध्वं प्रदास्यामि तदप्यहमशेषतः ॥ ३३ ॥
 इत्युक्त्वाः समुपाजहर्धनशेषमशेषतः ।
 रामाङ्गया धनाध्यक्षाः समुपादाय मर्वतः ॥ ३४ ॥
 तद्धनं विकलानाथकृपणेभ्यश्च राघवः ।
 दरिद्रेभ्यश्च साधुभ्यो ददां सर्वमशेषतः ॥ ३५ ॥
 अथ वृद्धो दरिद्रश्च बहुभृत्यजनो द्विजः ।
 उपायाङ्गिक्षितुं रामं त्रिजटो नाम विश्रुतः ॥ ३६ ॥
 स रामभवनं प्राप्य प्रविश्याथानिवारितः ।
 उवाच राममासाद्य वेपमान इदं वचः ॥ ३७ ॥
 दरिद्रो ऽस्म्यसमर्थश्च बालपुत्रश्च राघव ।
 मामाप्यर्हसि वित्तेन संविभक्तुं यथार्हतः ॥ ३८ ॥
 तमुवाच ततो रामो वृद्धं परिहसन्निव ।
 विप्रमाङ्गिरसं दीनं वित्तार्थिनमुपागतम् ॥ ३९ ॥
 गवां सहस्रमस्त्येव यदविश्राणितं मया ।
 ततो गृहाण यावत्त्वं म्वयं शक्रोषि राक्षितुम् ॥ ४० ॥
 इति रामवचः श्रुत्वा त्रिजटो रामसन्निधौ ।
 स ह्यात्मनो दृढां कक्ष्यां बद्ध्वा संभ्रान्तमानसः ॥ ४१ ॥
 दण्डमुद्यम्य सहसा प्रतस्थे गोधनं प्रति ।
 वृद्धभावाद्द्वेषमानो गाः स कालयितुं स्वयम् ॥ ४२ ॥
 तमुवाच ततो रामस्त्रिजटं द्विजसप्तमम् ।

परिहासः कृतो ब्रह्मन् निवर्त्तस्व किमिच्छसि ।
एतच्चैव सहस्रं ते गवां गोपैरहं सह ॥ ४४ ॥
धनं दास्यामि भूयश्च यावदिच्छसि शाधि माम् ।
इत्युक्तस्त्रिजटो वव्रे यजेयमिति राघव ॥ ४५ ॥
तस्मै रामो ददौ द्रव्यं प्रभूतं यज्ञसिद्धये ।
स तं सभार्यस्त्रिजटो यथेप्सितं प्रतिग्रहं प्राप्य समृद्धमानसः ।
प्रशस्य रामं मुदितो जगाम ह प्रजासु रामस्य यशः प्रकाशयन् ॥४६॥
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वित्तविश्राणनं
नाम पञ्चत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

दत्त्वा तु सह वैदेह्या ब्राह्मणेभ्यो धनानि सः ।
 जगाम पितरं द्रष्टुं सीतया सह राघवः ॥ १ ॥
 आयुधानि गृहीत्वाऽसौ सर्वोपकरणानि च ।
 लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा तस्मान्निष्क्रम्य वेश्मनः ॥ २ ॥
 तौ गृहीताऽऽयुधौ वीरौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 राजमार्गं समेयातां सीतयाऽनुगतां तदा ॥ ३ ॥
 ततश्च वेश्मशृंगाणि हर्म्याणि च ममन्ततः ।
 ददृशुस्तौ तदारुह्य पौरजानपदास्त्रियः ॥ ४ ॥
 अन्तरं राजमार्गं च नासाञ्जनपदावृते ।
 तदातुरास्ते प्रस्थानं रामभ्यामिततेजसः ॥ ५ ॥
 पदार्तिं तं समायातं समार्यं सहलक्ष्मणम् ।
 ऊचुर्दृष्ट्वा बहुविधा वाचो दुःखसमन्विताः ॥ ६ ॥
 अनुप्रयाति यं यान्तं चतुरङ्गं महद्वलम् ।
 तमिमं सीतया सार्धमनुगच्छति लक्ष्मणः ॥ ७ ॥
 सुखैश्वर्यरसज्ञोऽपि भक्तिमानतिवीर्यवान् ।
 अनृतं पितरं कर्तुं धर्मात्मा नायमिच्छति ॥ ८ ॥
 या न शक्या पुरा द्रष्टुं देवैराकाशगैरपि ।
 सीतां तामद्य पश्यन्ति राजमार्गे पृथग्जनाः ॥ ९ ॥
 सहजेनांगरागेण भूषितां वरवर्णिनीम् ।
 विवर्णतां नायेष्यन्ति सीतां शीतोष्णवायवः ॥ १० ॥

नूनं दशरथो ऽन्येन भूतेनाविष्टचेतनः ।
 यथा विवासयेदद्य प्रियं पुत्रमकारणम् ॥० ११ ॥
 यदि हि स्यादनाविष्टः सत्त्वेनान्येन केनचित् ।^०
 कथं विवासयेदेनमकस्माद्गणसागरम् ॥० १२ ॥
 को ह्यार्यो निर्गुणमपि न्यजेत्पुत्रमचेतनः ।^०
 किमु यस्य गुणैः कृत्स्नलोकोऽयमनुरञ्जितः ॥ १३ ॥
 आनृशंस्यं क्षमा शीलं श्रुतं सत्यं पराक्रमः ।
 शोभयन्ति गुणा राममेते मुप्रस्थिता भुवि ॥ १४ ॥
 विवामेनाद्य तेनास्य दुःखितोऽद्य महाजनः ।
 आँदकानीव सत्त्वानि सलिलस्य परिक्षयात् ॥ १५ ॥
 लोकनाथस्य रामस्य पीडया पीडितं जगत् ।
 अपर्वणीव सोमस्य राहुग्रहनिपीडया ॥ १६ ॥
 परिभोगप्रसादानां परित्राणसुखस्य च ।
 तथाऽभयप्रदानस्य दाता गच्छति नो वनम् । १७ ॥
 साधुलक्ष्मणवत्सर्वे त्यक्तभोगपरिग्रहाः ।
 राममेवानुगच्छामः किं नो दारैर्धनेन वा ॥ १८ ॥
 सपुत्रधनदाराश्च सपशुद्रव्यसचंचयाः ।
 गच्छामस्तत्र यत्रायं साधु गच्छति राघवः ॥ १९ ॥
 विहारोद्यानशयनं सवरासनमाधनम् ।
 परित्यज्यानुगच्छामस्तुन्यदुःखा नृपात्मजम् ॥ २० ॥
 समुद्भूतनिधानानि शीर्णध्वस्तोच्छ्रयाणि च ।
 प्रक्षीणधान्यकोषाणि हीनसंमार्जनानि च ॥ २१ ॥

पिशाचप्रेतरक्षोभिर्जुष्टान्युच्छ्रितभोजनैः ।

अलक्ष्मीन्यमनोज्ञानि परित्यक्तानि दैवतैः ॥ २२ ॥

अस्मत्स्यक्तानि वेदमानि कैकेयी प्रतिपद्यताम् ।

वनं नगरमेवास्तु यत्र गच्छति राघवः ॥ २३ ॥

अस्माभिस्तु परित्यक्तं पुरं संपद्यतां वनम् ।

यत्र वत्स्यति रामोऽयं पुरं तत्र भविष्यति ॥ २४ ॥

बिलानि दंष्ट्रिणः सर्पा वनानि मृगपक्षिणः ।

अस्मत्स्यक्तं प्रपद्यन्तां सेव्यमानं त्यजन्तु च ॥ २५ ॥

एताश्चान्याश्च विविधा वाचः पौरजनेरिताः ।

शृण्वन् रामो ययौ मार्गे वनवासकृतोद्यमः ॥ २६ ॥

अत्रेक्षमाणोऽपिजनं तदाऽऽर्त्तमनार्त्तरूपः प्रहसन्निवाथ ।

जगाम रामः पितरं दिदृक्षुः सत्यप्रतिज्ञं पितरं चिकीर्षुः ॥२७॥

आसाद्य चेक्ष्वाकुकुलप्रदीपो रामः पितुर्वेदम् तथाऽऽर्यवृत्तः ।

व्यतिष्ठत प्रेक्ष्य ततो नियोगे स्थितं सुमन्त्रं प्रतिहारमिष्टम् ॥२८॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे पौरवाक्यं नाम

षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

[सप्तत्रिंशः सर्गः]

प्रागेवानागते रामे सभार्ये महलक्ष्मणे ।
 अनन्तरमतीवार्तो विललापाकुलो नृपः ॥ १ ॥
 हन्तानार्ये ममामित्रे मकामा भव कैकयि ।
 मृतं मयि गते रामे वनं मनुजकुञ्जरे ॥ २ ॥
 त्यजामि भरतं त्वां च जीवितं चेदमात्मनः ।
 प्रशाश्वि विधवा राज्यं निर्घृणे रहिता मया ॥^(१) ३ ॥
 अहं हिनामि रामेण त्यक्तो जीवितमात्मान् ।
 न भविष्यामि ते पापे भूयो ऽप्येवं वशानुगः ॥ ४ ॥^(१)
 केन मन्त्रयमे मूढे किं समर्थयमे शुभम् ।
 मम जीवितनाशाय कस्येदं मतमीदृशम् ॥ ५ ॥^(१)
 अरण्यं व्रजतां रामो भरतश्चाभिषिच्यताम् ।
 इति कस्य मतं पापं मन्नाशाय दुरात्मनः ॥ ६ ॥^(१)
 बालो ऽप्यसौ कथं राज्यं भरतः कारयिष्यति ।
 ज्येष्ठं तिष्ठति राज्याहं रामे राजीवलोचने ॥ ७ ॥
 अज्ञाता कालरात्रीव भार्यारूपेण कैकयि ।
 कथं त्वं क्षीणपुण्येन मयोढा मन्दबुद्धिना ॥ ८ ॥
 व्याली घोरविषेव त्वं मयाऽबुद्ध्वा निषेविता ।
 त्वया दष्टो वियुज्येऽहं प्राणैरिष्टैः सुतेन^१ च^१ ॥ ९ ॥
 स्त्रीणां धिगस्त्वनार्याणां कृतघ्नानां विशेषतः ।
 त्यजन्ति वशगान् भर्तृन् या लुब्धा राज्यकाम्यया ॥ १० ॥

(१) म । १ ल—सुतेः सुते ।

निर्घृणे निरनुक्रोशे कीदृशं हृदयं तव ।
 शरणागतं याचमानं यस्मान्मां त्यक्तुमिच्छामि ॥ ११ ॥
 माऽयं नृशंसे ते लोकः परो वाऽस्तु सुम्बावहः ।
 यन्मां प्रियेण पुत्रेण वियोजयसि दुःखितम् ॥ १२ ॥
 उचितः शिविका-यानं रथयानं च मे सुतः ।
 कान्तारवनदुर्गाणि कथं पद्भ्यां गमिष्यति ॥ १३ ॥
 स्वादूनामन्नपानानामुचितोऽयं ममत्मजः ।
 सुकुमारो विलासी च मृष्टाभरणभूषितः ॥ १४ ॥
 कषायाणि च वन्यानि मूलानि च फलानि च ।
 बल्कलाजिनसंवीतः स कथं भक्षयिष्यति ॥ १५ ॥
 अपि नाम स धर्मात्मा विनीतो गुरुवन्मलः ।
 मयाऽसि पितृमान् पुत्र स्त्रीवेशेनाकृतात्मना ॥ १६ ॥
 शीलवृत्तगुणज्येष्ठं प्राणेभ्योऽपि प्रियं सुतम् ।
 कथं त्यक्तुं गुणारामं रामं ध्यायेत मे मनः ॥ १७ ॥
 नृशंभोऽहमनायोऽहं सर्वथैव धिगस्तु माम् ।
 शुश्रूषुं स्त्रीजितः पुत्रं दयितं यस्त्यजाम्यहम् ॥ १८ ॥
 किं मां वक्ष्यति लोकोऽयं नृशंभं पापकारिणम् ।
 बसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिः कश्यपस्मथा ॥ १९ ॥
 किं मां वक्ष्यन्ति श्रुत्वेदं तथाऽन्ये ब्रह्मवादिनः ।
 विश्वामित्रादयः सिद्धास्तपोवननिवासिनः ॥ २० ॥
 पृथिव्यां पृथिवीपालाः किं मां वक्ष्यन्ति साधवः ।

युक्तो ऽस्म्ययशसा लोके पतितश्चास्मि सर्वथा ॥ २१ ॥

कैकेय्यै राज्यलुब्धायै अतिसृज्य वरद्वयम् ।

हा हतोऽस्मि विनष्टोऽस्मि दग्धोऽस्मि चपलेन्द्रियैः ॥ २२ ॥

कैकेय्या वशमापन्नः पापायाः पापमोहितः ।

गुरुभिर्ब्रह्मचर्यैश्च कृच्छ्रैर्वालो ऽपि कर्षितः ॥ २३ ॥

सुखकाले ऽद्य पुत्रो मे दुःस्वमेवोपमोक्ष्यते ।

अनियोज्यैव दुःस्वेषु रामं राजीवलोचनम् ॥ २४ ॥

तदैव मरणं मे स्याद्यदि पापं च नाप्नुयाम् ।

इति राजा दशरथः पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ॥ २५ ॥

अनिन्ददात्मनाऽऽत्मानं सुरां पीत्वेव वेदवित् ।

एवं विलपतस्तस्य दुःस्वार्तस्य महीपतेः ॥ २६ ॥

उपेत्यावेदयामास सुमन्त्रो राममागतम् ।

तः स राजा समुपागतं सुतं सुमन्त्रतो वेत्य भृशार्तमानसः ।

वेद्यतामाश्रिति तं तदा वचः सुमन्त्रमुद्गीक्ष्य तदाऽभ्यघात्प्रभुः ॥ २७ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

[अष्टात्रिंशः सर्गः]

प्रवेश्यतां राम इति वाक्यमुक्त्वा नराधिपः ।
 तीव्रशोकसमाविष्टो भूयो मोहमुपागमत्^१ ॥ १ ॥
 मुहूर्त्तमिव निश्चेष्टो भूत्वा मोहपरायणः ।
 प्रतिलेभे ततः मंज्ञां मिहामनगतो नृपः ॥ २ ॥
 लब्धसंज्ञं च तं भूयः सुमन्त्रः पृथिवीपतिम् ।
 उपेत्य प्राञ्जलिर्वाक्यमुवाचेदं सुदुःखितः ॥ ३ ॥
 दन्त्वा धनानि विप्रेभ्यो भृत्येभ्यश्चोपजीवनम् ।
 स्वरश्मभिरिवादित्यः ग्व्यःतो लोके गुणांशुभिः ॥ ४ ॥
 आज्ञां ते शिरसाऽऽदाय वनं गन्तुं कृतक्षणः ।
 लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीनया च नराधिप ॥ ५ ॥
 द्रष्टुं ते ऽभ्यागतः पादौ तं पश्य यदि मन्यमे ।
 इति राजा सुमन्त्रस्य श्रुत्वा वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥
 आकाश इव शुद्धात्मा निश्चयो ऽयं सुदुःखितः ।
 सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं यावन्तो हि परिग्रहाः ॥ ७ ॥
 दारैः परिवृतस्त्वं हि द्रष्टुमिच्छामि राघवम् ।
 इत्युक्तो ऽन्तःपुरं गत्वा सुमन्त्रो वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥
 आर्याः^२ क्रन्दति राजा नश्चिरं^३ तत्र हि गम्यताम् ।
 एवमुक्त्वाः स्त्रियः सर्वाः सुमन्त्रेण त्वराऽन्विताः ॥ ९ ॥
 तत्राजग्मुर्नृपं द्रष्टुं भर्तुराज्ञाय शासनम् ।

१ कै, म, ल, ब—०मुपागतम् । ०मुपागमत् इति कै कोशे विभिन
 मस्यां संशोधितम् । २ ब, म—आर्या । ३ ल—नश्चिरं ।

अर्द्धसप्तशता नार्यो रूपवत्यः स्वलंकृताः ॥ १० ॥
 उपेयुस्ताः पतिं द्रष्टुं कैकेय्या महितं तदा ।
 समवेक्ष्यागतान् दारानशेषेण ततो नृपः ॥ ११ ॥
 सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं पुत्रमित्यभ्यभाषत ।
 ततः सुमन्त्रस्त्वरितो रामं लक्ष्मणमेव च ॥ १२ ॥
 प्रवेशयामाम गृहं राज्ञस्तां चैव मैथिलीम् ।
 दृष्ट्वैव च तमायान्तं दूराद्रामं कृताञ्जलिम् ॥ १३ ॥
 उत्पपातामनादात्तो राजा स्त्रीमंवृतस्तदा ।
 आगच्छ पुत्र रामेति परिष्वक्तुमुपागतम् ॥ १४ ॥
 अप्राप्यैव च मंत्रान्तः पपात नृपतिः सुतम् ।
 सीदन्तं तं ममभ्येन्य रामः मंत्रान्तमानमः ॥ १५ ॥
 अप्राप्तमेव धरणीं परिगृह्णाङ्गमास्थितम् ।
 शनैरुत्थाप्य संभूढं तस्मिन्नेवामने पुनः ॥ १६ ॥
 लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीतया च न्यवेशयत् ।
 बीजनेनोपवेश्यैनं बीजयामास मूर्च्छितम् ॥ १७ ॥
 ततः स्त्रीणां महाभादः^४ संजज्ञे राजवेश्मनि ।
 मुहूर्तादिव तं रामो लब्धसंज्ञं महीपतिम् ॥ १८ ॥
 उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा शोकार्णवपरिच्छुतम् ।
 आपृच्छे त्वां महाराज सर्वेषामीश्वरो ऽसि नः ॥ १९ ॥
 प्रास्थितं वनवासाय संपश्य कुशलेन माम् ।
 लक्ष्मणं चानुजानीहि वैदेहीं च महीपते ॥ २० ॥

निवर्त्यमानावपि हि न निवर्त्याविमौ मया ।
 अतो नो वनवासाय गमने कृतनिश्चयान् ॥ २१ ॥
 लक्ष्मणं मां च सीतां च समनुज्ञातुमर्हसि ।
 अनुज्ञाकार्षिणं राममिति मत्वा महीपतिः ॥ २२ ॥
 उवाच प्रेक्ष्य दीनात्मा वाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
 वरप्रदानात्कैकेय्या पुराऽहं राम वंचितः ॥ २३ ॥
 तस्माभिगृह्य मां मूढं राजा भवितुमर्हसि ।
 एवमुक्तो नृपतिना रामो धर्मभृतां वरः ॥ २४ ॥
 पितरं प्रणिपत्येदं प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ।
 भवान्पिता गुरुर्धैव राजा भर्ता प्रभुश्च मे ॥ २५ ॥
 दैवतं पूजनीयश्च गरीयान् धर्मएव च ।
 भवन्नियोगे स्थातव्यं मया राजन् प्रसीद मे ॥ २६ ॥
 न निवर्तयितव्योऽहं भव सत्यप्रतिश्रवः ।
 राजा वर्षसहस्राय भवानेवास्तु नः प्रभो ॥ २७ ॥
 यथा त्वया प्रतिज्ञातं कैकेय्यास्तत्तथा कुरु ।
 त्वां चेत्कृत्वाऽहमनृतं राज्यमिच्छेयमित्युत ॥ २८ ॥
 त्रैलोक्यस्यापि कृत्स्नस्य न तत्काले भविष्यति ।
 भुत्वा तु वचनं रामात्सत्यपाशगतो नृपः ॥ २९ ॥
 उवाच करुणं वाक्यं वाष्पाद्गदया गिरा ।
 निश्चितं यदि ते राम मत्त्रियार्थमितो वनम् ॥ ३० ॥
 गन्तुं पुरादितः पुत्र ततो गच्छ मया सह ।
 न हि त्वया विरहितो राम जीवितुमुत्साहे ॥ ३१ ॥

मया त्वया च रहिते राजाऽस्तु भरतः पुरे ।
इति ब्रुवाणं नृपतिं रामो वचनमब्रवीत् ॥ ३२ ॥
नार्हसि त्वमितो गन्तुं मया सह वनं प्रभो ।
नानुवृत्तिस्त्वया कार्या मम राजन् कथंचन ॥ ३३ ॥
प्रमीद तात धर्मेण योक्तुमर्हसि नो भवान् ।
सत्यप्रतिज्ञमात्मानं कर्तुमर्हसि मानद ॥ ३४ ॥
स्वधर्मं स्मारयामि त्वां राजन्नोपदिशामि ते ।
स्वधर्मतो ऽद्य मत्स्नेहाच्छ्यवितुं न त्वमर्हसि ॥ ३५ ॥
एवमुक्तो दशरथो रामं वचनमब्रवीत् ।
कीर्तिमायुर्बलं शौर्यं धर्मं चाप्नुहि शाश्वतम् ॥ ३६ ॥
यशसो वृद्धये भूयः पुनरागमनाय च ।
अरिष्टं गच्छ पन्थानं मत्सत्यं परिपालयन् ॥ ३७ ॥
इमां तु रजनीमेकामिह त्वं वस्तुमर्हसि ।
अद्य श्रुत्वा मया सार्धं भोगानिष्टान्धनानि च ॥ ३८ ॥
समाश्वास्य सुदुःखार्ता मातरं वै गमिष्यसि ।
इति रामो वचः श्रुत्वा पितुरार्तस्य धीमतः ॥ ३९ ॥
उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा राजानं शोकविह्वलम् ।
समुत्सृज्य सुखं भूयो न निवर्तितुमुत्सहे ॥ ४० ॥
यानद्य भोगान् प्राप्स्यामि को मे श्वस्तान् प्रदास्यति ।
तस्माद्गमनमेवाहं वृणोमि न निवर्तितुम् ॥ ४१ ॥
धन-रत्न-चिता भूमिरियं सद्रव्यसञ्चया ।

सहस्रत्यश्वरथग्रामा भरताय प्रदीयताम् ॥ ४२ ॥
 त्यजेयं दयितान् प्राणानिष्टान् भोगान् धनानि च ।
 भवन्तमनृतं कर्तुं न त्विच्छेयं कदाचन ॥ ४३ ॥
 अपगच्छतु ते दुःखं नृपते मद्दियोगजम् ।
 क्षुभ्यन्ति त्वद्विधा नवं माधवः मागरोपमाः ॥ ४४ ॥
 न राज्यप्राप्तिमिच्छामि न सुखानि महीपते ।
 त्वत्प्रतिज्ञातमिच्छामि सत्यं कर्तुं प्रशाधि माम् ॥ ४५ ॥
 अनुजानीहि मां शीघ्रं वनवासकृतोद्यमम् ।
 अनुग्रहं परं मन्ये त्वत्सत्यपरिपालनम् ॥ ४६ ॥

इयं सराष्ट्रा सपुरा च मेदिनी मया विसृष्टा भरताय दीयताम् ।
 अहं च सत्यं भवतोऽनुपालयन् वनं गमिष्यामि तपो निषेवितुम् ४७
 मयाविसृष्टां भरतो महीमिमां सहाङ्कशलां सपुरां सकाननाम् ।
 शिवां सुमीमामनुशास्तु वीर्यवांस्त्वया यदुक्तं नृपते तथास्तु तत् ४८
 तथा न मे पार्थिव धीयते मनो महत्स्वपि प्रीतिमुखेषु वर्तितुम् ।
 यथा निदेशे तव शिष्टमम्मते व्यपेतु दुःखं तव मद्दियोगजम् ॥४९॥
 इदं हि नैवानघ राज्यमव्ययं न चापि भोगानि सुखानि कामये ।
 न जीवितं त्वामनृतेन योजयन् वृणोमि राजन सुकृतेन ते श्ये ॥५०॥
 फलानि मूलानि च भक्षयन् वने गिरींश्च पश्यन् मरितः सरामि च ।
 वने निवस्यामि सुखी गतज्वरो व्यपेतु दुःखं तव मद्दियोगजम् ५१
 इत्यार्षे रामायणे ऽगोध्याकाण्डे दशरथममाश्वामनं
 नामाष्टाविंशः सर्गः ॥ ३८ ॥

[एकान्वन्वारिंशः सर्गः]

ततः सुमन्त्रं नृपतिः पीडितः स्वप्रतिज्ञया ।
 दीर्घमुष्णां च निःश्वस्य शशासाहय मन्त्रिणम् ॥ १ ॥
 चतुरङ्गं बलं भूगि शस्त्राभरणभूषितम् ।
 राघवस्यानुयात्रार्थं क्षिप्रमेवोपकल्प्यताम् ॥ २ ॥
 रूपयौवनशालिन्यो विलासिन्यो महाधनाः ।
 अनुयान्तु कुमारस्य रत्यर्थं रुचिराननाः ॥ ३ ॥
 मुहृदो ये ऽनुरक्ताश्च रामं राजीवलोचनम् ।
 ते चैनमनुगच्छन्तु संविभक्ता महाधनैः ॥ ४ ॥
 कोशाध्यक्षाश्च ते मर्वे कोशमादाय सर्वशः ।
 गच्छन्तमनुगच्छन्तु रामं राजीवलोचनम् ॥ ५ ॥
 मृगयां विहरन् भोगान् भुञ्जंश्चायमभीप्सितान् ।
 वनेष्वपि वसन् रामो मुक्त्वा राज्यं सुखानि च ॥ ६ ॥
 यावान्मद्विमवः कश्चिद् यावदस्त्युपजीवनम् ।
 अशेषेणैव तत्सर्वं राममेवानुगच्छतु ॥ ७ ॥
 ददद्दानानि तीर्थेषु विसृजंश्च धनानि मे ।
 रामो ऽयं वनवासे ऽपि राज्यधर्मं समश्नुताम् ॥ ८ ॥
 भरतो ऽप्युद्धृतधनामयोध्यां पालयिष्यति ।
 सर्वकर्मैः पुनः श्रीमान् रामः संपद्यतां वनम् ॥ ९ ॥
 ब्रुवत्येवं दशरथे कैकेय्या भयमस्पृशत् ।
 आस्यं शुशोष चैवास्याः स्वरश्चैव व्यभिद्यत् ॥ १० ॥
 सा विवर्णमुखा दीना राजानमिदमब्रवीत् ।

संरंमामर्षताम्राक्षी क्रोधपर्याकुलेक्षणा ॥ ११ ॥
 हृतसारमिदं राष्ट्रं पीतमण्डां सुरां यथा ।
 दत्त्वाऽप्यश्रद्धया मे त्वं भविष्यस्यनृती नृप ॥ १२ ॥
 एवं नृशंसया भूयो वाक्शरैरभिपीडितः ।
 कैकेय्या दुःखितो राजा तामिदं वाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥
 वहंतां वै धुरं गुर्वामसद्भां साधुगर्हिताम् ।
 नृशमे किं तुदसि मां वाक्प्रतोदैः पुनः पुनः ॥ १४ ॥
 एवं ब्रुवन्तं राजानं कैकेयी पुनरब्रवीत् ।
 पापम्बभावा वचनं परुषं घोरनिश्चया ॥ १५ ॥
 तवैव पूर्वः सगरौ ज्येष्ठं पुत्रं किलात्यजत् ।
 असमञ्जसमत्युग्रं तथा त्वं राघवं त्यज ॥ १६ ॥
 एवमुक्तो धिगित्युक्त्वा राजा दशरथस्तदा ।
 दर्ध्यां व्रीडाऽन्वितः किञ्चिच्छिरः संकंपयभिव ॥ १७ ॥
 ततो वृद्धो महामात्यः सिद्धार्थो नाम विश्रुतः ।
 भृशं बहुमतो राज्ञः कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ १८ ॥
 पुरा ऽसमंजसं देवि सगरः पृथिवीपतिः ।
 हेतुना त्यक्तवान् येन ब्रुवतस्तभिबोध मे ॥ १९ ॥
 असमञ्जाः समादाय पौराणां दारकान् गले ।
 सरय्वामाशु चिक्षेप दौःशील्यादिति मे श्रुतम् ॥ २० ॥
 तेन विप्रकृताः क्रुद्धाः पौराः सगरमब्रुवन् ।
 असमञ्जसमेकं वा त्यजासान्वा महीपते ॥ २१ ॥

तानुवाच ततो राजा किं कारणमिति प्रभुः ।
 तं तथा रुषिताः सर्वे पौरा राजानमब्रुवन् ॥ २२ ॥
 पुत्रस्तवैष दौःशील्यादेवं किल म दाग्कान् ।
 गले क्रोशत आदाय सरख्यां क्षिपति प्रभो ॥ २३ ॥
 इति तेषां वचः श्रुत्वा पौराणां मगरो नृपः ।
 तत्याज दयितं पुत्रं तेषां स प्रियकाम्यया ॥ २४ ॥
 अविनीतमेवं नृपतिः सगरस्त्यक्तवान् सुतम् ।
 गुणवन्तं सुतं राजा रामं त्यज्यत्ययं कथम् ॥ २५ ॥
 इति सिद्धार्थवचनं श्रुत्वा दशरथो नृपः ।
 शोकव्याकुलया वाचा कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ २६ ॥
 अनुब्रजामि स्वयमेव रामं राज्यं परित्यज्य सुखानि चैव ।
 त्वमप्यनार्ये भरतेन मार्घं यथा सुखं शृंक्ष्व चिराय राज्यम् ॥२७॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सिद्धार्थवाक्यं
 नामैकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

[चत्वारिंशः सर्गः]

कैकेय्या वचनं श्रुत्वा पितुर्दशरथस्य च ।

अन्वभाषत धर्मात्मा रामस्तत्र महामनाः ॥ १ ॥

त्यक्तसर्वस्वभोगस्य^१ वन्याहारनिषेविणः^२ ।अनुयात्रेण मे कार्यं किं राजन्^३ विजने वने ॥ २ ॥

यो हि हित्वा द्विपश्रेष्ठं गजकक्ष्यां वहन्नप ।

किं कार्यमूढया तस्य त्यजतः कुञ्जरोत्तमम् ॥ ३ ॥

तथा मम वियुक्तस्य ध्वजिन्या किं प्रयोजनम् ।

सर्वमेवानुजानामि चीराण्येव तु केवलम् ॥ ४ ॥

स्वनित्रापिटकं चोमे सशिके वरये नृप ।

चतुर्दश हि वर्षाणि वने वन्स्यामि निर्जने ॥ ५ ॥

अथ चीराणि कैकेयी स्वयमादाय राघवम् ।

उवाच परिधत्स्वेति निर्लज्जं^४ जनसंसदि^५ ॥ ६ ॥

परिशृणु तु ते चीरे कैकेय्या हस्ततस्ततः ।

विहाय वासमी मूढमे रामः परिदधे स्वयम् ॥ ७ ॥

अन्वेव लक्ष्मणश्चापि विहाय वसने शुभे ।

चीरे परिदधे वीरस्तथैव पितुरग्रतः ॥ ८ ॥

अथात्मपरिधानाय पीते^६ काशेयवासमी ।

दृष्ट्वा समुद्यते चीरे कैकेय्या जनकात्मजा ॥ ९ ॥

लज्जमाना स्थिता पार्श्वे रामस्य शुभदर्शना ।

1 म—० सर्वस्य० । 2 कै, व—०निवासिनः । 3 म—राजन् किं कार्यं । 4 म—निर्लजाजनसंसदिः । 5 म—च । 6 म—पीत— ।

जग्राह भृशमुडिघ्ना मृगी दृष्ट्वैव वागुराम् ॥ १० ॥
परिगृह्य च ते चीरे सीता वाष्पाविलेक्षणा ।
गन्धर्वराजप्रतिमं भर्तारमिदमब्रवीत् ॥ ११ ॥
आर्यपुत्र कथं चीरमहं बध्नामि शंस मे ।
इत्युक्त्वा चीरमेकं मा स्वस्मिन् स्कन्धे समासजत् ॥ १२ ॥
द्वितीयं वं परिदधे चीरमादाय मैथिली ।
तां चीरवसनां दृष्ट्वा भर्तृनाथामनाथवत् ॥ १३ ॥
प्रचुक्रुशुः स्त्रियः सर्वा धिग्धिगित्येव चाब्रुवन् ।
तं विक्रन्दं नृपः श्रुत्वा स्वस्त्रीभिः समुदीरितम् ॥ १४ ॥
चिच्छेद जीवितश्रद्धां सुखश्रद्धां च दुःखितः ।
म निःश्वस्योष्णमिक्ष्वाकृर्मार्यां तामिदमब्रवीत् ॥ १५ ॥
रामस्यैकस्य गमने वरं याचितवन्त्यमि ।
न सौमित्रेर्न जानक्या नृशंसे दुष्टचारिणि ॥ १६ ॥
किमर्थमनयोश्चरे ददास्यशुभदर्शने ।
पापे पापममाचारे नृशंसे कुलपांमनिं ॥ १७ ॥
कैकेयि न च सौमित्रिर्न सीता गन्तुमर्हति ।
ननु पर्याप्तमेतावत् पापे रामविवासनम् ॥ १८ ॥
किं ते भूय इदं कर्तुं मतिं निरयगाभिनि ।
इति ब्रुवाणं पितरं रामः संप्रस्थितो वनम् ॥ १९ ॥
अवाकशिरसमासीनामिदं वचनमब्रवीत् ।
इयं धर्मज्ञा कौशल्या माता मम तपस्विनी ॥ २० ॥

वृद्धा चाक्षुद्रशीला च सुभृशं त्वामनुव्रता ।

मद्वियोगाद् भृशं राजन्निमग्ना शोकमागरे ॥ २१ ॥

मदनुग्रहार्थं कृपणा त्वत्तो रक्षणमर्हति ।

यथा न दुःखितेयं स्याच्चत्रया नाथेन नाथिनी ॥ २२ ॥

मदपेक्षया तथा राजन सदेमां द्रष्टुमर्हामि ।

इमां महेन्द्रोपम तात दुःखितामवेक्षितुं त्वं जननीं ममर्हामि ।

यथा वनस्थे मायि शोककर्षिता न जीवहीना यममादनं ब्रजेत् ॥ २३ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामस्य^{१०} चीरपरिग्रहो

नाम चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

[एकचत्वारिंशः सर्गः]

मुनिवेशधरं रामं दृष्ट्वैवादिनं नृपः ।
 भार्याभिः सह सर्वाभिः शुशोच च रूरोद च ॥ १ ॥
 न चैनं शोकदुःखार्तः शशाकामिनिरीक्षितुम् ।
 न चाभिभाषितुं^१ राजा शशकैनं सुदुःखितः ॥ २ ॥
 स मुहूर्तमिव ध्यात्वा दुःखमीलितलोचनः ।
 विललापातुरो दीनो राममेवानुचिन्तयन् ॥ ३ ॥
 नूनं मया कृताः पूर्वं विपुत्राः पुत्रवत्सलाः ।
 यथा पुत्र वियुज्ये ऽहं त्वयाऽतिकृपणो ऽवशः ॥ ४ ॥
 अकाले देहिनां मृत्युर्नूनं तावन्न विद्यते ।
 वियुज्यमानो यन्मृत्युं नाधिगच्छाम्यहं त्वया ॥ ५ ॥
 लोककान्तं प्रियं पुत्रं कुशचीरधरं वनम् ।
 प्रस्थितं पश्यतो मे ऽद्य हृदयं किं न दीर्यते ॥ ६ ॥
 यत्र पुत्र मया काले लालनीयो ऽसि सर्वदा ।
 दुःखे महति तत्र त्वां योजयामि धिगस्तु माम् ॥ ७ ॥
 एकस्याः खलु कैकेय्याः कृते ऽयं दुःखितो जनः ।
 इत्युक्त्वा निपपातोर्व्यां राजा मूर्च्छां जगाम च ॥ ८ ॥
 संज्ञां च प्रतिलभ्याथ मुहूर्तात् स महीपतिः ।
 अभ्रुपूर्णेक्षणो वाक्यं सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ९ ॥
 युक्त्वा रथं मदीयं त्वं शीघ्रमानय वाजिभिः ।
 तेन प्रापय मे पुत्रं वनं मुनिजनप्रियम् ॥ १० ॥

एतन्मन्ये गुणवतां गुणानां फलमुच्यते ।
 पित्रा मात्रा च यः माधुरेवं निर्वास्यते सुतः ॥ ११ ॥
 इति राज्ञा ममादिष्टः सुमन्त्रस्त्वरयन्निव ।
 आजगाम ग्थं गङ्गो युक्त्वा परमवाजिभिः ॥ १२ ॥
 उपनीय च मंयुक्तं ग्थं ग्लविभूषितम् ।
 गङ्गो निवेदयामाम युक्त इत्यभितोषितः ॥ १३ ॥
 कोशाध्यक्षमथाह्वय स्वममान्यं नगाधिपः ।
 उवाचेदं वचो धर्म्यं शोकव्याकुलिताक्षरम् ॥ १४ ॥
 वामांभि त्वं महार्हाणि भूषणानि वराणि च ।
 वर्षाण्येतानि मन्त्र्याय वैदेह्यै प्रतिपादय ॥ १५ ॥
 इति राज्ञा ममादिष्टो गत्वा कोशगृहं तु मः ।
 प्रायच्छल्लीघ्नमानीय वैदेह्यै सर्वमेव तन् ॥ १६ ॥
 ततो निवामयामाम तानि वासांभि मैथिली ।
 भूषयामाम चात्मानं भूषणैस्तैर्वरानना ॥ १७ ॥
 ततो विराजयामाम तद्वेश्म सुविभूषिता ।
 विमलेव प्रभा मौरी व्यभ्रं वितिमिरं नभः ॥ १८ ॥
 तथा तु सा मैथिलपार्थिवात्मजा विभूषिता प्रीतिकरैर्विभूषणैः ;
 विदिद्युते धारिव तोयदागमे शतहृदा पत्रशर्तैरलंकृता ॥ १९ ॥
 इत्याख्ये रामायणे ऽप्रोध्याकाण्डे सीतालंकारिको
 नामैकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

[द्विचत्वारिंशः सर्गः]

अलंकृतां तु वैदेहीं द्योतमानामिव श्रियम् ।
 विभूषितां परिष्वज्य श्वश्रूर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 ज्ञेहान्मूर्धन्युपाघ्राय माता दुहितरं यथा ।
 गच्छन्तं वनवासाय त्वं राममनुगच्छामि ॥ २ ॥
 त्वामतोऽनुममाधास्ये कार्यं ते हृदि मद्बचः ।
 मत्कृता लालिताश्चापि वैदेहि प्राकृताः स्त्रियः ॥ ३ ॥
 न स्मरन्त्युपकारं हि न प्रीतिं न च मौहदम् ।
 रूपर्यावनसंमर्गात् मुभावेन च दारिणाः ॥ ४ ॥
 तत्त्वया नावमन्तव्यः पुत्रो मम धनच्युतः ।
 दैवतं हि पतिः स्त्रीणां मधनो निर्धनोऽपि वा ॥ ५ ॥
 मद्दियोगकृतं दुःखं वनवासकृतं तथा ।
 न मंस्मरेद्यथा रामस्तथा कार्यं हि मैथिलि ॥ ६ ॥
 इति श्वश्र्वा ममादिष्टा सीता भर्तृपरायणा ।
 कृताञ्जलिः स्थिता प्रह्ला कांशल्यामिदमब्रवीत् ॥ ७ ॥
 आर्ये करिष्येऽभ्यधिकं शासनं ते यथाऽऽत्थ माम् ।
 अभिज्ञा ह्यस्मि' सत्स्त्रीणां धर्माचारस्य सर्वशः ॥ ८ ॥
 न मां पृथग्जनसमामार्ये त्वं मन्तुमर्हसि ।
 रामाद्विचलिता नालमहं स्वर्यादिव प्रभा ॥ ९ ॥
 नातन्त्री वाद्यते वीणा नाचक्रो वर्तते रथः ।
 नापतिः सुखमामोति' नारी यद्यपि सुप्रजा ॥ १० ॥

मितं ददाति हि पिता मितं माता मितं सुतः ।
 अमितस्य तु दातारं भर्तारं का न पूजयेत् ॥ ११ ॥
 माऽहं सुखानां सर्वेषां दातारं देवतं पतिम् ।
 कथमार्यं ऽवमन्येयं' यथाऽन्याः प्राकृताः स्त्रियः ॥ १२ ॥
 किं च मन्ये देवतानामनुग्राह्याऽस्मि' साम्प्रतम् ।
 यन्मे प्रकृतिकल्याणीं श्रद्धां वर्धयसे पुनः ॥ १३ ॥
 भर्तुः प्रियनिमित्तं हि न्यजेयमपि जीवितम् ।
 पाणिप्रदानसमयात्प्रभृत्येवं व्रतं मम ॥ १४ ॥
 विप्रयुक्ता हि रामेण कन्दर्पेणैव रूपिणा ।
 पतयं पर्वताग्राद्वा विशेषं वा हृताशनम् ॥ १५ ॥
 प्रमाणं तन्मया कार्यं यदग्निगुरुसन्निधौ ।
 मलाजकुमुदः पाणिः पीडितो राघवेण मे ॥ १६ ॥
 इतग लघुमन्त्रा हि स्त्रियो र्यावनविभ्रमात् ।
 भर्तारमवमन्यन्ते संश्लिष्टाश्च कुबांधवः ॥ १७ ॥
 स्वयं कामान्न वक्तव्यमार्यं ऽहं पतिदेवता ।
 यथा भर्तारि वृत्तिष्ये तथा श्रोष्यासि सज्जनात् ॥ १८ ॥
 राज्यनाशं वने वासं त्वद्वियोगं च राघवः ।
 प्रयतिष्ये तथा कर्तुं यथा नातिस्मरिष्यति ॥ १९ ॥
 सीतायास्तद्वचः श्रुत्वा कौशल्या हृदयंगमम् ।
 शुद्धसत्त्वा मुमोक्षाश्च सहसा दुःखहर्षजम् ॥ २० ॥
 परिष्वज्य च कौशल्या मथिलीं जनकात्मजाम् ।

उवाच परमप्रीता गद्गदस्खलिताक्षरम् ॥ २१ ॥
 अनाश्र्वर्यमिदं पुत्रि वचनं तव मैथिलि ।
 या त्वं विदार्य वसुधां सीते सस्यमिवोदिता ॥ २२ ॥
 जनकस्य नरेन्द्रस्य मैथिलस्य महात्मनः ।
 यशसश्च गुणानां च सीते त्वममि भूषणम् ॥ २३ ॥
 अहं यशस्या धन्या च यस्यास्त्वं समुपस्थिता ।
 गुणज्ञा च कृतज्ञा च धर्मज्ञा च यशस्विनी ॥ २४ ॥
 निर्वृत्ताऽहं भविष्यामि त्वया मह वनं गते ।
 गमे गजीवपत्राक्षे ह्ययोध्यां पुनरागते ॥ २५ ॥
 वनेषु खलु ते पुत्रि भाव्यमस्याप्रमत्तया ।
 लक्ष्मणस्य च वीरस्य देवरस्य विशेषतः ॥ २६ ॥
 एतं सन्दिग्ध सीतां तु प्रशस्य च यशस्विनीम् ।
 मूर्ध्न्युपाघ्राय सन्नेहं काशल्या राममब्रवीत् ॥ २७ ॥
 नित्यं राघव मीताया भवितव्यं समीपतः ।
 लक्ष्मणस्य च भक्तस्य त्वया वीरस्य मानद ॥ २८ ॥
 कर्तव्यश्चाप्रमादस्ते वने प्रचुरपादपे ।
 तां प्राञ्जलिरभिक्रम्य मातृमध्ये व्यवस्थिताम् ॥ २९ ॥
 रामो ऽपि धर्म्यं धर्मज्ञो मातरं वाक्यमब्रवीत् ।
 अम्ब सीतां समाश्रित्य यत्त्वं मामनुशाससि ॥ ३० ॥
 लक्ष्मणो दाक्षिणो बाहुञ्छायेव मम मैथिली ।
 नेयं त्यक्तुं मया शक्या कीर्त्तिरात्मवता यथा ॥ ३१ ॥
 गृहीतशरचापस्य कुतो ऽस्ति हि भयं मम ।

अपि त्रयाणां लोकानामीश्वराद्वा ज्ञानक्रतोः ॥ ३२ ॥

अम्ब मा दुःखिनी भूस्त्वं पश्यातं पितरं मम ।

क्षयो ऽस्य वनवासस्य भविष्यत्यचिरेण मे ॥ ३३ ॥

अस्य राज्ञः प्रसादेन वर्षाण्येतानि मे शुभे ।

शिवेनैव गमिष्यन्ति यथैकदिवसं तथा ॥ ३४ ॥

स्वस्तिमन्तमरोगं मां पुनरभ्यागतं वनात् ।

स्वैरेव मुकृतैः पुण्यैर्ध्रुवं द्रक्ष्यामि मा शुचः ॥ ३५ ॥

एतावदभिनीतार्थमुक्त्वा म जननीं वचः ।

अर्धममज्ञानास्मन्न ददर्शान्या विमातरः ॥ ३६ ॥

ममुपेत्य च मातृस्ताः कृताञ्जलिर्दं वचः ।

उवाच गमो धर्मान्मा प्रश्रयावनतस्तदा ॥ ३७ ॥

मंवामात्पुरुषः कश्चिद्विश्वामाद्वा ऽपराध्यति ।

क्षन्तव्यमपराद्धं मे मन्वाश्चामन्त्रयामि वः ॥ ३८ ॥

अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यदन्यदपि किञ्चन ।

अपराद्धं तदद्याहं सर्वशः क्षमयामि वः ॥ ३९ ॥

अथ जज्ञे महान्तत्र तामां नृपतियोषिताम् ।

क्रौञ्चीनामिव संक्रन्द एवं ब्रुवति राघवे ॥ ४० ॥

मुरज-पणव-वेणु-नादितं दशरथवेश्म बभूव यत्पुरा ।

विलपितपरिदेवितस्वनैर्व्यसनमवैस्तदभूद्विनादितम् ॥ ४१ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथम्ब्रीविलापो

नाम द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

[त्रिचत्वारिंशः सर्गः]

कृताञ्जलिस्ततो गमो लक्ष्मणश्च महायशाः ।
 वंदेही चैव गजानं प्रतिजग्मुः प्रदक्षिणम् ॥ १ ॥
 कृत्वा प्रदक्षिणं चैनं प्राणिपत्यानुमान्य च ।
 गमः शोकपरिम्लानां जननीमभ्यवादयत् ॥ २ ॥
 अन्वेव लक्ष्मणश्चैनां रुदतीमभ्यवादयत् ।
 ततो मातुः सुमित्रायाः पादौ जग्राह लक्ष्मणः ॥ ३ ॥
 तं वन्दमानं रुदती परिष्वज्य च पीडितम् ।
 स्नहान्मूर्धन्युपाधाय सुमित्रा पुत्रमब्रवीत् ॥ ४ ॥
 अरिष्टं गच्छ पन्थानं मह रामेण लक्ष्मण ।
 शुश्रूष भ्रातरं ज्येष्ठं गमं लोकहिते रतम् ॥ ५ ॥
 मन्पुत्रेण त्वया पुत्र तारिताऽहं मबांधवा ।
 यस्त्वं त्यक्त्वा प्रियान् दारान् मां च राममनुव्रतः ॥ ६ ॥
 ममस्थो विषमस्थो वा रामस्ते परमा गतिः ।
 प्राणैरपि प्रियतरो ज्येष्ठो भ्राता गुरुश्च ते ॥ ७ ॥
 तस्मादभ्याप्रमत्तस्त्वं शरीरं परिपालय ।
 विजने वमतो ऽरुण्ये सीतया रमतः सह ॥ ८ ॥
 एष पुत्र सतां धर्मो यं त्वमिच्छसि सेवितुम् ।
 उचितं वः कुले पुत्र भ्रातृज्येष्ठानुपालनम् ॥ ९ ॥
 भ्राता ज्येष्ठो ऽप्रमत्तेन रामो राजीवलोचनः ।
 त्वया पुत्र वने सेव्यः परिपाल्यश्च सर्वथा ॥ १० ॥
 दानं दीक्षा तपश्चैव तनुत्यागो मृधे ऽपि वा ।

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् ॥ ११ ॥
 अयोध्यामटवों विद्धि गच्छ तात यथासुखम् ।
 इन्धुक्त्वा लक्ष्मणं पुत्रं सुमित्रा राममब्रवीत् ॥ १२ ॥
 त्वया अपि पुत्र रक्ष्योऽयं लक्ष्मणः शत्रुकर्षण ।
 भक्तोऽनुरक्तोऽनुगतो भ्राता भृत्यः सुहृच्च ते ॥ १३ ॥
 त्वयाऽयं सर्वथा रक्ष्यस्त्वं चैवानेन गधव ॥
 एवमस्त्विति गमस्तां सुमित्रां प्रत्यभाषत ॥ १४ ॥
 चक्रे कृताञ्जलिर्श्वेनामभिवाद्य प्रदक्षिणम् ।
 ततः सुमन्त्रः काकुत्स्थं प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
 विनीतवदुपागम्य मानलिर्वास्त्रं यथा ।
 राजपुत्र नमस्तेऽस्तु युक्तोऽयं ते महारथः ॥ १६ ॥
 अनेन त्वां हि नेष्यामि यत्र मां गम वक्ष्यामि ।
 चतुर्दश हि वर्षाणि वस्तव्यानि त्वया वने ॥ १७ ॥
 गज्यार्थिन्या पिता तेऽयं कैकेय्या यानि याचितः ।
 तं वगर्हं रथं युक्तं मीता हृष्टेन चेतसा ॥ १८ ॥
 आरूरोह वरारोहा कृत्वाऽऽलंकारमान्मनः ।
 वनवासं हि मंग्ध्याय वासांस्याभरणानि च ॥ १९ ॥
 भर्तारमनुगच्छन्त्यं मीतार्यं श्वशुरां ददा ।
 तर्थावायुधजातानि तूणांश्च कवचानि च ॥ २० ॥
 रथोपस्थमभिन्यस्य खनित्रपिटकं च तत् ।
 अथ ज्वलनसंकाशं चामीकरविभूषितम् ॥ २१ ॥
 तमारुरुहतुः क्षिप्रं भ्रातरं गमलक्ष्मणां ।

सीतातृतीयावारूढौ दृष्ट्वा तूर्णमनोदयन् ॥ २२ ॥
 सुमन्त्रः संहितानश्वान् वायुवेगसमाञ्जवे ।
 प्रयाते तु महारण्यं चिररात्राय राघवे ॥ २३ ॥
 बभूव नगरं सर्वं क्रोधपूर्णं बलं च तत् ।
 तत्तमाकुलसंभ्रान्तं मत्तसंकुपितद्विपम् ॥ २४ ॥
 हयशिञ्जितनिर्घोषं पुरमासीन्महास्वनम् ।
 ततः सञ्चुद्धबाला हि पुरी परमपीडिता ॥ २५ ॥
 गममेवाभिदुद्राव घर्मार्त्तः सलिलं यथा ।
 पार्श्वतः पृष्टतश्चैव जनाः पुरनिवासिनः ॥ २६ ॥
 अश्रुपूर्णमुखः सर्वे तमृचुर्भृशदुःखिता ।
 संयच्छ वाजिनः स्रुत शनैर्यास्यथवा पुनः ॥ २७ ॥
 रामस्य द्रष्टुमिच्छामो मुखचन्द्रं महात्मनः ।
 हृदयाणि हरत्येष सर्वेषां नरचन्द्रमाः ॥ २८ ॥
 पश्यामस्तावदेवैनं कदा द्रक्ष्यामहे पुनः ।
 प्रस्थितो दुर्गमध्वानं नाथो नो भक्तवत्सलः ॥ २९ ॥
 कदेनं वनकान्ताराद्द्रक्ष्यामः पुनरागतम् ।
 आयसं हृदयं नूनं राममातुः सुसंहतम् ॥ ३० ॥
 यन्न दीर्णं प्रिये पुत्रे वनवासाय निर्गते ।
 एकैव कृतपुण्येयं वैदेही तनुमध्यमा ॥ ३१ ॥
 या ऽनुगच्छति गच्छन्तं छायेवानुपमं पतिम् ।
 त्वं च लक्ष्मण सिद्धार्थः कृतपुण्यश्च यः प्रियम् ॥ ३२ ॥
 भक्त्याऽनुगच्छसि ज्येष्ठं भ्रातरं धर्मवत्सलम् ।

एषा ते महती मिद्धिरेष ते ऽभ्युदयो महान् ॥ ३३ ॥
 एष स्वर्गस्य ते पन्था यद्राममनुगच्छामि ।
 एवं ब्रुवंतस्ते पौरा वाष्पवेगमुपागतम् ॥ ३४ ॥
 यदा न शेकुः संरोद्धुं दुःखार्त्ता रुरुदुस्ततः ।
 क्व नु गन्तामि दुःखार्तानस्मानुन्मृज्य राघव ॥ ३५ ॥
 नयाम्मानपि यत्र त्वं गन्तुं राम समुद्यतः ।
 अथ राजा वृतः स्त्रीभिर्दीनाभिर्दीनम्पानमः ॥ ३६ ॥
 निर्जगाम प्रियं पुत्रं द्रष्टुमिच्छन् स्वयं गृहान् ।
 क्रन्दन्तीनां ततः स्त्रीणां शुश्रुवे तत्र निस्वनः ॥ ३७ ॥
 क्रेणूनामिवाक्रन्दो वृद्धे गताशिर्षो वने ।
 म च राजा दशरथो गतश्रीर्नि बर्भो तदा ॥ ३८ ॥
 यथा पूर्णः शशी काले ग्रहेणोपहतद्युतिः ।
 ततो हा हेति करुणः शब्दः समभवन्महान् ॥ ३९ ॥
 दुःखितं प्रेक्ष्य राजानं मदारं निर्गतं गृहान्
 हा रामेति जना केचिद्धा राजभिति चापरे ॥ ४० ॥
 क्रोशमाना नृपं तत्र परिवव्रुः समन्ततः ।
 तमेवेक्ष्य ततो रामः पितरं शोकविह्वलम् ॥ ४१ ॥
 पदातिमनुगच्छन्तं दारैः स्वैः परिवारितम् ।
 देव्या कौशल्याया सार्धं विह्वलं तं पदे पदे ॥ ४२ ॥
 धर्मपाशस्थितो दीनो नाशक्रोदभिमाषितुम् ।
 पदाती तां तु दुःखार्त्तां दृष्ट्वा शोकसमन्वितौ ॥ ४३ ॥

पितरौ नोदयामास शीघ्रं याहीति सारथिम् ।
 न हि सन्दर्शनं रामस्तयोर्दुःखपरीतयोः ॥ ४४ ॥
 शशाक सोढुं दुःखार्तः स्तोत्रार्दित इव द्विपः ।
 हा पुत्र राम हा सीते हा हा लक्ष्मण पश्य माम् ॥ ४५ ॥
 इति राजा च देवी च क्रोशन्तावभ्यधावताम् ।
 रामलक्ष्मणसीताश्च मृजन्तो वारि नेत्रजम् ॥ ४६ ॥
 अमकृत्तामवैक्षन्त नृत्यन्तीमिव मातरम् ।
 तिष्ठ तिष्ठेति राजा हि याहि याहीति राघवः ॥ ४७ ॥
 सुमंत्रस्य बभूवात्मा गोचक्रान्तरितो यथा ।
 नाश्रांषमिति राजानं सूतं वक्ष्यसि सङ्गमे ॥ ४८ ॥
 चिरं दुःखस्य जातोऽयमिति रामस्तमब्रवीत् ।
 स रामस्य मृतं बुद्ध्वा सुमन्त्रो दीनमानसः ॥ ४९ ॥
 अञ्जलिं नृपतेर्बद्ध्वा नोदयामास तान् हयान् ।
 शीघ्रं प्रजवितैरश्वैः प्रयान्तमथ राघवम् ॥ ५० ॥
 यदा न शेकुरन्वेतुं पौराणां ताः स्त्रियस्तदा ।
 न्यवर्तन्त सुदुःखार्ता निराशा रामदर्शने ॥ ५१ ॥
 मनोभिराशुवेगैश्च न न्यवर्तन्त सर्वशः ।
 यमिच्छेच्च पुनर्द्रष्टुं न तं दूरमनुब्रजेत् ॥ ५२ ॥
 वमिष्टप्रमुखा विप्रा इत्युचुस्तं नृपं तदा ।
 तेषां तदा तद्वचनं स राजा श्रुत्वा गुरुणां परिगृह्य वाष्पम् ।
 तस्थौ प्रयान्तं सुतमीक्षमाणो विषादमोहव्यथितान्तरात्मा ॥५३॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामनिर्याणं
 नाम त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

[चतुश्चत्वारिंशः सर्गः]

तस्मिन्प्रयाते त्वरितं पुराद्रामे कृताञ्जलौ ।
 आर्त्तशब्दो हि संजज्ञे स्त्रीणामन्तःपुरे तदा ॥ १ ॥
 अनाथस्य जनस्यास्य दुर्बलस्य तपस्विनः ।
 यो गतिः शरणं चासीत्स नाथः क्व नु गच्छति ॥ २ ॥
 न क्रुध्यत्यभिशस्तो ऽपि क्रोधनीयानि वर्जयन् ।
 क्रुद्धान् प्रसादयन् सर्वान् न नाभः क्व नु गच्छति ॥ ३ ॥
 कौशल्यायां महातेजा यथा मातरि वर्तेत ।
 तथा सर्वासु वर्तेत महात्मा क्व नु गच्छति ॥ ४ ॥
 कैकेय्या क्लिश्यमानानां राज्ञा च कुपितेन यः ।
 परित्राता च गोप्ता च रक्षिता क्व नु गच्छति ॥ ५ ॥
 अबुद्धिर्वत किं राजा विपरीतमतिर्नु किम् ।
 यो नाथं सर्वभूतानां परित्यजति राघवम् ॥ ६ ॥
 इति राजमहिष्यस्ता विवन्मा इव धेनवः ।
 अन्योन्यं संपरिष्वज्य बाहुभ्यां संप्रचुक्रुशुः ॥ ७ ॥
 स तमन्तःपुरे धारमार्तशब्दं महीपतिः ।
 श्रुत्वा पुत्रवियुक्तात्मा विषसाद सुदुःखितः ॥ ८ ॥
 नाग्निहोत्राण्याहूयन्त सूर्यश्चान्तरधीयत ।
 व्यसृजन्क्वलाभागा गावां वत्साभ चाददुः ॥ ९ ॥
 बृहस्पतिबुधार्केन्दुशुक्रांगारकराहवः ।
 दारुणाः सोममासाद्य ग्रहाः सर्वेऽवतस्थिरं ॥ १० ॥
 नक्षत्राणि हताचींषि ग्रहाभ्रोपहताचिषः ।

विशिखाश्च सधूमाश्च नाग्रयश्च प्रकाशिरे ॥ ११ ॥

अकालानिलवेगेन महोदधिरिवोद्धतः ।

रामे वनं प्रव्रजिते नगरं प्रचचाल च ॥ १२ ॥

दिशः पर्याकुलीभूतास्तिमिरेण समावृताः ।

नागरश्च जनः सर्वो दुःखशोकपरायणः ॥ १३ ॥

आहारे व्यवहारे च न कश्चित्कुरुते मनः ।

वाष्पपर्याकुलमुखो राजमार्गगतो जनः ॥ १४ ॥

न हृष्टो लक्ष्यते कश्चित्सर्वः शोकपरायणः ।^०

न वर्षा पवनः शीतो न तताप दिवाकरः ॥ १५ ॥

न रराज शशी चापि सर्वमासीत्समाकुलम् ।

सर्वे सर्वं परित्यज्य राममेवान्वचिन्तयन् ॥ १६ ॥

ये तु रामस्य सुहृदस्ते सर्वे मूढचेतसः ।

शोकभारसमाक्रान्ताः शयनं न जहुस्तदा ॥ १७ ॥

गर्हयन्तश्च कैकेयीं निन्दन्तश्च महीपतिम् ।

आत्मभाग्यान्यसूयन्तः परं दैन्यमुपागताः ॥ १८ ॥

ततस्त्वयोध्या रहिता महात्मना पुरन्दरेणेव यथा स्मरावती ।

चचाल सर्वा भयभारपीडिता सनागयोधाश्वरथाकुला तदा ॥१९॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ऽन्तःपुर विलापो

नाम चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥



[पञ्चचत्वारिंशः सर्गः]

यावत्तु गच्छतस्तस्य राजा रूपं व्यलोकयत् ।
 नैवेक्ष्वाकुवरस्तावच्चक्षुषी समुपाहरत् ॥ १ ॥
 यावद्राजा प्रियं पुत्रं ददर्शात्यन्तधार्मिकम् ।
 तावत्प्रवर्धेत चास्य चक्षुः पुत्रदिदृक्षया ॥ २ ॥
 नापश्यत्तु रजोऽप्यस्य यदा रामस्य भूमिपः ।
 तदाऽऽर्त्तश्च विवर्णश्च पपात धरणीतले ॥ ३ ॥
 तस्य दक्षिणमङ्गं तु कौशल्याऽवहदङ्गना ।
 वामं च माभ्यगान्पापा कंक्रेयी भगत्प्रिया ॥ ४ ॥
 तां नयेन च मंपन्नो धर्मेण विनयेन च ।
 उवाच राजा कंक्रेयी ममीक्ष्य व्यथितेन्द्रियः ॥ ५ ॥
 कंक्रेयि मा ममाङ्गानि स्म्राक्षीस्त्वं दुष्टचारिणि ।
 न हि त्वां स्म्रद्भुमिच्छामि न भार्या त्वं न मे प्रिया ॥ ६ ॥
 ये च त्वामनुजीवन्ति नाहं तेषां न ते मम ।
 केवलार्थपरां हि त्वां न्यक्तधर्मा त्यजाम्यहम् ॥ ७ ॥
 अगृह्णां यच्च ते पाणिमग्निपर्ययणं^१ च यत् ।
 अनुजानामि तन्मर्वामिह लोके परत्र च ॥ ८ ॥
 भरतश्चेत्प्रतीतः स्याद्राज्यं प्राप्येदमुत्तमम् ।
 यन्मे म दद्यात्प्रीत्यर्थं मम तत्समुपागतम् ॥ ९ ॥
 अथ रेणुपरिष्वक्तं समुत्थाप्य महीपतिम् ।
 न्यवर्तत तदा देवी कौशल्या शोककार्षेता ॥ १० ॥

हत्वेव ब्राह्मणं राजा पदा स्पृष्ट्वैव पक्षगम् ।
 अन्वतप्यत धर्मात्मा पुत्रं संत्यज्य राघवम् ॥ ११ ॥
 निवर्तित्वा निवर्तित्वा सीदतां रथवर्त्मसु ।
 राज्ञस्तस्य बभौ रूपं ग्रस्तस्यांशुमतो यथा ॥ १२ ॥
 विललाप च दुःस्वार्तः प्रियं पुत्रमनुस्मरन् ।
 नगरीं तामनुप्राप्तस्त्यक्त्वा पुत्रमनाथवत् ॥ १३ ॥
 इमानि हयमुख्यानां बहतां तं ममात्मजम् ।
 पदानि भुवि दृश्यन्ते स महात्मा न दृश्यते ॥ १४ ॥
 स नूनं किञ्चिदेवाद्य वृक्षमूलमुपाश्रितः ।
 काष्ठं वा यदि वा श्मानमुपधाय स्वपिष्यति ॥ १५ ॥
 उत्थास्यति च मेदिन्याः कृपणः पांसुगुण्ठितः ।
 विनिश्चसन्नप्रस्रवणे करेणूनामिव द्विपः ॥ १६ ॥
 द्रक्ष्यन्ति पुरुषाश्चेमं दीर्घबाहुं बनेचराः ।
 राममुत्थाय गच्छन्तं लोकनाथमनाथवत् ॥ १७ ॥
 श्यामावदातं रक्ताक्षं चन्द्राननमनिन्दितम् ।
 पृथूरस्कं महाबाहुं शार्दूलसमगामिनम् ॥ १८ ॥
 सिंहोरस्कं वृषस्कंधं चीरकृष्णाजिनाम्बरम् ।
 यदृच्छया देवलोकात्संप्राप्तमिव वासवम् ॥ १९ ॥
 सकामा भव कैकेयि विधवा राज्यमाप्स्यसि ।
 न झहं तं नरव्याघ्रमृते जीवितुमुत्सहे ॥ २० ॥
 इत्येवं विलपन् राजा जनाधेनाभिसंहृतः ।
 अपस्मारैरिवाविष्टः स विवेश पुरीं तदा ॥ २१ ॥

शून्यचत्वरवेऽमान्तां संवृतापणदेवताम् ।
 जनैर्दुःखागमक्लान्तैर्नात्याकीर्णमहापथाम् ॥ २२ ॥
 तां स पश्यन्' पुरीं राजा राममेवानुचिन्तयन् ।
 विलपन् प्राविशद्राजा गृहं सूर्य इवांबुदम् ॥ २३ ॥
 कांशल्याया गृहं शीघ्रं राममातुर्नयन्तु माम् ।
 इति ब्रुवन्तं राजानमन्वयु' मार्गदर्शिनः ॥ २४ ॥
 तत्र चास्य प्रविष्टस्य कांशल्याया निवेशने ।
 अधिकृष्टापि शयनं बभूव लुलितं मनः ॥ २५ ॥
 स तच्छुष्कं हृदमिव सुपर्णेन हतोरगम् ।
 रामेण रहितं वेऽम वेदेऽद्या लक्ष्मणेन च ॥ २६ ॥
 तच्च दृष्ट्वा महाराजां भुजाबुधस्य दुःखितः ।
 उच्चैः स्वरेण चुक्रांश हा राधव जहासि माम् ॥ २७ ॥
 सुखितः किल तत् काले जीविष्यन्ति नरोत्तमाः ।
 प्रतिश्रवन्ते ये रामं द्रक्ष्यन्ति पुनरागतम् ॥ २८ ॥
 अथ रात्र्यां प्रपन्नायां कालरात्र्यां विशेषतः ।
 अर्धरात्रे दशरथः कांशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २९ ॥
 न त्वां पश्यामि कांशल्ये साधु मां पाणिना स्पृश ।
 रामे मे ऽनुगता दृष्टिरद्यापि न निवर्तते ॥ ३० ॥
 तं राममेवानुविचिन्तयानं समीक्ष्य देवी शयने नरेन्द्रम् ।
 उपोषविश्याधिकमार्त्तरूपा विनिःश्वसन्ती विललाप कृच्छ्रात् ॥ ३१ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽथोच्याकाण्डे दशरथविलापो
 नाम पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

[षट्त्वारिंशः सर्गः]

ततः समीक्ष्य शयने सन्नं शोकेन कर्षितम् ।
 कौशल्या पुत्रशोकार्त्ता तमुवाच महीपतिम् ॥ १ ॥
 राघवे नृपशार्दूल विषं मृत्त्वा द्विजिह्ववत् ।
 विहरिष्यति कैकेयी सुखं प्राप्तमनोरथा ॥ २ ॥
 विवास्य रामं सुभगा लब्धकामा मनस्विनी ।
 त्रामयिष्यति मां भूयः कृष्णाहिरिव वेद्मनि ॥ ३ ॥
 अस्मिंस्तु नगरे रामश्चरन् भैक्ष्यं गृहे वसन् ।
 कामकारो वरं दातुमपि रामं ममात्मजम् ॥ ४ ॥
 पातितः स तु कैकेय्या स्थानादिष्टाद्यथेष्टतः ।
 प्रदिष्टो रक्षसां भागः पर्वणीवाहिताग्निना ॥ ५ ॥
 गजराजगति वीरो महाबाहुर्महाधनुः ।
 विशत्यरण्यं नूनं स सभार्यो लक्ष्मणान्वितः ॥ ६ ॥
 वनेष्वदृष्टदुःखानां कैकेय्या वचनात्त्वया ।
 त्यक्तानां वनवासाय का न्ववस्था भविष्यति ॥ ७ ॥
 ते भोगहीनास्तरुणाः फलकाले विवासिताः ।
 वने वत्स्यन्ति कृपणा मम वत्साः सुदुःखिताः ॥ ८ ॥
 अपीदानीं स कालः स्यान्मम शोकापहारकः ।
 सभार्यं सहितं भ्रात्रा पश्येयमिह यत्सुतम् ॥ ९ ॥
 कदाऽप्योध्यां महाबाहुः पुरीं रामः प्रवेक्ष्यति ।
 पुरस्कृत्य रथे सीतां पौलोमीविच वृत्रहा ॥ १० ॥
 श्रुत्वैवोपस्थितं रामं कदाऽप्योध्या भविष्यति ।
 यशस्विनी हृष्टजना पताकाध्वजमालिनी ॥ ११ ॥

कदा प्रेक्ष्य नरव्याघ्रमरण्यात्पुनरागतम् ।
 नन्दिष्यति पुरी रम्या मसुद्र इव पर्वणि ॥ १२ ॥
 कदा प्राणिमहस्त्राणि गधर्वा पुनरागतौ ।
 लाजैर्गवकरिष्यन्ति प्रविशन्तावरिन्दमौ ॥ १३ ॥
 कदा परिणतो बुद्ध्या वयसा चामरप्रभः ।
 मामुपैष्यति धर्मज्ञः मवत्सामिव मातरम् ॥ १४ ॥
 कदा मुमनसः कन्या द्विजा गाश्च फलानि च ।
 प्रविशन्तौ पुरीं हृष्टौ करिष्येते प्रदक्षिणम् ॥ १५ ॥
 प्रविशन्तौ कदाऽप्योध्यां द्रक्ष्यामि शुभलक्षणां ।
 उद्ग्राभरणां वीर्यां निस्त्रिंशवरधारिणां ॥ १६ ॥
 आशामितानि देवेभ्यः कदा तं प्रतिमानदम् ।
 रामं दृष्ट्वा प्रदास्यामि देवताभ्यः प्रहर्षिता ॥ १७ ॥
 निःसंशयमहं मन्ये मया पूर्वं कदर्यया ।
 पातुकामेषु वत्सेषु मातृणां वारिताः स्तनाः ॥ १८ ॥
 माऽहं गौरिव वत्सेन विवत्सा विह्वली कृता ।
 कंकेय्या पुरुषव्याघ्र बालवत्सेव गौरिलान् ॥ १९ ॥
 तमहं मद्गुणैर्युक्तं सर्वशास्त्रविशारदम् ।
 एकपुत्रा विना पुत्रं जीवितुं नोत्सहे चिरम् ॥ २० ॥
 न हि मे जीवितुं किञ्चित्मामर्थ्यमिह विद्यते ।
 अपश्यन्त्याः प्रियं पुत्रं महाबाहुं महाबलम् ॥ २१ ॥
 अयं हि मां तापयते सुदारुण स्तनूजशोकप्रभवो हुताशनः ।
 महीमिमां रश्मिभिरुत्तमप्रभां यथा निदाघे भगवान् दिवाकरः ॥ २२ ॥

दन्यापै रामायणे ऽप्योध्याकाण्डे कौशल्याविलापो नाम

पदस्रव्वार्गशः स्वर्गः ॥ ४६ ॥

॥ दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत ग्रन्थमाला, सं० ७ ॥

* ओ३म् *

वाल्मीकीय-रामायणम्

(पश्चिमोत्तरशास्त्रीयम्)

अयोध्या-काण्डम्

THE RAMAYANA

OF

VALMIKI

(NORTH-WESTERN RECENSION)

CRITICALLY EDITED WITH VARIOUS READINGS FOR
THE FIRST TIME FROM ORIGINAL MSS.

BY

PANDIT RAM LABHAYA M. A.

FORMERLY RESEARCH SCHOLAR AND PROFESSOR

IN SANSKRIT, UNIVERSITY OF THE PANJAB,

LAHORE.

NOW IN SERVICE WITH THE RESEARCH DEPT
D. A. V. COLLEGE LAHORE.

AYODHYA KANDA. FASC. III.

PUBLISHED BY THE RESEARCH DEPARTMENT

D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

Printed by Lalji Dass, Manager Hindi Press, Lahore.

NOV 1923.

First Edition }
1000 Copies. }

मार्गशीर्ष १९८०

{ Price 1—8—0

ABBREVIATIONS.

N=Nil (=नास्ति)

O=Omission (Psychological).=(त्यक्तम्)

from 2nd. fusciculus onwords. (द्वितीयभागादारभ्य) ।

पू=पूर्वार्ध=(1st. half of a verse).

उ=उत्तरार्ध=(2nd. half of a verse).

ब=बङ्गशास्त्रीयं वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gorresio's Edition).

दा=दाक्षिणात्यशास्त्रीयं वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gujrati Press Edition Bombay, 1913)

DESCRIPTION of ब MS.

This Ms. has been recently purchased for the Research Library D. A. V. College Lahore.

It is written on country paper; in Devanāgarī script; is generally correct, agrees with कै; about 100 years old; obtained from Bahāvalpur state.

[वं-४३]=[सप्तचत्वारिंशः सर्गः]=[दा-४५]

अनुरक्ता^१ महात्मानं रामं सत्यपराक्रमम् ।

अनुजग्मुः प्रयान्तं तं वनवासाय मानवाः ॥ १ ॥

निवर्त्यमानाः सुभृशं सुहृद्गणेण राघवात् ।

न स्य ते विनिवर्तन्ते रामस्यानुगता रथम् ॥ २ ॥

अयोध्यानिलयानां हि पुरुषाणां महायशाः ।

बभूव गुणसंपन्नः पूर्णचंद्र इव प्रियः ॥ ३ ॥

स याच्यमानः काकुत्स्थः स्वाभिः प्रकृतिभिर्वशी^२ ।

कुर्वाणः पितरं मत्स्यं वनमेवान्वपद्यत ॥ ४ ॥

अवेक्षमाणः मत्स्यं चक्षुषा प्रपिबन्निव ।

उवाच रामो धर्मान्मा ताः प्रजाः सन्निवर्तयन् ॥ ५ ॥

या प्रीतिर्बहुमानश्च मय्ययोध्यानित्वाग्निः ।

मन्प्रियार्थमशेषेण भरते मा निवेश्यताम ॥ ६ ॥

स हि कल्याणचारित्रैः कैकेयानन्दवर्धनः ।

कश्चिद्यति यथावद्दः^३ प्रियाणि च हितानि च ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानविनयै र्वृद्धः शीलगुणान्वितः ।

अनुरूपः स वो भर्ता भविष्यति सुखावहः ॥ ८ ॥

स हि राजगुणैर्युक्तो युवराजः समाहितः ।

विनोतश्च सदा यत्तः कर्त्तव्यं तस्य शासनम् ॥ ९ ॥

ज्ञानवृद्धो वयोवृद्धो मृदुवीरो गुणान्वितः ।

प्रगल्भः प्रियवादी च नित्यं बंधुजनप्रियः ॥ १० ॥

१ अ—अनुरक्त । २ अ—बली । ३ के—यथावर्षः ।

संतप्यते यथाऽसौ न वनवासं गते मयि ।
 महाराजस्तथा कार्यं मम प्रियचिकीर्षुभिः ॥ ११ ॥
 यथा यथा दाशरथिर्धर्ममेवान्वकीर्तयत् ।
 तथा तथा प्रकृतयो राममेवानुवत्रिरे ॥ १२ ॥^(१)
 वाष्पेण पिहितो वीरो रामः मौमित्रिणा सह ।
 आचर्षु गुणं बद्ध्वा पौगजानपदं जनम् ॥ १३ ॥
 अथ द्विजातयः शीलवृत्तश्रुतगुणान्विताः ।
 तपसा भावितात्मानो वचसा च महौजसः ॥ १४ ॥
 वयःप्रकंपश्चिरमो दृगदृचुरिदं वचः ।
 वहन्ते जवना गमं भो भो जात्यास्तुरंगमाः ॥ १५ ॥
 न गंतव्यं निवर्तध्वं हिता भवत भर्त्सरि ।
 कर्णवन्ति^१ हि भूतानि विशेषेण तुरंगमाः ॥ १६ ॥^(१)
 उपवाक्षो हि वो भक्तो नापवाह्यः पुगडनम् ।
 एवमार्त्तप्रलापानां ब्राह्मणानां निशम्य मः ॥ १७ ॥
 अवक्ष्य सहसा रामो रथादवततार ह ।
 पद्भ्यामेव जगामाशु समीतः सहलच्चमणः ॥ १८ ॥
 सन्निकृष्टपदन्यासो रामो वनपरायणः ।
 द्विजाती[न्]हि पदं(दा)ती(तीं)स्तान् रामश्चारित्रभूषणः ॥^(१) २
 न शशाकाग्रणीश्चक्षुः परिमोक्तुमवस्थितः ॥ १९ ॥
 गच्छन्तमेव तं दृष्ट्वा वनं संभ्रांतमानसाः ।
 ऊचुः परमसंतप्ता रामं वाक्यमिदं द्विजाः ॥ २० ॥

अयं ब्राह्मणसंघश्च^१ भवंतमनुगच्छति ।

द्विजाः * स्कंधाधिरूढास्त्वामग्रतो * स्य्यनुयान्ति हि ॥ २१ ॥

वाजिन^२—मपुच्छानि^३ छत्राप्येतानि यास्यतः ।

पृष्ठतोऽनुप्रयाति त्वां हंमानामिव पंक्तयः ॥ २२ ॥

अनवाप्नातपत्रस्य रश्मिसन्तापितस्य ते ।

पथि छायां करिष्यामः स्वच्छत्रैर्वाजपेयिकैः ॥ २३ ॥

या हि नः सततं बुद्धिर्वेदमंत्रानुसारिणी ।

त्वत्कृते सा स्मृताऽस्माभिर्वनवासानुसारिणी ॥ २४ ॥

हृदयेष्ववतिष्ठन्ति वेदा ये नः परं धनम् ।

ते यास्यन्ति वनं त्वद्य त्वद्बाहुबलमाश्रिताः ॥ २५ ॥

न पुनर्निश्चयः कार्यस्त्वत्कृते निश्चिता वयम् ।

वासिष्यन्ति गृहेष्वेव दाराश्चारिप्ररक्षिताः ॥ २६ ॥

वयि धर्मव्यपेक्षे तु न्याग्यं धर्ममवेक्षितुम् ।

यदि धर्मं न जानामि प्रजानां रक्षणोद्भवम् ॥ २७ ॥

ब्राह्मणा माननीयास्ते प्रजानां हितकाम्यया ।

याचितोऽमि निवर्त्तन्म्व हंमशुक्लशिरोरुहं ॥ २८ ॥

शिरोभिर्विनयाचारमहीपतनपांसुलैः ।

बहूनां वितता यज्ञा द्विजानां य इहागताः ॥ २९ ॥

तेषां समाप्तिरापन्ना तव वत्स निवर्त्तने ।

भक्तिमन्ति हि भूतानि जंगमाजंगमानि च ॥ ३० ॥

१ ल—हि ब्राह्मणसंघश्च । * (द्विज—?) * (०मग्रयो ?) 6 ल—वाजिनां ।

म—वाजि । (वाजपेय ?) । 7 ल—समुच्छानि । (समुत्थानि) ।

याचन्ते त्वां शृशार्त्तानि कुरु तेषां प्रभो हितम् ।
 याचमानेषु तेषु त्वं भक्तिं भक्तेषु दर्शय ॥ ३१ ॥
 भक्तानां हि परित्यागस्तत्रैव विदितो यथा ।
 अनुगन्तुं न शक्ता हि मूलैरुर्वीनिबन्धनैः ॥ ३२ ॥
 ऊर्ध्वशाखाः मकरुणं विक्रोशन्तीव पादपाः ।
 निश्चेष्टाहारमंचारा वृक्षमकन्धेष्वधिष्ठिताः ॥ ३३ ॥
 त्वां पक्षिणोऽपि याचन्ते सर्वभृतानुकम्पितम् ।
 एवं विक्रोशतामेव द्विजानां न न्यवर्त्तत ॥ ३४ ॥
 तूष्णीमेव ययौ रामो वाग्मी मांमित्रिणा मह ।
 गच्छन्नेवाथ महमा गधवो धर्मवन्मलः ।
 ददर्श तमसां तत्र वारयन्तीमिवाग्रतः ॥ ३५ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽथोऽध्याकाण्डे ब्राह्मणवाक्यं नाम
 सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥



[वं-४४]=[अष्टचत्वारिंशः सर्गः]=[दा-४६]

ततः स नमस्मातीरे वासमाश्रित्य राघवः ।
मीतामुद्दिश्य सौमित्रिमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
प्रथमेयं निशा सौम्य सौमित्रे समुपस्थिता ।
वनवासस्य भद्रं ते नोत्कण्ठितुमिहार्हसि ॥ २ ॥
पश्य शून्यान्यरण्यानि रुदन्तीव समन्ततः ।
यथा निलयसंलीनं हीनानि मृगपक्षिभिः ॥ ३ ॥
अयोध्या नगरी शून्या राजधानी पितुर्मम ।
मबालवृद्धा निर्यातानस्मान् शोचति लक्ष्मण' ॥ ४ ॥
भरतः खलु धर्मात्मा पितरं मातरं च मे ।
धर्मकामार्थमहितं वाक्यैराश्वसयिष्यति ॥ ५ ॥
भरतस्यानृशंस्त्रान्वं संचिन्त्याहं पुनः पुनः ।
नानुशोचामि पितरं मातरं चापि लक्ष्मण ॥ ६ ॥
त्वया युक्तं नरव्याघ्र माननुब्रजता कृतम् ।
ईप्सितव्या हि वंदेऽस्मा रक्षणार्थं सहायता ॥ ७ ॥
अद्भिरेव हि सौमित्रे वसामोऽद्य निशामिमाम् ।
एतद्धि रोचते मह्यं वन्येऽपि विविधे सति ॥ ८ ॥
एवमुक्त्वा तु सौमित्रि सुमन्त्रमपि राघवः ।
अग्रमत्तस्त्वमश्वेषु भव सूतेत्युवाच ह ॥ ९ ॥
सोऽध्वान् सुमन्त्रः संयम्य भूयस्तं प्रत्युपास्थितः ।
प्रभूतं यवसं दत्त्वा बभूव प्रत्यनन्तरः ॥ १० ॥

उपास्य तु शिवां सन्ध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपस्थिताम् ।
 रामस्य शय्यां मंचक्रे स्रुतः मौमित्रिणा मह ॥ ११ ॥
 तां शय्यां तमसातीरे वृक्षपणंः कृतां तदा ।
 रामः मौमित्रिमामन्त्र्य सभार्यः मंविवेश ह ॥ १२ ॥
 प्रक्षालयामास तदा पादां गमस्य लक्ष्मणः ।
 स्वयं सलिलमादाय सीतायाश्चप्यनन्तरम् ॥ १३ ॥
 सभार्यं संप्रसुप्तं तं भ्रातरं वीक्ष्य लक्ष्मणः ।^(१)
 कथयामास स्रुताय रामस्य विविधान् गुणान् ॥ १४ ॥
 गोकुलाकुलतां नीतं तमसातीरमास्थितः ।
 अवमन्तत्र तां रात्रिं गमः प्रकृनिभिः मह ॥ १५ ॥
 जाग्रतोरेव सा रात्रिः मार्थैर्लक्ष्मणस्य च ।
 जगाम तमसातीरे गमस्य ब्रुवतो गुणान् ॥ १६ ॥
 उत्थाय चिररात्रे स प्रजाः सुप्ता निशम्य च ।
 अब्रवीद्भ्रातरं गमो लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १७ ॥
 अस्मद्व्यपेक्षया तात निर्व्यपेक्षांस्मुखेष्विमान् ।
 वृक्षमूलेषु संसुप्तान् पश्य पागान् गृहोष्विव ॥ १८ ॥
 यथंते निश्चिताः सर्वे यतन्ते ऽस्मन्निवर्त्तने ।
 अपि देहांस्त्यजिष्यन्ति न त्यजिष्यन्ति निश्चयम् ॥ १९ ॥
 यावदेव तु संसुप्तास्तावदेव वयं लघु ।
 रथमारुह्य गच्छामः पथाऽनेन तपोवनम् ॥ २० ॥
 एवमेते विमोच्यन्ति मतिमस्मद्व्यपेक्षणे ।

अतोऽन्यथाकृते ऽस्माभिर्न तु मोक्षयन्ति निश्चयम् ॥ २१ ॥
 तात भूयोऽपि नेदानीमिक्ष्वाकुपुरवासिनः ।
 स्वपेयुरनुरक्ता मे वृक्षमूलान्युपाश्रिताः ॥ २२ ॥
 पौरा ह्यनुगता दुःखाद्विप्रमोच्या नराधिपैः ।
 न तु खल्वात्मनो योज्या दुःखेषु पुरवासिनः ॥ २३ ॥
 अथाह लक्ष्मणो रामं माक्षाद्धर्ममिव स्थितम् ।
 रोचते मे महाप्राज्ञ क्षिप्रमारुह्यतामिति ॥ २४ ॥
 ततस्तु ह्यतस्त्वरितः स्यन्दनेन हयोत्तमान् ।
 योजयित्वा तु रामाय प्राञ्जलिः प्रत्यवेदयत् ॥ २५ ॥
 मोहनार्थं तु पौराणां ह्यतं रामो ऽब्रवीद्वचः ।
 उदङ्मुखः प्रयाहि त्वं रथमादाय मारथे ॥ २६ ॥
 मुहुर्त्तं त्वरितं गत्वा निवर्तय ग्थं पुनः ।
 यथा च न विदुः पौरान्तथा कुरु समाहितः ॥ २७ ॥
 रामस्य वचनं श्रुत्वा तथा चक्रे स सारथिः ।
 प्रत्यागम्य तु रामाय स्यन्दनं प्रत्यवेदयत् ॥ २८ ॥
 स स्यन्दनमधिष्ठाय राघवः सपरिच्छदः ।
 शीघ्रगामाकुलावार्ता तमसामतरब्दीम् ॥ २९ ॥
 संतीर्य च महाबाहुः श्रीमच्छिवमकण्टकम् ।
 प्रपेदे तमसामार्गमभयं शुभदर्शनम् ॥ ३० ॥
 प्रबुध्य पौरास्तु ततो निशाक्षये रथस्य तत्संददृशुर्निवर्तनम् ।
 नृपात्मजः सोऽनुगतः पुरीमिति व्यपेक्षया ते नगरं पुनर्ययुः ॥३१॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽधोध्याकाण्डे तमसातीरनिवासो
 नाम अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥

[बं-४५]=[एकोनपञ्चाशः सर्गः]=[दा ४८।२]
 अनुगम्य निवृत्तानां रामं नगरवासिनाम् ।
 तद्गतानीव सत्त्वानि बभूवुर्गतचेतमाम् ॥ १ ॥
 खं खं ते गृहमासाद्य पुत्रदारैः समागताः ।
 अश्रूणि मुमुक्षुः सर्वे सुम्बरं वाष्पविह्वलाः ॥ २ ॥
 न स्म सद्योमृतान् कश्चित् सुप्रियानपि बान्धवान् ।
 तथा शोचत्ययोध्यायां यथा रामावेवासने ॥ ३ ॥
 न च श्रीराविशत्कञ्चिन्न चैव जुहुवुर्द्विजाः ।
 ब्रह्म न प्राभवत्किञ्चिन्न च धर्मोऽभ्यवर्त्तत ॥ ४ ॥
 व्यनदन्वाष्पुमुत्सृज्य केचित्तत्र सुदुःखिताः ।
 शयनेष्वपतंश्चान्ये निकृत्ता इव पादपाः ॥ ५ ॥
 इष्टं दृष्ट्वा च नादृष्यन् विपुलं वा धनागमम् ।
 पुत्रं प्रथमजं दृष्ट्वा जननी नाभ्यनन्दत ॥ ६ ॥
 कुले कुले रुदन्त्यश्च भर्त्तारं गृहमागतम् ।
 वितुदन्ति सुदुःखार्त्ता वाग्भिस्तोत्रैरिव द्विपम् ॥ ७ ॥
 किं नु तेषां गृहैः कार्यं किं दारैः किं धनेन वा ।
 प्राणैर्वा किं सुखं वापि ये न पश्यन्ति राघवम् ॥ ८ ॥
 स एकः पुरुषो लोके लक्ष्मणः मह सीतया ।
 यो ऽनुगच्छति काकुत्स्थं रामं परिचरन्वने ॥ ९ ॥
 आपगाः कृतपुण्याश्च पथिन्यश्च वने शुभाः ।
 यासु पास्यति काकुत्स्थो विगाह्य सलिलं शुचि ॥ १० ॥
 वाचित्रकुसुमापीडा मञ्जरीमधुधारिणः ।

पादपाः पर्वताग्रस्था रमयिष्यन्ति राघवम् ॥ ११ ॥
 अकाले ह्यपि मुख्यानि मूलानि च फलानि च ।
 दर्शयिष्यन्ति वृक्षेषु गिरीणां राममागतम् ॥ १२ ॥
 काननं वापि शैलं वा यं रामो ऽधिगमिष्यति ।
 प्रियातिथिमिव प्राप्तं नैनं शक्यति नार्चितुम् ॥ १३ ॥
 विचित्रकुसुमैर्वृक्षैर्लम्बमञ्जरीधारिभिः ।
 विदर्शयन्तो विविधान् धातृश्चित्रांश्च निर्झरान् ॥ १४ ॥
 रमयिष्यन्ति काकुत्स्थ मटव्यश्चित्रकाननाः ।
 आपगाश्च तथारूपाः सानुमन्तश्च पर्वताः ॥ १५ ॥
 स हि भर्ता संशलाया वसुमत्या महायशाः ।
 धर्मपालश्च लोकस्य वीरो दशरथात्मजः ॥ १६ ॥
 यत्र रामो भवेद्भर्ता नास्ति तत्र पराभवः ।
 स हि नाथोऽस्य जगतः स गतिः स परायणम् ॥ १७ ॥
 युष्माकं राघवो ऽयर्थं योगक्षेमं करिष्यति ।
 तूर्णं तमनुगच्छामो यावद्दूरं न गच्छति ॥ १८ ॥
 पादच्छायासुखं तस्य संश्रयामाकुतोभयाः ।
 वयं परिचरिष्यामः सीतां यूयं च राघवम् ॥ १९ ॥
 इति पौरस्त्रियो भर्तृन् दूःखार्त्तास्तास्तदाऽब्रुवन् ।
 युष्माकं राघवो रक्षन् योगक्षेमं करिष्यति ॥ २० ॥
 सीता नारीजनस्यास्य योगक्षेमं करिष्यति ।^(१)
 स हि शूरो महाबाहुः पुत्रो दशरथस्य वै ॥ २१ ॥
 को न तेन प्रतीयेत वासं नोद्विग्नमानसः ।

। ल-दुःखार्त्तास्तास्ममब्रुवन् । ब-सुदुःखार्त्तास्तादाऽब्रुवन् । ० क ।

संप्रीयेतामनोज्ञेन सोत्कण्ठितजनेन च ॥ २२ ॥
 कैकेय्या यदिदं राज्यं स्यादधर्म्यमनाथवत् ।
 नात्र नो जीवितेनार्थः कुतः पुत्रैः कुतो धनैः ॥ २३ ॥
 या पुत्रं पार्थिवेन्द्रस्य प्रव्राजयति निर्घृणा ।
 इच्छेद्यदि महाराजस्तं राज्येनाभिषेचितुम् ॥ २४ ॥
 न हि जातु चिरं जीवेद्राजा परमदुःखितः ।
 गते दशरथे स्वर्गमधर्मं प्रतिपत्स्यते ॥ २५ ॥
 यया^१ पुत्रश्च भर्ता च त्यक्तावैश्वर्यकारणात् ।
 न सा संरक्षितुं शक्ता कैकेयी कुलपांसनी ॥ २६ ॥
 कैकेय्या न वयं राज्ये भृतका निवमेम हि ।
 जीवन्त्यां साधु जीवामः पुत्रैरपि शपामहे ॥ २७ ॥
 न हि प्रव्राजिते^२ रामे जीविष्यति महीपतिः ।
 मृते दशरथे व्यक्तं विलापस्तदनन्तरम् ॥ २८ ॥
 मिथ्या प्रव्राजितो रामः मीना लक्ष्मण एव च ।
 भरताय विसृष्टाः स्म क्षुद्राय (रुद्राय) पशवां यथा ॥ २९ ॥
 ते विषं पिबतालोढ्य क्षीणपुण्याः सुदुर्गताः ।
 राघवं चानुगच्छन् प्रणाशं माऽनुगच्छतं ॥ ३० ॥
 विलेपुरेवमार्त्तास्ता नगरे नगरस्त्रियः ।
 इति स्म ता रामनिमित्तमातुरा यथा पितुर्भ्रातरि वा विवामिते ।
 विलप्य दीना रुरुदुः सुदुःखिताः सुतैर्हि तासामधिकः स राघवः ३१
 इत्यार्षे रामायणे ऽधोध्याकाण्डे नगरस्त्रीविलापो
 नाम एकोनपञ्चाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

२ ब, म-नु । ३ ब, ल, म-यथा । ४ ब, म प्रव्राजिते । ५ ल-विदिष्टाः ।

६ कै-स । म-सो । ७ ब-सुदुर्गमाः । ८ म-मा (मा?) धिगच्छत ।

[वं-४६]=[पञ्चाशः सर्गः]=[दा-४९]

रामोऽपि रात्रिशेषेण तेनैव महदन्तरम् ।
जगाम पुरुषव्याघ्रः पितुराज्ञामनुस्मरन् ॥ १ ॥
तथैव गच्छतस्नस्य प्रभाता रजनी शुभा ।
उपस्थाय ततः मन्ध्यां तथैवाभ्युदिते रवौ ॥ २ ॥
तं स्यन्दनमधिष्ठाय प्रतस्थे राघवस्तदा ।
गोमती माकुलावर्तामतरङ्गं महानदीम् ॥ ३ ॥
तामुत्तीर्य महाबाहुः श्रीमच्छिवमकर्दमम् ।
प्रतिपेदे तमसामार्गमनुरूपं शिवं शुभम् ॥ ४ ॥
ग्रामान्सुकृष्टसीमन्श्च पुष्पितानि वनानि च ।
पश्यन्नेव ययौ शीघ्रैः श्वेतेरेव हयोत्तमैः ॥ ५ ॥
शृण्वन्वाचो मनुष्याणां ग्राममंवासवासिनाम् ।
राजानं धिग् दशरथं कामस्य वशवर्त्तिनम् ॥ ६ ॥
नृशंसा बतकैकेयी पापा पापानुबन्धिनी ।
तीक्ष्णा सा भिन्नमर्यादा क्रूरं कर्मणि वर्तते ॥ ७ ॥
या पुत्रमीदृशं राज्ञः प्रवासयति धार्मिकम् ।
अरण्याय महात्मानं सानुक्रोशं जितेन्द्रियम् ॥ ८ ॥
एता^१ वाचो मनुष्याणां पथि ग्रामेषु राघवः ।
शृण्वन्नपि ययौ वीरः कौशल्यानन्दवर्धनः ॥ ९ ॥
गोमतीं चाप्यतिक्रम्य राघवः शीघ्रैर्गर्ह्यैः ।
मयूरहंसाभिरुतां सस्मार सरयूं नदीम् ॥ १० ॥

स महीं मनुना राज्ञा दत्तां चेक्ष्वाकवे पुरा ।
 स्फीतराष्ट्रवतीं रामो वैदेह्यै समदर्शयत् ॥ ११ ॥
 सूत इत्येवमाभाष्य सारथिं तमभीक्ष्णशः ।
 मत्तहंसस्वनः श्रीमानुवाच पुरुषर्षभः ॥ १२ ॥
 कदाऽहं पुनरागत्य मरुत्वाः मलिले शुभे ।
 मृगयां पर्यटिष्यामि पित्रा मात्रा च सङ्गतः ॥ १३ ॥
 इत्येवमभिकांक्षामि मृगयां सरयू तटे ।
 गतिर्ह्येषा परा लोकं राजर्षिगणसेविता ॥ १४ ॥
 स तमध्वान मिक्ष्वाकुः सर्वं मधुरजल्पकः ।
 तं तमर्थमभिप्रेत्य ययां वाक्यमुदीरयन् ॥ १५ ॥
 गत्वा च देवसङ्काशः शीघ्रं शीघ्रपराक्रमः ।
 अथाससाद सायाहे शृङ्गवीरपुरं महत् ॥ १६ ॥
 विगाह्य सरयूं रम्यां वीरो लक्ष्मणपूर्वजः ।
 अयोध्याभिमुखो रामः प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १७ ॥
 सोच्छ्वासहृदयः पश्यन्सीतां लक्ष्मणमेव च ।
 आपृच्छामि-पुरीं श्रेष्ठे काकुत्स्थपरिपालिते ॥ १८ ॥
 देवता भवनानि त्वं पालयानां वसन्तिनः# ।
 निवृत्तवनवासस्त्वां कृतज्ञो जगतीपतिः ॥ १९ ॥
 पुनर्द्रक्ष्यामि पित्रा च मात्रा च सह संगतः ।
 ततो रुधिरताम्राक्षो भुजमुद्यम्य दक्षिणम् ॥ २० ॥

२ म—सङ्कता । ३ ब, म—पुरे । ल—पुरि । ४ कै, ब—“पालय ”
 म—“पाल ” ।

उवाचास्रमुखो दीनो रामो जानपदानं वचः ।
 अनुक्रोशो दया चैव युष्माभिर्दर्शितो मयि ॥ २१ ॥
 चिराद्दुःखेन पापीं गम्यतामर्थसिद्धये ।
 ते प्रणम्य महात्मानं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ॥ २२ ॥^७
 विनदन्तो जना घोरं न्यवर्तन्त क्वचित् क्वचित् ।
 तथा विलपतां तेषामतृप्तानां च राघवः ॥ २३ ॥
 अचक्षुर्विषयं प्रागाद्यथार्कः क्षणदागमे ।
 ततो धान्यधनोपेतां दानशीलजनावृताम् ॥ २४ ॥
 अकृतश्चिद्भयां क्षमां चैत्ययूपशताकिताम् ।
 उद्यानोपवनोपेतां संपन्नतरगोरसाम् ॥ २५ ॥
 तुष्टपुष्टजनाकीर्णां गोकुलाकुलशोभिताम् ।
 प्रेक्षणीयां नरेन्द्राणां ब्रह्मघोषविनादिताम् ॥ २६ ॥
 रथेन मनुजव्याघ्रः कोसलामत्यवर्तत्^८ ।
 मंबद्धनिस्त्रिंशमुदारसत्त्वं चीरोत्तरासङ्गधरं युवानम् ।
 दृष्ट्वा ऽभिजग्मुर्मुदिता निषादा गुहं पुरस्कृत्य सुकृष्णवर्णाः^९ ॥२७॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे शृङ्गवेरपुरोपगमनं
 नाम पञ्चाशः सर्गः ॥ ५० ॥



५ ब, ल—जनपदान् । ६ ल—पापेन । ७ म । ८ ब—विह० । ९ कै—
 र्वताम् । ९ कै, ल—कौसल्यां० । म—कोसल्यां० । १० ब—सकृर्ण० ।

[वं-४७]=[एकपञ्चाशः मर्गः]=[दा-५० । १२]

ततस्त्रिपथगां गङ्गां शीततोयामशेषलाम् ।
 ददर्श राघवः पुण्यां दिव्यामृषिनिषेविताम् ॥ १ ॥
 पवित्रसलिलस्पर्शां हिमवच्छैलसंभवाम् ।^(१)
 स्वर्गारोहणानिःश्रेणिं महर्षिगणसेविताम् ॥ २ ॥
 समुद्रमहिषीं मिष्टां सारसक्राञ्चनादिताम् ।
 मृगयूथंः पिवद्भिश्च वारणंश्चाभिनादिताम् ॥^(२) ३ ॥
 तामूर्मिकलिलावर्तामन्ववेक्ष्य' म राघवः ।
 सुमन्त्रमब्रवीत्सूतमिहैवाद्य वमामहे ॥ ४ ॥
 अविदूरे ह्ययं नद्या बहुपुष्पप्रवालवान् ।
 सुमहानिङ्गुदीवृक्षो वसामात्रैव सारथे ॥ ५ ॥
 लक्ष्मणश्च सुमन्त्रश्च बाढमित्येव राघवम् ।
 उक्त्वा तमिङ्गुदीवृक्षं सुमन्त्रोऽभियया हयैः ॥ ६ ॥
 रामोऽपि यात्वा तं वृक्षं रम्य मिह्वाकुनन्दनः ।
 रथादवातरत्' तस्मात्ससीतः महलक्ष्मणः ॥ ७ ॥
 सुमन्त्रो ऽप्यवतीर्यैव स्नापयित्वा हयोत्तमान् ।
 वृक्षमूलगतं राममुपतस्थे कृताञ्जलिः ॥ ८ ॥
 तत्र राजा निषादानां रामस्य दयितः सखा ।
 धार्मिकः सत्यसन्धश्च गुहो नाम महाबलः ॥ ९ ॥
 स श्रुत्वा पुरुषव्याघ्रं रामं विषयमागतम् ।
 वृद्धैः परिवृतोऽस्मात्स्यै ज्ञातिभिश्चाभ्युपागतम् ॥ १० ॥

ततो निषादाधिपतिं दृष्ट्वा दूरादवस्थितम् ।⁰¹
 सह सौमित्रिणा रामः ममागच्छद्गुहंप्रति ॥ ११ ॥
 तमार्तं संपरिष्वज्य गुहो वचनमब्रवीत् ।
 यथा ऽयोध्या तथेदं ते राम किं करवामहे ॥ १२ ॥
 स शुचीन्यन्नपानानि गुणवन्ति च राषवे ।
 अर्घ्यं चोपानयत्क्षिप्रं वाक्यं चेदमुवाच ह ॥ १३ ॥
 भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च लेह्यं च समुपस्थितम् ।
 शयनानि च मुख्यानि वाजिनां यवसं तथा ॥ १४ ॥
 स्वागतं ते महाबाहो तत्रेयं⁰ निखिला⁰ मही⁰ ।
 वयं प्रेष्या भवान् भर्ता माधु राज्यं प्रशाधि नः ॥⁰१५ ॥
 आज्ञापय⁰ महाबाहो⁰ यथेष्टं रघुनन्दन ।
 यथा स्वकं तथैवेदं पुरं किं करवाणि ते ॥ १६ ॥
 गुहमेवं ब्रवाणं तु राघवः प्रत्युवाच ह ।
 अर्चिता मानिताश्चैव सर्वथा भवता वयम् ॥ १७ ॥
 पद्भ्यामभिगतं⁰ चैव लेहादाघ्राय मूर्धनि ।
 भुजाभ्यां साधुपीनाभ्यां पीडयन् वाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥
 दिष्ट्येह गुह पश्यामि त्वामरोगं सबान्धवम् ।
 अपि ते कुशलं राष्ट्रे मित्रेषु च धनेषु च ॥ १९ ॥
 यदिदं भवता किञ्चित्प्रीत्यर्थमुपकल्पितम् ।
 सर्वं तदनुजानामि न कालो मे प्रतिग्रहे ॥ २० ॥
 चतुर्दशसमाः सौम्य वत्स्यन्तं पितुराज्ञया ।

⁰¹ म । ० ब । ३ ब -- ० भवगतं ।

कुशचीराम्बरधरं फलमूलाशनं च माम् ॥ २१ ॥
 विद्धि प्राणेहितं धर्मे तापसं वनगोचरम् ।
 अश्वानां यवसेनार्थी नाहमन्येन केनचित् ॥ २२ ॥
 एतावताऽहं भवता भविष्यामि सुपूजितः ।
 एते हि दयिता राज्ञः पितुर्दशरथस्य मे ॥ २३ ॥
 एतैः सुपूजितैरश्वैर्भविष्याम्यहमर्चितः ।
 स एवमुक्तो रामेण गुहो गहनगोचरः ॥ २४ ॥
 अश्वानां प्रतिपानं^४ च यवसं चैव सोऽन्वशात् ।
 गुहस्तत्रैव पुरुषान् दीयता मिति सत्वरम् ॥ २५ ॥
 ततश्चीरोत्तरासङ्गः सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।
 जलमेवाददे रामो लक्ष्मणनाहतं स्वयम् ॥ २६ ॥
 तस्य भूर्मा शयानस्य पादां प्रक्षाल्य लक्ष्मणः ।
 सभार्यस्य ततः पश्चात्तस्थां वृक्षमुपाश्रितः ॥ २७ ॥
 गुहोऽपि सह सूतेन सौमित्रिमनुभाष्य च^५ ।
 अन्वजाग्रत्ततो राममप्रमत्तो घनुर्धरः ॥ २८ ॥
 तथा शयानस्य च तस्य धीमतो यशस्विनां दाशरथेर्महात्मनः ।
 अदृष्टदुःखस्य सुखंघितस्य^६ तदा व्यतीयाय सुखेन शर्वरी ॥२९॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहाश्रमनिवासो
 नाम एकपञ्चाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

4 कै-प्रतिमानां । ब, ल-प्रतिमानं । म-प्रतिमानश्च । 5 म-०मुपागतं ।
 6 म-ह । 7 म-तथाधिनस्य ।

[वं ४८]=[द्विपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५१]

तं जाग्रतममंभ्रान्तं भ्रातुरर्थे महात्मनः ।

गुहः परममन्तप्तो लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥

इयं तात मुखा शय्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।

प्रत्याश्वमिहि माध्वस्यां राजपुत्र निशामिमाम ॥ २ ॥

न हि रामात्प्रियतरो ममास्ति भुवि कश्चन ।

ब्रवीम्येतदहं मृत्यं वीर सत्येन ते शपे ॥ ३ ॥

अस्य प्रमादादाशमे लोके ऽस्मिन्सुमहद्यशः ।

धर्मावाप्तिं च विपुलामर्थमिद्धि च केवलाम् ॥ ४ ॥

मोऽहं प्रियतमं' रामं शयानं सह सीतया ।

रक्षिष्यामि धनुष्पाणिः सर्वतो ज्ञातिभिर्वृतः ॥ ५ ॥

न मे ह्यविदितं किञ्चिद्द्वने ऽस्मिंश्चरतः' सदा' ।

चतुरङ्गं ह्यपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥ ६ ॥

लक्ष्मणस्तमुवाचेदं रक्ष्यमाणास्त्वयाऽनघ ।

अनुनीता वयं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता' ॥ ७ ॥

कथं हि राघवं* भूर्मो शयानं* सह सीतया ।

शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं वा सुखानि वा ॥ ८ ॥

यो न देवासुरैः सर्वैः शक्यः प्रसहितुं युधि ।

तं पश्य गुह संविष्टं तृणेषु सह भार्यया ॥ ९ ॥

यो मात्रा तपसा लब्धो विविधैश्चापि यचितैः ।

1 म—०तरं । 2 म—०तरस्तदा । 3 म—०पश्यत । * (राघवे ?) ।

• (शयाने ?) ।

एको दशरथस्यैष पुत्रः मदशलक्षणः^४ ॥ १० ॥
 आस्मिन् प्रव्रजिते राजा न चिरं वर्तयिष्यति ।
 विधवा मेदिनी नूनं क्षिप्रमेव भविष्यति ॥ ११ ॥
 विनद्य च महानादं श्रमेण च युताः स्त्रियः ।
 मूका इव स्थिता नूनमद्य राजनिवेशने ॥ १२ ॥
 कौशल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ।
 नाशासे^५ यदि जीवन्ति सर्वे ते श्वेरीमिमाम् ॥ १३ ॥
 जीवेदपि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ।
 एतद्दुःखं तु कौशल्या विव्रन्सा न सहिष्यति ॥ १४ ॥
 अनुरक्तजनाकीर्णा शोकदुःखममन्विता ।
 गमव्यसनमन्तसा मा पुगी विनशिष्यति ॥ १५ ॥
 चिरसंकल्पितं नूनमनवाप्य मनोरथम् ।
 रामे राज्यमनिक्षिप्य पिता मे विनशिष्यति ॥ १६ ॥
 मिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन्काले ह्युपस्थिते ।
 प्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मरिष्यति गधवः ॥ १७ ॥
 रम्यचन्द्रग्रमंस्थानां सुविभक्तचतुष्पथाम् ।
 हर्म्यप्रामादमंबद्धां गणिकागणशोभिताम् ॥ १८ ॥
 रथाश्च गजमंवाधां तूर्यनादनिनादिताम्^६ ।
 सर्वकल्याणसंपन्नां हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २९ ॥
 आरामोद्यानसंपन्नां समाजोत्सवशालिनीम् ।
 सुखिनो विचरिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम ॥ २० ॥

अपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्द्धं कुशलिनो वयम् ।
 निवृत्ते वनवासेऽस्मिन्नयोध्यां प्रविशेम हि ॥ २१ ॥
 परिदेवयमानस्य दुःखार्तस्य महात्मनः ।
 तिष्ठतो राजपुत्रस्य शर्वरी साऽत्यवर्तत^७ ॥ २२ ॥
 चिन्ता^८-प्राप्तस्तु सौमित्रि निर्द्रया परिवर्जितः ।
 मपन्न्या वेद्म^९ कान्तः संकेतप्रतिलब्धया ॥ २३ ॥
 रामोपि सह वैदेह्या भार्यया ह्यनुरूपया ।
 एकस्मिन्मन्तरे सुप्तः परिणामयितुं निशाम् ॥ २४ ॥
 उपधाय बृहन्मूलं पादपस्य यदृच्छया ।
 न त्वेवास्य प्रमुप्तस्य निद्रा नेत्रे ह्युपारुधत् ॥ २५ ॥
 विप्रलंबश्च राज्यस्य गृहत्यागो वनाश्रयः ।
 मममेव त्रयं तद्वि निद्रां तस्य जहार ह ॥ २६ ॥
 तथा तु तस्मिन्ब्रुवति प्रजाहितं नरेन्द्रपुत्रे गुरुसौहृदाद्गुहः ।
 मृमोच वाष्पं व्यथयाऽभिपीडितो जरातुरो नाग इव श्वसन्बली । २७ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणविलापो
 नाम द्विपञ्चाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

[वं-४९]=[त्रिपञ्चाशः सर्गः]=[टा ५२]

प्रभातायां तु शर्वर्या पृथुवक्षा महाशुजः ।

उवाच गमः मौमित्रिं लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १ ॥

भास्करोदयकालोऽयं गता भगवती निशा ।

अमौ सुहृष्टो विहगः कोकिलस्तात कूजति ॥ २ ॥

बहिर्णां चैव निर्घोषः श्रयते नदतां वने ।

तरामो जाह्नवा मौम्य शीघ्रगां भागरङ्गमाम् ॥ ३ ॥

विज्ञाय रामस्य मतं मौमित्रिर्गित्रनन्दनः ।

गुह्यमामन्त्र्य मृतं च मोऽनिष्टद्भ्रातुरग्रतः ॥ ४ ॥

वस्तस्नायुममायुक्तां^१ कर्णधारवती दृढाम् ।

मुप्रतारं ममे तीर्थं क्षिप्रं नावमुपोहत ॥ ५ ॥

त निशम्य समादशं मन्त्रिवृत्त्य गणो महान् ।

उपोह्य नावं रुचिरं गुहाय प्रन्यवेदयत् ॥ ६ ॥

ततः स प्राञ्जलिभूत्वा गुहो वचनमब्रवीत् ;

उपस्थितेयं नार्देव भूयः किं करवाणि ते ॥ ७ ॥

ततः कलापां मन्मथ स्वर्गा बध्वा च धन्विनां ।

जग्मतुर्येन वै गङ्गां मीतया मह राघवां ॥ ८ ॥

गममेव तु धर्मज्ञमभिगम्य विनीतवत् ।

किमहं करवाणीति मृतः प्राञ्जलिरब्रवीत् ॥ ९ ॥

अथाब्रवीद्दाशरथिः^२ सुमंत्रं मंत्रिमत्तमम् ।

१ ल-वध्वाञ्जा० । ब-व ञ्जा० । म-यथाञ्जा० । २ ल-कपालो ।

३ कै, ब-०शरथ ।

स्पृशन्करेण धर्मज्ञो दक्षिणं दक्षिणेन तम् ॥ १० ॥
 गच्छ सौम्य निर्वर्तस्व कृतमेतावता मम ।
 पद्मश्यामेव गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ ११ ॥
 आत्मानं त्वभ्यनुज्ञातमथाज्ञाय स सारथिः ।
 सुमन्त्रः पुरुषव्याघ्रमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १२ ॥
 अतर्कितोऽयं लोकेषु पुरुषेणेह केनचित् ।
 तव सभ्रातृभार्यस्य वासः प्राकृतवद्वने ॥ १३ ॥
 न मन्ये ब्रह्मचर्येऽस्ति स्वधीते वा फलं भुवि ।
 मार्दवार्जवयोर्वापि' त्वां चेद्व्यसनमागतम् ॥ १४ ॥
 मह गधवर्षदेह्या भ्रात्रा च त्वं वने वसन् ।
 रतिं संप्राप्स्यमे वीर त्रींल्लोकान्विजयन्निव ॥ १५ ॥
 वधं खलु हता वीर ये त्वया नित्यसान्त्विताः ।
 क्लेशेऽप्या वशमेष्याम पापाया दुःखभागिनः ॥ १६ ॥
 इति ब्रुवन्मान्मसमः सुमन्त्रः सारथिस्तदा ।
 दृष्ट्वा वनगतं रामं रुरोद भृशदुःखितः ॥ १७ ॥
 ततस्तं विगते वाष्ये स्रुतं स्पृष्टोदकं शुचिम् ।
 रामः सुमधुरं वाक्यं पुनः पुनरुवाच ह ॥ १८ ॥
 इक्ष्वाकूणां त्वया तुल्यः सुहृदन्यो न विद्यते ।
 यथा दशरथो राजा नानुशोचेत्तथा कुरु ॥ १९ ॥
 कामोपहतचेता हि वृद्धश्च जगतीपतिः ।
 मद्द्वियोगाच्च सन्तप्तस्तस्मादेतद्ब्रवीमि ते ॥ २० ॥

यद्यदाज्ञापयेत् किञ्चित् स महात्मा महाद्युतिः ।
 कैकेय्याः प्रियकामार्थं तत्कार्यमविशङ्कया ॥ २१ ॥
 एतदर्थं हि राज्यानि प्रशंसन्ति नराधिपाः ।
 यदेषां सर्वकालेषु वचो न प्रतिहन्यते ॥ २२ ॥
 तद्यथा स महाराजो नालोकमधिगच्छति ।
 न चानुचिन्तयति मां सुमन्त्र कुरु तत्तथा ॥ २३ ॥
 छत मद्बचनात्तातं वमिष्टं च तपस्विनम् ।
 उपाध्यायांश्च मंप्राप्य ब्रूयास्त्वमभिवादनम् ॥ २४ ॥
 कैकेयीं च सुमित्रां च याश्चान्या मातरो मम ।
 तां चाल्पभाग्यां कौशल्यां यदि जीवति मां विना ॥ २५ ॥
 अदृष्टदुःखं राजानं वृद्धमार्यं जितेन्द्रियम् ।
 ब्रूयास्त्वमभिवाद्यैनं मम हेतोरिदं वचः ॥ २६ ॥
 न विषादो न सन्तापः कर्तव्यो गमकारणात् ।
 लक्ष्मणे वा नरव्याघ्रे सीतायां वा नराधिप ॥ २७ ॥
 अपि वर्षसहस्राणि तातस्य वचनाद्बने ।
 विहरेम स्थिता धर्मे स्वर्गलोक इवामराः ॥ २८ ॥
 व्यसनं हि पितुः पुत्रात् कोऽन्यो व्यपनयिष्यति ।
 अणु वा यदि वा स्थूलं धान्वन्नरिरिव व्रणम् ॥ २९ ॥
 यस्तु पुत्रो न वचनं पितुः कुर्यादतन्द्रितः ।
 आत्मानं पातयेच्चासौ द्रव्यवानिव निष्क्रियः ॥ ३० ॥
 नरकं वा पतेद्रामो ज्वलन्तं वा हुताशनम् ।

5 ब, ल—सर्वकामेषु । म—सर्वकार्येषु । 6 ल ननु (न) चिन्तयति
 मां कार्ये ।

न तु कुर्वीत तत्कर्म येन वाच्यः पिता भवेत् ॥ ३१ ॥

नैवाहं शोचितव्यस्ते न सीता न च लक्ष्मणः ।

अयोध्यायाश्च्युताः स्मृति निवत्स्यामोऽपि वा वने ॥३२॥

चतुर्दशसु वर्षेषु व्यतीतेषु पुनः पुनः ।

लक्ष्मणं मां च सीतां च द्रक्ष्यसे क्षिप्रमागतान् ॥ ३३ ॥

एवमुक्त्वा महाराजं काशल्यां मातरं मम ।

अन्याश्च देवीः महिताः कैकेयीं च पुनः पुनः ॥ ३४ ॥

ब्रूयाः सर्वं त्वमारोग्यमथ पादाभिवन्दनम् ।

सुत मद्बचनादेव सीताया लक्ष्मणस्य च ॥ ३५ ॥

विज्ञाप्यश्च महाराजो भरतं शीघ्रमानय ।

राज्ये चैवाभिषेक्तव्यः क्षिप्रमेव नरर्षभः ॥ ३६ ॥

अभिषिक्ते च भरते यौवराज्याय धार्मिके ।

स्त्रान्मसन्तापजं दुःखं न त्वामभिमविष्यति ॥ ३७ ॥

भरतश्चापि वक्तव्यो यथा राजनि वर्तसे ।

तथा मातृषु वर्तेथाः सर्वास्वेवाविशेषतः ॥ ३८ ॥

यथैव तव कैकेयी सुमित्रापि तथैव ते ।

तथैव तव काशल्या मम माता विशेषतः ॥ ३९ ॥^(१)

प्रशास्त्विमां गां भरतस्य माता प्रीता सपुत्रा^१ नृपतेः प्रतीता ।

संप्रीयते केकयराजपुत्री महावने नो विनियोज्य वासम् ॥ ४० ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सूतसमादेशो

नाम त्रिपञ्चाशः सर्गः ।। ५३ ।

१ कै, ब, ल-पितुर्भवेत् । ० म । १ म, ल-सुपुत्र ।

[वं-५०]=[चतुःपञ्चाशः सर्गः]

एवं सन्दिशतस्तस्य राघवस्य महात्मनः ।
 लक्ष्मणो ऽन्तरमासाद्य सृतं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 कैकेयीं प्रतिसंरब्धो निःश्वसनं भ्रुकुटीमुग्धः ।
 अमर्षा रक्तया दृष्ट्या वमुधामवलोकयन् ॥ २ ॥
 ममापि वचनात् सृतं वक्तव्यो भवता नृपः ।
 प्रणामं शिरसा कृत्वा बहुमानान्पुनः पुनः ॥ ३ ॥
 केनायमर्षगन्धेन राघवो धर्मवन्मलः ।
 गुणज्येष्ठो मम ज्येष्ठो मम भ्राता विवामितः ॥ ४ ॥
 मर्षथा भवता गजन् कैकेयीं परिरक्षता ।
 नृशंसं च यशोमं च मुमहदुष्कृतं कृतम् ॥ ५ ॥
 कैकेय्या वचनं श्रुत्वा नृशंभायाः मुदारुणम् ।
 पक्षिवद्यदयं क्षिप्तः पुत्रः किं नाम तत्कृतम् ॥ ६ ॥^(१)
 प्रशान्तश्चायंशीलश्च सर्वभूतप्रियंवदः ।
 रामः किमकरोत्पापं त्यक्तोऽयं यत्त्रया वने ॥ ७ ॥
 पितृपैतामहं गज्यं प्रतिज्ञां परिरक्षता ।
 भयाद् वा यदि वा दत्तमत्र स्वार्थे भवान् प्रभुः ॥ ८ ॥
 न तु प्रमवसे त्यक्तमपराधं विना सुतम् ।
 स्त्रीविधेयतया राजन् गुणवन्तं विशेषतः ॥ ९ ॥
 यदपत्येन कर्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता ।

१ कै, ब, ल -भवता । २ म-गुणज्येष्ठो । ३ कै, ब, ०रक्षिता ।

४ ब, ल-कैकेयी । ५ कै, म-०रक्षिता । ६ म-ने । (१)ब ।

तदकर्त्तव्यमप्येतद्राघवेनोपपादितम् ॥०१० ॥
 पित्रा यदपि कर्त्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता ।^०
 अनुरूपं च युक्तं च न त्वया तदनुष्ठितम् ॥ ११ ॥
 तदस्मान् स्वयमुत्सृज्य स्नेहेन सह पार्थिव ।
 शोचितुं नार्हसि पुनः स्वयं पीत्वेव वारुणीम् ॥ १२ ॥
 त्वद्विधा हि महात्मानो महाभागा नरर्षभाः ।
 परितार्पणे युज्यन्ते चिन्त्य कार्यमनुष्ठितम् ॥ १३ ॥
 लक्ष्मणं त्वभिमंक्रुद्धं ब्रुवाणं परुषं वचः । ६
 विनिवार्याब्रवीद्रामः स्रुतं दोनमधोमुखम् ॥ १४ ॥
 लक्ष्मणो ऽयमभिक्रुद्धः सुमन्त्र यदभाषत ।
 परुषं तन्न संश्राव्यो भवता वसुधाधिपः ॥ १५ ॥
 वृद्धः करुणवेदो च मत्प्रवासाच्च शोकवान् ।
 सहसा परुषं श्रुत्वा सन्त्यजेदपि जीवितम् ॥ १६ ॥
 सुमन्त्र परुषं तस्मान्न वक्तव्यो जनाधिपः ।
 विप्रियाप्यनुजीव्याणि न पश्यन्ति भवद्विधाः ॥ १७ ॥
 न चास्मासु गरं स्नेहं त्यक्तवान् पृथिवीपतिः ।
 सत्यपाशेन संबद्धः स्नेहस्त्वस्य न लुप्यते ॥ १८ ॥
 कंकेत्या वरदानेन पिता मे ननु मोहितः ।
 मां वने त्यक्तवान् पुत्रमवशः सत्ययन्त्रितः ॥ १९ ॥
 मुनिवेशधरः क्रुद्धो लक्ष्मणोऽयममर्षितः ।
 क्रूरं किमिव न ब्रूयात्परिहार्यं त्वया तु तुत् ॥ २० ॥

सर्वदैव प्रियं वाच्यः प्रियाहो नृपतिस्त्वया ।

अभिवादनपूर्वं च कुशलं कुशलो ह्यसि ॥ २१ ॥

नैतत्संभाव्यते स्रुत पिता पुत्रं यदौरसम् ।

त्यजेभिरपराधं हि भाविनो ऽर्थवशादृते ॥ २२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो नाम
चतुष्पञ्चाशः सर्गः ॥ २४ ॥

[वं-५१]=[पंचपंचाशः सर्गः]=[दा-५२।३७]

निवर्त्यमानो^१ रामेण सुमन्त्रः शोककर्षितः ।

तत्पूर्वं वचनं श्रुत्वा स्नेहात्काकुत्स्थमब्रवीत् ॥ १ ॥

उपचारेण यद्वीर ब्रूयां स्नेहेन विह्वलः ।

भक्तिमानिति मद्भाष्यं तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ २ ॥

कथं तु^२ त्वद्विहीनो^२ ऽहं प्रतियास्यामि तां पुरीम् ।

तत्र तात त्रियोगेन पुत्रशोकातुरामिव^३ ॥ ३ ॥

मराममिति तावद्धि रथं दृष्ट्वा पुरं तु तत् ।

त्वया विहीनं दृष्ट्वा तु विदीर्यन्त्येव सा पुरी ॥ ४ ॥

दैन्यं हि नगरी गच्छे दृष्ट्वा शून्यमिमं रथम् ।

हतावशेषं स्वं सैन्यं हतवीरमिवाहवे ॥ ५ ॥

दूरेऽपि निवसन्तं त्वां विन्यस्येवाग्रतः स्थितम् ।

चिन्तयन्त्येव तावत्त्रां निराहाराः कृशाः प्रजाः ॥ ६ ॥

आर्तनादो हि यः पौरैर्मुक्तः पूर्वं विवासने ।

रथस्थं मां निश्चम्यैकं कुर्युः शतगुणं ततः ॥ ७ ॥

अहं किं वाऽपि वक्ष्यामि देवीं तव सुतो मया ।

नीतोऽसौ मातुलकुलं सन्तापस्त्यज्यतामिति ॥ ८ ॥

मत्तं चैव प्रियं चैव ब्रूयां हि वचनं गुरुम् ।

कथमप्रियमेवाहं ब्रूयां गुरुमिदं वचः ॥ ९ ॥

मम शिष्यत्वमापन्ना इक्ष्वाकुकुलवाहिनः ।

१ ल-०माणो । २ कै-तद्विहीनो । ब-तु तद्विहीनो । ३ ल-
०मिमाम् ।

कथं चापि त्वया हीनं रथं वक्ष्यन्ति वाजिनः ॥ १० ॥
 यदि मे याचमानस्य त्यागमेवं करिष्यसि ।
 सरथो ऽग्निं प्रवेक्ष्यामि त्यक्तमात्रो ह्यहं त्वया ॥ ११ ॥
 भविष्यन्ति च ते यानि तपोविघ्नकराणि च ।
 रथेन प्रतिवाधिष्ये तानि सर्वाणि राघव ॥ १२ ॥
 त्वत्कृते न मया प्राप्तं रथचर्याकृतं सुखम् ।
 आशंसे त्वत्कृतेनाहं वनवासकृतं सुखम् ॥ १३ ॥
 प्रसीदेच्छामि चारण्ये भवितुं प्रत्यनन्तरः ।
 वने ऽपि यद्यहं वीर निवसेयं त्वदाश्रितः ॥ १४ ॥
 परिचर्यां हि ते कृत्वा प्राप्नुयां परमां गतिम् ।
 तव शुश्रूषणं सर्वं गमिष्यामि^१ वने वमन् ॥ १५ ॥
 अयोध्यां शकलोकं वा सर्वमेव त्यजाम्यहम् ।
 न हि शक्या प्रवेष्टुं सा मयाऽयोध्या त्वया विना ॥ १६ ॥
 राजधानी महेन्द्रस्य यथा दुष्कृतकर्मणा^२ ।
 इमे ते ऽपि हया वीर यदि ते वनवासिनः ॥ १७ ॥^३
 परिचर्यां करिष्यान्ति प्राप्स्यन्ति परमां गतिम् ।
 वनवासे क्षयं प्राप्ते ममैष हि मनोरथः ॥ १८ ॥
 यदनेन रथेन त्वां प्रापयेयं पुरीमितः ।
 चतुर्दश हि वर्षाणि सहितस्य वने त्वया ॥ १९ ॥
 क्षणभूतानि यास्यान्ति युगवत्^४ विपर्यये ।
 मक्तवत्सल तिष्ठन्तं भर्तुमक्तगते पथि ॥ २० ॥

श्रुत्यं भक्तं स्थितं सत्ये न मां त्यक्तुं त्वमर्हसि ।
 एवं बहुविधं दीनं याचमानं पुनः पुनः ॥ २१ ॥
 श्रुत्यानुकंपी काकुत्स्थ इदं वचनमब्रवीत् ।
 जानामि परमां भक्तिं मयि ते भक्तवत्सल ॥ २२ ॥
 शृणु चापि यदर्थं त्वां प्रेषयामि पुरीमितः ।
 नगरीं त्वां गतं दृष्ट्वा जननी मे यवीयसी ॥ २३ ॥
 कंकेशी प्रत्ययं गच्छेदिति रामो वनं गतः ।^०
 परितुष्टा हि सा देवी वनवासं गते मयि ।
 राजानं नातिशङ्केत मिथ्यावादीति धार्मिकम् ॥ २४ ॥^०
 एष मे परमः कामो यदियं मे यवीयसी ।^०
 भरते रक्षितं स्फीतं पुत्रे राज्यमवाप्नुयात् ॥ २५ ॥
 मम प्रियार्थं राज्ञश्च निवर्तस्व पुरीं ब्रज ।
 सन्दिष्टश्चापि यानर्थास्तास्तान् ब्रूयास्तथा तथा ॥ २६ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रविस्मर्जनं
 नाम पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

[वं-५२]=[षट्पञ्चाशः स्वर्गः]=[दा-५२।६५]

इत्युक्त्वा वचनेन ह्यतं सान्त्वयित्वा पुनः पुनः ।

गुहं वचनमङ्गीवं रामो हेतुमदब्रवीत् ॥ १ ॥

जटाः कृत्वा गमिष्यामि न्यग्रोधात् क्षीरमानय ।

स क्षिप्रं राजपुत्राय गुहः क्षीरमुपानयत् ॥ २ ॥

लक्ष्मणस्यात्मनश्चैव रामश्चक्रं जटास्ततः ।

वृत्तबाहू नरश्रेष्ठौ जटामण्डलधारिणौ ॥ ३ ॥

अशोभेतामृषिममौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।^१

ततो गङ्गामभिमुखः पुण्यां मरितमुत्तमाम् ॥ ४ ॥

राघवः प्रययौ मार्गमास्थितः सहलक्ष्मणः ।

तापमव्रतमाश्रित्य ततो गुहमुवाच ह ॥ ५ ॥

अप्रमादो बले^२ कोशं दुर्गे जनपदे तथा ।

कार्यस्ते गुह राज्यं स्यात् मदा रक्षितुमङ्ग तत ॥ ६ ॥

ततस्तं समनुज्ञाय गुहमिक्ष्वाकुनन्दनः ।

जगाम वनमव्यग्रः सभार्यः सहलक्ष्मणः ॥ ७ ॥

स तु दृष्ट्वा नदीतीरे नावमिक्ष्वाकुनन्दनः ।

शीघ्रं तितीर्षुर्गगायां लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥

आरोह त्वं नरव्याघ्र स्थितां नावमिमां शनैः ।

मीतां चारोपय क्षिप्रं परिग्म्य मनस्विनीम् ॥ ९ ॥

स भ्रातुः शामनं कुर्वन् सर्वमप्रतिकूलवत् ।

आरोप्य मैथिलीं पूर्वमारुरोह स्वयं ततः ॥ १० ॥

१ म—अतः परं आसर्गान्तं वृष्टिनं भाति । २ कै—बलकोशे ।

अथारुरोह तेजस्वी स्वयं लक्ष्मणपूर्वजः ।
 ततो निषादाधिपतिर्गुहो ज्ञातीनचोदयत् ॥ ११ ॥
 आज्ञाय स सुमन्त्रं च सामात्यं चैव तं गुहम् ।
 आस्थाय यानं काकुत्स्थश्चोदयामास नाविकान् ॥ १२ ॥
 ततस्तश्चोदिता सा नौः कर्णधारैः समाहता ।
 बाहुवेगप्रतिहता गङ्गासलिलमध्यगा ॥ १३ ॥
 मध्यं तु समनुप्राप्ता भागीरथ्याः सुमध्यमा ।
 वैदेही प्राञ्जलिर्भूत्वा तां नदीमिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥
 पुत्रो दशरथस्यायं महाराजस्य धीमतः ।
 निदेशं पालयेद्राज्ञस्त्वया गङ्गे ऽभिरक्षितः ॥ १५ ॥
 चतुर्दश हि वर्षाणि प्रत्युष्य विजने वने ।
 भ्रात्रा सह मया चैव प्रत्यागच्छेत् पुनः पुरीम् ॥ १६ ॥
 अतस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता ।
 द्रक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धये ॥ १७ ॥
 त्वं हि त्रिपथगा देवि ब्रह्मलोकात्प्रवर्त्तसे ।
 भार्या जलधिराजस्य लोकेऽस्मिन्संप्रदृश्यसे ॥ १८ ॥
 सा त्वां देवि नमस्यामि प्रशंसामि च शोभने ।
 प्राप्तराज्ये नरव्याघ्रे शिवेनैत्य पुनस्त्वया ॥ १९ ॥
 गवां शतसहस्राणि वस्त्राप्यन्यच्च पेशलम् ।
 ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया ॥ २० ॥
 तथा संभाषमाणा तु सीता गङ्गामनिन्दिता ।
 दक्षिणा दक्षिणं तीरं क्षिप्रमेवाभ्युपागमत् ॥ २१ ॥

प्रेषितायां ततो नात्रि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 तटस्थौ गुहसूतौ तावीक्षन्तौ वाष्पविह्वलौ ॥ २२ ॥
 मा वायुवेगाभिहता बाहुवीर्यप्रनोदिता ।
 निगृह्या राजपुत्रौ तौ परं पारमुपागमत् ॥ २३ ॥
 तीरं तु समनुप्राप्य नावं हित्वा नरर्षभा ।
 प्रणामं चक्रतुर्वीरां गङ्गायै सुममाहितौ ॥ २४ ॥
 प्रातिष्ठत ततो रामः सभार्यः महलक्ष्मणः ।^१
 स राघवस्ततो धीमान् वनवासाय निश्चितः ॥ २५ ॥
 अथाब्रवीन्महाबाहुः सुमित्रानन्दवर्द्धनम् ।
 अग्रतो गच्छ मांमित्रे मीता त्वामनुगच्छतु ॥ २६ ॥
 पृष्ठतोऽनुगमिष्यामि त्वां च सीतां च पालयन् ।
 अद्यैव दुःखं वेदेही वनवामस्य वेत्स्यति ॥ २७ ॥
 मिहव्याघ्रवराहाणां निनादं प्रसहिष्यति ।
 अनालोक्यमानां तां सुमन्त्रो यत्र वै दिशि ॥ २८ ॥
 जग्मतुस्तां धनुष्पाणी मीतया मह तद्वनम् ।
 अदर्शनगतौ ज्ञातौ (ज्ञात्वा ?) भ्रातरौ पार्थिवात्मजौ^३ ॥ २९ ॥
 गुहः सुमन्त्रः सन्नेहं न्यवर्त्तेतां ततः पुनः ।
 नानाविहगमंघ्रुष्टं वनं तद्व्यवगाहताम् ॥ ३० ॥
 सुपुष्पिताग्रंस्तरुभिर्नानाविटपमङ्गुलम् ।
 अदूरमथ^४ गत्वा तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥^० ३१ ॥

A 1 ल वानप्रस्थवपु र्दीर्गे गंगायाः सुसमाहितः । 3 ल रामलक्ष्मणौ ।

4 कै-सुदूरसैव । () ल ।

अवरोहशताकीर्णं बटमासाद्य तस्थतुः ।
 तौ तत्र सुखमासीनौ नातिदूरे ऽभ्यपश्यताम्^१ ॥ ३२ ॥
 सुदर्शनामितिरूपातां पद्मिनीं पद्मसङ्कुलाम् ।
 हंमकारण्डवाकीर्णां चक्रवाकोपशोभिताम् ॥ ३३ ॥
 दर्शयामास काकुत्स्थो वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।
 पश्य लक्ष्मण पद्मिन्या यथेदं शोभितं वनम् ॥ ३४ ॥
 दिव्यतोयाभिवाहिन्या मन्दाकिन्या यथा दिवम् ।
 इहैवाद्य निवत्स्यामः परिश्रान्ता हि मैथिली ॥ ३५ ॥
 रम्ये पुष्करिणीतीरे पद्मवासितमारुते ।
 अथ पुष्करिणीं शीघ्रमवतीर्य तु लक्ष्मणः ॥ ३६ ॥
 पद्मानि समृणालानि^२ सुगन्धीनि बहूनि च ।
 उत्पाद्य नीत्वा सीतार्यै प्रीत्यर्थं समुपानयत् ।
 आदाय तानि वैदेही सपत्न्या श्रीरिवाभवत् ॥ ३७ ॥
 त्रयस्ते हि त्रिरात्राय मृणालैः प्राणधारणम् ।
 कृत्वा न्यग्रोधमाश्रित्य रात्रौ वासमकल्पयन्^३ ॥ ३८ ॥
 गुहेन सार्द्धं तु ततः सुमन्त्रो रामं ब्रजन्तं प्रततं समीक्ष्य ।
 अथ(ध्व?) प्रकर्षाद्विनिवृत्तदृष्टिं मृमोच वाष्पं व्यथितान्तरात्मा ३९
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गङ्गाबतरणं
 नाम षट्पञ्चाशः सर्गः ॥ ५६ ॥

१ कै-०पद्यताम् । ६ ब-सुमृ० । ७ ब-स समकल्पयत् ।

[वं-५३]=[सप्तपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५३]

तं न्यग्रोधमुपागम्य सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।

रामो रमयतां श्रेष्ठः सौमित्रिमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥

अद्य नः प्रथमा रात्रिर्निर्गतानामियं पुरात् ।

यतीनामिव मुक्तानां स्वजनेन भविष्यति ॥^१ २ ॥

मा ते भीर्मा सुखोत्कण्ठा मा व्यथा स्वजनं विना ।

अद्यप्रभृति कर्तव्यं मीताया रक्षणं त्वया ॥ ३ ॥

मया च सततं कार्यमप्रमत्तेन लक्ष्मण ।

तृणान्याहृत्य सौमित्रे मम त्वं शयनं कुरु ॥ ४ ॥

मत्त एवाविदूरे च शयनं रचयात्मनः ।

इत्युक्त्वा लक्ष्मणश्चक्रे भ्रातुः शय्यामथात्मनः ॥ ५ ॥

वृक्षपर्णैस्तृणैश्चैव तस्याघस्ताडनस्पतेः ।

तत्र मंविश्य काकुत्स्थो महार्हशयनोचितः ॥ ६ ॥

चक्रे मह कथा रात्रौ सीतया लक्ष्मणेन च ।

ध्रुवमद्य महाराजः सुखं स्वपिति लक्ष्मण ॥ ७ ॥

मकामया मेव्यामानः कैकेय्या परितुष्टया ।

राज्यलुब्धा नृशंसा च कैकेयी तं नराधिपम् ॥ ८ ॥

आगते भरते प्राणैः कथं न व्यावयेदपि^२ ।

वृद्धोऽजायश्च नृपति र्मया चैव विनाकृतः ॥ ९ ॥

नावेक्षते स कामात्मा प्राणांस्तस्या वशे स्थितः ।

1 ल-अस्मिन् हि विजने रष्ये नानासत्त्वनिषेधिते । 2 कै, म, ल-
इत्याद्य० ।

इदं व्यसनमालोक्य राज्ञः स्वमतिविभ्रमम् ॥ १० ॥
 काम एवार्थधर्माभ्यां गरीयानिति मे मतिः ।
 को हि विद्वानपि पुमान् प्रमदायाः कृते त्यजेत् ॥ ११ ॥
 छन्दानुवर्तिनं पुत्रमिष्टं मामिव लक्ष्मण ।
 सुखी च स सुभागश्च^१ कैकेय्या भरतः सुतः ॥ १२ ॥
 मुदितः कौशलानेतान् यो भोक्ष्यत्यधिराजवत् ।
 म हि सर्वस्य राज्यस्य सुखमद्य कारिष्यति ॥ १३ ॥
 ताते च तमसा ग्रस्ते मयि चारण्यमाश्रिते ।
 यः परित्यज्य धर्मार्थौ काममेवानुवर्त्तते ॥ १४ ॥
 म कृच्छ्रं महदाप्नोति राजा दशरथो यथा ।
 मन्ये दशरथान्ताय मम प्रव्रजनाय च ॥ १५ ॥
 उत्पन्ना सौम्य कैकेयी राज्यार्थे भरतस्य च ।
 अपि नामाद्य कैकेयी सौभाग्यमदगर्विता ॥ १६ ॥
 न प्रबाधेत मद्द्वेषात् कौशल्यां मद्दिनाकृताम् ।
 मत्पक्षग्राहिणीं नूनं सुमित्रां च तपस्विनीम् ॥ १७ ॥
 इदानीमपि तस्मात्त्वमयोध्यां गच्छ लक्ष्मण ।
 अहमेको गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ १८ ॥
 अनाथायास्तु मे मातुर्गत्वा नाथो भवानघ ।
 क्षुद्रा चापि नृशंसा च कैकेयी पापनिश्चया ॥ १९ ॥
 असंशयं मम द्वेषात् कौशल्यां पीडयिष्यति ।
 ज्ञातिषु ध्रुवमन्यास्तु स्त्रियः पुत्रैर्वियोजिताः ॥ २० ॥

जनन्या मम सौमित्रे ततस्तदिदमागतम् ।
 मया हि चिरलब्धेन दुःखमंवाद्धितेन च ॥ २१ ॥
 विप्रायुज्यत कौशल्या फलकाले धिगस्तु माम् ।
 मा स्म सीमन्तिनी काचिज्जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ २२ ॥
 सौमित्रे योऽहमम्बाया जातः^(१) शोकाय^(१) दुःखदः^(१) ।
 शोचन्त्याश्चाल्पभाग्याया न किञ्चिदुपकुर्वता ॥ ^(१)२३ ॥
 पुत्रेण^(१) किमपुत्राया^(१) मया कार्पमरिन्दम ।
 अल्पभाग्या हि मे माता दुःखानामेव केवलम् ॥ २४ ॥
 भागिनो न तु सौमित्रे सुखानामिति मे मतिः ।
 एको योऽहमयोध्यां च पृथिवीं चापि लक्ष्मण ॥ २५ ॥
 दहेयमिषुभिः क्रुद्धो नात्र वीर्यमकारणम् ।
 अधर्मप्राप्तिभीतोऽहं लोकवादभयेन च ॥ २६ ॥
 तेन लक्ष्मण नाद्याहमात्मानमभिषेचये ।
 एनश्चान्यश्च विविधं विलप्य बहुदुःखितः ।, २७ ॥
 अश्रुपूर्णमुखो रामो निशि तूष्णीमुपाविशत् ।
 विलप्योपरतं चैनं शान्ताचिषमिवानलम् ॥ २८ ॥
 ममूद्रमिव निर्वेगमिति होवाच लक्ष्मणः ।
 महासत्त्व न शोकस्य वशमागन्तुमर्हसि ॥ २९ ॥
 त्वद्विधा हि न शोचन्ति कृच्छ्रेऽपि व्यसनागमे ।
 इदं हि ते न व्यसनमवगच्छामि^(१) ते^(१) प्रभो ॥ ३० ॥
 अनुरागं तु पौराणां मन्ये तेऽम्युदयागमम् ।

अयोध्या सा पुरी कृत्वा संप्रत्यद्यापि दुःखिता ॥ ३१ ॥

न राजते त्वया हीना विचन्द्रा रजनी यथा ।

नैतद्युक्तं च ते राजन् यदिदं परिदेवसे ॥ ३२ ॥

विषादयसि सीतां च मां चैव पुरुषर्षभ ।

न हि सीता त्वया हीना न चाहमपि राघव ॥ ३३ ॥

मृहूर्तमपि जीवावो जलान् मत्स्य इषोद्धृतः ।

न हि तातं न शत्रुघ्नं न सुमित्रां परन्तप ।

अद्याहं द्रष्टुमिच्छामि स्वर्गं चापि विना त्वया ॥ ३४ ॥

स लक्ष्मणस्यार्थवदूर्जितं वचो निशम्य रामो हितमेव चात्मनः ।

प्रणुद्य शोकं परिरम्य लक्ष्मणं स्थितोऽस्मि शोकादिति^१ राघवोऽब्रवीत्

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामविलापो

नाम सप्तपञ्चाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

[वं-५४]=[अष्टपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५४]
 तां तु रात्रिमुषित्वा ते तस्मिन् न्यग्रोधपादपे ।
 विमले ऽस्युदिते सूर्ये तस्माद्वासात्प्रतस्थिरे ॥ १ ॥
 यत्र भागीरथी पुण्या यमुनामभिपद्यते ।
 ततस्तां दिशमुद्दिश्य विगाह्य सुमहद्वनम् ॥ २ ॥
 ते भूमिभागान् विविधान् देशांश्चापि मनोरमान् ।
 अदृष्टपूर्वान् पश्यन्तो विचित्रकुसुमाश्रयान् ॥ ३ ॥
 पन्थानं क्षेममामाद्य प्रययुः सुमनस्विनः ।
 ततो निवृत्ते दिवसे रामः मांमित्रिमब्रवीत् ॥ ४ ॥
 प्रयागमभितः पश्य सौमित्रे धूममुद्गतम् ।
 अग्नेर्भगवतः केतुं मन्ये मन्निहितं मुनिम् ॥ ५ ॥
 नूनं प्राप्ताः स्म संयोगं गङ्गायमुनयोः शिवम् ।
 तथा हि श्रूयते शब्दो वारिमंघर्षजो महान् ॥ ६ ॥
 दारूणोव विशीर्णानि वनस्थंस्तुरुजोविभिः ।
 भरद्वाजाश्रमे चैते दृश्यन्ते विविधा द्रुमाः ॥ ७ ॥
 त एवं क्रमशो गन्वा लम्बमाने दिवाकरे ।
 भग्डाजाश्रमं पुण्यमामेदुः श्रमकर्षिताः ॥ ८ ॥
 तदाश्रमपदं प्राप्य रामः मांमित्रिणा सह ।
 त्रामयन् मायुधः सुप्तान् विवेश मृगपक्षिणः ॥ ९ ॥
 आगत्य चाश्रमद्वारं मुनेर्दर्शनकांक्षया ।
 तस्थौ रामः सह श्रीमान् सीतया लक्ष्मणेन च ॥ १० ॥
 तौ विदित्वाऽऽगतौ चापि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

प्रवेशयामास युनिः स्वप्नभ्रमपदं तदा ॥ ११ ॥
 हुताग्निहोत्रमासीनं महाभागं कृताञ्जलिः ।
 रामः सौमित्रिणा सार्धं सीतया चाम्यवादयत ॥ १२ ॥
 मृगपक्षिभिरासीनैर्दृष्टो युनिभिरेव च ।
 राममागतमभ्यर्च्य सोऽभ्यभाषत वै युनिः ॥ १३ ॥
 न्यवेदयत चात्मानं तस्मै लक्ष्मणपूर्वजः ।
 पुत्रौ दशरथस्यावां भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १४ ॥
 भार्या ममेयं कल्याणी वैदेही जनकात्मजा ।
 मामनुव्रजमानेयं तपोवनमुपागता ॥ १५ ॥
 पित्रा प्रद्राज्यमानं मां सौमित्रिश्चानुजः प्रियः ।
 स्वयमन्वगमद् भ्राता वनमेष दृढव्रतः ॥ १६ ॥
 पित्रा नियुक्तो भगवन् प्रवेक्ष्यामि महद्भनम् ।
 धर्ममेव चरिष्यामि पत्रमूलफलाशनः ॥ १७ ॥
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
 उपानयत धर्मात्मा रामायार्घ्यमृषिस्ततः ॥ १८ ॥
 प्रतिगृह्य च काकुत्स्थमासनेनोदकेन च ।
 न्यमन्त्रयत मूलैश्च फलैश्च फलभोजनम्^१ ॥ १९ ॥
 प्रतिगृह्य तु तां पूजाभ्युपविष्टं स राघवम् ।
 भरद्वाजोऽब्रवीद्वाक्यं धर्मयुक्तमिदं हितम् ॥^०२० ॥
 धिरस्य खलु काकुत्स्थ पश्यामि त्वामिहागतं ।
 भुतं तव मया चेदं विवासनमकारणात् ॥ २१ ॥^०

अवकाशो विविक्तोऽयं रमणीयश्च राघव ।^०
 गङ्गायमुनयोः पुण्यः सङ्गमो लोकविश्रुतः ॥ २२ ॥
 इह राम मया सार्धं वस त्वं यदि रोचते ।
 वनं साधारणं हीदं तपोवननिवासिनाम् ॥ २३ ॥
 इहैव रंस्यसे सार्धं सीतया लक्ष्मणने च ।
 तमेवं वादिनं रामः कृताञ्जलिरभाषत ।
 वमतोऽनुग्रहो मे स्यादिह ब्रह्मंस्त्वया मह ॥ २४ ॥
 इतस्तु विषयोऽस्माकमभ्याशे तपतां वर ।
 सुदर्शमिव पश्यामि पौराणामिह चागमम् ॥ २५ ॥
 अभ्याशे वर्तमानं मां श्रुत्वा दूराद्विद्वक्ष्वः ।
 आगमिष्यन्ति वेदेहीं मामपि प्रेक्षका जनाः ।
 अनेन कारणेनाहमिह वासं न रोचये ॥ २६ ॥
 एकान्ते पश्य भगवन्नाश्रमस्थानमुत्तमम् ।
 रमते यत्र वेदेही सुखेन जनकात्मजा ।
 वमेयं यत्र वेदेक्षा सहितो लक्ष्मणेन च ॥ २७ ॥
 स्वजनेनापरिज्ञातो निरुद्वेगः सुखी मुने ।
 इति रामवचः श्रुत्वा भरद्वाजो महामुनिः ॥ २८ ॥
 ध्यात्वा मुहूर्तमेकाग्रो रामं वचनमब्रवीत् ।
 त्रियोजनमितस्तात गिरिर्यत्र निवत्स्यसि ॥ २९ ॥
 महर्षिजनसंजुष्टः सर्वर्तुसुखदः शिवः ।
 गोलाङ्गूलाभिनदितो वानरर्धनिषेवितः ॥ ३० ॥

चित्रकूट इति ख्यातो गन्धमादनमभिः ।
 यावद्भि चित्रकूटस्य नरः श्रंगाण्युदीक्षते ॥ ३१ ॥
 तावत्कल्याणमाप्नोति धर्मे च कुरुते मनः ।
 ऋषयस्तत्र बहवो विहन्य शरदां शतम् ॥ ३२ ॥
 तपसा दिशमारूढाः मुकृतैकनिषेवणात् ।
 तं विविक्तमहं मन्ये वामं ते रघुनन्दन ॥ ३३ ॥
 इह वा पुरुषव्याघ्र वम राम मया मह ।
 मर्वथा रंस्यमे राम तस्मिन्नाश्रममण्डले ॥ ३४ ॥
 लक्ष्मणेन मह भ्रात्रा वैदेह्या चापि भार्यया ।
 एवमुक्त्वा ततः कार्मै भरद्वाजो ऽथ राघवम् ॥ ३५ ॥
 महभार्य मह भ्रात्रा महर्षिः प्रत्यपूजयत् ।
 तस्य भुक्तवतस्तत्र तं मुनिं ममुपागतः ॥ ३६ ॥
 जगाम रजनी पुण्या विचित्राः शृण्वतः कथाः ।
 तस्यां रात्रौ व्यतीतायां मन्ध्यामन्वास्य मानुजः ॥ ३७ ॥
 उपतस्थे महर्षिं तं तमुवाच ततो मुनिः ।
 चित्रकूटमितो गत्वा रमस्व मह मीतया ॥ ३८ ॥
 लक्ष्मणेन च विस्रब्धं तत्र त्वं विहरिष्यसि ।
 शुचिशीताम्बुवाहिन्या मन्दाकिन्योपशोभिते ॥ ३९ ॥
 मन्येऽहं तत्र ते वासं रम्ये स्वादुफलोदके ।
 तत्र कुञ्जरयूथानि मृगयूथानि चाभितः ॥ ४० ॥

4 ब—सीतया । 5 कै, ब—समुपागतः । 6 कै, ब—गमाःस्थ ।
 म—गामास्व । 7 ब—संग्रहं ।

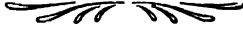
विचरन्ति वनान्तेषु तत्र द्रक्ष्यसि राघव ।

दात्यूह-कोयष्टिक-कोकिलस्वर्नविनादितं तं वसुधाधरं शिवम् ।

मृगैश्च मत्तैर्बहुभिश्च कुञ्जरैः सुरम्यमासाद्य तमावसाश्रमम् ॥४१॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरद्वाजाभिगमनं

नाम अष्टपञ्चाशः सर्गः ॥ ५८ ॥



[वं-५५]=[एकोनषाष्टिनमः सर्गः]=[दा ५५]

तां तत्र रजनीमुष्य सुखमिच्छाकुनन्दनां ।
 अभिवाद्य महर्षिं तं दधतुर्गमने मनः ॥ १ ॥
 प्रयातां रजनीं वीक्ष्य भरद्वाजो महामुनिः ।
 चित्रकूटस्य पन्थानमुपदंष्टु प्रचक्रमे ॥ २ ॥
 राघव त्वमितो देशान् पश्यन्नावमथान्बृहन् ।
 नातिदूरे ममामाद्य तरथा' यमुनां नदीम् ॥ ३ ॥
 कृत्वोद्दुपं ग्राहवती सा हि नित्यं महानदी ।^A
 तस्या नद्याः परे पारे नातिदूरे महाद्रुमः ॥ ४ ॥
 मत्यापि* पावितः^१ श्रीमान् न्यग्रोधो हरितच्छदः ।
 नानामन्त्रगणावामः^२ उयाम इत्यभिविश्रुतः ॥ ५ ॥
 मांताऽपि तं नमस्कृत्य ममभ्यर्च्य च पादपम् ।
 अभियाचत कल्याणं वर यदभिकाम्क्षितम् ॥ ६ ॥
 क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलं द्रक्ष्यथ काननम् ।
 पलाशवदरीमिश्रं मधूकाम्रवनायुतम्^३ ॥ ७ ॥
 म पन्थाश्चित्रकूटस्य गतः सुबहुशो मया ।
 रम्यश्चाश्रमयुक्तश्च वनदोषैश्च वर्जितः ॥ ८ ॥
 पन्थानमुपदिश्यंवं भरद्वाजो न्यवर्तत ।
 रामेण लक्ष्मणेनापि सीतया चाभिवन्दितः ॥ ९ ॥
 उपावृते मुनां तस्मिन् रामो मक्ष्मणमब्रवीत् ।

१ म-प्रेक्ष्य । २ म-तुरीबा । A।म । श्रीमते रामानुजाय नमः ।
 शुभं । ३ ल-स चापि पावितः । (सत्याभियाचितः ?) । ४ ब, म-०गुणा-
 वासः । ५ कै, म, ल मधुका० ।

कृतपुण्योऽस्मि मांमित्रे मुनिर्यनमाऽनुकम्पते ॥ १० ॥
 इति तां पुरुषव्याघ्रां कथयन्तां यशस्विनां ।
 मीतामवाग्रतः कृत्वा कालिन्दीं जग्मतुस्तदा ॥ ११ ॥
 तत्र बद्ध्वाद्दुपं काष्ठं वेणुभिश्चापि तीरजः ।
 मीतामारोपयाञ्चक्रे गमस्तत्र स्वयं तदा ॥ १२ ॥^०
 परिगृह्य हृदा बालां कम्पमानां लतामिव ।
 मीतामारोप्य रामोऽपि लक्ष्मणं चाप्यरोहयत् ॥ १३ ॥
 तेन प्रवेनाऽभवतीं शीघ्रगामृमिमात्रिनीम् ।
 तीरजरोहनां वृक्षस्ते ततो यमुनां नदीम् ॥ १४ ॥
 मन्तीयं प्रवृत्तमृज्य प्रणम्य यमुनां नदीम् ।
 शोतच्छायं ममामेदुः इयामं न्यग्रोधपादपम् ॥ १५ ॥
 अर्चयित्वा च तं मीताऽयाचतेदं कृताञ्जलिः ।
 चिरं जीवतु मे वृक्ष श्वशुरः कोमलेश्वरः ॥ १६ ॥
 भर्ता मे देवगर्भं जीवन्तु भगतादयः ।
 काशल्यां चैव जीवन्तीं पश्येयमिति मैथिली ॥ १७ ॥
 ययाचं तं ततोऽभ्येत्य न्यग्रोधं मत्पयाचनम् ।
 प्रदक्षिणमुपावृत्य ततस्ते प्रययुस्तदा ॥ १८ ॥
 काशमात्रं ततो गत्वा नीलमामाद्य तद्वनम् ।
 हन्वा तत्र मृगं मेध्यं भृत्वा तमुपयोज्यं च ॥ १९ ॥
 विहृत्य तस्मिन् बहुपक्षिनादिते वने यथेष्टं मृगयूथसेविते ।
 ततो निवामार्थमुपाययुः शिव शुभं नदीतीरसमुत्थितं द्रुमम् ॥ २० ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽद्योऽध्याकाण्डे यमुनातीरनिवासो
 नाम एकोऽष्टमः सर्गः ॥ ५९ ॥

[वं ५६]=[षष्टिमः सर्गः]=[दा -५६]

अथ रात्रौ व्यतीतायां सुखसुप्तं श्रमालमम् ।
 गम स्तून्थापयामाम लक्ष्मणं शनकस्तदा ॥ १ ॥
 स्वगानां शृणु माँमित्रे वल्गु व्यवहारतां वने ।
 मंप्रतिष्टामहे भूयो यदि लक्ष्मण मन्यमे ॥ २ ॥
 म सुप्तः मसुप्तं आत्रा लक्ष्मणः प्रतिबोधितः ।
 जहौ निद्रां क्लमं च तं चैवाध्वपरिश्रमम् ॥ ३ ॥
 तत उन्थाय महमा स्पृष्ट्वा च मालिलं शुचि ।
 उपाम्य च शुभां मन्ध्यां तत्रैवाभिप्रतम्यिरे ॥ ४ ॥
 चित्रकूटस्य पन्थानमामाद्य कृतनिश्चयाः ।
 तत्र वामं ममुदिश्य ययुः शीघ्रपराक्रमाः ॥ ५ ॥
 अचिरेण ममामाद्य ततस्तच्चित्रपादपम् ।
 चित्रकूटवनं गमः सीतां वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥
 पश्यैतान् पुष्पितान् मीते मालिनीं मरितं प्रति ।
 शिशिरात्ययदग्धान् हि प्रदीप्तानिव किंशुकान् ॥ ७ ॥
 कर्णिकारवनं चापि पश्य मन्दाकिनीमनु ।
 दीपितं रुचिरैः पुष्पैः प्रदीप्तैः काञ्चनैरिव ॥ ८ ॥
 पश्य भल्लातकान् बिल्वान् पनसांस्तिन्दुकांस्तथा ।
 पलभारनतांश्चैव तथाऽन्यान् शुभपादपान् ॥ ९ ॥
 शक्यमत्र फलैरेव जीवितुं तनुमध्यमे ।
 अहो स्वर्गोपमं प्राप्ताश्चित्रकूटमिमं वयम् ॥ १० ॥

पश्य द्रोणप्रमानि लम्बमानानि लक्ष्मण ।
 चितानि चित्रकूटेऽस्मिन् मधुनि मधुर्षः स्वर्गः ॥ ११ ॥
 अर्षो कूजति दान्युहस्तं शिखी प्रतिकूजति ।
 तं चोपहमतीवायं कूजंश्च जलकुक्कुटः ॥ १२ ॥
 परपुष्टकं श्रुत्वा गायन्त इव कानने ।
 भ्रमग विचरन्त्येते पुष्पपानकलम्बनाः ॥ १३ ॥
 पश्य मन्दाकिनीतीरे कुसुमप्रकरैः प्रिये ।
 वितानानीध शुभ्राणि शयनानि द्रुमे द्रुमे ॥ १४ ॥
 शिलातलानि नीलानि विमलानि शुचिस्मिते ।
 लताबृक्षाश्रितानीह पश्य रम्याणि भामिनि ॥ १५ ॥
 मातङ्ग्युथविचिते नानाविहगनादिने ।
 नानामृगगणाकीर्णे शैलेऽस्मिन् रम्यकानने ॥ १६ ॥
 वैदेहि विचरिष्यामः मुखमत्र वयं प्रिये ।
 इह प्राप्स्यमि वैदेहि मया मह पगं गतिं । ॥ १७ ॥
 अवेक्षमाणा एवं ते रम्यां मन्दाकिनीं नदीम् ।
 चित्रकूटं ममाजग्मुर्नानाकुमुभितद्रुमम् ॥ १८ ॥
 तस्य शैलस्य पादे तु विविक्ते मलिलावृते ।
 आश्रमं चक्रतुश्चारु आतरं गमलक्ष्मणौ ॥ १९ ॥
 गजमग्नान्युपाहृत्य दारुण्युपवनान्तरात् ।
 लतावितानबद्धे द्वे चक्रतुः सदने पृथक् ॥ २० ॥

वृक्षपर्णेश्च बहुभिन्न छादयामासतुस्ततः ।
 ते पर्णशाले कृत्वाऽथ शोधयामास लक्ष्मणः ॥ २१ ॥
 मृदोपलेपनं चक्रे वैदेही तनुमध्यमा ।
 कृत्वाऽऽश्रमपदं रामस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥ २२ ॥
 मृगमाहृत्य सांमित्रे चरुं श्रपय मा चिरम् ।
 तेन यष्टुमिहेच्छामि चरुणा'ऽऽश्रमदेवताः^४ ॥ २३ ॥
 इत्युक्तो लक्ष्मणो भ्रात्रा हत्वा कृष्णमृगं वने ।
 आहृत्य चानयित्वाऽग्निं श्रपयामाम तं चरुम् ॥ २४ ॥
 तं मृगं मंस्कृतं कृत्वा सुष्टुपकं च लक्ष्मणः ।
 उवाच राममभ्येत्य कृताञ्जलिरिदं वचः ॥ २५ ॥
 आज्ञया ते मयाऽऽहृत्य श्रुतः कृष्णो मृगो वनात् ।
 यष्टुमर्हमि तेन त्वं देवता अभिकांक्षिताः ॥ २६ ॥
 इत्युक्तो राघवः स्नात्वा जप्ता च विधिवत्तदा ।
 इन्द्र्याग्निं^५ मन्त्रवत्तत्र ततस्तु जुहुवे हविः ॥ २७ ॥
 हविर्हुत्वा च देवेभ्यः पितृभ्यस्तदनन्तरम् ।
 निर्वाप पवित्रेषु निर्वापं^६ मजलाञ्जलिम् ॥ २८ ॥
 न्युप्य चैव निवापं तं^७ भूतेभ्योऽपि विधानतः ।
 चकार बलिनिर्वापं राघवस्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥
 लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा हुतशेषं ततः स्वयम् ।
 उपविश्योपयुयुजे कृते पर्णपुटे शुभे ॥ ३० ॥

४ कै, ब, ल, म-वरुणाश्रम० । ५ म-कृष्णमृगो । ६ ल-इष्ट्वाऽग्निं ।
 व-संवीप्य । ७ ल-निर्वापं । ८ ल-व ।

परिवेष्य च सीताऽपि तावुर्भां भर्तृदेवरां ।

एकान्तं समुपागम्य ततः शेषमुपाददे ॥ ३१ ॥

अनेकनानाविधपक्षिनादिते विचित्रपुष्पस्तवकोपशोभिते ।

नगोतमे तत्र निवाममेयिवां स्तुतोष गमः महलक्ष्मणस्तदा ॥३२॥

तं रम्यमामाद्य हि चित्रकूटं तां चैव पुण्यां मरितं मुतीर्थाम् ।

मन्दाकिनीं पुष्पफलाढ्यतीगं दुःखं जहुस्ते वनवासमूलम् ॥३३॥

इत्यार्षे रामायणे ऽगोध्याकाण्डे चित्रकूटनिवासो

नाम षष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥

[वं ५७]=[एकवष्टिनमः मर्गः]=[दा-५७]

म शोचित्वा तु सुचिरं सुमन्त्रेण गुहः सह ।
 गङ्गापारगतं रामं जगाम स्वपुरं ततः ॥ १ ॥
 अनुज्ञाप्य सुमन्त्रोऽपि योजयित्वा हयान् रथे ।
 अयोध्यामेव नगरं प्रययौ भृशदुर्मनाः ॥ २ ॥
 मोऽतीत्य सुबहून् देशान् सरितश्च सरांसि च ।
 कालेन नातिमहता ग्रामांश्च नगराणि च ॥ ३ ॥
 अयोध्यामाजगामार्तो निवृत्तेऽहनि सारथिः ।
 आर्तनारीनरगणां दीनस्वरवतीं तदा ॥ ४ ॥
 शून्यामिव च निःशब्दां निरानन्दजनावृताम् ।
 प्रम्लानपङ्कजवतीं विजलां पद्मिनीमिव ॥ ५ ॥
 निशाकरपरिभ्रष्टां ताराहीनां निशामिव ।
 तां दृष्ट्वा चिन्तयन्नेव सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ ६ ॥
 प्राविशत् तां पुरीं दीनो निर्जनां विगतत्विषम् ।
 कश्चित् सरत्ननिचया सनरा सनराधिपा ॥ ७ ॥
 रामशोकाग्निना कृत्स्ना न दग्धेयं पुरी भवेत् ।
 इति सञ्चिन्तयन् सूतः प्रविवेश च तां पुरीम् ॥ ८ ॥
 सुमन्त्रो व्यथयोपेतः स्यन्दनेन हतत्विषा ।
 सुमन्त्रमभियान्तं तु दृष्ट्वा शतसहस्रशः ॥ ९ ॥
 क राम इति पृच्छन्तो रथमभ्यद्रवन्गराः ।
 तेषां शशंस गङ्गायामहमामन्थ्य राघवम् ॥ १० ॥
 अनुज्ञातो निवृत्तोऽस्मि तेनैव सुमहात्मना ।

ते तीर्णमभिमंश्रुत्य वाप्पपर्याकुलेक्षणाः ॥ ११ ॥
 अहो धिगिति निःश्वस्य हताः स्मेति विचुकुशुः ।
 वृन्दशो जल्पतां तेषां शुश्राव स तदा गिरः ॥ १२ ॥
 निर्लज्जोऽयं वने त्यक्त्वा गमं पुनरिहागतः ।
 महोन्मवमभाजेषु कथं नाम मुनिघृणाः^१ ॥ १३ ॥
 विहरेम पुनर्दृष्ट्वा विना तं नरकुञ्जरम् ।
 किं स्यान् प्रियं जनम्याम्य कांक्षितं किं मुग्धावहम् ॥ १४ ॥
 इदं गमेण नगरं पित्रेव परिपालितम् ।
 तं कथं पुण्डरीकाक्षं ज्यामं पद्मदलेक्षणम् ॥ १५ ॥
 निर्लज्जोऽयं गृहं गमं विसृज्य पुनरगतः ।
 एताश्चान्याश्च विविधाः भृष्ट्वन्त्राचः स मारुतिः ॥ १६ ॥
 यत्र राजा दशरथस्तदेव प्रययौ गृहम् ।
 अवतीर्य रथाच्चामीं गजवेडम विवेश तन् ॥ १७ ॥
 शोकदीर्णजनाकीर्णं मत्तकक्ष्यं हतन्विषम् ।
 ततो दशरथस्त्रीणां शुश्राव परिदेवितम् ॥ १८ ॥
 प्रामादशिखरस्थानां दृःग्वितानामितस्ततः ।
 मह गमेण निर्यातो विना गममिहागतः ॥ १९ ॥
 मृतः किं नाम कौशल्यां पृष्टः मंप्रति वक्ष्यति ।
 यथा तु मन्ये दुर्जानं तथा न^१ मरणं ध्रुवम् ॥ २० ॥
 प्रिये निवामिते पुत्रे कौशल्या^१ यत्र जीवति ।

१ ब, म -म० । २ ब -शोकादीर्ण० । ३ ब, ल, म, कै-कौमल्यां ।
 ४ ब -न् । म नास्ति । ५ म निर्वामिते । ६ कै, ब, ल, म-कौमल्या ।

तथाभूतं तु तद्वाक्यं राजस्त्रीणां निशामयन् ॥ २१ ॥
 शोकाग्निना दक्षमानो राजवेश्म विवेश सः ।
 प्रविश्य च गृहं दीनो राजानं दीनचंतसम् ॥ २२ ॥
 अपश्यत् पुत्रशोकार्तं हतसर्वाजसं तथा ।
 अभिगम्य तदासीनं नरेन्द्रमभिवाद्य च ॥ २३ ॥
 सुमन्त्रो गमवचनं यथोक्तं प्रत्यवेदयत् ।
 तच्छ्रुत्वा वचनं राजा विसंज्ञो भ्रान्तचतनः ॥ २४ ॥
 निपपातासनाद् भूमौ दुःखशोकममन्वितः ।
 दृष्ट्वा तमामनाद् भूमौ पतितं जगतीपतिम् ॥ २५ ॥
 अन्तःपुरस्त्रियोऽभ्येत्य बाहूनुच्छ्रित्य चुक्रुशुः ।
 सुमित्रया तु तं मार्धं कौशल्यां पतितं पतिम् ॥ २६ ॥
 दीनमुत्थापयामाम वचनं चेदमब्रवीत् ।
 इमं तस्य महाभाग मृतं दुष्कृतकारिणम् ॥ २७ ॥
 वनवासादुपावृत्तं कस्माच्चं न नुपृच्छसि ।
 यदीदं निर्घृणं कृत्वा लज्जयं वं विमुह्यसि ॥ २८ ॥
 उत्तिष्ठ नाद्य कालस्ते लज्जितुं मा व्यपत्रयः ।
 कस्मादद्य महीपाल न त्वं पृच्छसि मे सुतम् ॥ २९ ॥
 नास्तीह काचित् कैकेय्याविस्रब्धं प्रष्टुमर्हसि ।
 एवमुक्त्वा महाराजं कौशल्यां शोककर्शिता ॥ ३० ॥
 धरण्यां निपपातार्ता वाष्पविह्वलभाषिणी ।

बिलप्य पतितां भूर्मा कौशल्यां शोककर्षिताम् ॥ ३१ ॥^(१)

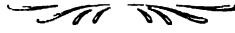
पतितं च पतिं दृष्ट्वा सुस्वरं रुरुदुःस्त्रियः ।

ततस्तमन्तः पुरनादमुत्थितं स्वनं निशम्य वृद्धास्तरुणाश्च मानवाः ।

स्त्रियश्च सर्वा रुरुदुःममन्ततो निरीक्ष्य गमस्य रथं महात्मनः ॥ ३२ ॥

वृन्त्याषे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रोपावर्तनं^१

नामैकषष्टिनमः^२ मर्गः ॥ ६१ ॥



[वं-५८]=[द्विषष्टिनमः मर्गः]=[दा-५८]

अथ राजा पुनः संज्ञां प्रतिलभ्य ममुत्थितः ।
 उपविश्यामने स्रुतं प्रष्टुं ममुपचक्रमे ॥ १ ॥
 अश्रुपूर्णेक्षणो' दीनो नवबद्ध इव द्विपः ।
 दीर्घमुष्णं च निःश्वामं स विमुञ्चन् मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥
 अथ रेणुपरिध्वन्तं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ।
 पप्रच्छैनमभिप्रेत्य' सुमन्त्रं वाष्पविह्वलः ॥ ३ ॥
 क सुमन्त्र गतो रामः क च व्रत्स्यति शंभ मे ।
 क म्याने तेन चैव त्वं राघवेण विसर्जितः ॥ ४ ॥
 मोऽत्यन्तसुखसंवृद्धः कथमासिष्यते सुतः ।
 भूमिपालात्मजो भूमौ कथं स्वप्स्यति वा वने ॥ ५ ॥
 कथं च विजनेऽप्ये याति पद्भ्यामनाश्रवत् ।
 मिहव्याघ्रसमाकीर्णो मरीसृपममाकुले ॥ ६ ॥
 यं यान्तमनुयान्ति स नराश्वरथकुञ्जराः ।
 म कथं सुकुमाराङ्गो वने चरति मे सुतः ॥ ७ ॥
 सुकुमार्या तपस्विन्या वैदेद्याऽनुगतः कथम् ।
 वनं कण्टकितं दुर्गं रामः पद्भ्यां विगाहते ॥ ८ ॥
 स चाप्रतिमतेजस्वी सुकुमारो ममात्मजः ।
 अनुगच्छति तं भक्त्या भ्रातरं लक्ष्मणः कथम् ॥ ९ ॥
 सिद्धार्थस्त्वं कृतार्थश्च येन चैतौ ममात्मजा ।

तपोदीक्षान्विता दृष्टा नरनारायणाखिव ॥ १० ॥
 किमाह गमन्तेजस्वी किं च मां लक्ष्मणोऽब्रवीत् ।
 किमुवाच च मां माध्वी माता भर्तृपरायणा ॥ ११ ॥
 किं ताभ्यामशितं भुक्तमितः प्रभृति शंस मे ।
 अशेषतो यथावृत्तं वनं गमस्य गच्छतः ॥ १२ ॥
 इति सूतो नरन्द्रेण नादितः मज्जमानया ।
 उवाच वाचा राजानं व्यथागद्गदया^३ ततः ॥ १३ ॥^४
 पुरान्प्रभृति वृत्तान्तमशेषेणानिवर्तनात्^५ ।
 उक्त्वा ततः परमिमं राममन्दंशमब्रवीत्^६ ॥ १४ ॥
 कृत्वा तंऽनुदिशं रामः प्रणामं प्राञ्जलिः सुतः ।
 इदं मां मंपरिष्वज्य सन्दिदेश कृताञ्जलिः ॥ १५ ॥
 स्रत मद्बचनाद्गत्वा समासाद्य महीपतिम् ।
 शिर्षमा प्रणिपत्यादां प्रष्टव्यः कुशलं ततः ॥ १६ ॥
 मातरश्चापि ताः सर्वाः प्रष्टव्याः कुशलं त्वया ।
 अशेषतः ममामाद्य प्रणिपत्याभिवाद्य च^७ ॥ १७ ॥
 पृष्ट्वा च कुशलं सूत विज्ञाप्यो मे पिता त्वया ।
 अनुग्रहार्थमस्माकं न शोच्योऽहं त्वयेत्युत ॥ १८ ॥
 यतः सर्वो हि राजेन्द्र भवितव्यमुपाश्नुते ।
 अतो न शोच्योऽस्मि विभो मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥ १९ ॥
 कौशल्यापि^८ च मे माता विज्ञाप्या कुशलं त्वया ।

३ ब—भुक्तं यतः । म—त्यक्तमितः । ४ कै, व—कृत्वा । (०)म । ५ म—
 ०अशेषेण निवर्तनात् । ६ म—रामं मकोशमब्रवीत् । ७ म—कौसल्या ।
 ब, कै. ल. कौसल्या ।

मन्त्रोक्तकथितो राजा न वाच्यः परुषं त्वया ॥ २० ॥

शापिताऽमि मम प्राणैः पुनरगमनेन च ।

देववत् पूजनीयस्ते पिता न इति चाब्रवीत् ॥ २१ ॥

परिष्वज्य च वक्तव्यो भरतो वचनान्मम ।

यौवराज्यमवाप्य त्वं पूजयेथा नराधिपम् ॥ २२ ॥

त्वया शुश्रूष्यमाणो हि न शोचति यथा नृपः ।

मन्त्रेहादहमि तथा कर्तुमित्यभिनिः श्वसन् ॥ २३ ॥

ममो मातृपु मर्वासु वर्त्तेथा इति चाब्रवीत् ।

भरतं पृथिवीपाल पुत्रं ते कैकयीसुतम् ॥ २४ ॥

एवमादि वचो धर्म्यं ब्रुवन्नेव नराधिप ।

वाष्पवेगोपरुद्धात्मा मुमोचाश्रुणि^१ ते मुनः ॥ २५ ॥

ईषद्रोषपरीतस्तु मामित्रिरिदमब्रवीत् ।

केनायमपराधेन राज्ञा पुत्रो विवामितः ॥ २६ ॥

मया तावद्भवेत् किञ्चित् कार्कश्याद्विप्रियं^{१०} कृतम् ।

आर्यस्य तु परित्यागं कारणं नापलच्यते ॥ २७ ॥

यदि प्रव्राजितो रामः कैकेय्याः प्रियकारणात् ।

वरदाननिमित्तं वा न कृतं माधु मर्वथा ॥ २८ ॥

विरुद्धं धर्मकीर्तिभ्यां राज्ञदं बुद्धिलाघवात् ।

अयशस्यं कृतं मन्ये मत्पुत्रस्य विवामनम् ॥ २९ ॥

मम तावन्न तातेऽद्य पितृस्नेहोऽस्ति कश्चन ।

४ ब, म—कैकयी० । १) म—ममोषामृणि । ब, कै, ल—मुमोचाश्रुणि ।

१०) ब—कार्कश्याद्वि० ।

पिता माता सुहृद् भ्राता रामो बन्धुर्गुरुश्च मे ॥ ३० ॥

लोकप्रियमिमं त्यक्त्वा लोकनाथं च राघवम् ।

राज्ञा किमिव कल्याणं भरतादभिकांक्षितम् ॥ ३१ ॥

सुमन्त्र भरतश्चैव वाच्यस्ते राजमन्त्रिणां ।

अमर्षयामि चेत् किञ्चित्त्वं राज्याद्विप्रतिक्रियाम्^{११} ॥ ३२ ॥

ततो मातृषु सर्वासु ममतामभ्युपागतः ।

राज्याभिमानमुत्सृज्य वर्तस्वेत्यादिदेश ह ॥ ३३ ॥

जानकी तु विनिःश्वस्य वाष्पमन्त्रवरा नृप ।

भूतोपहतचित्तैव निरीक्षन्ती मनस्विनी ॥ ३४ ॥

अदृष्टपूर्वव्यमना राजपुत्री यशस्विनी ।

पर्यश्रनयना^२ दीना नैव मां किञ्चिदब्रवीत् ॥ ३५ ॥

उदोक्षमाणा भर्तारं मृत्वेन परिगुष्यता ।

मुमोच केवलं वाष्पं मा निवृत्तमवश्य मा ॥ ३६ ॥

म चापि रामोऽश्रुमुखः^१ कृताञ्जलिर्ननाम पादां तव शोकविह्वलः ।

तथैव मोता रुदती तत्राबला नृदेव पादां शिखा नमस्यति ॥ ३७ ॥

इत्याशं रामायणेऽयोध्याकाण्डे राममन्द्रेऽगारुयानं

नाम द्विषष्टिनमः सर्गः ॥ ६२ ॥

११ ल—क्रियम् । १२ म—पर्यस्व० । ब, ल, कै—पर्यसु० । १३ ब, कै,

ल, म—०ऽक्षमुखः ।

[वं-५९]=[त्रिषष्टितमः सर्गः]=[दा-५९]

इति ब्रुवाणं सन्देशं सुमन्त्रं मन्त्रिसत्तमम् ।
 ब्रूहि शेषं पुनरिति राजा वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सुमन्त्रो वाष्पविह्वलम् ।
 कथयामास भूयोऽपि रामवृत्तान्तविस्तरम् ॥ २ ॥
 जटाः कृत्वा महाराज चीरवल्कलधारिणौ ।
 गङ्गासुतीर्य तौ वीरौ प्रयागाभिमुखौ गतौ ॥ ३ ॥
 अग्रतो लक्ष्मणो याति ततो मध्येऽथ जानकी ।
 रामस्तुपृष्ठतो याति पालयन् रघुनन्दनः ॥ ४ ॥
 तांस्तथा गच्छतो दृष्ट्वा निवृत्तोऽस्म्यवशस्तदा ।
 ततो मम निवृत्तस्य तुरगा वाष्पविह्वलाः ॥ ५ ॥
 राममेवानुपश्यन्तो द्वेषमाणा^१ विचुक्रुशुः ।
 उभाभ्यां राजपुत्राभ्यां ततः कृत्वाऽहमञ्जलिम् ॥ ६ ॥
 त्वद्गौरवभयाद् राजंस्वरावान् पुनरागतः ।
 गुहेन सह कृत्स्नं च तत्रैकदिवसं स्थितः ॥ ७ ॥
 आशया यदि रामो मां पुनरेवाह्वयेदिति ।
 विषयेषु नरव्याघ्र रामव्यसनकर्षिताः ॥ ८ ॥
 अपि वृक्षाः परिम्लानाः सपुष्पस्तवकाङ्कुराः ।
 सवाष्पाः सरितश्चासन् सुतप्तकलुषोदकाः ॥ ९ ॥
 प्रम्लानपुष्कराश्चासन् पशिन्यो विगतत्विषः ।

१ ब, ल, म—द्वेष ।

ध्यानंकाचित्ताः स्तिमिता न विचेरुर्मृगडिजाः ॥ १० ॥
 आमीञ्च गमशोकेन निष्कृजमिव^१ काननम् ।
 जलजानि च सन्वानि स्थलजानि च सर्वशः ॥ ११ ॥
 स्थानेभ्यः स्तंभितानीव^२ सर्वतो नाचलन्नृप ।
 पुरे राष्ट्रे च ते राजन् पारजानपदे जने ॥ १२ ॥
 तं न पश्याम्यहं कश्चिद् यो न शोचति ते सुतम् ।
 अयोध्यां प्रविशन्नं मां गर्हयन्ति समन्ततः ॥ १३ ॥
 पौरा दुःखाभिसन्तप्ता विना राममुपागतम् ।
 विमानहर्म्यप्रासादगवाक्षस्थाञ्च योषितः ॥ १४ ॥
 उत्सृज्याम्यागतं रामं मां दृष्ट्वा चुक्रुशुभृशम् ।
 अश्रुपूर्णेक्षणा^३ दीना निरीक्षन्त^४ उपागतम् ॥ १५ ॥
 हा नृशंस क्व ते रामः स नीत इति चाब्रुवन् ।
 नामित्राणां न मित्राणां नोदासीनजनस्य च ॥ १६ ॥
 अहमार्ततया कश्चिद्विशेषमुपलक्षये ।
 दीनातुरा^५ 'ऽऽर्तपुरुषा^६ प्रम्लानोपवनद्रुमा ॥ १७ ॥
 परिदेवितार्तकरुणा^७ रुदितम्बननादिता ।
 निरुन्साहा निरानन्दा निर्वषट्कारमङ्गला^८ ॥ १८ ॥

१ कै, ल—निष्कृजमिव । २ ब—स्तंभितान्येष । ३ कै, ब, ल—अश्रु० ।
 म—आश्रु० । ४ ल—निगीक्षन्तमुपाग० । ५ कै—दीनार्तरासपुरुषा ।
 म—दीनातुगंत० । ब—दीनातुरासु० । ल—दीनातरातु० । ६ कै—
 परिदेविसांतकरुणा । म—परिदेविसांत० । ब—परिदेविसांतरुणा । ७ कै—
 ८ निर्विषंकारमंगला । म, ल—निर्वषंकार० ।

रामप्रव्रजनातेयं^९ पुरी ते न विराजते ।
 इत्येवमादि करुणं सुमन्त्रवचनं ततः ॥ १९ ॥
 श्रुत्वोवाच नृपो दीनो बाष्पगद्गदया गिरा ।
 मिथ्योपचारात् कैकेय्या वञ्चितेन कथं मया ॥ २० ॥
 न मन्त्रितं विमूढेन धर्मज्ञैर्गुरुभिः सह ।
 केनाहं मोहितः पापो यन्मया सह मन्त्रिमिः ॥ २१ ॥
 असंमन्त्र्य विमूढेन सहसा साहसं कृतम् ।
 भवितव्यं तथा तेन रामेणामिततेजसा ॥ २२ ॥
 मया तु तावदशिवं प्राप्तं तद्विप्रवासनात् ।
 इदानीमपि ह्यत त्वं गत्वा रामं निवर्तय ॥ २३ ॥
 नाहं शक्तो विना रामं जीवितुं देवमोहितः ।
 गतागतेन वा कालो दीर्घ एव भविष्यति ॥ २४ ॥
 मामेव रथमारोप्य क्षिप्रं रामं प्रदर्शय ।
 सिंहस्कन्धो महाबाहुः कासौ लक्ष्मणपूर्वजः ॥ २५ ॥
 यदि जीवामि साध्वेनं पश्येयं सह मीतया ।
 पूर्णेन्दुकान्तवदनं चारुपद्मदलेक्षणम् ॥ २६ ॥
 यदि रामं न पश्यामि यास्यामि यमसादनम् ।
 सुमन्त्र यदि ते किञ्चिन्मया पूर्वं कृतं प्रियम् ॥ २७ ॥
 तदा प्रापय मां रामं प्राणा हि त्वरयन्ति माम् ।
 रामप्रवाससलिले बाष्पशोकोर्मिमालिनि ॥ २८ ॥
 अगाधव्यसने^{१०} मग्नो घोरेऽहं शोकसागरे ।

इष्टपुत्रवियोगार्तिदुःखितेन गतायुषा ॥ २९ ॥

मयाऽयं जीवता स्रुत दुस्तरः शोकसागरः ।

हा राम रामानुज हा हा वैदेहि पतिव्रते ॥ ३० ॥

न मां जानीत दुःखार्ति म्रियमाणमनाथवत् ।

कोन्वस्ति दुःखिततरो मया दुष्कृतकर्मणा ॥ ३१ ॥

योऽहमन्तर्गतप्राणो नैव द्रक्ष्यामि राघवम् ।

इति स्म^{११} गजा करुण महायशा विलाप्य दुःखोपहतेन चेतसा ।

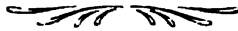
गतामुकल्पः महमैव मूर्च्छितः पपात भूयोऽपि नृपासनात् तदा ॥ ३२

इति विलपति पार्थिवे विमूढे भृशकरुणं पतिते पुनर्धरण्याम् ।

अतिभृशमतिशोकदुःखमभा करुणतरं विललाप गममाता ॥ ३३ ॥

इत्यार्षे रामायणेऽष्टाध्याकाण्डे दशरथविलापो नाम

त्रिषष्टितमः सर्गः ॥ ६३ ॥



[वं-६०]=[चतुष्पष्टितमः सर्गः]=[दा-६०]

सा तु भूतोपसृष्टेव गतसञ्चव चासुखा ।

विललापातुरा देवी कौशल्या पतिता क्षिता ॥ १ ॥

नय मामपि तत्राशु यत्र रामः सलक्ष्मणः ।

सुमन्त्र नहि रामेण विना जीवितुमुत्सहे ॥ २ ॥

तद्योजय रथं साधु नय मामपि काननम् ।

अथ मां न नयस्याशु गमिष्यामि यमक्षयम् ॥ ३ ॥

वाष्पोपरुद्धया वाचा पुरस्तात् सज्जमानया ।

वाक्यमाश्वासयन् देवीं हतः प्राञ्जलिरब्रवीत् ॥ ४ ॥

त्यक्तुमर्हसि कल्याणि शोकं पुत्रवियोगजम् ।

तत्रापि स सुखी रामो रंस्यते देवि निर्बृतः ॥ ५ ॥

लक्ष्मणो ह्यस्य तेजस्वी पादौ परिचरन् वने ।

वससीतः परं लोकमर्जयन् धर्मनिर्जितम् ॥ ६ ॥

विजनेऽपि वने मीता भर्तुर्बाहुव्यपाभया ।

देवि स्वर्गोपमे स्थाने सह रामेण बत्स्यति ॥ ७ ॥

नास्या दैन्यं विषादं वा सुखलक्ष्मणमपि लक्षये ।

वने यथोचितो वासो वैदेह्याः प्रतिभाति मे ॥ ८ ॥

नगरोपवने रम्ये यथाऽरमत सा पुरा ।

विजनेऽपि तथाऽरम्ये रंस्यते देवि मा शुचः ॥ ९ ॥

वैदेही सह रामेण पूर्णचन्द्रनिमानना ।

अतुलां विन्दते प्रीतिं तां न क्षोचितुमर्हसि ॥ १० ॥

तद्गतं हृदयं तस्यास्तदधानं च जीवितम् ।

अयोध्याऽपि भवेत्तस्या रामेण रहिताऽटवी ॥ ११ ॥
 पथि पृच्छति वंदेही ग्रामांश्च नगराणि च ।
 रामं कमलपत्राक्षं मरामि मरितस्तथा ॥ १२ ॥
 गमलक्ष्मणयोर्मध्ये मीता राजति ते स्तुषा ।
 त्रिष्णुवामवयोर्मध्ये यथा श्रीरिवरूपिणी ॥ १३ ॥
 अध्वनि श्रममन्तापदुःखैरप्यातपेन च ।
 अध्वनि श्रममन्तापदुःखैरप्यातपेन च ।
 न विमुञ्चति^१ वंदेही चन्द्रांशुमदृशीं प्रभाम् ॥ १४ ॥
 मदृशं शतपत्रस्य पूर्णचन्द्रममद्यति ।
 वदनं कृत्स्नमार्तायाः मीताया न विलुप्यते ॥ १५ ॥
 प्रकृत्या ऽलक्तकप्रख्यां लाक्षाग्मममप्रभौ ।
 तथैव रेजतुस्तस्याश्चरणां यन्नवर्चभौ ॥ १६ ॥
 इदानीमपि वंदेही तत्र मन्न्यस्तभूषणा ।
 मुरूपशोभया हीना शोभते ऽप्यधिकं वने ॥ १७ ॥
 इदानीमपि वंदेही बालैरनुगता मृगैः ।
 नृपुगमुक्तचरणा खलं गच्छति जानकी ॥ १८ ॥
 गुप्ता पुरुषमिहेन मिहेनेव गिरेर्गुहा ।
 दुष्प्रघर्षा दुष्प्रधर्षं सर्वेषां वनचारिणां ॥ १९ ॥
 मिहं वने गजं वाऽपि व्याघ्रं वा प्रेक्ष्य जानकी ।
 न त्राममेति गच्छन्ती वने भर्तृव्यपाश्रया ॥ २० ॥
 तथैव रामः पुत्रस्ते लक्ष्मणश्चैव वीर्यवान् ।

उदारवपुषो वीरो न म्लानिमधिगच्छतः ॥ २१ ॥

परस्परप्रियहितं कुर्वाणौ प्रियवादिनौ ।

न पितुर्नैव मातुश्च नान्यस्य स्मरतो वने ॥ २२ ॥

न ते शोच्यास्त्वया देवि परस्परहिते रताः ।

इदं हि चरितं तेषां ख्यातिं लोकेषु यास्यति ॥ २३ ॥

विहाय शोकं परिगृह्य मानसं महर्षिकल्पस्तपसि व्यवस्थितः ।

वने रतो मूलफलाशनः स ते सुतो महात्मा कुरुते महत्तपः ॥२४॥

तथा सुमन्त्रेण हितार्थवादिना निवार्यमाणाऽपि सती सुतप्रिया ।

न विप्रलापाद्विरराम दुःखिता नरेन्द्रपत्नी प्रियपुत्रलालसा ॥२५॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं

नाम चतुष्वाष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

[बं-६१]=[पञ्चषष्टितमः सर्गः]=[दा-६१]
 प्रत्याश्वस्तं तु राजानमुत्थाय भृशदुःखितम् ।
 कौशल्या ऽऽवासयामास शयने शोकविह्वलम्^१ ॥ १ ॥
 अभ्रूणि मार्जयन्ती च विलपन्ती च दुःखिता ।
 भूयः प्रत्यागतप्राणमिदं वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥
 यदिदं त्रिषु लोकेषु प्रथितं ते महद्यशः ।
 पुत्रप्रव्राजनात्तत्ते प्रणष्टमिव लक्षये ॥ ३ ॥
 को हि नाम प्रियं पुत्रं त्यजेदनपकारिणम् ।
 प्रतिभ्रुत्य सतां मध्ये यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ४ ॥
 यदि चावश्यदातव्यः प्रियार्यं ते वरः प्रभो ।
 किमर्थं ते प्रतिज्ञातं रामस्याऽप्यभिषेचनम् ॥ ५ ॥^(१)
 अनृताद्यदि वा भीतः प्रव्राजयसि वा वनम् ।
 प्रतिज्ञायाभिषेक्ता ऽस्मि इवस्त्वामित्यभिमन्त्रितम् ॥ ६ ॥
 स्त्रीहेतोः प्रथमं दत्त्वा विप्रलब्धस्त्वया सुतः ।
 पश्योभयं विचार्येतत्तथाप्यनृतवागसि ७ ॥
 इत्त्वाकृणामयं वंशः सत्यवाक् प्रथितः क्षिता ।
 तत्र त्वया यौवराज्यं प्रतिज्ञायानृतं कृतम् ॥ ८ ॥
 श्लोकध्यायं महाराज पौराणः प्रथितः क्षिता ।
 सत्यं पुरा तुलयता स्वयं गीतः स्वयंभुवा ॥ ९ ॥
 अरुषमेघसहस्रं च सत्यं च तुल्या धृतम् ।
 अश्वमेघसहस्राद्धि सत्यमेवातिरिच्यते ॥ १० ॥

जीवितेनाप्यतः सत्यं भुवि रक्षन्ति साधवः ।
 न हि मत्यात्परो धर्मस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ ११ ॥
 मत्यात्ममभवत्सोमः सोमाद् ब्रह्म ततोऽमृतम् ।
 अद्भ्योऽग्निग्नेः पृथिवी भुमेर्भूतानि जज्ञिरे ॥ १२ ॥
 भृतेभ्यश्च विसर्गोऽयं पुनरावर्तकः स्मृतः ।
 एवमेष विसर्गश्च सत्ये देव प्रतिष्ठितः ॥ १३ ॥
 मत्येनार्कः प्रतपति मत्येनाप्यायते शशी ।
 मत्येनामृतमुद्भूतं सत्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ १४ ॥
 वृषश्चतुष्पाद् भगवान् धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः ।
 घौरन्तरिक्षं पृथिवी मत्येनैव श्रियन्त्युत ॥ १५ ॥
 मत्येनैकेन यांल्लोकान् यान्ति मत्यव्रता नराः ।
 न यान्ति ताननृतिका इष्टा ऋतुशतैरपि ॥^(१) १६ ॥
 मत्यप्रतिज्ञा नृपते गजानः मत्यवादिनः ।^(१)
 पथिभिस्नेऽत्र गन्तव्यं गता येस्ते पितामहाः ॥ १७ ॥
 द्वावेव कथितौ मद्भिः पन्थानौ वदतां वर ।
 अहिंमा चैव मत्यं च यत्र धर्मः प्रतिष्ठितः ॥ १८ ॥
 तदिदं रक्षितं मद्भिः मत्यमुत्सादितं त्वया ।
 धर्मं चैनं समास्थाय त्वयैवोन्मथितं यशः ॥ १९ ॥
 वाति गन्धः सुमनसां प्रतिवातं कथञ्चन ।
 धर्मयुक्तमनुष्याणां वाति गन्धः समन्ततः ॥ २० ॥
 चन्दनानां महाऽर्हाणामगुरूणां तथा प्रभो ।

नावस्थार्या^२ चिरं गन्धो यथा कीर्तिमयो नृणाम् ॥२१॥
 स तवायं गुणहरो गन्धो लोके चरिष्यति ।
 अशुभस्यास्य महतः कर्मणः शाश्वतीः समाः ॥ २२ ॥
 इह मन्ये सुमहती भ्रूणहत्या त्वया कृता ।
 प्रियार्यं वसुधा दत्ता रामः प्रव्राजितो वनम् ॥ २३ ॥
 दिष्ट्या न याचितं त्वेतद्रामोऽयं बध्यतामिति ।
 नत्वेतदपि कैकेय्या दुर्लभं त्वयि राजनि ॥ २४ ॥
 न सद्भुतमिदं लोके यद्बद्ध्वा बलवत्तरः ।
 ईश्वरैर्दुर्बलः कृष्यः क्रतौ पशुरिवाबलः ॥ २५ ॥
 धृष्यन्ते^३ हि नरा लोके दुर्बला बलवत्तरः ।
 आक्रम्यमाणा विजने सिंहैरिव महाद्विपाः ॥ २६ ॥
 म मे सुतः सुशक्तो ऽपि धर्मं प्रति तु दुर्बलः ।
 अतः सकामानुत्सृज्य मां च त्यक्त्वा वनं गतः ॥ २७ ॥
 किं नु मे त्वामुपालभ्य राजन् परुषया गिरा ।
 परस्य कृत्वा किं मन्युमात्मभाग्येष्वसाधुषु ॥ २८ ॥
 अनुनीना ऽस्मि रामेण गच्छता बहुविस् रम् ।
 न मे वाच्यः पिता किञ्चिद्भवत्येति पुनः पुनः ॥ २९ ॥
 न मदर्थं त्वया वाच्यो रूक्षं मातः पिता मम ।
 वाग्भिरुद्वेजनीयाभिरिति मां राघवोऽन्वशात् ॥ ३० ॥
 साऽहं तेनानुशिष्टा ऽपि पुत्रस्नेहबलात्कृता ।
 अबशा त्वां ब्रवीम्येतन्मया शोकमहाऽर्णवे ॥ ३१ ॥

का हि नाम्नाप्रियं ब्रवाद् मर्तारमिह मद्धिवा ।

स्मरन्ती सत्कुले जन्म विनय चापि जानती ॥ ३२ ॥

#लोके हि पुरुषः स्त्री वा तथा तत् कुले स्ववम् ।

#यथा मधुरमुग्रं वा मृणोति लभतेऽपि वा ॥ ३३ ॥

नूनं हि मम भाग्यानां वैश्वल्पाद् राषवस्य च ।

अचिन्त्यत्वाच्च दैवस्य त्वमेतत् कृतवाञ्छप ॥ ३४ ॥

न खल्वहं त्वा नृप दोषतो ब्रवीम्यनीश्वरं हीश्वरदैशिकं जगत् ।

दशा कृतानोपहतेयमाविला किमत्र शक्यं पुरुषेण चेष्टितुम् ॥३५॥

अतो नियोगात् तव सत्यवादी सत्यां प्रतिज्ञां नृप पालयंस्ते ।

इतो महात्मा वनमेव रामो गतः सुखान्यप्रतिमानि हित्वा ॥३६॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्योपालम्भो

नाम पञ्चषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

[वं-६२]=[षट्षष्टितमः सर्गः]=[दा-६१]
 तथा तु बहु कौशल्या विलप्य क्रोधमूर्च्छिता^१ ।
 अनिकृष्यैव रोषस्य पुनरेवाभ्यभाषत ॥ १ ॥
 त्वया यस्त्वनियुक्तोऽपि भक्त्या राममनुव्रतः ।
 लक्ष्मणोऽनुगतः प्रेम्णा तं शोचामि विशेषतः ॥ २ ॥
 यो ऽभिषेके प्रतिहते मम पुत्रस्य धीमतः ।
 निःसृतो धनुरादाय तूर्णमश्रुतविस्तरः ॥ ३ ॥
 क्रोधेन महता ऽऽविष्टो रामराज्यापहारणम् ।
 न स जानाति धर्मात्मा स्वगृहादभिमुत्थितम् ॥ ४ ॥
 गृहीतचीरं यो दृष्ट्वा राघवं प्रियराघवः ।
 पूर्वमेव सचीरो ऽभूत्तस्य शोचामि धीमतः ॥ ५ ॥
 क्रियमाणं नरेन्द्रेण मम निर्विषयं सुतम् ।
 योऽनुयातः स्वयं भक्त्या भ्रातरं भ्रातृवत्सलः ॥ ६ ॥
 लक्ष्मणं तमहं रामाच्छोचाम्यद्य विशेषतः ।
 राज्ञो महेन्द्रकल्पस्य जनकस्य महात्मनः ॥ ७ ॥
 सुतां तामनवद्याङ्गीं वंदेहीं चिन्तयाम्यहम् ।
 अत्यन्तसुखसंवृद्धा लालिता^२ पितृवेश्मनि ॥ ८ ॥
 अत्यन्तसुकुमाराङ्गी श्यामा पद्मदलेक्षणा ।
 या सुखानि परित्यज्य सर्वांश्च ज्ञातिबान्धवान् ॥ ९ ॥
 पतिं याऽनुसृता यान्तं किमवस्थाऽद्य सा सती ।
 कथं सा सुतनुः साध्वी सुकुमारी सुखोषिता ।

१ कै, ष, छ - बहु० । २ कै, ष, छ - छाडिता ।

शीतमुष्णं च वर्षं च वैदेही प्रसाहिष्यति ॥ १० ॥
 या भ्राम्यति गृहेऽप्यम्भिधरन्ती वसुधातले ।
 कथं सा विजनेऽरण्ये वैदेही प्रचलिष्यति^३ ॥ ११ ॥
 भुक्त्वा स्वादूनि भोज्यानि ह्यन्नानि जनकान्मजा ।
 कथं वन्यान्वभोज्यानि कटुतिक्तानि भोच्यते ॥ १२ ॥
 शयनानि महार्हाणि पुरा संसेव्य मैथिली ।
 कथं पर्णावृतां भूमिमधिवत्स्यति मे स्नुषा ॥ १३ ॥
 बेषुवीणास्वनैः सुप्ता लालिता या विबोध्यते ।
 तन्वङ्गी सा कथं घोरैर्बहुपक्षिमृगारुतैः^४ ॥ १४ ॥
 पुरा मुख्यानि वस्त्राणि परिधाय यश्चम्बिनी ।
 कथं सा कुशचीराणि गात्रैः संधारयिष्यति ॥ १५ ॥
 सुललाटं सुकेशान्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।
 सुदतं सुहनुस् क्लृप्तं पूर्णचन्द्रसमप्रभम् ॥ १६ ॥
 धूयमानं वने वार्तं निपीतं चार्करश्मिभिः ।
 कथं तच्चारु वदनं तस्या वैवर्ण्यमेप्यति ॥ १७ ॥
 देवराजप्रतीकाशो यश्चस्त्री पुरुषर्षभः ।
 ध्वजो नृपकुलस्यास्य किमवस्यः स संप्रति ॥ १८ ॥
 नूनं स्वपिति मेदिन्यां महार्हशयनोचितः ।
 भुजं परिषसङ्गाशमुपधाय महाभुजः ॥ १९ ॥
 चारुघोणं विशालाक्षं पूर्णचन्द्रसमद्यति ।
 कदा द्रक्ष्यामि रामस्य मुखं पद्मदलेक्षणम् ॥ २० ॥

३ म, ल—विचरिष्यति । ४ ब—०मृगाकृतैः ।

धात्रा मे हृदयं नूनमश्मसारमयं कृतम् ।
 हीनं यद्रामचन्द्रेण न विदीर्णं सहस्रधा ॥ २१ ॥
 एतत् ते कृपणं कर्म कृतं लोकविगर्हितम्^५ ।
 निरस्ताः परिधावन्ति त्रयस्ते यन्महावने ॥ २२ ॥
 यदि पञ्चदशे वर्षे न रामः पुनरेष्यति ।
 ततस्त्यक्त्याभ्यहं प्राणान् न कार्यं जीवितेन मे ॥ २३ ॥
 सर्वथा ह्यागतो रामः प्रवासात्पुल्लवर्षभः ।
 न स तां श्रियमन्विच्छेदीयमानामपि स्वयम् ॥ २४ ॥
 भरतेनोपमुक्तां हि पृथिव्यां विपुलां श्रियम् ।
 नोपभोक्ष्यति धर्मज्ञः परमुक्तामिव स्रजम् ॥ २५ ॥
 न हि सिंहः परालीढमामिषं भोक्तुमर्हति ।
 नृसिंहो भरतालीढं रामो राज्यं न भोक्ष्यते ॥ २६ ॥
 आज्यं तिलाः समिधैव कुशा धूपाः^६ स्रुचस्तथा ।
 नैतानि यातयामानि कल्पन्ते^७ पुनरध्वरे ॥ २७ ॥
 अतो राज्यमिदं पश्चात् ततो भ्रातु र्यवीयसः ।
 नाभिपत्तमलं रामः पीतसोममिवाध्वरे ॥ २८ ॥
 न चेमां धर्षणां रामो ह्यसहिष्यदमर्षणः ।
 नाधारयिष्यद्यदि ते गौरवं मन्दरोपमम् ॥ २९ ॥
 श्वितैः शरैः स हि क्रुद्धो दारयेदपि मन्दरम् ।
 त्वां तु नोत्सहते वक्तुं धर्मात्मा पितृगौरवात् ॥ ३० ॥

ससोमार्कग्रहगणं नभस्ताराविचित्रितम् ।
 पातयेद्यो भुवि क्रुद्धः स त्वां न व्यतिवर्त्तते ॥ ३१ ॥
 आचालयेद्दारयेद्वा महीं शैलशताचिताम् ।
 यन्तेजस्वी स ते पुत्रो गौरवात्प्रतिवर्त्तते ॥ ३२ ॥
 एवंवीर्यो महासत्त्वस्त्वयां ख्यातपराक्रमः ।
 जनयित्वाऽऽत्मना त्यक्तो जलजेनात्मजो यथा ॥ ३३ ॥
 अनेन ते ऽतिक्रमेण मन्ये ऽहं पृथिवीपते ।
 त्वत्तः श्रियमतिक्रान्तां कीर्तिं पापान्तरादिव^८ ॥ ३४ ॥
 द्विजातिभिरयं धर्मः शास्त्रदृष्टः सनातनः ।
 गुरोर्दुष्टान्महाराज गौरवं विनिवर्त्तते ॥ ३५ ॥
 गुरुर्दुष्टः परित्याज्यस्तथा माता तथा पिता ।
 यो ह्यनर्थाय कल्पेत स तु शत्रुर्न बान्धवः ॥ ३६ ॥
 न त्वेवं भविता रोषस्त्वयि रामस्य राषव ।
 त्वया यदि कृतं पापं न स धर्माच्चलिष्यति ॥ ३७ ॥
 एवमुक्त्वा तु कौशल्या बिलपन्ती यशस्विनी ।
 ततो हेत्वर्थसंयुक्तं पुनरेवाब्रवीद्वचः ॥ ३८ ॥
 प्रथमा गतिरात्मैव द्वितीया गतिरात्मजः ।
 सन्तो गतिस्त्वृतीयोक्ता चतुर्थी धर्मसञ्चयः ॥ ३९ ॥
 अतस्तुभ्यः परिभ्रष्टो गतिभ्यस्त्वं नराधिप ।
 बने परित्यजन् रामं साधुं सुतमकारणम् ॥ ४० ॥
 न हि रामं परित्यज्य चिरं शक्तोऽसि जीवितुम् ।

मद्धर्मोपाजिताल्लोकात् कैकेय्यर्थे परिच्युतः ॥ ४१ ॥

मत्स्यं कीर्तिं च मां चैव त्यक्त्वा रामं मुतं च मे ।

प्राणास्त्यक्ष्यसि दुःखार्त्तः सर्वथा ऽस्मि हता त्वया ॥ ४२ ॥

हता त्वयंयं नगरी सराष्ट्रा कीर्त्तिंश्च धर्मश्च तथैव चात्मा ।

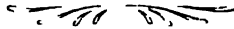
अहं सपुत्रा नृपनागराश्च सर्वे हताः कैकयिराज्यदानात् ॥४३॥

एता गिरो निष्दुरदारुणाक्षराः श्रुत्वाऽथ' गजा सुतशोकदुःखितः ।

विनिःश्रमंश्चापि निमीलितेक्षणः शुशोच रामं हतमन्वचेतनः ॥४४॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याप्रलापो

नाम षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥



[बं-६३]-[सप्तषष्टितमः सर्गः]-[दा-६२]

कौशल्याचैवं नृपतिं बार्कशरैरभिपीडितः^१ ।

१] मुमोह शब्देन शुभ्रे दुःखेनामीलितेक्षणः ॥ १ ॥ [N

प्रतिलम्ब्य ततः संज्ञां समुन्मील्य च लोचने ।

२] परिपार्श्वस्थितां दृष्ट्वा कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ [३

३] नार्हस्युरसि मे क्षारं निषेक्तुं सुतवत्सले । [N

पुत्रशोकार्तमनसो हृदयं मे विदीर्यते ।

४] असह्यान्यकृतप्रज्ञे^२ वाग्वज्राणि विमुञ्चसि ॥ ३ ॥ [N

ननु भक्तैव साध्वीनां गुणवाग्भिर्गुणोऽपि वा ।

५] दीर्घतं च गतिश्चेति महापूज्यतमो मतः ॥ ४ ॥ [८

क्षमस्वातिक्रमं देवि भृशार्त्तस्त्वां प्रसादये ।

६] हन्तुमर्हसि वै भूयो देवेन निहतं न माम् ॥ ५ ॥ [N

जाने त्वां देवि धर्मज्ञां दृष्टलोकपरावराम् ।

७] अतो नार्हसि मे भूयो वक्तुमेतादृशं वचः ॥ ६ ॥ [९

इति राज्ञोऽतिकरुणं श्रुत्वा दीनस्य भाषितम् । [१०पू

८] पुत्रशोकं परित्यज्य कौशल्या पतिवत्सला ॥ ७ ॥ [N

शिरस्यञ्जलिमाधाय^३ भृशं संभ्रान्तमानसा । [११पू

९] शिरसा नृपतेः पादौ प्रणिपत्येदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [N

अतिक्रमं मे नृपते त्वमिमं क्षन्तुमर्हसि ।

१ कै, ब, म—बाक्छरै० । छ—बाकरै० । २ कै, ब, छ—०शकृत-
प्रहरै । म—०न्याहुते प्राहरै । ३ ब, म—०मादाय ।

- १०] अवाच्यं हि मयोक्तोऽसि पुत्रशोकविमूढया ॥ ६ ॥ [N
देवभूतेन भर्त्रा वा क्षमितं (तुं?) न प्रपद्यते ।
- ११] कृताञ्जलि मृशार्तेन हता सेह परत्र च ॥ १० ॥ [N
क्षमस्व राजस्यार्ताया व्यतिक्रममिमं प्रभो ।
- १२] प्रभुर्भवेत्क्षरश्चासि मम रामस्य चोभयोः ॥ ११ ॥ [N
जानामि धर्मं धर्मज्ञ जाने त्वां सत्यवादिनम् ।
- १३] पुत्रशोकार्चयेदं तु मया किमपि भषितम् ॥ १२ ॥ [१४
शोको नाशयते प्रज्ञां शोको नाशयते श्रुतम् ।
- १४] शोको घृतिं नाशयति नास्ति शोकसमं तमः ॥ १३ ॥ [१५
सोढुं शक्योऽग्निसंस्पर्शः शस्त्रस्पर्शश्च दारुणः ।
- १५] न तु शोकमवं दुःखं संसोढुं नृप शक्यते ॥ १४ ॥ [१६
सर्वज्ञा घृतिमन्तोऽपि छिन्नधर्मार्थसंश्रयाः ।
- १६] मृनयोऽप्यत्र मुह्यन्ति शोकोपहतचेतसः ॥ १५ ॥
पञ्चषाणि गतान्यद्य दिवसानि सुतस्य मे ।
- १७] तानि वर्षशतानीव दुःखार्ताया गतानि मे ॥ १६ ॥ [१७
तद्गतासक्तचिन्तायाः शोकैषो मे प्रवर्धते ।
- १८] जलौषत्रेणो गङ्गाया महानिव तपात्यये ॥ १७ ॥ [१८
एष शोकमहाशत्रुः सुबद्धानपि मानवान् ।
- N] प्रसन्न हरते वृक्षाच्चदीरय इवोल्बणः^४ ॥ १८ ॥ [N
एवं संभाषमाणायास्तस्याः सुकरुणं वचः ।

अथोष्ण-काण्डे ६७ । २० ॥

३७५

१९] कौशल्यायाः जयामालं सखिला दिवसवधे ॥ १९ ॥ [१९

एवं प्रह्लादितो वासुदेवैर्भ्यैः^५ कौशल्यायाः कृपः ।

२०] लोकभ्रमपरिम्लानः शनैर्निद्रावशं वयौ ॥ २० ॥ [२०

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे वृशरथप्रसाधनं नाम

सप्तषष्ठितमः सर्गः ॥ ६७ ॥

—५४७६७७—

- [३-६४] अष्टमष्टिमात्रः सर्गः [३-६४]
 एवं तु विरुचन्तीं तां कौशल्यां प्रमदोत्तवाय ।
 १] इदं धैर्यान्मितं वाक्यं सुमित्रा धर्ममग्रवीत् ॥ १ ॥
 दिव्यैर्युग्मवर्णैर्युक्तः पुत्रस्ते देवि राघवः ।
 २] पितुर्नियोगे तिष्ठन्तं न तं शोचितुमर्हसि ॥ २ ॥
 नादेवसत्त्वा नाप्रज्ञाः पुरुषा नाल्पदर्शनाः ।
 ३] पितुर्नियोगे तिष्ठन्ति न चाकल्याणमागिनः ॥ ३ ॥
 यत् तवार्ये गतः पुत्रो हित्वा राज्यं सुखानि च ।
 ४] प्राप्तव्यं तेन सुमहत् कल्याणमिति मे मतिः ॥ ४ ॥
 सङ्गिराचरिते धर्म्ये यशस्ये वर्त्मनि स्थितम् ।
 ५] पुत्रं धर्ममृतां श्रेष्ठं न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ ५ ॥
 अस्मानुवर्तते वृत्तं लक्ष्मणो यो ममात्मजः ।
 ६] तमप्यतो नार्हसि त्वं शोचितुं भ्रातृवत्सलम् ॥ ६ ॥
 अरण्यवासदुःखानि जानन्त्यपि च जानकी ।
 ७] सुखसंबर्षिता त्यज्वा गृहवाससुखानि च ॥ ७ ॥
 अनुगच्छति भर्तारं या सा धर्मपरायणा ।
 ८] तां बभ्रुमाजनां धन्यां नैव शोचितुमर्हसि ॥ ८ ॥
 बभ्रुःपताकां विपुलां त्रिषु लोकेषु विभ्रताम् ।
 ९] तद्वन्वते न ते पुत्रस्तं न शोचितुमर्हसि ॥ ९ ॥
 रामस्य विपुलं सत्त्वं विज्ञायोदारचेतसः ।
 १०] न गात्राप्यंशुभिः ध्रुवैः सन्तापयितुमर्हसि ॥ १० ॥

- आदान् सुरमीन् गन्धान् बनेभ्यः ससुखीजनिलः ।
 ११] पुत्रं ते नातिष्ठीतोष्णः संसेविष्यति कानने ॥ ११ ॥
 भूमावपि श्वानं तं वैदेद्या सह राषवम् ।
 १२] पितेवांशुकरैः स्पृष्ट्वा ह्लादयिष्यति चन्द्रमाः ॥ १२ ॥
 अस्त्राणि यस्मै दिव्यानि विश्वामित्रो ददौ स्वयम् ।
 १३] तं त्वं सर्वास्त्रविद्वांसं कथं शोचिषुमर्हसि ॥ १३ ॥
 कीर्त्या भिया भार्यया च नित्यं स तिसृभिर्दुतः^६ ।
 १४] धृतिमांश्च महासत्त्वः स रामो राज्यमर्हति ॥ १४ ॥
 बान्यद्य पुत्रशोकार्त्ता कौशल्येऽश्रुणि मृशसि ।
 १५] आनन्दजानि तानि त्वं रामे मोक्ष्यस्युपस्थिते^७ ॥ १५ ॥
 पुत्रस्ते यज्ञसा लोकान् व्याप्य धर्मभृतां वरः ।
 १६] चतुर्दशानां वर्षाणामन्ते मोक्ष्यति वेदिनीम् ॥ १६ ॥
 कुशचीराम्बरमपि यं भान्तं नरकुञ्जरम् ।
 १७] श्रीरिबानुगता सीता तस्य किं नाम दुर्लभम् ॥ १७ ॥
 तव पुत्रो वरः पुंसां वनवासादुपागतः ।
 १८] वृथायतश्चजः पादौ संस्पृशन् ह्लादयिष्यति ॥ १८ ॥
 तं पादौ वन्दमानं तु दृष्ट्वा राजीवलोचनम् ।
 १९] भेषराजीव शैलेन्द्रं वर्षस्यानन्दजाश्रुभिः ॥ १९ ॥
 निशम्य तल्लक्ष्मणमातृवाक्यं रामस्य मातुर्नरदेवप्रत्न्याः ।
 धनैः स शोकः प्रथमं जयाम वृष्ट्या वन्नाऽपिः परिप्रिच्यमानः ॥२०॥
 इत्यार्षे राज्ञायणे ऽप्योष्याकाण्डे सुमित्रावाक्यं
 गर्भिं अष्टपङ्क्तिमः सर्गः ॥ ६८ ॥

- [वं-६५]-[एकोनसप्ततितमः सर्गः]-[दा-६३]
 रामे मनुजधर्मले^१ सानुजे वनमाभिते । [N]
 १] राजा दशरथः श्रीमानापदं सन्नपद्यत ॥ १ ॥ [१५
 रामलक्ष्मणयोरेवं विवासाद् वासवोपमः ।
 २] जग्राहोपप्लवगतः तमः सूर्य इवाञ्जुमान् ॥ २ ॥ [२
 स षष्ठे दिवसे रामं शोचमेव महाबशाः ।
 ३] अर्धरात्रे अबुद्धः सन् ससाराथ स्वदुष्कृतम् ॥ ३ ॥ ४
 स्मृत्वा च देवीं कौशल्यामभिभाष्येदमब्रवीत् । [५
 ४] यदि जागर्षि कौशल्ये शृणु मेऽवहिता वचः ॥ ४ ॥ [N
 यदाचरति कल्याणि^२ नरः कर्म शुभाशुभम् ।
 ५] सोऽवश्यं फलमाप्नोति तस्य कालक्रमागतम् ॥ ५ ॥ [६
 गुरुलाषवमर्षानामार्भे क्षवितर्कयन् ।
 ६] दोषतो गुणतश्चैव बाल इत्युच्यते पुत्रैः ॥ ६ ॥ [७
 तद्यथाऽऽब्रवनं छिन्वा^३ पलाशवनमाभयेत् ।
 ७] पुष्यं छिन्वा^४ फलं प्रेष्यु निर्राशः स्यात् फलागमे ॥ ७ ॥ [८
 सौऽहमाब्रवनं छिन्वा^५ पलाशवनमाभितः^० ।
 ८] बुद्धिमोहात् परित्यज्य रामं शोचामि दुर्मतिः ॥०८ ॥ [१०
 तच्च लक्ष्णेण कौशल्ये^० तरुणेन घनुष्मता ।^०
 ९] कौमारे^० शब्दवेधित्वा^० त्सहसा दुष्कृतं कृतम् ॥९॥ [११
 ॥ तदिदं मामनुभूतं फलं पापस्य कर्मणः ।

१ क-०गार्हका । २ म-कर्मणि । ३ म-दिल्लम् । ४ म-गता* ।

५ म-मिता (एवा ?) ० के । ६ च, छ, म-कौशल्ये ।

- १०] मधितस्य विषस्त्रेव विषके वीषितान्तकम् ॥ १० ॥ [१२
अविज्ञानाद्यथा कश्चित्पुरुषो मधवेद्विषम् ।
- ११] तथा मयाऽप्यविज्ञानात् पापं कर्म पुरा कृतम् ॥ ११॥ [१३
कौश्ल्ये^७ त्वय्यनूढायां युवराजो मयाम्यहम् ।
- १२] अथ प्रावृढनुप्राप्ता मनःसंहर्षणी मम ॥ १२ ॥ [१४
पृ१३] आदाय हि रसं भौमं विवस्वांश्चण्डरोचिषा ।
- N] अगस्त्यचरितामाशामुपावर्तत मानुमान् ॥ १३ ॥ [१५
आवृष्णाना दिशः सर्वाः स्निग्धा बभूव्हिरे घनाः ।
- १४] मृदा विजहिरे चापि तथा सारङ्गचर्हिणः ॥ १४ ॥ [१६
आकुलाविलतोयानि स्रोतांसि' विजलान्यपि । [१९५
- १५] उन्मार्गजलवाहीनि बभूवुर्जलदागमे ॥ १५ ॥ [N
मेघजेनाम्बुना भूमि भूरिणा परितर्पिता ।
- १६] उन्मत्तशिखिसारङ्गा बभौ हरितशाद्वला ॥ १६ ॥ [N
एतस्मिन्नीदृशे काले वर्तमाने घनागमे ।
- १७] बभूव्वा तूणौ घनुष्याणिः सरयूभगमं नदीम् ॥ १७ ॥ [N
घनुष्यार्थामश्रोलत्वाच्छब्देष्वपि कीर्षया ।
- १८] तस्या नद्यास्तदा तीर्थं विविक्तमपसृत्य च ॥ १८ ॥
निपाने निधिं वन्यानां घृगाणां सलिलमधिनाम् । [२१५
- १९] स्थितस्तप्राहमेकान्ते रात्रौ वित्तवकार्मुकः ॥ १९ ॥ [N
तत्रार्हं महिषं वन्यं यजं वा तीस्मागतम् ।
- २०] अन्त्यं वाऽपि मृतं हन्मि ह्ययं भ्रुत्वाऽम्बुपागतम् ॥२०॥ [२१

अथमहं पूर्णमाणस्व-बलकुंभस्व-निःस्रमम् । ॥

- २१] अचक्षुर्विषयेऽश्रौं वारणस्येव वृंहितम् ॥ २१ ॥ [२२
 वसः सुपुंखं निश्चितं शरं सन्धाय कार्शुके ।
- २२] तस्मिन्^{१०} शब्दे शरं क्षिप्रमसृजं देवमोहितः ॥ २२ ॥ [२३
 शरे चाम्भृणवं तस्मिन् युक्ते निपतिते तदा ।
- २३] हा हतोऽस्मीति करुणां मानुषेणेरितां गिरम् ॥ २३ ॥ [२५
 कथमस्माद्विधे शस्त्रं निपात्यतत् तपस्विनि । [२६पू
- २४] केनायं सुनृशंसेन मयि बाणो निपातितः ॥ २४ ॥ [N
 प्रविविक्तां नदीं रात्राबुदाहारोऽहमागतः । [२६उ
- २५] शृणाऽमिहतः केन कस्येहापकृतं मया ॥ २५ ॥ [२७पू
 श्रुषेः सन्वस्तशस्त्रस्य वने वन्येन जीवतः । [२७उ
- २६] कथं नृशंसं शस्त्रेण मद्विषस्य विधीयते ॥ २६ ॥ [२८पू
 वृद्धस्यान्वस्य दीनस्य बल्कलाजिनवाससः । [२८उ
- २६] केनाहं घातितः पुत्रः कथाप्यर्थोऽस्य मद्विषे ॥२७॥ [२९पू
 इमं निष्फलमारंभं केवलानर्थमंहितम् । [२९उ
- २७] को विद्वान् साधु मन्येत शिष्येणेव गुरोर्वचम् ॥२८॥ [३०पू
 नेमं तथाऽनुशोचामि जीवितक्षयमात्मनः । [३०उ
- २८] मातरं पितरं चान्धौ वृद्धौ शोचामि तौ यथा ॥२९॥ [३१पू
 तदन्धं^{११} मिथुनं^{११} वृद्धं दीर्घकालं भृतं मया । [३१उ
- २९] कथं मयि मृतेऽजायं कृपणं वर्तयिष्यति ॥ ३० ॥ [३२पू
 तौ चाहं चैव कृपणाः केनागम्य दुरात्मना । [३२उ

४१] एष वज्राग्निसंस्पर्शः प्राणाशुषकादिः के ॥ ४२ ॥ [४६५

सशल्यो मरणं गार्हं प्राप्नुयां शूलबुद्धर । [४६३

४२] ने द्विजातिर्हं शङ्कां प्रकृत्याकृतां त्यज ॥ ४३ ॥ [५०

प्राज्ञेन त्वहं जातः शूद्रावां वसता वने ।

४३] इति मामप्रवीद् बालो मच्छरमिहतो भृशम् ॥ ४४ ॥ [५१

जलाद्रंगात्रं विलयन्तमेवं

बाष्पाभिघातार्तमातेवसन्तम् ।

४४] तथा सरयवां तमहं शयानं

दृष्ट्वैव बालं सुसृशं विषण्णः ॥ ४५ ॥ [५३

तस्याथो म्रियतो बाणमुद्वार बलादहम् । [५२३

४५] यत्त्वान् जीवित्ताकांक्षी हुनेस्तत्र विचेतसः ॥ ४६ ॥ [N

शरे तु तस्मिन्पनीतमात्रे

हिकाऽऽकुलभ्यासमुद्दर्शखिचः †

४६] विवेष्टमानः परिवृत्तनेत्रः

प्रत्नानमुद्यत् स हुनेस्तनूजः ॥ ४७ ॥ [N

निघनमुपगते बह्वर्षिपुत्रे

सह यद्यसा सहसैव मं निमात्रम् †

४७] भृशमहममवं निमुहचेता

स्वप्नमकाम्य यतीव संगमत्तः ॥ ४८ ॥ [N

इत्यार्षे रामस्यो ज्योभ्याकापडे कविभूमाद्वयो

स्यम् [एकोनसप्ततितमः] सर्गः ॥ ६९ ॥

[बं-६६]=[सप्ततितमः सर्वः]=[दश-६४]

ततोऽहं धरदुदृत्व वीक्षमाक्षीविशेषमम् ।

१] अगच्छं^१ कुंममादाय पितुरस्याभ्रमं प्रति ॥ १ ॥ [३

ततोऽहं कृपणावन्धौ वृद्धावपरिनायकौ ।

२] अपश्यं जनकौ तस्य लूनपञ्चाविव द्विजौ ॥ २ ॥ [४

तत्कथामिरुपासीनौ व्यथितौ पुत्रलालसौ ।

३] पुत्रं^२ दर्शनमायान्तमाकांक्षन्तौ^३ मया हतम् ॥ ३ ॥ [५

तदज्ञानान्महत्पापं कृत्वाऽहं व्याकुलेन्द्रियः ।

४] आश्रमस्थावभिप्रेत्य तावपश्यं तपस्विनौ ॥ ४ ॥ [N

पदशब्दं तु मे श्रुत्वा मुनिर्मामम्यमापत ।

५] किं ते चिरायितं पुत्र पानीयं क्षिप्रमानय ॥ ५ ॥ [७

यज्ञदत्त चिरं तात पानीये क्रीडितं त्वया ।

६] उत्कण्ठितेयं माता ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ ६ ॥ [८

यदि किञ्चिद् व्यलीकं ते मया मात्राऽपि वा कृतम् ।

७] तत् क्षामये^४ त्वां मा भूयभिरायेथाः कश्चिद्गतः ॥७॥ [९

अगतेर्मे गतिर्यस्त्वं त्वं मे चक्षुरवधुपः ।

८] समासकास्त्वयि प्राणाः कस्मान्मां नाभिमापसे ॥८॥[१०

तं तथा कलनां वाचं^५ ज्वन्तं पुत्रलालसम् ।

९] अहमभ्येत्य धनकैरज्रवं मयविह्वलः ॥ ९ ॥ [११

१ अ-अव(?)का (आकलः ?) । २ कै-पुत्र-। उ-अत्र । ३ कै, म-
•वापंतमा- । ४ कै-क्षामये । ५ कै-कल्याणार्थं । म-कल्याणार्थम् ।

वाप्यसंज्ञेन तस्यैव कृत्वा संस्त्रस्य वाग्मयम् ।

- १०] कृताञ्जलि वेंपमाद्योः शंभुवद्वत्तन्निर्गमम् ॥ १० ॥ - [१२
 क्षत्रियोऽहं दशरथो नाहं पुत्रो मुने तव ।
- ११] सज्जनावमतं घोरे कृत्वा पापमुपागतः ॥ ११ ॥ [१३
 भगवंन्नापहस्तोऽहं सरश्वास्तिरिमागतः ।
- १२] कांचन्' जिषांसुरज्ञातं मृगं तत्राम्युपागतम् ॥ १२ ॥ [१४
 पूर्यथाप्यस्य कुंभस्य तत्र शब्दो मया श्रुतः ।
- १३] तव पुत्रो मयाऽसौ ते निहतो गजशङ्कया ॥ १३ ॥ [१५
 तस्याहं रुदितं श्रुत्वा हृदि भिन्नस्य पत्रिणा ।
- १४] भीत आगत्य तं देखं तमपश्यं तपस्विनम् ॥ १४ ॥ [१६
 भगवन्' शब्दवेधित्वान्वायाऽयं गजशङ्कया ।
- १५] विसृष्टोऽम्मसि नाराजो येन ते निहतः सुतः ॥ १५ ॥ [१६-
 समुद्धृते मया ज्ञाणे प्राणास्त्यक्त्वा दिवं गतः ।
- १६] भवन्को मूचिरं कालं परिशोच्य तपस्त्रितौ ॥ १६ ॥ [१८
 अज्ञानतो मया पुत्रो हस्तो दयितो मुने ।
- १७] शेषमेवं गते तेजो मय्युत्सृष्टुं त्वमर्हसि ॥ १७ ॥ [१९
 स एतद्विसंश्रुत्य मुहूर्त्तमिव मूर्च्छितः ।
- १८] प्रत्याश्वस्यागतमाग्यो मयाप्राज कृताञ्जलिम् ॥ १८ ॥ [२०-२१
 यदि त्वमशुभं कृत्वा न वक्ष्येयाः* स्वयं मम ।
- १९] लोका अपि ततो दग्धाः समस्ताः क्षापवाहिना ॥ १९ ॥ [२२

* न-देवताय । १ के, व, म, क-कोही । ४ के, व, क-कोर्न ।

न-भगवन् १७ म-कृत्वा ।

अग्निं ज्ञानपूर्वकं च दान्मन्त्रकथनः कृतः ।

२०] स्थानात्प्रत्यक्षोद्गाहं प्रकृत्याप्यस्यैः सुखिभ्यः ॥ २० ॥ [२३
सप्तावराहताया पूर्वं ह्यव बंध्या नसायम् ।

२१] पतेयुर्ज्ञानपूर्वं च बन्धं कृतवदो मुनेः ॥ २१ ॥ [२४
हतस्त्वसौ बद्धज्ञानाच्चया तेनाथ जीवसि ।

२२] तस्माद्विफलमप्यथ राघवाणां भवेत् किल ॥ २२ ॥ [२५
नय मां साधु तं देशं यत्रासौ बालकस्त्वज्ज ।

२३] हतो नृशंस बाणेन समान्धस्यैकवष्टिका ॥ २३ ॥ [२६
तमहं पतितं भूमौ स्पन्दुमिच्छामि पुत्रकम् ।

२४] संग्राप्य यदि जीवेयं पुत्रस्यर्शमपस्मिम् ॥ २४ ॥ [२६
रुधिरेषावसिक्ताङ्गं प्रकीर्णाजिनमूर्धजम् ।

२५] समार्यस्तं सृष्ट्याम्यथ धर्मराजबधमसम् ॥ २५ ॥ [२७
अश्राद्देयकस्तं देवं वीत्वा तौ भृशदुःखितौ ।

२६] तमस्मै स्पृश्यामास्त सभार्याय मृतं सुतम् ॥ २६ ॥ [२८
पुत्रमोक्तपुरो दृष्ट्वा तौ पुत्रं पतितं शिशुम् ।

२७] आर्तस्वरं^{१०} शिशुद्वौ तस्यैवोपरि पेतुः ॥ २७ ॥ [२९
माता अस्य मृतस्यापि जिह्वा लिक्ती मुखाद् ।

२८] क्लिष्टाप्रसिद्धं च सौर्विन्दसेव जिह्वा ॥ २८ ॥ [N
नन्वाहं ते यत्कुरुत मागेभ्योऽपि प्रिया विद्वे ।

२९] स कथं दीर्घमप्यतं अस्थितो मां च मासो ॥ २९ ॥ [N
दीर्घमप्यतं तावन्मां प्रयात्पुत्र गमिष्यसि । [N

- ३०] किं वत्स कुपितो मेऽसि चेन मां नामिमापते ॥३०॥ [३०
 'जनन्तरं' विता चास्य गोत्राण्वेतः' परिस्मृष्टम् ।
- ३१] इदमाह प्रियं पुत्रं जीवमानमिवातुरः ॥ ३१ ॥ [N
 ननु तेऽहं पिता पुत्र सह मात्राऽभ्युपागतः ।
- ३२] उचिष्ट तावदेक्षावां कण्ठे गाढं परिष्वज ॥ ३२ ॥ [N
 कस्व चापरात्रेऽहं स्वाध्यायं कुर्वतो वने ।
- ३३] भोष्यामि मधुरं शब्दं पुत्र शालं जिहृक्षतः ॥ ३३ ॥ [३२
 ननु मूलफलं वन्यमाहरिष्यति को वनात् ।
- ३४] आवयोरन्वयोः पुत्र कांश्चतोः¹¹ क्षुत्परीतयोः ॥ ३४ ॥ [३४
 इमामन्वां च वृद्धां च मातरं ते तपस्विनीम् ।
- ३५] कथं पुत्र मरिष्येऽहमन्धो गतपराक्रमः ॥ ३५ ॥ [३५
 एकाहमपि¹² तावत्त्वं नैव गन्तुमितोऽर्हसि ।
- ३६] इवो मया चैव मात्रा च गन्ताऽसि सह पुत्रक ॥३६॥ [३६
 उमावपि भवच्छोकादनार्यौ¹³ न¹³ चिरादिव ।
- ३७] प्राणैः पुत्र वियोज्यावो मरणे कृतनिश्चयौ ॥ ३७ ॥ [३७
 इतो वैकस्वतं गत्वा भिक्षिष्ये कृपणः स्वयम् ।
- ३८] पुत्रमिच्छं प्रदेहीति त्वयैव सहिती गतः ॥ ३८ ॥ [३८
 धर्युपास्य च कः सन्ध्यां स्नात्वा हुत्वा च फलकम् ।
- ३९] ह्लादयिष्यति मे गात्रं कराभ्यां परितस्सृष्टम् ॥ ३९ ॥ [३९
 अपामोऽसि कथा पुत्र मिहतः पापकर्मणा¹⁴ ।

11 के-कांश्चतो । 12 के, व, म, क-एकाहमपि । 13 व-द्वन्द्वौ ।
 म-द्वन्द्वौ । क-द्वन्द्वोप । 14 के-द्वेन० ।

४०] त्वमाप्नुहि तथा लोकान् शूराणामनिवर्तिनाम् ॥ ४० ॥ [४०

अपरावर्तिनां लोकाः शूराणां ये तपस्विनाम् ।

४१] यज्वनां च मुच्यन्तानां तांस्त्वमाप्नुहि श्लाश्वतान् ॥ ४१ ॥ [४१

पू४२] यांल्लोकान् वेदवेदान्तपारगा मुनयो गताः ।

पू४४] यांश्चामयप्रदातारस्तथा यान् सत्ववादिनः ॥ ४२ ॥ ० [N

उ४४] तां ल्लोकान् मदनुज्ञातो^{१५} याहि पुत्रक श्लाश्वतान् । [N

पू४५] न हीदृशे कुले जन्म प्राप्य यान्त्यघमां गतिम् ॥ ४३ ॥ ० [४५ पू

उ४५] तस्मादित्थञ्च्युतः स्थानाल्लोकानाप्नुहि श्लाश्वतान् ॥ ० [N

पू४६] एवमादि बिलप्याथ स मुनिः^{१६} सह^{१६} भार्यया ॥ ४४ ॥ [४६

N] संस्कारं लंभयामास दुःखोपहतचेतनः ।

उ४६] ततोऽस्य कर्तुमुदकं प्रतस्थे दीनमानसः ॥ ४५ ॥ [N

अथ दिव्यवपुर्भूत्वा विमानवरमास्थितः ।

४७] मुनिपुत्रस्ततो वाक्यमुवाच पितराविदम् ॥ ४६ ॥ [४७

भवन्तौ परिचर्याहं प्राप्तः पुण्यामिमां गतिम् ।

४८] भवन्तावपि हि श्विभं स्थानमिष्टमवाप्स्यतः^{१७} ॥ ४७ ॥ [४९

न भवन्मामहं क्षोच्यो नापि राज्ञाऽपराध्यति ।

४९] भवितव्यमनेनैव^{१८} येनाहं निधनं गतः ॥ ४८ ॥ [N

वृत्तावदुत्तवा वचनं सुविपुत्रो^{१९} दिवं गतः ।

५०] इदमि दिव्यांश्चरो राजन् विमानवरमास्थितः ॥ ४९ ॥ [५०

१५ व—मदनुज्ञातो । ०म । १६ व, म—०भार्यया सह । १७ व—
०पुण्याः । म—०व्ययः । १८ व—०अनेनैव । म—०अनेन वै । १९ व,
व—वचनं सुविपु० ।

- ६१] यददृष्ट्वा च रामस्य मुखं त्यक्ष्यामि जीवितम् ॥६०॥ [६१पू
रामादर्शनजः शोकः प्राणान् निर्दहतीव मे ।
- ६२] नदीतीररुहान्^{२१} वृक्षान्^{२१} वारिवेगो महानिव ॥६१॥ [७४
निस्तीर्णवनवासं तमयोध्यां पुनरागतम् । [७१उ
- ६३] द्रक्ष्यन्ति सुखिनो रामं शक्रं स्वर्गादिवागतम् ॥६२०[७२पू
ते देवा न मनुष्यास्ते ये तत् पूर्णेन्दुसन्निभम् । [६८उ
- ६४] मुखं द्रक्ष्यन्ति रामस्य पुरीं प्रविशतो वनात् ॥ ६३ ॥ [६६पू
सुदण्डं निर्मलं कान्तं चारु पद्मदलेक्षणम् । [६९उ
- ६५] धन्या द्रक्ष्यन्ति रामस्य तारापतिनिभं मुखम् ॥६४॥ [७०पू
शरच्चन्द्रस्य सदृशं कुन्दस्य कमलस्य च । [७०उ
- ६६] सुगन्धि मम पुत्रस्य धन्या द्रक्ष्यन्ति वै मुखम् ॥६५॥ [७१पू
इति रामं स्मरन्नेव शयनीयतले नृपः ।
- ६७] शनैरूपजगामास्तं शशीव रजनीक्षये ॥ ६६ ॥ [N
हा^{२२} राम हा पुत्र इति ब्रुवन्नेव^{२२} शनैर्नृपः ।
- ६८] तत्याज सुप्रियान् प्राणानायुषोऽन्ते सुदुस्त्यजान् ६७[७५-७७
तथा स दीनं कथयन्नराधिपः
प्रियस्य पुत्रस्य विवाससंकथाम् ।
- ६९] गतेऽर्धरात्रे शयनीयसंस्थितो
जहौ प्रियं जीवितमात्मनस्तदा ॥ ६८ ॥ [७८
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ब्रह्मशापाख्यानं
नाम सर्गः ॥ ७० ॥

[वं-६७]=[एकसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६५]

विलप्याथ तमप्येवं तूष्णीभूतं नराधिपम् ।

१] सुप्त इत्यवगम्यार्ता कौशल्या न व्यबोधयत् ॥ १ ॥ [N

अनुक्तवन्तं भर्तारं किञ्चिच्छोकश्रमाकुला ।

२] सुष्वाप शयने भूयः पुत्रशोकार्तमानसा ॥ २ ॥ [N

अथ रात्रौ व्यतीतायां सन्ध्याकाल उपस्थिते ।

३] वन्दिनः पर्युपातिष्ठन् पार्थिवं प्रातबोधकाः ॥ ३ ॥ [१

तेषां तु तदुपश्रुत्य^१ हृतमागधवन्दिनाम् ।

४] सर्वा बुबुधिरे सुप्ता नृपान्तःपुरयोषितः ॥ ४ ॥ [N

ततः श्रुचिसमाचारा राजोपस्थानकारिणः ।

५] स्त्रीवर्षवरभूयिष्ठा उपतस्थुर्नराधिपम् ॥ ५ ॥ [७

गन्धाम्बुपरिपूर्णांश्च कुंभान् काञ्चनराजतान् ।

६] उपतस्थुःसमादाय स्नापकास्तं नृपालवम् ॥ ६ ॥ [८

मङ्गलालंमनीयानि तथैवान्यमुपस्करम् ।

७] यथायोगमुपाजडरूपचारं विचक्षणः ॥ ७ ॥ [९

अभ्येत्य चोपचारज्ञाः शयनीये नराधिपम् ।

८] स्त्रियः प्रबोधयाञ्चक्रादित्योदयशङ्कया ॥ ८ ॥ [१२

प्रबोध्यमानोऽपि यदा नाबुध्यत स पार्थिवः ।

९] आ ह्ययोदयनात् सुप्तस्ततस्ताः शङ्किताः स्त्रियः ॥९॥ [११

ता वेपथुसमाविष्टा राज्ञः प्राणेषु शङ्किताः । [१४उ

- १०] प्रतिस्रोतस्तृणाग्रेण सदृशं प्रचकंपिरे ॥ १० ॥ [१५पू
अथ तासां परित्रासं दृष्ट्वा दृष्ट्वा च पार्थिवम् ।
- ११] यत्तदा शङ्कितं पापं तस्य जज्ञे विनिश्चयः ॥ ११ ॥ [१५
ता वेपमाना संभ्रान्ता मृतं दृष्ट्वा नराधिपम् ।
- १२] हा नाथ हा मृतोऽसीति पतिता वै विचुक्रुशुः ॥१२॥[१२
तासां तेनार्तनादेन महता शयिते तदा ।
- १३] कौशल्या च सुमित्रा च बुबुधाते सुदुःखिते ॥ १३ ॥ [२१
- १४] उत्थाय शयनात् क्षिप्रं राजानम्युपतस्थतुः । [N
दृष्ट्वा मृतं च भर्तारं ते देव्यावतिदुःखिते ॥ १४ ॥O [२५पू
- १५] सुप्तमेवोद्गतप्राणं^२ शृशं चुक्रुशतुस्तदा । [२५उ
तयोस्तद्^१ रुदितं^३ श्रुत्वा सर्वशोऽन्तःपुरस्त्रियः ॥१५॥ N]
- १६] सहसा चुक्रुशुस्तत्र कुरर्यस्त्रासिता इव । [N
ईरितोऽन्तःपुरस्त्रीभिरार्ताभिः स स्वनो महान् ॥१६॥[२६पू
- १७] पुरीं तां पूरयामास बोधयंश्चैव सर्वशः । [२६उ
ततः संभ्रान्तमनसस्तेन शब्देन बोधिताः ॥ १७ ॥ [N
- १८] आविशन्त नृपाहृता नृपवेश्म पराः स्त्रियः^४ । [N
ताश्च ताश्चैव संहृत्य^५ शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १८ ॥ [N
- १९] रुरुदुश्चुक्रुशुश्चैव नृपे पञ्चत्वमागते । [N
अथायोध्या पुरी कृत्स्ना तेन शब्देन बोधिता ॥ १९ ॥ [N
- २०] सवृद्धबाला चुक्रुश राजव्यसनकर्षिता । [N

२ ल—सुप्तमेवोद्गतं प्राणं । म—सुप्तमेव गतं प्राणं । Oब । ३ कै—तं कंवितं । ४ म, ल—पुरस्त्रियः । ५ कै, ल—संहृत्य ।

- तत्समुद्भिप्रमुद्भ्रान्तं पर्युत्सुकजनाकुलम् ॥ २० ॥ [२७पू
 २१] परिदेवितार्तस्तनितं रुदितोत्क्रुष्टमाकुलम् । [२७उ
 सघोनिपतितानर्थं विध्वस्तशयनासनम् ॥ २१ ॥ [२८पू
 २२] बभूव नरदेवस्य गृहं दिष्टान्तमागतम् । [२८उ
 ततो भृशार्ता कौशल्या सुमित्रा चैव दुःखिता ॥२२॥ [N
 २३] निपत्य पृथिवीपृष्ठे बहुधैव व्यवेष्टताम् । [N
 सपत्न्या सह दुःखार्ता वेष्टमाना धरातले ॥ २३ ॥ [N
 २४] पांशुरूपितसर्वाङ्गी^६ कौशल्या न व्यराजत । [N
 व्यतीतमाज्ञाय तु पार्थिवर्षभं
 यशस्विनं तं परिवार्य ताः स्त्रियः ।
 भृशं रुदन्त्यः करुणाक्षरा गिरः
 २५] प्रगृह्य बाहून् व्यलपन्त सर्वशः ॥ २४ ॥ [२९
 इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथमरणं^७ नाम
 [एकसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७१ ॥



[वं-६८]=[द्विसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६६]

तमग्निमिव संशान्तं संशोषितमिवार्णवम् ।

१] अस्तं गतामिवादित्यं स्वर्गतं प्रेक्ष्य भूमिपम्^१ ॥ १ ॥ [१

द्विविधेनापि दुःखेन कौशल्या भृशदुःखिता ।

२] भर्तुः पादौ प्रगृह्यार्ता विललाप सुदुःखिता ॥ २ ॥ [२

कृतपुण्योऽसि नृपते शुद्धसत्त्वश्च मानद ।

३] यस्त्वं प्राणान् परित्यज्य नाद्य शोचासि राघवम् ॥ ३ ॥ [N

पुत्रशोकसमुद्भूतो दारुणो देहतापनः ।

४] त्वत्प्राणहरणाद् व्याधिर्मामनार्या न^२ बाधते ॥ ४ ॥ [N

सन्धेसन्धे महाभागे प्रधानाभिजनात्मनि ।

५] न हि युष्माद्विधे युक्तो भावः करुणवेदिनि ॥ ५ ॥ [N

अहमेवाशुद्धसत्त्वा नीचा^३ चादृढसौहृदा ।

६] अजीवनार्हा जीवामि या त्वयाऽद्य विनाकृता ॥ ६ ॥ [N

मृत्युरस्यामवस्थायां प्रशस्तस्ते नराधिप ।

७] न तु मे जीवितं^४ षस्यामवस्थायां^४ विगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N

अवस्थायामवस्थायां तत्तद् भवति पूजितम् ।

८] पूजितं मरणं तस्य यस्य जीवितमीदृशम् ॥ ८ ॥ [N

यत्र शुद्धस्वभावस्तु पुत्रशोकार्तया मया ।

९] परुषं मुद्गरुक्तोऽसि तन्मां दहति किल्बिषम् ॥ ९ ॥ [N

देवोपम नमस्तेऽस्तु शुद्धभाव महीपते ।

१ कै—पाथिवं । २ ब—नु । ३ कै—पूर्वं श्रुतं पश्चात् “पापा” इति पदेन, भिन्नहस्तेन पूरितम् । ४ कै—जावितुमस्याम० ।

- १०] समन्युर्वाऽसि मयि तत् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥ [N
पुत्रशोकार्तयाऽप्युक्तो यन्मयाऽस्यकृतज्ञया ।
- ११] तदेवसच्च नामुत्र स्मर्त्तुमर्हसि मेऽनघ ॥ ११ ॥ [N
अतिक्रमः कस्य नास्ति विदुषोऽपि महीपते ।
- १२] अतिक्रममतो मे त्वं मूढायाः क्षन्तुमर्हसि ॥ १२ ॥ [N
कृत्वाऽनर्थं मूलहरं राज्यलोभाद्द्विगर्हितम् ।
- १३] प्राप्ताऽसि निरयं क्षुद्रं कंकेयि दृढनिश्चये ॥ १३ ॥ [N
सकामा भव कंकेयाय भुञ्च^५ राज्यमकण्टकम् । [३पू
- १४] पतिं प्राणैर्वियोज्यैव विकृते निर्वृता भव ॥ १४ ॥ [N
सुखभोगार्थदातारं देवतं परमं पतिम् ।
- १५] का त्वन्या त्वदृते नारी लुब्धा प्राणैर्वियोजयेत् ॥ १५ ॥ [५
कृत्वा कार्यमकार्यं वा न कीर्तिं निरयं न च ।
- १६] न धर्मं चापि नाऽधर्म^६ वेत्सि नैव तयेहितम् ॥ १६ ॥ [N
N] कुत्रा^७(ब्जा ?)-निमित्ते कंकेयि रघूणां ते^८ कुलं हतम् । [६उ
त्वाभियोगनियुक्तेन राज्ञा चव महात्मना ।
- १७] प्राणेभ्योऽपि प्रियः पुत्रो रामः प्रब्राजितो वनम् ॥^{१७} ॥ [N
यथा प्राणैः प्रियो रामस्त्यक्तो राज्ञा महात्मना ।०
- १८] तद्वियोगात्तथा तेन त्यक्ताः प्राणाः सुदुस्त्यजाः ॥^{१८} ॥ [N
वैधव्यमयशब्देदं लोके चेदं विगर्हितम् ।०
- १९] लोभाच्चया त्रयोऽनर्था यत्प्राप्तास्तन्न मे प्रियम् ॥ १९ ॥ [N

5 ब—मुक्ता । 6 कै—वाऽधर्म । 7 ब, ल—ब्जा । कै—कृत्वा ।
8 कै—नेर्धलेहतं । ०के, ब, म । ०ल ।

- श्रीमानिन्दीवरश्यामश्वारूपबदलेक्षणः । [N]
- २०] पितुर्जीवितनाशाय रामो वनमितो गतः ॥ २० ॥ [८७
विदेहराजतनया सुकुमारी तपस्विनी ।
- २१] त्वत्कृते पापसङ्कल्पे दुःखान्यनुभवत्यसौ ॥ २१ ॥ [९
उग्रं प्रतिमयं नादं घोराणां मृगपक्षिणाम् ।
- २२] श्रुत्वा नूनं मयोद्विग्ना रामं श्रयति मैथिली ॥ २२ ॥ [१०
यया बुद्ध्या त्वया रामः पतिं त्यक्त्वा विवासितः ।
- २३] धर्मज्ञो भरतस्त्वां तु गर्हयिष्यत्युपागतः ॥ २३ ॥ [N
अनृशंसा पुरा भूत्वा धर्मिष्ठा च पुरा ह्यसि ।
- २४] केनेदानीं नृशंसा त्वमधर्मिष्ठा च कैकयि ॥ २४ ॥ [N
कथं चासौ महासत्त्वो दृढं राममनुव्रतः ।
- २५] अपापः पापसङ्कल्पे भरतो दूषितस्त्वया ॥ २५ ॥ [N
रामवृत्तानुवर्त्ती हि भरतः पापनिश्चये ।
- २६] नानुवर्तेत ते वृत्तं गर्हयिष्यति चागतः ॥ २६ ॥ [N
नृशंसमप्रशंस्यं^९ च लोके कर्म विगर्हितम् ।
- २७] यत्कृत्वा^{१०} मन्यसे साधु सुकृतं पापनिश्चये ॥ २७ ॥ [N
किं न शोचसि भर्तारं रामं लक्ष्मणमेव च ।
- २८] उताहो त्वपि वैदेहीमात्मानं चापि दुःखितम् ॥ २८ ॥ [N
शोचयितव्येषु युगपद् बहुष्वन्येषु वै पृथक् ।
- २९] ममापि दुःखमागिन्या मृतं श्रेयो न जीवितम् ॥ २९ ॥ [N
विहाय मां वनं रामो भर्ता च त्रिदिवं गतः ।

- ३०] सार्थादिव परिभ्रष्टा कुपथे विचराम्यहम् ॥ ३० ॥ [N
महाराज महाबाहो महाप्राज्ञ महाबल ।
- ३१] महत्यगाधे पतितां पाहि मां शोकसागरे ॥ ३० ॥ [N
सुखोचिता त्वया त्यक्ता त्वन्नाथा त्वत्परायणा ।
- ३२] त्यक्ता त्वया प्रिये¹¹ नाद्य सर्वथैव धिगस्तु माम् ॥३२॥ [N
न्याय्यं धर्म्यं यशस्यं च मार्गं साधुनिषेवितम् ।
- ३३] अनुगन्तुं न शक्यामि¹² राममन्दर्शनाशया ॥ ३३ ॥ [N
किं मया न कृतं साधु भवेदद्य जनाधिप ।
- ३४] यदि तेऽहं शरीरेण मह दाहमवाप्नुयाम् ॥ ३४ ॥ [N
गच्छन्तं परलोकाय यदि त्वामनुयाम्यहम् ।
- ३५] सुकृतं न मया तेऽद्य राजन् प्रतिकृतं भवेत् ॥ ३५ ॥ [N
नूनं नैवाहमर्हामि पापा पत्युः मलोकताम् ।
- ३६] या त्वां चितां समारूढां* नानुवेक्ष्यामि वै चिताम् ॥३६\N
कालस्य वशगो जन्तुर्न मर्त्यः स्वयमीश्वरः ।
- ३७] जीवितुं वाऽप्यतो न त्वां राजन्महमनुश्रये ॥ ३७ ॥ [N
क्वासि राम महाबाहो क्वासि लक्ष्मण सुव्रत ।
- ३८] क्वासि त्वं साध्वि वेदेहि न मां जानासि दुःखिताम् ॥३८\N
कैकय्या वचनाद्राज्ञा श्रुत्वा रामं विवासितम् ।
- ३९] समार्यो जनको राजा परितप्स्यत्यसंशयम् ॥ ३९ ॥ [७
अबलश्चैव वृद्धश्च वेदेहीमनुचिन्तयन् ।

11 ब—प्रियेणाद्य । ल—प्रियेणाद्य । म—प्रियेनाद्य ।

12 के—शक्यामि । *(समारूढ ?) ।

APPRECIATION OF THE WORK.

The great French Sanskritist and specialist in Ramayana, writes from Paris in his personal letter, dated 12th October 1923, to Pt. RamaLabhaya :—

I am so glad, so very glad that you have taken in hand an edition of the N. W. Recension of the Ramayana that I want to express you immediately my joy and my thanks. I am, I may say, daily working on the Ramayana and once more, as usual, last week I was complaining about the guilty neglect of India towards her आदि काव्य. I published some years ago a paper "For the History of Ramayana" which I am sending you; the conclusion I was carried to, without any prejudice of course, was that the N. W. (I called it Kashimerian) Recension appeared as the oldest one.

The work of collation seems to be done very carefully and accurately, the print is a very good one. Your indices, at the end of every Kanda., are a new and happy departure. I wish that I can see soon the completion of your work, and that the amount of पुण्य, you acquire by this way, may be justly rewarded. You have already won the esteem and gratitude of all सहृदय, I mean all men who love and cherish India with all their heart and mind.

I am, my dear Pandit,

Yours very sincerely,

(Sd.) SYLVAIN LEVI.

The great Dutch Sanskrit Scholar writes from Utrecht :—

I have looked superficially through the two parts of the Ayodhya Kanda of the N. W. Ramayana Recension, and I find it very interesting, and full of readings preferable to those of the Bombay edition: the only one I possess.

(Sd.) W. CALAND.

Apply for purchase of the publications of the series to

BHAGAVAD DATTA,

Subj. Research Dept. D. A. V. College, LAHORE.

॥ दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत ग्रन्थमाला, सं० ७ ॥

* ओ३म् *

वाल्मीकीय-रामायणम्

(पश्चिमोत्तरशास्त्रीयम्)

अयोध्या-काण्डम्

THE RAMAYANA

OF

VALMIKI

(NORTH-WESTERN RECENSION)

CRITICALLY EDITED WITH VARIOUS READINGS FOR
THE FIRST TIME FROM ORIGINAL M.S.

BY

PANDIT RAM LABHAYA M. A.

PROFESSOR OF SANSKRIT

KHALSA COLLEGE, AMRITSAR.

AYODHYA KANDA, FASC. IV.

PUBLISHED BY THE RESEARCH DEPARTMENT

D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

Printed by Pt Mahabir Prasad, Vidya Prakash Press,

LAHORE.

OCTOBER 1924.

First Edition } कार्तिक १९२१. } Price 1-8-0
1000 Copies. }

- ४०] सोऽपि श्लोकाभिसन्तप्तः परित्यक्ष्यति जीवितम् ॥ ४० ॥ [११
साध्वि भर्तृपरा देवि धन्या स्वत्वसि मैथिलि ।
- ४१] समदुःखमुत्सा या त्वं भर्तारमनुगच्छसि ॥ ४१ ॥ [N
भर्ता बन्धुर्गतिश्चैव गुरुर्देवतमेव च ।
- ४२] भर्तैव परमः स्त्रीणामाश्रमस्तीर्थमेव च ॥ ४२ ॥ [N
इति तां पतिशोकस्य पुत्रशोकस्य चान्तरे ।
- ४३] पतितामातुरां दीनां क्रोशन्तीं कुररीभिव ॥ ४३ ॥ [N
- पृ४४] सर्वत्रानादृतद्वारो वसिष्ठो भगवानृषिः । [N
N] प्रविश्य राजभवनं वारयामास तां सतीम् । [N
- उ४४] व्यादिश्यानाययामास राजस्त्रीभिर्बलादिब ॥ ४४ ॥ [N
परियुष्माय तामार्ता विलपन्तीमनाथवत् ।
- ४५] अपनिन्द्युः प्रकर्षन्त्यः कौशल्यां राजयोषितः ॥ ४५ ॥ [N
ततस्तां विजनीकृत्य मन्त्रिभिः सह सङ्गतः ।
- ४६] कृत्वा वसिष्ठो^{१३} भगवान् प्राप्तकालमकारयत् ॥ ४६ ॥ [N
शरीरं कोसलेन्द्रस्य^{१४} तैलद्रोण्यां न्यवेशयत् ।
- ४७] मन्त्रयामास सहितो मन्त्रिभिस्तदनन्तरम् ॥ ४७ ॥ [१८
उभौ मातामहकुलं चिरं कालं गतावितः ।
- ४८] कथं भरतश्शुभ्रावानयामेह चेति वै ॥ ४८ ॥ [N
न हि सत्करणं^{१५} राज्ञो राजपुत्रैर्विना हितैः ।
- ४९] मन्त्रिणः कर्तुमर्हन्ति ततो रक्षत भूमिपम् ॥ ४९ ॥ [१९
तैलद्रोण्यां वसिष्ठेन^{१६} स्नायितं तं नराधिपम् ।
- ५०] दृष्ट्वा मृतोऽयमित्युक्ता स्त्रियः परुरुदुश्च ताः ॥ ५० ॥ [१६
उत्क्षिप्य बाहून् श्लोकार्ता बाष्पव्याकुललोचनाः ।

१३ क, व, म, ल—वसिष्ठो । १४ के, म—कौसले ।

१५ व—सरकारणं । १६ क, व, म, ल—वसिष्ठेन ।

- ५१] उरः क्षिरश्च जानूनि जघ्नुः करतलैर्मुहुः ॥ ५१ ॥ [१७
 शशिनेव निशा हीना भर्तृहीनेव चाङ्गमा ।
- ५२] न व्यराजत चायोध्या तेन हीना महात्मना ॥ ५२ ॥ [२४
 दुःस्वपर्याकुलजना हाहाभूतजनस्वना¹⁷ ।
- ५३] विध्वस्तचत्वरपथा विशून्यविपणापणा ॥ ५३ ॥ [२५
 हतप्रभा द्यौरिय नष्टभास्करा
 व्यपेतचन्द्रेव च निष्प्रभा¹⁸ निशा ।
 रराज सा नैव भृशं महापुरी
- ५४] विनाकृता तेन तदा महात्मना ॥ ५४ ॥ [२८
 नराश्च नार्यश्च भृशार्तमानसा
 विगर्हयन्तो भरतस्य मातरम् ।
 तस्यां नगर्यां नरराजसंक्षये
- ५५] विलेपुरार्ता न च शर्म लेभिरे ॥ ५५ ॥ [२९
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथतैलद्रोणिसंक्रमणं
 नाम [द्विसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७२ ॥



[वं-६६]=[*त्रिसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६७]

व्यतीतायां तु शर्वर्यामादित्यस्योदये ततः ।

- १] समेत्य राजगुरवः सभाभीयुर्द्विजातयः ॥ १ ॥ [२
 वसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिरथ काश्यपः^१ ।
- २] मार्कण्डेयो गौतमश्च मौद्गल्यश्च महातपाः ॥ २ ॥ [३
 एते द्विजाः सहामात्यैः पृथग्वाच उदैरयन्^२ ।
- ३] वसिष्ठमेवाभिसुखाः श्रेष्ठं राजपुरोहितम् ॥ ३ ॥ [४
 शर्वरी समतीतं कूरा वर्षशतोपमा ।
- ४] शोचतां पुत्रशोकेन मृतं दशरथं नृपम् ॥ ४ ॥ [५
 स्वर्गतश्च महाराजो रामश्चारण्यमाश्रितः ।
- ५] लक्ष्मणश्चापि तेजस्वी रामेण सहितो गतः ॥ ५ ॥ [६
 पू७] उभौ भरतश्चशुभ्रौ केकेयेषु^३ परन्तपौ ।
- N] गिरिव्रजे पुरवरे बसतः प्राणितो गतौ ॥ ६ ॥ [७
 ४६] इक्ष्वाकुवंशप्रभवः को^४ नु^४ राजा भविष्यति । [N
 अराजकमिदं राष्ट्रं विनाशमुपयास्यति । [८३
 ७] इक्ष्वाकुः कश्चिदेवेह राजाऽस्माकं विधीयताम् ॥७॥ [८५
 नाराजके जनपदे विद्युन्माली महास्वनः ।
- ८] अभिवर्षति पर्जन्यो महीं दिव्येन वारिणा ॥ ८ ॥ [९
 नाराजके जनपदे भीजमुष्टिः प्रकीर्यते । [१०पृ
 ९] नाराजके पितुः पुत्राः सम्यक् तिष्ठन्ति ज्ञासने ॥९॥० [१०७
 *नाराजके पतिं भार्या यथावदनुर्वतते । [१०७
 १०] नाराजके गुरोः शिष्यः शृणोति नियतं हितम् ॥१०॥ [N
 स्वं नास्त्यराजके राष्ट्रे प्रशान्तश्च परिग्रहः ।

१ व, म—कश्यपः । २ के—तदरयन् । म—तदारयन् । क—
 उदीरयन् । ३ के—केकेयेषु (केकेयेषु ?) । ०म । ४ के—केन (प्रमादः) ।
 ०के । * क—नस्ति ।

- ११] अराजके स्वात्मनो ऽपि प्रभुत्वं नहि कस्यचित् ॥११॥ [N
नाराजके जनपदे यज्ञशीला द्विजातयः ।
- १२] विविधास्तन्वते यज्ञान् दस्युर्मर्घैः प्रपीडिताः ॥ १२ ॥ [१३
नाराजके जनपदे कारयन्ति नराः सभाः^५ ।
- १३] उद्यानानि च रम्याणि प्रपाः पुण्या गृहाणि च ॥ १३ ॥ [१२
नाराजके जनपदे प्रभृतनटनर्तकाः ।
- १४] उत्सवाश्च समाजाश्च वर्तन्ते जनहर्षणाः ॥ १४ ॥ [१५
नाराजके जनपदे कश्चिदर्थः प्रसिध्यति ।
- १५] व्यवहारा न वर्धन्ते^६ कन्यानां जनहर्षणाः ॥१५॥ [१६
- उ१७] नित्योद्विग्नाः प्रजाः सर्वा दुःखिताश्च भवन्त्यपि ।
नाराजके जनपदे विश्वस्ता. कुलकन्यकाः 10
- १८] अलङ्कृता राजमार्गे क्रीडन्ति विहरन्ति च ॥० १६ ॥ [N
नाराजके जनपदे विचरन्त्यकुताभयाः ।
- १९] कामिनः सह कान्ताभिर्विहारंग्रामभूमिषु ॥ १७ ॥ [१९
नाराजके जनपदे धनवन्तः कुटुम्बिनः ।
- २०] शेरते विवृतद्वारा विश्वस्तमकुताभयाः ॥ १८ ॥ [१८
नाराजके जनपदे नराः पण्योपजीविनः^७ ।
- २१] पण्यान्यादाय^८ गच्छन्ति देशाद् देशान्तरं तथा ॥१९॥ [२१
नाराजके कृषिकराः कर्षन्ति भयपीडिताः ।
- २२] पशवो नाभिवर्धन्ते^{१०} नित्यं राष्ट्रे ह्यराजके ॥ २० ॥ [N
नाराजके जनपदे चरत्येकचरो वशी ।
- २३] भावर्यस्तपसाऽऽत्मानं यन्नसायंगृहो^{११} मुनिः ॥ २१ ॥ [२३

5 छ—सताः (प्रमादः) । 6 म—वर्तते । छ—वर्धते । 0 के ।

7 छ—पुण्योप० । 8 म, छ—पुण्यान्यादाय । 9 के—तदा । 10 म,

छ—नाभिवर्धते । 11 व, म, छ—०सायंगृहे ।

नाराजके जनपदे योगक्षेमः प्रकल्पते ।

- २४] न चाप्यराजकं सैन्यं शत्रून्^१ विजयते युधि ॥२२॥ [२४
नदी शुष्कजला यद्वद्यद्वच्चातृणकं वनम् ।
- २५] अगोपाला यथा गावस्तथा राष्ट्रमराजकम् ॥ २३ ॥ [२९
नाराजके जनपदं स्वास्थ्यं भवति कस्यचित् । [३१पृ
- २६] हरन्ति दुर्बलानां हि स्वमाक्रम्य बलाधिकाः ॥ २४ ॥ [N
अराजके जनपदे दुर्बलान् बलवत्तराः ।
- २८] क्षपयन्ति निरुद्वेगा^१ मत्स्यान्^{१४} मत्स्या इवाल्पकान् ॥२५॥ [३१उ
व्युत्क्रान्तधर्ममर्यादा नास्तिका निरपत्रपाः ।
- २९] भवन्त्यराजके राष्ट्रे मानवाः क्रूरनिश्चयाः ॥ २६ ॥ [३२
अन्धं तम इवेदं स्यान्न प्रज्ञायेत किञ्चन ।
- ३०] राजा चेन्न भवेत्लोके विभजन् साध्वसाधु वा^{१५} ॥२७॥ [३६
दस्यवोऽपि न च क्षेमं राष्ट्रे विन्दन्त्यराजके ।
- ३१] द्वावाददाते शोकस्य द्वयोश्च बहवो धनम् ॥ २८ ॥ [N
तस्माद् राजैव कर्तव्य इच्छद्भिः शुभमात्मनः ।
- ३२] द्विजानां वचनं श्रुत्वा वसिष्ठं मन्त्रिणोऽब्रुवन् ॥ २९ ॥ [N
जीवत्यपि महाराजे महाभाग^{१६} वयं प्रभो ।
- ३३] शासने तव तिष्ठामः स नः श्लाधि^{१७} तपोधन ॥३०॥ [३७
वसिष्ठ धर्मज्ञ महानुभाव स नः समीक्ष्यार्हसि विप्रवर्य ।
- ३४] कुमारमिक्ष्वाकुकुलप्रभृतं वमाशु राजानमिहाभिषेक्तुम् ॥३१॥ [३८
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे राजप्रशंसा नाम
[त्रिसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७३ ॥]

१२ म—शत्रु [व?] । ल—शत्रुं । १३ के—निरुद्वेगात् । १४ म,
ल—मत्स्या । १५ के—साध्वसाधुवत् । म, ल—साधु साधु वा ।
१६ म—महाभागो । ल—महाभागा । १७ म, ल—श्लाधि ।

- [वं-७०]=[चतुःसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६८]
 तेषां तद्वचनं श्रुत्वा वसिष्ठः प्रत्युवाच ह ।
- १] सुमन्त्रप्रभृतीन् सर्वान् ब्राह्मणांस्तानिदं वचः ॥ १ ॥ [१]
 योऽसौ मातामहकुले कुमारः श्रीमतां वरः ।
- २] भरतो^१ वसति^१ भ्रात्रा शत्रुघ्नेन गतः सह ॥ २ ॥ [२]
 तामेतः शीघ्रगैर्गत्वा नराः प्रजवितैर्हयैः ।
- ३] इहानयन्तु वचनान्पस्यामृत्युवादिनः ॥ ३ ॥ [३]
 इति श्रुत्वा वचस्तस्माद्ब्रह्मसिष्ठाद्राजमन्त्रिणः ।
- ४] गच्छन्त्विति च सर्वे ते प्रत्यूचुर्दृष्टमानसाः ॥ ४ ॥ [४]
 ततो जयन्तं सिद्धार्थमशोकं चाब्रवीदिदम् ।
- ५] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो दूतानाह तपोधनः ॥ ५ ॥ [५]
 पुरं राजगृहं गत्वा शीघ्रं प्रजवितैर्हयैः ।
- ६] त्यक्तशोकैरिदं वाच्यो भरतो वचनात् पितुः ॥ ६ ॥ [६]
 आह त्वां कुशलं पृष्ट्वा राजा सर्वे च मन्त्रिणः ।
- ७] त्वरावान् शीघ्रमागच्छ कार्यमात्ययिकं^२ विभो ॥ ७ ॥ [७]
 न चास्मै प्रेषितो^३ रामो न राजा स्वर्गतस्तथा ।
- ८] गत्वा भवद्भिरावेद्यः^४ पृष्टैरपि कथञ्चन ॥ ८ ॥ [८]
 राजार्हाणि विचित्राणि भुषणानि वराणि च ।
- ९] शीघ्रमादाय राज्ञश्च भरतस्य च यच्छत ॥ ९ ॥ [९]
 इति ते ज्ञातसन्देशा दूतास्त्वरितमानसाः ।
- १०] वसिष्ठेनाभ्यनुज्ञाता ययुः शीघ्रपुरोगमाः ॥ १० ॥ [११]
 गत्वाऽथ हास्तिनपुरं गङ्गामुत्तीर्य वेगतः^५ ।
- ११] पञ्चालदेशानाजग्मुस्ततस्ते कुरुजांगलान् ॥ ११ ॥ [१३]

१ कै-वसति भरतो । २ कै-०मात्ययिकं । ३ म, छ-प्रेषितो ।

४ कै, व-भवद्भिरावेद्यः । म, छ-०जावेद्यः । ५ व-वेगिताः ।

- पू१२] पूर्वेण वारुणीतीर्थं^६ कुरुक्षेत्रे सरस्वतीम् । [N
 पू१४] शरदण्डां समुत्तीर्य नदीं जलचराकुलाम् ॥ १२ ॥ [१५७
 उ१४] समूलचैत्यमासाद्य वृक्षं सत्योपयाचनम् ।
 पू१५] अभिगम्य प्रणम्यैनं त्रिलिङ्गां विविशुः पुरीम् ॥१३॥ [१६
 उ१५] अजकूलं ततः प्राप्य बौद्धानां^७ नगरं ययुः ।
 उ१७] कथयन्तः कथाश्चित्रा रामलक्ष्मणसंहिताः ॥ १४ ॥ [N
 ययुर्मध्यंऽतिवेगेन शतरुद्रां^८ जलाकुलाम्^९ ।
 १८] विष्णोः पदं वीक्षमाणा विपाशां^९ चैव शाल्मलीम् ॥१५॥ [१९पू
 गिरिव्रजं पुरवरं विविशुर्न चिरादिव । [२१७
 १९] सप्तरात्रेण च गत्वा दृतास्ते श्रान्तवाहनाः ॥ १६ ॥ [२१पू
 संपूज्यमाना विविशुः पुरं हि ते
 ततो ययुः पार्थिववेत्रमुख्यम् ।
 प्रजाहितार्थं कुलरक्षणार्थं ।
 २०] भर्तुश्च वंशस्य परिग्रहार्थम् ॥ १७ ॥ [२२
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दूतप्रस्थापनं नाम
 [चतुःसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७४ ॥



६ के—वारुणी० । छ—वारुणी तीर्थी । ७ म, छ—बोद्धानां ।
 ८ म—शतरुद्रजला० । ९ म—विपाशां । छ—विपाशां ।

[वं-७१]=[पञ्चसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६९]

यमेव दिवसं दूताः प्रविष्टास्ते गिरिव्रजम्^१ ।

- १] भरतनापि तां रात्रिं स्वप्नो दृष्टो भयावहः ॥ १ ॥ [१]
 अरि(नि?)ष्टा वेदिनं स्वप्नं दृष्ट्वाऽथ भरतस्तदा ।
- २] संस्मरन् पितरं दृढमासीदुत्सुकमानसः^२ ॥ २ ॥ [२]
 आलक्ष्य तस्योत्सुकतां वयस्याः प्रियवादिनः ।
- ३] आयासमपनेष्यन्तः कथाश्चक्रुरनुत्तमाः ॥ ३ ॥ [३]
 अवादयन्^३ जगुश्चान्ये ननृतुर्जहसुस्तथा^४ ।
- ४] नाटकान्यपरे चक्रुर्हास्यानि विविधानि च ॥ ४ ॥ [४]
 प्रियैर्वयस्यैर्भरतस्तथाऽपि प्रियवादिभिः ।
- ५] हास्यानि चैवं^५ कुर्वद्भिर्नैवातुष्यत् सुदुर्मनाः^६ ॥ ५ ॥ [५]
 तमब्रवीत् प्रियसखः कश्चिद् व्यथितमानसः ।
- ६] उपास्यमानः सखिभिः किं सखे नैव दृष्यसि ॥ ६ ॥ [६]
 समानमुखदुःखानामस्माकमपि राघव ।
- ७] दुःखमार्तिकरं यद्ये तद् व्यपोहितुमर्हसि ॥ ७ ॥ [N]
 इत्युक्तो भरतस्तेन प्रत्युवाच महायज्ञाः ।
- ८] मृणुष्वं यो मया दृष्टः स्वप्नो येनास्मि दुर्मनाः^७ ॥ ८ ॥ [७]
 दृष्टो मयाऽथ स्वप्नेन चन्द्रमाः पतितः क्षितौ ।
- ९] संशुष्कः सागरश्चैव सूर्यो ब्रह्मस्तश्च राहुणा ॥ ९ ॥ [११]
 अद्राक्षमपि च स्वप्ने पितरं रक्तवाससम् ।
- १०] कृष्यमाणं^८ नरैर्बद्ध्वा दक्षिणामभितो दिशम् ॥ १० ॥ [८]
 पुनश्चाप्येनमद्राक्षं क्षोहाक्तं^९ मुक्तमूर्धजम् ।

१ के, छ--०.व्रजम् । २ के--दृढं मासीदुत्सुक० । ३ के, व
 म--अवादयं । छ--अवादयन् । ४ के--ननृतुं० । ५ के--चैव ।
 ६ के--सुदुर्मनाः । ७ व, छ--दुःखितः । छ--दुःखिता । ८ व--
 कृष्यमाणं । ९ के--क्षोहाक्तं ।

- ११] पतन्तमद्रिशिखरादगाधे गोमये^{१०} हृदे^{१०} ॥ ११ ॥ [८
तस्मिन्निमग्नश्चोन्मज्ज्य दृष्टो मे गोमयहृदात् ।
- १२] पिवन्नञ्जलिना तैलं हसन्निव पुनः पुनः ॥ १२ ॥ [९
ततस्तैलोदकं पीत्वा पुनः पुनरधःशिराः ।
- १३] तैलेनासिक्तसर्वाङ्गं स्तैलमेवावगाहयन् ॥ १३ ॥ [१०
पीठे कार्णायसे चैनं निषण्णं कृष्णवाससम् ।
- १४] ग्रहसन्ति च राजानं प्रमदाः कृष्णपिङ्गलाः ॥ १४ ॥ [१४
दृष्टो रासभयुक्तेन रथेन च पिता मया ।
- १५] रक्तमाल्याम्बरधरः प्रयातो दक्षिणामुखः ॥ १५ ॥ [१५
प्रदीप्तमम्भसा शान्तं दृष्टवानस्मि पावकम् ।
- १६] सीदन्तं च ततोऽद्राक्षं बन्धलम्^{१२} महागजम् ॥ १६ ॥ [१२
विशीर्यमाणः शैलेन्द्रो भग्नश्चैव महाट्टमः ।
- १७] स्वप्ने चाद्य मया दृष्टः पतितश्च महाश्वजः ॥ १७ ॥ [१३
एवमेष मया स्वप्नो^{१३} दृष्टः^{१३} पापो^{१४} भयावहः^{१४} ।
- १८] व्यक्तं रामोऽथवा राजा प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥१८॥ [१७
यो हि रासभयुक्तेन रथेन परिकृष्यते ।
- १९] घृतः स न चिरादेव ध्रुवं याति यमक्षयम् ॥ १९ ॥ [१८
एतन्निमित्तं दीनोऽहं नाभिनन्दामि वो वचः । [१९पू
- २०] हर्षस्थाने न दृष्यामि चिन्तयन् स्वप्नदर्शनम् ॥ २० ॥ [N
अस्थाने चापि सोत्कण्ठं मनो विह्वलतीव मे । [१९उ
- २१] अस्थाने व्यथितश्चायं देहे^{१५} देहेश्वरो मम ॥ २१ ॥ [N

10 क—गोमयहृदे । के—गोमयाहृदे । म—रोमयाहृदे ।

11 कै—०मुक्तं । 12 म, ल—बन्धलम् । 13 के—दृष्टः स्वप्नः । 14 ल—
पाप० । 15 के—यमाक्षयं । 16 कै—देही ।

हतत्वषमिवात्मानमद्य चैवोपलक्षये ।

[N

२२] जुगुप्सामि तथाऽऽत्मानमकस्मात् पतितं यथा ॥ २२ ॥ [२८पृ

इमां च दुःस्वप्नगतिं विचिन्तयन्

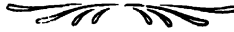
समुत्सुकत्वाद् व्यथितोऽतिविह्वलः ।

न शर्म विन्दामि यथा तथा ध्रुवं

२३] किमप्यरि(नि?)ष्टं न चिराद्दृष्यति ॥ २३ ॥ [२३

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतदुःस्वप्नदर्शनं नाम

[पञ्चसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७५ ॥



[वं-७२]=[षट्सप्ततितमः सर्गः]=[दा-७०]

भरते ब्रुवति स्वभं दूतास्ते श्रान्तवाहनाः ।

१] प्रविश्यासहपरिखं रभ्यं राजनिवेशनम् ॥ १ ॥ [१

समाजग्मुश्च राजानं भरतेनार्थिनस्तदा ।

२] राज्ञः पादौ गृहीत्वैव तमूचु भरतं वचः ॥ २ ॥ [२

पुरोहितस्त्वां कुशलं प्राह सर्वे च मन्त्रिणः ।

३] त्वरमाणश्च निर्याहि कार्यमात्ययिकं त्वया ॥ ३ ॥ [३

चैलानां चैव वां व्यर्ध देयं मातामहस्य ते ।

४] तिस्रः कोट्यस्तु संपूर्णास्तवेमा नृवरात्मज ॥ ४ ॥ [५

प्रतिपृष्ट च तत्सर्वमनुरक्तसृष्टृज्जनः ।

५] दूतानुवाच भरतः कामैः संप्रतिपूज्य^१ तान् ॥ ५ ॥ [६

कश्चित्पिता मे कुशली दृढो दक्षरथो नृपः ॥ १०

६] कश्चिद् भ्राता मम ज्येष्ठो रामो धर्मभृतां वरः ॥ ६ ॥ [७

कुशली लक्ष्मणश्चापि भ्राता मे भ्रातृवत्सलः ।

७] कश्चित्स्मरति मामार्यो रामोऽसौ भ्रातृवत्सलः ॥ ७ ॥ [N

कश्चिदम्बा च सुखिनी कौशल्या^२ धर्मचारिणी ।

८] माता रामस्य धर्मज्ञा भर्तृव्रतपरायणा ॥ ८ ॥ [८

कश्चित्सुमित्रा धर्मज्ञा लक्ष्मणं याऽभ्यजायत ।

९] शत्रुघ्नं च महात्मानमरोगा चापि मध्यमा ॥ ९ ॥ [९

आत्मकार्यपरा चण्डी^३ क्रोधना नित्यगर्विता ।

१०] कैकेयी चापि मे माता कश्चिद् कुशलिनी दृढम् ॥ १० ॥ [१०

इति ते कुशलप्रश्नं^४ पृष्ट्वा दूताः ससंभ्रमाः ।

११] मन्त्रसंच(व?)रणं कृत्वा प्रत्यूचुर्दृष्टमानसाः ॥ ११ ॥ [११

१ व—०पूजिताम् । कै, ल—०पूज्यताम् । म—०सत् । ०कै ।

२कै, व, म, ल—कौशल्या । ३ ल—बांगी । ४ म—कथितं ० । कै—कुशलं ० ।

- सर्वे ह्येते कुशलिनो येषां कुशलमिच्छसि ।
 १२] आह त्वां च पिता शीघ्रमेहीति रघुनन्दन ॥ १२ ॥ [१२
 यदि पश्यसि गन्तव्यं गम्यतामविचारतः ।
 १३] शृशं हि दशनाकांक्षी पिता ते सह मन्त्रिभिः ॥ १३ ॥ [N
 इत्युक्तो भरतो दूतैः प्रत्युवाच वचस्तदा ।
 १४] एवं भवतु गच्छामि मुहूर्तं प्रतिपाल्यताम् ॥ १४ ॥ [१३
 १५] दूतानेतावदुक्त्वा च मातामहमभाषत ॥ १५ ॥ [१४
 अयोध्यां गन्तुमिच्छामि नृपतेर्पितुराज्ञया ।
 १६] दूता हि त्वग्यन्तीमे मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ १६ ॥ [N
 इति मातामहस्तेन भरतेनाभियाचितः ।
 १७] शिगस्याघ्राय सस्नेहादिदं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [१६
 गच्छ त्वमनुजानं त्वां कैकेयी सुप्रजा^५ त्वया ।
 १८] मातरं कुशलं ब्रूयाः पितरं च समागमे ॥ १८ ॥ [१७
 पुरोहितं तथा रामं लक्ष्मणं मन्त्रिणस्तथा ।
 १९] कौशल्यां^६ च सुमित्रां च सर्वांश्चैव सुहृज्जानान् ॥ १९ ॥ [१८
 तस्मै चित्रान्^७ कुथान्^७ शुभ्रान्^८ कम्बलान्यजिनानि च ।
 २०] महाऽर्हाणि च वासांसि ददौ राजाऽर्हणं ततः ॥ २० ॥ [१९
 रुक्मनिष्कसहस्राणि दश द्वादश चैव हि ।
 २१] मातामहः प्रीतिदायं भरताय ददौ धनम् ॥ २१ ॥ [२१
 तस्यामात्यान् बहुविधान् शूरान् भक्तिमतस्तथा ।
 २२] ददावश्वपतीन् राजा भरतस्यानुयायिनः ॥ २२ ॥ [२२
 सहस्रमपि चाश्वानां देभ्यानां वातरंहसाम् ।
 २३] ददौ दशसहस्राणि गजानां हेममालिनाम् ॥ २३ ॥ [२३

५ कै—सुप्रजास्त् । ६ कै, ब, म, छ—कौशल्यां । ७ कै, ब, छ—
 चित्रां कुथां । म—चित्रा कुथा । ८ ब—शुभ्रां । म—शुभ्रा ।

अन्तर्गृहचरान् पुष्टान् व्याघ्रसंहननायुतान् ।

२४] तीक्ष्णदंष्ट्रायुधान् शूरान् शुनश्चोपानयद्ग्रहन् ० ॥ २४ ॥ [२०

रथानति विचित्रांश्च योजयित्वा परः शतान् । ०

२५] गोऽश्वोष्ट्ररासै युक्तान् ० भरतं यान्तमन्वयुः ॥ २५ ॥ [२९

स मातामहमामन्व्य मातुलं च युधाजितम् ।

२६] रथमारुह्य भरतः शङ्खघ्नसहितो ययौ ॥ २६ ॥ [२८

बलेन युक्तो महता महात्मा

सहायकैरात्मसमैरमात्यैः ० ।

आदाय शङ्खघ्नमपेतशङ्खं

२७] ययौ पुरं स्वर्गभिवापरेन्द्रः ॥ २७ ॥ [३०

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतगमनं

नाम [षट्सप्ततितमः] सर्गः [॥७६ ॥]



- [वं-७३]=[सप्तसप्ततितमः सर्गः]=[दा-७१]
 स ततः प्राङ्मुखो राष्ट्राभिर्याय भरतस्तदा ।
- १] जगाम शीघ्रं द्युतिमान् पितुरादाय शासनम् ॥ १ ॥ [१]
 स नदीं दूरपारां च तिर्यकस्त्रोतःसमागताम् ० ।
- २] शतद्रुमतरच्छ्रीमान् क्रमेणेक्ष्वाकुनन्दनः ॥० २ ॥ [२]
 बीजवाट्यां^१ ० नदीं ० तीर्त्वा ० प्राप्य चामरकण्टकम् ।
- ३] शिलामकच्छगां तीर्त्वा चाग्नेयीं^२ शल्यकर्तनाम्^३ ॥ ३ ॥ [३]
 सत्यसन्धः शुचितमां प्रेक्षमाणः शिलावहाम् ।
- ४] प्रत्यायात् स महासत्त्वो वनं चैत्ररथं प्रति ॥ ४ ॥ [४]
 शब्देनाकारयच्चैषा हादिनी पावनोदका ।
- ५] यमुनां प्राप्य सन्तीर्य बलमाश्वासयत्तदा ॥ ५ ॥ [५]
 ६] यमुनायां च 'स' स्नान्वा स्नापयित्वा च वाजिनः । [७पृ
- पू७] राजपुत्रो महाबाहुर्गच्छद्दर्पवर्धनः ॥ ६ ॥ [८पृ
 हिरण्योदामपि नदीमुत्तीर्याद्विस्थले पुरे । [N
- ८] तोरणान् दक्षिणेनैव वारणस्थलमभ्यगात्^४ ॥ ७ ॥ [११पृ
 ततोऽवतीर्य प्रययौ यामं दशरथात्मजः ।
- ९] तस्मिन्नुषित्वा तां रात्रिं प्राञ्जुस्वः प्रययौ ततः ॥ ८ ॥ [१२पृ
 उद्यानमुज्जिहाना ये प्रियका यत्र पादपाः । [१२उ
- १०] भद्रं शल्यवनं दुर्गं समतीत्य त्वरान्वितः ॥ ९ ॥ [N
 अथानुशाप्य भरतो वाहिनीं^५ चतुरङ्गिणीम्^६ । [१३उ
- ११] ततः शीघ्रतरं प्रायाद्दुषीर्योच्चारिकां नदीम् ॥ १० ॥ [१४पृ
 सरितोऽन्याश्च विविधाः सन्ततार त्वरान्वितः । [१४उ

० ब । १ छ—०वाज्यां । म—०वाज्यं । २ छ—प्रीर्यां । म—
 प्रीर्यं । ३ म—०कंतनम् । ४ ब, म, छ—स च । ५ ब, म, छ—०मन्ययात् ।
 ६ ब, म, छ—वाहिजा (छ—०ना) चतुरंगिजा ।

- १२] सप्तस्पर्द्धा समासाद्य कुलिनामभ्यवर्षत ॥ ११ ॥ [१५पु
 तस्माद्भ्येत्य लौहित्यं तताराय च पावनीम् । [१५उ
 १३] एकशल्यां स्थानवर्ती विनतां गोमतीं नदीम् ॥ १२ ॥ [१६पु
 कलिङ्गनगरे ऽतीत्य घनं सालवनं ततः । [१६उ
 १४] भरतः क्षिप्रमभ्यायादपरिश्रान्तवाहनः ॥ १३ ॥ [१७पू
 N] गंगां ततार द्युतिमान् हरितीर्थे महानदीम् । [N
 पू१५] गोमतीमभितः सायं द्विजवर्यसमाकुलाम्^७ ॥ १४ ॥ [N
 उ१५] स ततो गोमतीं तीर्त्वा प्रयातश्चोदिते रवौ । [N
 पू१६] अयोध्यां मनुना राज्ञा स ददर्श निवेशिताम् ॥ १५ ॥ [१८पू
 उ१६] सन्तीर्य गोमतीं दूर्णं भरतो दीनमानसः । [N
 पू१७] तां पुरीं मनुजव्याघ्रः सप्तरात्रोषितः पाथि ॥ १६ ॥ [१८उ
 उ१७] दृष्ट्वाऽयोध्यामुवाचेदं सारथिं रथिनां वरः । [१९पू
 नातिप्रहृष्टदेशैषा ऋयोध्या दृश्यंत पुरी । [१९उ
 १८] आम्लानोपवनोद्याना हतत्विडिव सारथे ॥ १७ ॥ [२०पू
 विद्वदभिर्गुणसंपन्नै र्वेदेवेदाङ्गपारगैः" । [२०उ
 १९] द्विजैर्बहुभिराकीर्णां राजर्षिवरपालिता ॥ १८ ॥ [२१पू
 अयोध्यायां पुरा घोषो दूरादेव जनोद्भवः । [२१उ
 २०] श्रूयते सागरस्यैव मध्यमानस्य वायुना ॥ १९ ॥ [२२उ
 सोऽद्य न श्रूयते कस्मादयोध्यायां जनस्वनः" । [२२उ
 २१] गतश्रीरिव चाभाति केनायोध्या महापुरी ॥ २० ॥ [N
 उद्यानानि च रम्याणि मुदा प्रक्रीडितैर्जनैः । [२२उ
 २२] आकीर्णान्युपलस्यन्ते तानि नाद्य यथा पुरा ॥ २१ ॥ [N
 अरण्यभृतं पश्यामि नगरोपवनं पितुः । [२४पू
 २३] शून्यं यथा वनोद्देशं नरनारीविबर्जितम् ॥ २२ ॥ [N

- न यानैरद्य दृश्यन्ते न गजैर्न च वाजिभिः । [२४७
 २४] निर्यान्तः प्रविशन्तो वा जनाः पुरनिवासिनः ॥ २३ ॥ [२४१
 अरि(नि?)ष्टान्येव पश्यामि निमित्तान्यद्य सर्वशः । [२६५
 २५] केनापि च शरीरं मे व्यथतीव हि सारथे ॥ २४ ॥ [N
 इति ब्रुवन्नेव वचो भरतः श्रान्तवाहनः ।
 २६] विवेश तां पुरीं रम्यां द्वाःस्थैश्च प्रतिपूजितः ॥ २५ ॥ [३३
 त्वरन्नेकाग्रहृदयो द्वाःस्थं संपूज्य तं जमम् ।
 २७] सूतमश्वपतेः श्रान्तमब्रवीत्तत्र राघवः ॥ २६ ॥ [३४
 श्रुता नो यादृशाः पूर्वं निवेशे पृथिवीपतेः ।
 २८] आकारास्तानहं सर्वानद्य पश्यामि सारथे ॥ २७ ॥ [३६
 मलिनं चाश्रुपूर्णाक्षं दीनं ध्यानपरं कृशम् ।
 २९] सखीपुमांसं पश्यामि जनमुत्कण्ठितं पुरे ॥ २८ ॥ [४३
 इत्येवमुक्त्वा भरतः सूतं तं दीनमानसः ।
 ३०] अरि(नि?)ष्टान्स्तानयोध्यायां प्रेक्ष्य धीमान् ययौ गृहम् ॥ २९ ॥ [४४
 तां शून्यशृङ्गाटकवेश्मरथ्यां
 राज्ञोरणद्वारकवाटयन्त्राम् ।
 दृष्ट्वा पुरीं दीनजनानुकीर्णां
 ३१] शोकेन संपूर्णतरो बभूव ॥ ३० ॥ [४५
 बहूनि पश्यन् मनसोऽभियाणि
 यान्यस्य दीनस्य पुरे बभूवुः ।
 अवाकूशिरा दीनतरो मनस्वी
 ३२] पितुर्महात्मा स विवेश वेष्म ॥ ३१ ॥ [४६
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतागमनं नाम
 [सप्तसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७७ ॥]

- [वं-७४]=[अष्टसप्तातितमः सर्गः]=[दा-७२]
 अवीक्षमाणः पितरं स तत्र पितुरालये ।
- २] जगाम निःसृत्य ततो भरतो मातुरन्तिकम् ॥ १ ॥ [१]
 स तत्र गत्वा भरतो मातुरुत्सुकमानसः ।
- ४] जग्राहावनतः पादौ शिरसा पतितो भुवि ॥ २ ॥ [३]
 तं च सा मूर्ध्न्युपाघ्राय परिष्वज्य च कैकयी ।
- ५] उपविश्याथ भरतं संप्रष्टुमुपचक्रमे ॥ ३ ॥ [४]
 मासोऽसि कुचिरेणाद्य मातामहपुरात् सुत ।
- ६] सुखेनाभ्यागतः कश्चित् पथि श्रान्तपरिच्छदः^१ ॥ ४ ॥ [५]
 कश्चित्कुशल्यार्यकस्ते युधाजिन्मातुलस्तथा^२ ।
- ७] सुखमप्युषितः कश्चित् पुत्र मातामहे कुले ॥ ५ ॥ [६]
 इति पृष्टस्तु कैकेय्या भरतो दीनमानसः ।
- ८] शशंस मातुः स क्षिप्रं गमनागमनक्रमम् ॥ ६ ॥ [७]
 अद्य मे दिवसाः सप्त निःसृतस्य गिरिव्रजात् ।
- ९] अम्बायाः कुशली तातो युधाजिन्मातुलश्च मे ॥ ७ ॥ [८]
 यन्मे भीतिघनं भूरि दत्तं मातामहेन वै^३ ।
- १०] पथि तत्सर्वमुत्सृज्य ततोऽहं शीघ्रमागतः ॥ ८ ॥ [९]
 राज्ञा नु प्रेषितैर्दूतैः प्रेर्यमाणस्त्वरान्वितः ।
- ११] तत्र त्वां प्रष्टुमिच्छामि तन्ममाख्यातुमर्हसि ॥ ९ ॥ [१०]
 न यथावत् पुरामिदं दृष्टुर्पारजनादृतम् ।
- १२] कस्माद्दीनजनाकीर्णं लक्ष्यते विगतद्युति ॥ १० ॥ [११]
 निरुत्साहं निरानन्दं विरताध्ययनस्वनम् ।
- १३] कस्माच्च मां राजमार्गे जनो नायाति चाग्रतः ॥ ११ ॥ [N]

१ व-०परिधमः । म, छ-शांतपरिधमः । २ छ-०स्तव ।

३ व, म, छ-मे ।

पितरं च न पश्यामि केनाद्य भवने निजे ।

- १४] किं वा भवेद्गतोऽम्बायाः कौशल्याया निवेशनम् ॥१२॥ [१३
वर्जितं शयनीयं ते भर्त्रा केनाद्य हेतुना ।
- १५] अप्रहृष्टो जनश्चायं केन वा ब्रूहि तन्मम ॥ १३ ॥ [१२
अथ 'राजा स यत्रास्ते तत्राहं गन्तुमुत्सहे ।
- १६] न हि शर्माधिगच्छामि तमदृष्ट्वा नराधिपम् ॥ १४ ॥ [N
इति ब्रुवाणं भरतं कैकेयी प्रत्यभाषत ।
- १७] निर्लज्जा दारुणं वाक्यमाप्रियं प्रियसंहितम् ॥ १५ ॥ [१४पृ
स्वर्गं गतो महाराजः पिता ते सुकृतैः स्वकैः ।
- १८] त्वयि राष्ट्रं विसृज्यैव पुत्रशोकपरिषतः ॥ १६ ॥ [N
इति श्रुत्वा बचो मातु र्भरतो दारुणाक्षरम् ।
- १९] पपात सहसा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः ॥ १७ ॥ [१६
स भूमौ विनिपत्येदं^५ बिललापाकुलेन्द्रियः ।
- २०] हा कष्टं स्वर्गतो राजा कथं वा केन हेतुना ॥ १८ ॥ [१७, १८
यत्पुरा तेन मे पित्रा शयनं भात्यलङ्कृतम् । [१९पृ
- २१] तदेव रहितं तेन श्रिया हीनं न राजते ॥ १९ ॥ [२०पृ
मज्जिज्ञासाऽर्थमथ^६ वा यदि तेऽभिहितं मृषा ।
- २२] प्रसीदाम्ब भृशाचोऽहं शंस मे क्व गतो नृपः ॥ २० ॥ [N
इत्यार्चरूपं पतितं^७ पितुर्दर्शनलालसम् ।
- २३] कैकेयी पतितं भ्राम्बुत्थाप्येदं बचोऽब्रवीत् ॥ २१ ॥ [२२, २३
उन्निष्ट भरत छिन्नं न त्वं शोचिर्मुर्हसि ।
- २४] त्वद्विधा न हि शोचन्ति दृष्टधर्माः परन्तप ॥०२२ ॥ [२४

४ (अम्ब ?) । ५ ब, म, ल—बिललापेदं । ६ ब, म, ल—
०मपि । ७ म—भरतं । ०ब

- पालयित्वा महीं सम्यागिष्ट्वा दत्त्वा च ते पिता ।
 २५] दिष्टान्तं समनुप्राप्तो न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २३ ॥० [N
 इत ऊर्ध्वतरं स्थानं राजा दशरथो गतः ।
 २६] न स शोच्यस्त्वया पुत्र सत्यधर्मपरायणः ॥ २४ ॥ [N
 इत्येतद् भरतः श्रुत्वा कैकेय्या दारुणं वचः ।
 २७] जननीं पुनरेवेदमुवाच भृशदुःखितः ॥ २५ ॥ [२६
 अभिषेक्ष्यति रामं नु राजा यज्ञं नु यक्ष्यति^९ ।
 २८] इत्याशाकृतसङ्कल्पस्त्वरमाणोऽहमागतः ॥ २६ ॥ [२७
 तदद्याशंसितं सर्वं मम मोघमचेतसः ।
 २९] पितरं कृतपुण्यो हि को मृतं श्रोतुमर्हति ॥ २७ ॥ [२८
 अम्ब केन मृतो राजा व्याधिना मय्यनागते ।
 ३०] धन्यो रामो लक्ष्मणश्च पिता याभ्यां स सत्कृतः ॥ २८ ॥ [२९
 नूनं मां न पिता वृद्धः प्राप्तं जानानि वत्सलः ।
 ३१] उपाजिघ्रेत^९ मां स्नेहात्संपरिष्वज्य मूर्धनि ॥ २९ ॥ [३०
 क्व स पाणिः सुखस्पर्शस्तातस्य शुभलक्षणः ।
 ३२] येन मां रजसा ध्वस्तमभीक्षणं परिमार्जयेत् ॥ ३० ॥ [३१
 येन मे माता पिता बन्धुर्यस्य दासोऽस्मि धीमतः ।
 ३३] तं नाथं मे^{१०} त्वमाचक्ष्व^{१०} रामं भ्रातरमग्रजम् ॥ ३१ ॥ [३२
 यं दृष्ट्वा पितृशोकार्चो लभेयं निर्दृतिं पराम् ।
 ३४] बस्य पादानुपाश्रित्य जीवेयं तं प्रचक्ष्व मे ॥ ३२ ॥ [N
 पू३५] क्व मे पितृसमो भ्राता ज्येष्ठो धर्मभृतां वरः ।

० व । ८ व, म—रक्ष्यति । ९ म, ल—उपाजिघ्रेत । व—उपा-
 जिघ्रेत । १० के—सो ममाचक्ष्व ।

- पू३७] सर्वमेतद्यथातत्त्वं त्वं ममाख्यातुमर्हसि ॥३३ ॥ [N
 उ३७] इति पृष्ठाऽथ भरतं कैकेयी वाक्यमब्रवीत् । [३५उ
 पू३८] राजपुत्र महासत्त्व शृणु तत्त्वमशेषतः ॥ ३४ ॥ [N
 उ३८] श्रुत्वा¹¹ च¹¹ न विपादं त्वं गन्तुमर्हसि मानद । [N
 पू३९] यथा पिता ते धर्मात्मा प्राणांस्न्यक्त्वा दिवं गतः ॥ ३५ ॥ [N
 उ३९] शृणु तत्तेऽभिधास्यामि¹² यच्चोवाच पिता स ते । [N
 पू४०] हा पुत्र रामेत्युक्त्वा च हा पुत्र लक्ष्मणेति च ॥३६ ॥ [३६पू
 उ४०] विलप्यंत्रं मुबहुशः प्राणांस्नत्याज ते पिता । [३६उ
 पू४१] इदं चापश्चिमं वाक्यमुक्त्वा राजा दिवं गतः ॥ ३७ ॥ [३७पू
 N] पुत्रशोकाग्निसन्तप्तः कालदण्डनिपीडितः । [३७उ
 उ४१] मिद्धार्थास्ते हि रामं ये पश्यन्त्यभ्यागतं वनात् ॥३८ ॥ [३८पू
 निस्तीर्णसमयं सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च । [३८उ
 ४२] श्रुत्वैतद्विषसादातो द्वितीयाभियशङ्क्या ॥३९ ॥ [३९पू
 विषण्णवदनश्चैव भूयः पप्रच्छ मातरम् । [३९उ
 ४३] केदानीं वर्त्तते रामः किमर्थं वा गतो वनम्¹³ ॥४० ॥ [४०पू
 वैदेह्या सह कस्माच्च गतोऽसौ लक्ष्मणेन च । [४०उ
 ४४] इति पृष्ठा ततस्तेन कैकेयी वाक्यमब्रवीत् ॥ ४१ ॥ [४१पू
 पुनर्वै भरतं छुद्रं दीनमभियशङ्क्या । [४१उ
 ४५] चीरवल्कलसंवीतो गतो राम इतो वनम् ॥ ४२ ॥ [४२पू
 पितुर्नियोगात्सहितो वैदेह्या लक्ष्मणेन च । [४२उ
 ४६] मया च तत्कृतं येन रामः प्रव्रजितो वनम् ॥ ४३ ॥ [N
 स्वर्गतः पुत्रशोकार्चस्तं च प्रव्राज्य ते पिता [N
 ४७] तच्छ्रुत्वा भरतस्तस्या मातुः पापविशाङ्कितः¹⁴ ॥४४ ॥ [४३पू

11 ल—श्रुत्वाथ। म—श्रुत्वाथ। 12 ल—ते त्वभिः। 13 म—नृणाम् ।

- स्ववंशशुद्धिमन्विच्छन्^{१५} प्रष्टुमारब्धवानिदम् । [४३७]
 ४८] कश्चिन्न ब्राह्मणधनं हृतं रामेण धीमता ॥ ४५ ॥ [४४५]
 कश्चिदाढ्यो दरिद्रो वा भ्रात्रा मे न विहिंसितः । [४४७]
 ४९] येन निर्वासितः श्रीमान् प्राणेभ्योऽपि प्रियः सुतः ॥ ४६ ॥ [N]
 कश्चिन्न परदारान्स मम भ्राता ऽभ्यपद्यत^{१६} ।
 ५०] येनासौ दण्डकारण्ये भ्रूणेहव विवासितः ॥ ४७ ॥ [४५]
 स्त्रीचापलाचु^{१७} तच्छ्रुत्वा^{१७} कैकेयी पुनरब्रवीत् ।
 ५१] भरतं श्लाघमानेव^{१८} स्वकर्मान्यापयत्तदा ॥ ४८ ॥ [४६]
 अशुभा शुभभावाय भरताय महात्मने ।
 ५२] शशंस सा यथातत्त्वं मूढा पण्डितमानिनी ॥ ४९ ॥ [४७]
 न ब्रह्मस्वं हृतं तेन न च किं द्विहिंसितम् ।
 ५३] न चैत्र परदारान् स मनसाऽपि प्रधर्षति ॥ ५० ॥ [४८]
 शीलवान् धार्मिको विद्वान् विपाप्मा विजितेन्द्रियः ।
 ५४] न स किञ्चिन्महासत्त्वः कृतवान् पापमण्वपि ॥ ५१ ॥ [N]
 तेन धर्मात्मना लोकः कृत्स्नोऽयमनुरक्षितः ।
 ५५] राजाऽभिषेक्तुकामो वै यौवराज्यपदे स्वके ॥ ५२ ॥ [N]
 ततः श्रुत्वा मया पुत्र तथाकृतमतिर्नृपः ।
 ५६] त्वदर्थं याचितो राजा यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ५३ ॥ [४९]
 रामस्य च वने वासं नववर्षाणि पञ्च च ।
 ५७] तेन निर्वासितां रामः पित्रा ते नगराद्बहिः ॥ ५४ ॥ [४९७]
 स चापि वचनाद्दामः पितुर्धर्मपरायणः ।
 ५८] वनं गत इतः सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च ॥ ५५ ॥ [५०]

१५ व -स्वकांक्षसिद्धिम० । १६ व-प्रपद्यत । म-नपद्यत ।
 ल-नु (न्व ?) पश्यत । १७ व, म-०चापलास्ततः श्रु० । ल-
 ०चापलार्ततः श्रु० । १८ ल-०मानेन ।

न च पश्यन् भियं पुत्रं पिता ते धर्मवत्सलः ।

६९] पुत्रशोकपरो दीनः प्राणांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ ५६ ॥ [५१

त्वत्प्रियार्थं मया कर्म कृतमेतद्विगर्हितम् । [५२उ

६०] यत्सर्वगुणसंपन्नो रामः प्रव्राजितो वनम् ॥ ५७ ॥ [N

तद्वियोगाच्च राजाऽसौ पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ।

६१] भियान् प्राणान् परित्यज्य प्रेतराजवशं गतः ॥ ५८ ॥ [N

गृहाण तदिदं राज्यं सफलं कुरु मे श्रमम् । [५२पृ

६२] मनो नन्दय मित्राणां मम चामित्रकर्षण ॥ ५९ ॥ [N

श्वः पुत्र शीघ्रं विधिवत्स्वराज्यं

विभै र्वसिष्ठप्रमुखैः समेत्य ।

सत्कृत्य राजानमनन्तरं च

६३] स्वात्मानमस्मिन्नाभिषेचयस्व¹⁹ ॥ ६० ॥ [५४

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरतप्रभे कैकेयीवाक्यं

नाम [अष्टसप्ततितमः] सर्गः [॥७८ ॥]



[वं-७५]=[एकोनाशीतितमः सर्गः]=[दा-७३ तथा ७४]

- श्रुत्वाऽथ पितरं प्रेतं भ्रातरौ च विवासितौ ।
 १] भरतो दुःखसन्तप्तो मातरं पुनरब्रवीत् ॥ १ ॥ [७३ । १
 रामं राष्ट्राद् भ्रंशयित्वा कैकेय्यनपकारिणि^१ ।
 २] परित्यक्त्वाऽसि धर्मेण गृहिते पापनिश्चये ॥ २ ॥ [७४ । २
 राज्यलोभाद् पतिं प्राणैर्वियोज्य च यशस्विनम् ।
 ३] गन्ताऽसि^२ निरयं घोरं सर्वथैव धिगस्तु ते ॥ ३ ॥ [N
 यदि त्वं राज्यलोभेन गन्तुं निरयमिच्छसि ।
 ४] पतन्त्या निरये कस्माद्दहमप्यनुपातितः ॥ ४ ॥ [N
 हा दग्धोऽस्मि हतश्चैव त्वया मात्रा^४ नृशंसया^४ ।
 ५] त्यक्ष्याम्यहमपि प्राणान् मातस्त्वं सुखिनी भव ॥ ५ ॥ [N
 किं नु तेऽपकृतं भर्त्रा किं रामेण महात्मना ।
 ६] यथो मृत्युर्विवासश्च त्वया तुल्यमुपाहितौ ॥ ६ ॥ [७४ । ३
 भ्रूणहत्या त्वया प्राप्ता ब्रह्महत्या च कुत्सिता । [७४ । ४पू
 ७] रामं राज्याद् भ्रंशयित्वा पतिं प्राणैर्वियोज्य च ॥ ७ ॥ [N
 मा तेऽस्त्वयं शुभो लोको मा परो भर्तृघातिनि^५ । [N
 ८] कैकेयि नरकं गच्छ भर्तृश्लापपरिहता ॥ ८ ॥ [७४ । ४उ
 हा दग्धो नाशितश्चास्मि त्वयाऽहं राज्यलुब्धया ।
 ९] किं मे राज्येन भोगैर्वा दग्धस्यायशसा त्वया ॥ ९ ॥ [७३ । १३
 विप्रयुक्तस्य मे पित्रा भ्रात्रा पितृसमेन च ।
 १०] जीवितेनापि नार्थोऽस्ति कश्चिद्राज्येन वै कुतः ॥ १० ॥ [N
 देवकल्पेन पित्रा यद्विहीनो राघवेण च ।

१ कै-०कारिणी (०कारिणं ?) । २ छ-गता० । म-गतः० ।

३ म, छ-पतत्या । ४ कै-मण्डनुरां० । ५ शक्तोकार्द्धमेतत्
 किञ्चित्पाठभेदेन भग्ने (८० । ३उ) वर्तते ।

- ११] केनेच्छेयं हेतुनाऽहं राज्यं प्राप्तुमशक्तिमान् ॥ ११ ॥ [७३।१४
भवेद्यद्यपि मे शक्तिः श्वासितुं राज्यमूर्जितम् ।
- १२] तथाऽपि न सकामां त्वां करिष्ये मातृगार्धिनि^९ ॥ १२ ॥ [७३।१७
माश्रिमित्तं पिता प्राणैस्त्वया मे विप्रयोजितः ।
- १३] प्रव्राजितो वनं चैव रामो धर्मभृतां वरः ॥ १३ ॥ [७४।१०
अहो पापं महन्मूर्ध्नि त्वया मे विनिपातितम् ।
- १४] अपापः पापसङ्कल्पे सर्वथाऽहं हतस्त्वया ॥ १४ ॥ [N
व्रणे क्षारं विनिक्षिप्तं दुःखे दुःखं निपातितम् ।
- १५] त्वया^९ पतिं घातयित्वा^९ रामं कृत्वा च तापसम् ॥१५॥ [७३।३
कुलस्यास्य विनाशाय पित्रा मे त्वामहाहृता ।
- १६] त्वां कालरात्रिप्रतिमां पिता मे नावबुद्धवान् ॥ १६ ॥ [७३।४
आहृता घोरसङ्कल्पा राज्ञा त्वं मृत्युरात्मनः ।
- १७] व्याली घोरविषेव त्वं भर्त्राऽसि परिपालिता ॥ १७ ॥ [N
अपापः पापसङ्कल्पे सत्यसन्धः पिता मम ।
- १८] छलयित्वा^९ प्रियैः^{१०} प्राणैः सत्पुत्रेण वियोजितः ॥१८॥ [N
तथैव स महाभागो लक्ष्मणो भ्रातृवत्सलः ।
- १९] प्रव्राजितो वनं राज्यात् पितृगौरवयन्त्रितः ॥ १९ ॥ [N
कौशल्या च सुमित्रा च पुत्रशोकपरिप्लुते ।
- २०] दुष्करं यदि जीवेतां त्वया पापे निराकृते ॥ २० ॥ [७३।८
न त्वं केकयराज्ञोऽसि^{११} जाता मतिमतां वरात् ।
- २१] पापवृक्षां च जाने त्वां जातां घारेण रक्षसा ॥ २१ ॥ [७४।९
रामे त्वं किं न्वकल्याणमकल्याण्यनुपश्यसि ।

६ व—०गधिनि । छ—०गधिनि । म—मातिर्गं दिने । ७ व—

दुःखं निपातितं त्वया । ४ व—पतिं च घातयित्वा सं । ९ म, छ—

कल्पयित्वा । १० व—प्रियः । ११ के—केकेयि राज्ञोऽसि । व—केकयराजस्य ।

- २२] येन त्वया साधुवृत्तो रामः प्रव्राजितो बने^{१२} ॥ २२ ॥ [N
मातरीव च यो वृत्तिं रामस्त्वय्यनुवर्त्तते ।
- २३] तस्य प्रव्राजनं पापे किं पश्यन्त्या त्वया कृतम् ॥ २३ ॥ [७३ । ९
पितर्यमाधु किं मे त्वं रामे^{१३} वा दृष्टवत्यसि ।
- २४] येनाकार्यं कृतवती मम त्वमयज्ञस्करम् ॥ २४ ॥ [N
यदा माता च मे ज्येष्ठा कौशल्या धर्मदर्शिनी ।
- २५] त्वयि वृत्तिं परां प्राप्ता भगिन्यामिव वर्त्तते ॥ २५ ॥ [७३ । १०
अथ कस्माच्चयाऽनार्ये तस्याः पुत्रः प्रवासितः ।
- २६] त्वयाऽऽत्मानं दूषयन्त्या दूषितोऽहं नृशंसया ॥ २६ ॥ [७३ । १०
N] अनृशंसं महात्मानमपापं पापनिश्चये ।
- पृ२८] निवर्त्तयिष्ये तं गत्वा वनवासादहं स्वयम् ॥ २७ ॥ [७३ । २६
उ२८] विज्ञाप्य रघुशार्दूलं रामं भ्रातरमग्रजम् ।
- पृ२९] वत्स्याम्यहं बने घोरे नववर्षाणि पञ्च च ॥ २८ ॥ [७४ । ३१
उ२९] पितुर्नियोगाद् भ्राता मे रामो राजा भविष्यति । [N
इत्येवमुक्त्वा भरतोऽतिरोषाद्
विगर्हयित्वा जननीं सुखार्हः ।
शोकातुरः सस्वनमुञ्जनाद्
- ३०] सिंहो यथा पर्वतकन्दरस्थः ॥ २९ ॥ [२८
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कैकेयीविगर्हणं नाम
[एकोनाशीतितमः] सर्गः [॥ ७९ ॥]



[वं-७६]=[अश्नितितमः सर्गः]=[दा-७४]

तथा स गर्हयित्वा तां मातरं भरतस्तदा^१ ।

- १] दुःखेन महताऽऽविष्टः पुनरेवेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१]
 योषित्स्वभावे कैकेयि नृशंसे निरपन्नपे । [२पू
- २] किं तेऽपराद्धं रामेण भर्त्रा वा पापानश्चये ॥ २ ॥ [३पू
 एवं क्रूरस्वभावायाः सर्वथैव धिगस्तु ते ।
- ३] मा ते ऽस्त्वयं शुभो लोको मा परः कुलपांसनि ॥ ३ ॥ [N
 सर्वलोकाभियं कृत्वा कथं नाम न लज्जसे ।
- ४] कथं त्वां नयते भूमिः स्वामित्वं भर्तृघातिनि ॥ ४ ॥ [N
 कथं तेनर्षिकल्पेन मम पित्रा महात्मना ।
- ५] तवापराधः स्नानोऽयं सर्वलोकविगर्हितः ॥ ५ ॥ [N
 कथं श्लापाग्निना तेन न दग्धाऽसि महात्मना ।
- ६] त्वद्दोषदूषितश्चाहं न दग्धः केन हेतुना ॥ ६ ॥ [N
 प्राणैर्वियोजितो भर्ता रामः प्रव्राजितो वनम् ।
- ७] मम चाप्ययज्ञो मूर्ध्नि पातेतं लुब्धया त्वया ॥ ७ ॥ [६
 तस्मात् पापसमुद्धारं न ते पश्यामि गर्हिते^२ ।
- ८] लोकानां परिवर्त्तेऽपि निरयं न तरिष्यसि ॥ ८ ॥ [N
 मातृरूपेण मेऽभिन्ने नृशंसे राज्यकामिके ।
- ९] न तेऽहमभिघातव्यो निर्धृणे भर्तृघातिनि ॥ ९ ॥ [७
 कौशल्या च मुमित्रा च तथाऽन्या मम मातरः ।
- १०] त्वयैकया पापशीले पीडिता निरपन्नपे ॥ १० ॥ [८
 न त्वं केकयराजस्य दुहिता विदितात्मनः ।
- ११] राक्षसी काशपि रात्रस्त्वं दुहितृत्वमुपागता ॥ ११ ॥ [९
 सर्वलोकभियो रामो यस्त्वया पापानिश्चये ।

- १२] प्रव्राजितः पापरता का त्वदन्या भविष्यति ॥१२॥ [N
पितुर्वियोगजं दुःखं महदापादितं त्वया ।
- १३] भर्तृन्यागकृतं चैव सर्वलोकविगर्हितम् ॥१३॥ [११
शुद्धस्वभावां सहृत्तां कौशल्यां पुत्रलालसाम् ।
- १४] विवत्सां वत्सलां कृत्वा कांस्त्वं लोकान् गमिष्यसि ॥१४॥ [१२
नाभिजानासि किं दुःखमिष्टपुत्रवियोगजम् ।
- १५] पुत्रेणेष्टेन कौशल्या तथा ते विप्रयोजिता ॥१५॥ [१३
अङ्गमत्यङ्गजो मातुः पुत्रो हृदयसंभवः ।
- १६] तस्मादृते मियतरः पुत्रान्मातुर्न विद्यते ॥ १६ ॥ [१४
पुरा किल गवां माता सुरभिः सुरसंमता ।
- १७] कृशौ प्रतोदनुभाङ्गौ बहमानौ महीतले ॥१७॥ [१५
दृष्ट्वा पुत्रौ रुरोदार्त्ता^३ सीदन्ती च मुहुर्मुहुः ।
- १८] तामिन्द्रो रुदतीं दृष्ट्वा धर्मात्मा वै^४ कृपां^५ गतः ॥१८॥ [१६
आकाशे गच्छतस्तस्याः^६ सुरभ्या अश्रुविन्दवः । [१८ उ
- १९] शोकोष्णाः पतिता गात्रे भृशं सुरभिगन्धयः ॥ १९ ॥ [१७ उ
तैरश्रुविन्दुभिः स्पृष्टः समुद्रीक्ष्याथ वासवः ।
- २०] सुरभिं प्राञ्जलिर्वाक्यमभिगम्येदमब्रवीत् ॥२०॥ [१९
कश्चिन्न भयमस्माकं कुतश्चिदनुपश्यसि ।
- २१] यन्मिमिच्छं मुहुःस्वार्त्ता रोदिषि ह्यहि तन्मम ॥२१॥ [२०
इत्युक्त्वा सुरभिस्तेन शक्रेणामिततेजसा ।
- २२] प्रन्युवाच मुहुःस्वार्त्ता पुरन्दरमिदं वचः ॥२२॥ [२१
नाहं भयं वः पश्यामि कुतश्चिदमराधिप ।
- २३] अहं हि स्वौ^६ कृशौ^६ पुत्रौ शक्र शोचामि दुःस्वितौ ॥२३॥ [२२

३ छ—रुदती च । ४ कै—को कृपां० । ५ व—गच्छतास्तस्याः ।

६ व—शौत्सौ ।

प्रतोदप्रविभिन्नाङ्गौ सीदन्तौ सुबुभुक्षितौ ।

२४] पीड्यमानौ लाङ्गलन कार्षिकेन दुरात्मना ॥२४॥ [२३

अङ्गप्रत्यङ्गसंभृतौ तावेतौ हृदयोद्भवौ ।

२५] दृष्ट्वा विवर्धते दुःखं नास्ति पुत्रात्परः प्रियः ॥ २५ ॥ [२४

तामब्रवीत्ततः शक्रो देवानामीश्वरः प्रभुः ।

N] मृणु तेऽहं प्रवक्ष्यामि सुरभे लोकपूजितं ॥ २६ ॥ [N

पुरा कृतयुगे देवि गोभिर्ब्रह्माभियाचितः ।

] इच्छामं लोकान् परमान् प्राप्तुं स्वैः कर्मभिर्जितान् ॥२७॥ [N

अब्रवीच्च ततो ब्रह्मा गाः प्रह्लावनताः स्थिताः ।

N] कुरुध्वं मानुषे लोके तपः पापभयापहम् ॥ २८ ॥ [N

यो वः क्लेशो बभुक्षा च वधो बन्धश्च मानुषे ।

N] लोके भविष्यति तपःशुद्धं^{१०} पापभयापहम् ॥ २९ ॥ O [N

यो दुर्बलं परिश्रान्तं व्याधितं चापि निर्दयः^{११} ।

N] वाहयिष्यत्यनड्वाहं गोघ्नः पापमवाप्स्यति ॥ ३० ॥ [N

शक्त समर्थं बलिनं पुष्टं यो वाहयिष्यति ।

N] आसोपदानसंयुक्तं नै स पापमवाप्स्यति ॥ ३१ ॥ O [N

न क्रोद्धव्यं तु युष्माभिः क्लिश्यमानैः कथञ्चन ।^{१२}

N] तेनाक्षयान् नराँल्लोकांस्तपसाऽऽप्स्यथ^{१३} दुर्लभान् ॥३२॥ [N

तस्मादतत् पुरादृप्तं^{१४} धात्रा कर्म गवां भुवि ।

N] तस्मान्मन्युर्न कार्यस्ते श्रुत्वैतद्दातृशासनम्^{१५} ॥ ३३ ॥ [N

7 छ—०पूजितः । ४ व, म—इच्छेम । 10 व—तपः शुद्धौ ।

के—तपः शुद्धं । O छ । 11 म, छ—निर्दयः । के—निर्दयः । O म ।

12 छ—एतत् श्लोकादूर्ध्वान्मरं ३१ श्लोको विद्यते । 13 व, छ—

वरां० । 14 छ—परादत्तं । व—पुं-दत्तं । म—परादत्तं । 15 छ—

०तद्गच्छथा० । म—मातृशा० ।

- इत्येवं शोचितवती गवां माता सुतप्रिया । [N
 २६] यस्याः पुत्रसहस्राणि बहून्यासन्महौजसः ॥ ३४ ॥ [२८पु
 एक एव सुतो यस्यास्त्वया रामो विवासितः । [२९पु
 २७] प्राणेभ्योऽपि प्रियः साऽद्य कथं जीवेत् सदुःखिता ॥ ३५ ॥ [२८उ
 यस्मादेवं तु कैकेयि कौशल्यायास्त्वया कृतम् । [N
 २८] हृच्छरीरमनःशोषि^{१६} दुःखं पुत्रवियोगजम् ॥ ३६ ॥ [N
 तस्मात्वमपि कैकेयि दुःखं प्रेत्येह चान्ययम् । [२९उ
 २९] महत् प्राप्स्यसि दुर्मेधे निरयं पापमास्थिता ॥ ३७ ॥ [N
 अहं त्वपचितिं मातुः^{१७} करिष्ये पितुरेव च ।
 ३०] अस्य चायशसो लोके करिष्याम्यपमार्जनम् ॥ ३८ ॥ [३०
 इति नाग इवारण्ये सहसा बन्धनं गतः ।
 ३१] निःश्वस्योष्णं सुदुःखार्चो रुरोद भरतस्तदा ॥ ३९ ॥ [३५
 संरब्धनेत्रः शिथिलः क्रियामु
 सन्त्यक्तशुभ्राभरणाम्बरस्रक् ।
 बभूव भूमौ पतितो नृपात्मजः
 ३२] शचीपतेः केतुरिवोत्सवक्ष्ये ॥ ४० ॥ [३६
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतविलापो नाम
 [अशीतितमः] सर्गः ॥ ८० ॥



[वं-७७]=[एकाशीतितमः सर्गः]=[दा-७८]

- अथ तत्र यथावार्त्ता तच्छ्रुत्वा लक्ष्मणानुजः^१ । [१पू
 १] स तमुत्थापयामास शत्रुघ्नो भरतं तदा ॥ १ ॥ [N
 श्रुत्वा प्रव्राजितं गमं कुब्जाभेदितया ततः । [N
 २] कैकेय्या दुःखशोकार्तः शत्रुघ्नोऽथाब्रवीदिदम् ॥ २ ॥ [१उ
 विद्वानार्योऽनृशंसश्च सर्वभृतहिते रतः । [N
 ३] स्त्रिया नाम कथं गमो वनं प्रव्राजितोऽवशः ॥ ३ ॥ [२उ
 बलवानस्त्रसंपन्नो लक्ष्मणो लक्ष्मिवर्द्धनः ।
 ४] किं नाभिषिक्तवान् रामं कृत्वाऽपि पितृनिग्रहम् ॥ ४ ॥ [३
 पूर्वमेव स निग्राहो राजा धर्मार्थदर्शिना ।
 ५] लक्ष्मणेन पिता मूढः कामगगवशं गतः ॥ ५ ॥ [४
 इत्येवं भाषमाणे तु शत्रुघ्नं लक्ष्मणानुजं ।
 ६] प्राग्द्वारंभृत्ता^२ कुब्जा सर्वाभरणभूषिता ॥ ६ ॥ [५
 चन्दनागुरुदिग्धाङ्गी महाहार्म्वरभूषिता ।
 ७] मेखलादामभिश्चित्रैः पिनडा कुररी^३ यथा ॥ ७ ॥ [६,७
 समक्ष्य तां ततो द्वाःस्थां भगतः पापकारिणीम् ।
 ८] अन्तःपुरचरिं कुब्जां शत्रुघ्नाय न्यवेदयत् ॥ ८ ॥ [८
 यस्याः कृतं गतो रामो न्यस्तदेहश्च मे गुरुः ।
 ९] सेयं पापा नृशंसा च कुरु चास्या यथोचितम् ॥ ९ ॥ [९
 तामभ्यासगतां दृष्ट्वा शत्रुघ्नो मन्थरां तदा ।
 १०] चर्कषं विनिगृह्णतीं स हि रोपममन्वितः ॥ १० ॥ [N
 क्रोञ्चन्त्या वदनं चास्याः पूरयामास पांशुना । [N
 ११] अन्तःपुरचरीं तां च प्रत्युवाच रुषान्वितः ॥ ११ ॥ [१०उ

१ व, म, ल—अत्रतः । २ व—भ्रूयतः । ०व, म, ल । ३ व,
 म, ल—कुञ्जरी ।

- यया कृतं महदुःखं भ्रातृणां मे पितुस्तथा । [११पू
 १२] तामिमां मन्थरामघ्न नयामि यमसादनम् ॥ १२ ॥ [N
 शत्रुघ्नेन तथा कुब्जां कृष्यमाणां महीतले । [१२उ
 १३] सहसा विननादार्यो दृष्ट्वा कुब्जासुहृज्जनः ॥ १३ ॥ [१३पू
 क्रुद्धमाज्ञाय शत्रुघ्नं भयसंविग्रमानसः । [१३उ
 १४] अमन्त्रयत चैवार्चः कुब्जापरिजनस्तदा ॥ १४ ॥ [१४पू
 पू१५] यथाऽयमभिसंक्रुद्धा निःशेषं नः करिष्यति । [१४उ
 N] सानुक्रोशां शरण्यां च दीनानाथार्चवान्धवाम् ॥ १५ ॥ [१५पू
 उ१५] कौशल्यां शरणं यामः सा हि नोऽद्य परायणम् । [१५उ
 पू१६] स चापि रोषताम्राक्षः शत्रुघ्नः शत्रुतापनः ॥ १६ ॥ [१६पू
 उ१६] विचर्कष भृशं कुब्जां^४ क्रोशन्तीं पृथिवीतले । [१६उ
 पू१७] तस्या विदुष्यमाणाया मन्थराया इतस्ततः ॥१७॥ [१७पू
 उ१७] भूषणान्यवशीर्णानि चित्राणि रुचिराणि च । [N
 पू१८] तस्यास्तैर्भूषणैश्चित्रैर्विनिकीर्णं महीतलम् ॥ १८ ॥ [१७उ
 उ१८] रराजामलताराढ्यं शरदं गगनं यथा । [१८उ
 तामाकृष्य च शत्रुघ्नः कैकेयीसन्निधौ तदा ।
 १९] क्रोधसंरक्तनयनः प्रोवाच परुषं वचः ॥ १९ ॥ [१९
 ययेदमशुभं कर्म कुलक्षयकरं कृतम् ।
 २०] असत्स्त्री साऽद्य कैकेयी कथं त्वां मोचयिष्यति^५ ॥२०॥ [N
 यथा^६ नावेक्षितः पुत्रो न राजा नात्मनो यज्ञः ।
 २१] सा^७ प्राप्स्यत्यशुभस्यास्य प्रेत्य पापफलोदयम् ॥ २१ ॥ [N
 मूलं नस्त्वमनर्थस्य कुलक्षयकरस्य हि ।
 २२] तस्मात्कुब्जेऽद्य हत्वा त्वां नयामि यमसादनम् ॥२२॥ [N

४ व, म, ल—क्रुद्धां । ५ व, म, ल—मोक्षयिष्यति । ६ कै—यथा ।

७ आत्मान इति “वा” स्थाने उपरि लिखितम् । ७ म, ल—सं— ।

हृच्छोपणं महद्दुःखमद्य रामवियोगजम् ।

- २३] अहं हत्वा विमोक्ष्यामि पापां पापानुसारिणीम् ॥२३॥ [N
इत्युक्त्वा भृशसंक्रुद्धः शत्रुघ्नो लक्ष्मणानुजः ।
- २४] विचर्ष्य बलात् कुब्जां निःश्वसन्तीं महीतले ॥ २४ ॥ [१६
तैर्वाक्यैः परुषैस्तेन कैकेयी भृशमर्दिता ।
- २५] शत्रुघ्नभयसंवीता पुत्रं शरणमभ्यगात् ॥ २५ ॥ [२०
तं प्रेक्ष्य भरतः क्रुद्धं शत्रुघ्नं वाक्यमब्रवीत् ।
- २६] अवध्याः सर्वभूतानां प्रमदाः क्षम्यतां त्वया ॥ २६ ॥ [२१
हन्यामहमिमां पापां कैकेयीं स्वयमेव हि ।
- २७] यदि रामो न धर्मात्मा त्यजेन्मां मातृघातिनम् ॥ २७ ॥ [२३
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा शत्रुघ्नो भरतेरितम् ।
- २८] व्यायच्छदात्मनो " रोषं परिचिक्षेप मन्यराम् ॥ २८ ॥ [२४
सा क्षिप्ता सहस्रोत्थाय मन्यरा भयविह्वला ।
- २९] कैकेयीमभिगम्यार्त्ता ययाचे शरणं तदा ॥२९॥ [२५
शत्रुघ्नविक्षेपाविमृढसंज्ञां
समीक्ष्य कुब्जां भरतस्य माता ।
शनैस्तदाऽऽश्वासयदार्त्तरूपां
- ३०] कौञ्चीं यथाऽऽर्त्तामिव सारसस्त्री ॥ ३० ॥ [२६
इत्याषे रामायणे ज्योध्याकाण्डे कुब्जाकर्षणं
नाम [एकाशीतितमः] सर्गः [॥ ८१ ॥]

- [वं—७८]=[द्व्यशीनितमः सर्गः]=[दा—७५]
 गर्हयन्नेव जननी दुःखशोकाकुलेन्द्रियः ।
- १] भरतो वीक्ष्य शत्रुघ्नमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [७४ । १
 अनीश्वरोऽयं पुरुषः सुखदुःखाप्तये मतः ।
- २] कर्षयत्यवशं ह्येनं कृतान्तः सुखदुःखयोः ॥ २ ॥ [N
 अहो कृतान्तो बलवान् येन सर्वगुणान्वितः ।
- ३] सुखार्हस्त्ववशो रामो बलाद्दुःखेन योजितः ॥ ३ ॥ [N
 पुत्रशोकपरिघृणां^१ भर्तृव्यसनकर्षिताम् ।
- ४] कौसल्यामेहि सहितो मया पश्याद्य दुःखिताम् ॥ ४ ॥ [N
 गर्हितं चायन्नस्यं च कष्टं मात्रा कृतं मम ।
- ५] यदिदं तद्विपश्यामि कृतान्तकृतमेव हि ॥ ५ ॥ [N
 शत्रुघ्न स्त्रीं पुमान् वापि कृतान्तबलमोहितः ।
- ६] सुविपाश्विदपि प्राप्तं न वेच्यात्पाहिताहितम् ॥ ६ ॥ [N
 कृतान्तमोहिता माता मम शत्रुघ्न कैकयी ।
- ७] इदं कृतवती पापं सर्वलोकाविगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N
 इदं तु मे महद्दुःखं शत्रुघ्न हृदि वर्त्तते ।
- ८] किं नु वक्ष्यामि कौसल्यां पुत्रशोकेन दुःखिताम् ॥८॥ [N
 इत्युक्त्वा भरतो वाक्यं शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
- ९] रुरोदात्तस्वरेणोच्चैः पूरयन्निव तद् गृहम् ॥ ९ ॥ [N
 तत्र श्रुत्वा तदा नादं भरतस्य महात्मनः ।
- १०] रुदतस्तस्य कौसल्या सुभिन्नामिदमब्रवीत् ॥ १० ॥ [५
 आगतः क्रूरधर्मिण्याः कैकेय्या भरतः सुतः ।
- [११] तमहं द्रष्टुमिच्छामि भरतं दीर्घदर्शिनम् ॥ ११ ॥ [६
 इत्युक्त्वा दुःखसन्तप्ता कौसल्या करुणं वचः ।

- १२] प्रतस्ये भरतं द्रुष्टुं मुमिन्नासहिता०स्तदा० ॥ १२ ॥ [७
 स चापि भरतः श्रीमान् शत्रुघ्नमहितस्तदा ।०
- १३] प्रतस्ये०दुःखितां२० द्रुष्टुं० कौसल्यां स्वनिवेशने ॥१३॥ [८
 ततो भरतश्शत्रुघ्नौ कौसल्यां प्रेक्ष्य दुःखिताम्३ ।
- १४] दूरादपि प्रणम्योभौ दुःखार्चामभिपेततुः ॥ १४ ॥ [९
 तौ परिष्वज्य कौसल्या शत्रुघ्नभरतावुभौ ।
- १५] परितापेन दुःखेन हरोद भृशदुःखिता ॥ १५ ॥ [१०
 उवाच चैनं प्रणतमुत्थाप्य भयविह्वलम् ।
- १६] रुदती वाक्यमेतत् सा कौसल्या परुषाक्षरम् ॥ १६ ॥ [१०
 दिष्ट्या ते राज्यकामेन प्राप्तं राज्यमकष्टकम् ।
- १७] कैकेय्या ते स्वयं दत्तं भर्तारमवहन्य४ हि ॥ १७ ॥ [११
 प्रवाज्य चीरवसनं पुत्रं मेऽनपकारिणम् ।
- १८] केन युक्तार्थयोगेन कैकेयी जननी तव ॥ १८ ॥ [१२
 क्षिप्रं मामपि कैकेयी प्रवाजयितुमर्हति ।
- १९] यत्र मे दयितः पुत्रो गतो रामः सलक्ष्मणः ॥ १९ ॥ [१३
 अथवा स्वयमेवाहं मुमिन्नाऽनुचरा वने ।
- २०] यास्यामि यत्र रामो ऽसौ गतः सीतासहायवान् ॥ २० ॥ [१४
 कामं वा स्वयमेव त्वं तत्र मां नय पुत्रक ।
- २१] तपस्तप्यति यत्रासौ पुत्रो मे पितुराज्ञया ॥ २१ ॥ [१५
 इदं त्वं धनरत्नादयं चतुरङ्गलान्वितम् ।
- २२] पित्रा निरुष्टं कल्याण राज्यं प्राप्नुहि वाञ्छितम् ॥ २२ ॥ [१६
 इति लालप्यमानां तां कौसल्यां भरतस्तदा ।
- २३] प्राञ्जलिः प्रयतो वाक्यभिदं प्रश्रितमब्रवीत् ॥ २३ ॥ [१९
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतोपालम्भो
 नाम [अथर्शातितमः] सर्गः [॥ ८९ ॥]

[व-७९] = [त्र्यशीतितमः सर्गः] = [द्वा-७६]

तामेवं^१ ह्रुवतीं दीनां कौसल्यां राममातरम् ।

१] कृताञ्जलिरुवाचेदं भरतो वाष्पगद्गदम् ॥ १ ॥ [१२

आर्ये कस्मादजानन्ती गर्हसे मामकल्मषम् ।

२] विपुलां हि मम प्रीतिं स्थिरां जानासि राघवे ॥ २ ॥ [२०

वेदान् निन्दति साङ्गान् स ब्राह्मणांश्च विशेषतः ।

३] सत्यसन्धः सतां श्रेष्ठो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ३ ॥ [२१

*प्रेष्यां पापीयसीं यातु सूर्यं च प्रतिमेहतु ।

४] *पदेन^२ हन्याद् गं मृतां यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ४ ॥ [२२

उच्छिष्टः स स्पृशतु गामग्निं ब्राह्मणमेव च । . [३१

५] स निन्दतु गुरुं चैव यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ५ ॥ [N

सखिभार्यां गुरोर्भार्यां मनसा सोऽभिषद्यताम्^३ ।

६] जन्तुष्वपमतिः पापो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ६ ॥ [N

बलिषद्भाषबादाव राङ्गश्चारक्षतः प्रजाः ।

N] किल्बिषं समवाप्नोतु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ७ ॥ [२६

परिपालयमानाय रात्रे भूतानि पुष्ववत् ।

N] तस्मै स द्रुहतां पापो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ८ ॥ [२४

कारयित्वा महत् कर्म भर्ता धृत्यान् निरर्थकान् ।

N] किल्बिषं समवाप्नोतु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ९ ॥ [२३

संश्रुत्य च तपस्विभ्यो बन्ने वै यज्ञदक्षिणाम् ।

N] स विप्रलभतां पापो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १० ॥ [N

हस्त्यश्वरथसंवाधे युद्धे शस्त्रसमाकुले ।

1. कै, म—तामेव । व—तमेवं । * व—नारित्त । 2 कै—
पादेव । (पादेन ?) । 3 ल—ः पश्यताम् । म—० पश्यतम् ।

- ७] मा स्म कार्षीति सतां कर्म यस्यायोऽनुमते गतः ॥ ११ ॥ [२७
उपादिष्टं सुसूक्ष्मार्थं शास्त्रं तत्त्वेन धीमता ।
- ८] स नाशयतु तद् धर्मं यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १२ ॥ [२८
कृत्ये^४ विवदमानेषु^५ पक्षमाश्रित्य जल्पतः ।
- ९] स पापं समवाप्नोतु यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १३ ॥ [N
देवता ऽतिथिभृत्यानां मातापित्रोस्तथैव च । [४६पू
- १०] स्वयमश्रान्त्वदत्तैव यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १४ ॥ [३४उ
नेव शास्त्रानुगा वाचः प्रयुंजीत कदाचन ।
- ११] *सन्तु च प्रतितिष्ठत यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १५ ॥ [२१
पायसं कृसरं मांसं वृथा प्राश्नातु निर्गृणः ।
- १२] गुरुं चाप्यवजानातु यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १६ ॥ [३०
आषाढी कार्तिकी माघी वैशाखी चैव^६ पूर्णिमा^७ ।
- १३] अप्रदानवतो यातु यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १७ ॥ [N
पितरं मातरं वृद्धमाचार्यं ब्राह्मणं गुरुम् ।
- १४] दुष्टात्मा सो ऽवभन्येत यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १८ ॥ [N
सतां लोकात् सतां कीर्तिः सद्भिर्जुष्टाञ्च कर्मणः ।
- १५] स भ्रश्यतु^८ दुराचारो यस्यायोऽनुमते गतः ॥ १९ ॥ [४७
यत् पापं ब्रह्महत्यायां यत् पापं कपिलावधे ।
- १६] तत् पापं समवाप्नोतु यस्यायोऽनुमते गतः ॥ २० ॥ [N
विश्वासघातिनां पापं यत् पापं गुरुघातिनाम् ।
- १७] गुरोश्चालीकानिर्वन्धे तत् पापं प्रतिपद्यताम् ॥ २१ ॥ [N

४ कं—कृत्ते । ५ ल—विधिध० । * ब—जास्ति । ६ ब—च
विशेषतः । ७ कं—अयं श्लोकः पञ्चदशमश्लोकानन्तरं पठ्यते । ८ कं—
कथ्यतु । म—भ्रशतु । ल—आश्रयत ।

- उभे सन्ध्ये शयानस्य यत् पापं परिकल्पितम् ।
- २०] तत् पापं समवाप्नोतु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २२ ॥ [४४
प्रमाथिनि नरे पापं यथैवानृतवादिनि ।
- २१] तत् प्राप्नोत्वकृतमज्ञो यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २३ ॥ [N
ग्रामे वसतु षण्मासान् स्वसुतांश्रांपजीवतु^९ ।
- २३] एकाकी मिष्टमश्नातु यस्यार्यो ऽनुमते गतः ॥ २४ ॥ [३४
एवमाश्वासयामास भरतो दुःस्वकर्षितम्^{१०} ।
- २४] कौसल्यां शोकसंतप्तां पातेपुत्रविनाकृताम् ॥ २५ ॥ [५२
एवं च शपथान् कृच्छ्रान् शपमानमकल्मषम्^{११} ।
- २५] भरतं दुःस्वसन्तप्तं कौसल्या पुनरब्रवीत् ॥ २६ ॥ [६०
शुद्धस्वभाव धर्मात्मन्भवामि त्वामकल्मषम् ।
- २६] ईदृशान् शपथान् कुर्वन् प्राणानुपरूणस्ति मे ॥ २७ ॥ [६१
दिप्ट्या ऽसि रामसाहितः पुत्र धर्मान् चालितः ।
- २७] सह रामेण धर्मात्मन् दीर्घमायुरवाप्नुहि ॥ २८ ॥ [६२
अपि त्वां सह रामेण पश्येयं लक्ष्मणेन च ।
- २८] तीर्णप्रतिज्ञमानृष्यं गतं पितुरकल्मषम् ॥ २९ ॥ [N
पूर्वेषां पुण्यकीर्त्तीनां राजर्षीणां महात्मनाम् ।
- २९] प्राप्नुह्यायुश्च कीर्त्तिं च धर्मं चैवोचितं कुले ॥ ३० ॥ [N
चतुर्दशसु वर्षेषु गतेष्वरिनिःसृदन ।
- ३०] रामं सीतां लक्ष्मणं च द्रक्ष्यामि^{१२} पुनरागतान्^{१३} ॥ ३१ ॥ [N
तैलद्रोण्यां शरीरं ते पितुस्तिष्ठति पुत्रक ।
- ३१] त्वत्प्रतीक्षं महाईस्य तत्संस्कर्त्तुमिहाईसि ॥ ३२ ॥ [N

९ कै—सुसुता शोपजीवतु । म—स्वसुतंश्रोप० । ल—स
सुतांश्रोप० । १० व, म, ल,—०कल्पितां । ११ कै—शंसमा० । ल—
शांशमा० । १२ कै—द्रष्टाभि (सि ?) । १३ ल—०रागतम् ।

- धर्मेणेमाः मजाः पुत्र यथा रक्षसि तव कुरु ।
 ३२] स्वर्गतोऽसौ यथा राजा तुष्यत्यथ तथा कुरु ॥ ३३ ॥ [N
 पितुर्वियोगजं दुःखं रामत्यागकृतं तथा ।
 ३३] तव परित्यज्य हे पुत्र पुर्वीं राजधुरं बह ॥ ३४ ॥ [N
 एवमाप्त्वास्थमानस्य भरतस्य महात्मनः ।
 ३४] शोकमारसम्पक्रान्तं बभूवाकुलितं मनः ॥ ३५ ॥ [६४
 कौसल्याया विलापितं श्रुत्वा ऽति करुणाक्षरम् ।
 ३५] मोहमभ्यागमद्भूयो भरतः शोकविह्वलः ॥ ३६ ॥ [N
 लालप्यमानः पतितो धरण्यां शोकलालसः ।
 ३६] स तदाऽऽर्त्तोऽतिकरुणं विललापाकुलेन्द्रियः ॥ ३७ ॥ [N
 पितरं भ्रातरं चैव स्मृत्वा तद्गतचेतसः । [N
 ३७] तस्य लालप्यमानस्य जगामास्तं दिवाकरः ॥ ३८ ॥ [६५पू
 श्वसतो दीर्घमुष्णं च दुःस्वार्चस्य मुहुर्मुहुः ।
 ३८] तस्य सा वर्षशतवद्वयपावर्षत शर्वरी ॥ ३९ ॥ [६५उ
 रात्रिप्लयं धीक्ष्य बलप्रधाना
 द्विजादयो मन्त्रिगणाश्च सर्वे ।
 नृपालयं तं विविशुः समेता
 ३९] हीनं मोहन्द्रप्रतिभेन राज्ञा ॥ ४० ॥ [N
 तयार्चमश्रुपरिपूर्णनेत्रं
 शोके निमग्नं पतितं धरण्याम् ।
 उपाविश्वत् सा परिषत् समेता
 ४०] विसङ्गकल्पं भरतं समीक्ष्य ॥ ४१ ॥ [N
 इत्यार्धे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतसंतापो
 नाम [त्र्यशीतिलम्भः] सर्गः ॥ ८३ ॥

[व—८०]=[चतुरशीतिलमः सर्गः]=[दा—N]

संप्राप्तो व्यसनं कुच्छं हीनवर्णस्वरोन्द्रियः^१ ।

१] मरतो न रराजार्तः शर्षीव समभिप्लुतः ॥ १ ॥

पितुश्च मरणादीनो राममद्राजनेन च ।

२] कैकेय्याश्चार्यलुब्धावाः धर्मत्यागेन पीडितः ॥ २ ॥

अपश्यंस्तस्य दुःखस्य सागरस्येव संक्षयम् ।

३] अक्षीणदुःखवेगश्च शर्म नैवाध्यगच्छत^२ ॥ ३ ॥

पितृपैतामहं राज्यं शाश्वतं स^३ च^३ चिन्तयन् ।

४] आसीत् परमसमूढः प्राश्य विप्रः सुरामिव ॥ ४ ॥

५] अगाधपारे महति पतितः शोकसामरे ।

मभिमिचं मृतो राजा रामश्चापि त्रिवासितः ।

६] अपापः पापतां नीतो मात्राऽहं राज्यलुब्धया ॥ ५ ॥

विहीनश्चन्द्रसूर्याभ्यां यथा मेरुर्न राजते ।

७] तथा भ्रात्रा च पित्रा च शून्यं पुरमिदं मम ॥ ६ ॥

अत्यन्तमुखसंहृद्दः पित्रा मात्रा च लालितः ।

८] कथमेवंविधं दुःखं प्राप्य जीवामि दुःसहम् ॥ ७ ॥

पित्रा^४ऽनेन^४ सहैवामि सह रामेण वा वनम् ।

९] प्रविशामि विना ताभ्यां न हि जीवितुमुत्सहे ॥ ८ ॥

श्रान्तस्य यदि रामस्य पादौ तौ शुभलक्षणौ ।

१०] संवेह्यं वनस्यस्य तन्मे राज्यं महत्तरम् ॥ ९ ॥

शुश्रूषमाणश्चरणौ वने वन्येन जीवतः^५ ।

११] अहमार्यस्य वत्स्यामि तस्यार्थे मम जीवितम् ॥ १० ॥

1 कै, व—०स्वरिन्द्रियः । 2 व—०प्वगच्छत । ल—नैवाद्य-
गच्छत । म—नैव शगच्छत । 3 म, ल—च स । 4 म, ल—पित्रा
तेन । 5 कै, म—जीवितः ।

- रामेण हि विना नाऽहमिच्छाम्येव त्रिविष्टपे ।
 १२] राज्यं किमु मनुष्येषु मातृदूषितमधुवम ॥ ११ ॥
 आर्ये रामस्य पूर्णेन्दुसदृशं चारुलोचनम् ।
 १३] मम शोको मुखं वीक्ष्य न स्यात् पितृवियोगजः ॥ १२ ॥
 इति श्रुत्वा वचो धर्म्यं भरतस्य महात्मनः ।
 १४] अमात्या बन्धुवर्णाश्च दुःखादश्रुष्यवर्षयन् ॥ १३ ॥
 तमवाकूशिरसं दीनं धरण्यां प्रेक्ष्य राघवम् ।
 १५] विलपन्तमुवाचात्तं वसिष्ठो भगवान् नृषिः ॥ १४ ॥
 आपत्स्वमूढो धृतिमान् यः सम्यक् प्रतिपद्यते ।
 १६] कर्माण्यवश्यकार्याणि तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥ १५ ॥
 स त्वं धैर्यं समाश्रित्य विहाय हृदयज्वरम् ।
 १७] कर्तुमर्हस्यसंमूढः क्रियाः पितुरनन्तराः ॥ १६ ॥
 पिता ते पुत्रशोकात्तौ रामे प्रव्रजिते वनम् ।
 १८] त्वदयनागच्छति प्राणानिष्टांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ १७ ॥
 अनाथ इव धर्मात्मा लोकनाथः पिता तव ।
 १९] निर्हार्यः स कथं नाम^{१०} मृतस्तात त्वया विना ॥ १८ ॥
 इत्यस्माभिर्विचार्येतत्तैलद्रोण्यां म शायितः ।
 २०] तस्य निर्हरणं तात पितुस्त्वं कर्तुमर्हसि ॥ १९ ॥
 परिसान्त्वय मातृस्त्वं मा च शोके मनः कृयाः ।
 २१] अवश्यभाविनो भावा नैव शोच्या भवद्विधैः ॥ २० ॥
 त्वं बुधैरागतज्ञानः सस्त्ववद्विर्महात्मभिः ।
 २२] तस्मात् संस्तंभयात्मानं मा भूर्भरत बालिशः ॥ २१ ॥

6 ल—च । 7 कै—धर्म । 8 कै—भगवान् ऋषिः । 9 कै—
 प्रव्रजिते । 10 ल—जाम्यैर् ।

काकुत्स्थ बलवान् कालः शक्यते नातिवर्चितुम् ।

२३] सर्वैर्न भाव्यमस्माभिस्तन्न शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥

भृशं हि दुःखाभिहतां विचेतनां

भर्तुर्वियोगेण विवर्णतां गताम् ।

इमां पितुस्त्वं महिषीमुपेक्षितुं

२४] न राजपुत्रार्हसि नाथतां गतः ॥ २३ ॥

अपश्चिमस्ते पितुरव्ययो^१ विधिः

प्रदर्शितस्तत्र हि ते द्विजोत्तमैः ।

तमाद्यु संपादय धैर्यमास्थितो

२५] विपादमस्मिन्न नृपात्मजार्हसि ॥ २४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं

नाम मर्गः ॥ [८४] ॥

[वं—८१]=[पञ्चाशीतितमः सर्गः]=[दा—N]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो धीमतां वरः ।

१] वसिष्ठमभिवाद्येदमुवाचार्त्ततरो वचः ॥ १ ॥

त्वय्यप्येवं ब्रुवति मे दीर्यतीव मनो' मुने' ।

२] लोकनाथे स्थिते रामे नाथत्वं मयि कीदृशम् ॥ २ ॥

किं तु तत्र नयध्वं मां यत्र राजा पिता मम ।

३] करिष्ये तत्र संस्कारं भवद्भिः सहितो वशः ॥ ३ ॥

नेदानीं हृदयं चेन्मे स्फुटिष्यति सहस्रधा' ।

४] दर्शयन्तु भवन्तस्तं पितरं क्षीणजीवितम् ॥ ४ ॥

ततो वसिष्ठप्रमुखाः सर्वे ते नृपमन्त्रिणः ।

५] आनयन् भर्तं तत्र यत्र राज्ञः कल्बरम् ॥ ५ ॥

अर्द्धसप्तशतास्ताश्च स्त्रियो राजपरिग्रहः' ।

६] भरतं पुरतः कृत्वा ययुर्दृष्टुं मृतं नृपम् ॥ ६ ॥

ततः प्रविश्य भर्तः सह राजपरिग्रहः ।

७] ददर्श पितरं प्रेतं राममातुर्निवेशने ॥ ७ ॥

स नं गतामुं पितरं दृष्ट्वा' वापहतत्विषम' ।

८] हा राजन्निति संक्रुड्य पपात धरणीतले' ॥ ८ ॥

विसंज्ञकल्पः संज्ञां तु पुनर्लब्ध्वा सुदुर्मनाः ।

९] जीवन्तमित्र संप्रेक्ष्य पितरं सोऽभ्यभाषत ॥ ९ ॥

राजन्नात्तिष्ठ किं शेषं' भर्तोऽहमुपागतः ।

१०] त्वदाज्ञया महासत्त्व शशुघ्नसहितस्त्वरन् ॥ १० ॥

मम मातामहस्तात कुशलं त्वाऽनुपृच्छति ।

1 व—मनोरमे । 2 म—सहस्रशः । 3 व—०प्रहाः । म—
०प्रहेः । 4 क—दृष्ट्वेपहतत्विषम । म—दृष्ट्वेपहततोत्विषम । ल—
दृष्ट्वेपहतत्विषम । 5 कै—पृथिवी० । 6 ल—शेष्ये ।

- ११] प्रणम्य शिरसा तद्वद् युधाजिन्मातुलो मम ॥ ११ ॥
यतः कुताश्चित् संप्राप्त मङ्कमारोप्य मां नृप ।
- १२] आनतं^७ मूर्ध्न्युपाघ्राय प्रत्यानन्दसि^८ भूमिप ॥ १२ ॥
स इदानीमनुप्राप्तं^९ किमर्थं नाभिभाषसे ।
- १३] न ते ऽपकृतवान् किञ्चिदहं तात प्रसीद मे ॥ १३ ॥
धन्यः स रामो येनाज्ञा कृता ते वसुधाऽधिप ।
- १४] लक्ष्मणश्चापि धन्योऽसौ यो राममनुनिर्गतः ॥ १४ ॥
अधन्योऽहमपुण्यश्च यन्मां प्रति स^{१०} पुण्यवान्^{११} ।
- १५] दुःस्वेन महताऽऽविष्टः प्राणान सन्न्यक्तवानसि ॥ १५ ॥
नूनं तौ न विजानीतो मृत्युं^{११} ते रामलक्ष्मणौ ।
- १६] यथा हि वनमुत्सृज्य नागताविह दुःस्वितौ ॥ १६ ॥
मातृदोषाददयितो यदि तावदहं नृप ।
- १७] शत्रुघ्नमपि तावत्त्वमभिभाषितुमर्हसि ॥ १७ ॥
निर्वास्य चीरवसनं रामं लक्ष्मणमेव च ।
- १८] स्त्रीद्वेतोः किमसि^{१२} प्राणांस्त्यक्त्वा राजन् दिवं गतः ॥ १८ ॥
एवं विलपतस्तस्य भग्नस्य महात्मनः ।
- १९] श्रुत्वा नृपतिपत्न्यस्ता रुरुदुः भृशदुःखिताः ॥ १९ ॥
विलपन्तं तथा तं तु भरतं शोककर्षितम् ।
- २०] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो जाबालिश्चेदमूचतुः ॥ २० ॥
मा धुचो भग्न प्राज्ञ नैव शोच्यो महीपतिः ।
- २१] आनन्तर्यमसंमूढः^{१३} कर्तुमस्य त्वमर्हसि ॥ २१ ॥

७ कै—आनतौ । ८ ल—प्रत्यानन्दस्व । ९ ब, म—तदानीम० ।
१० ब, ल—सु० । ११ कै—०त्तौ । १२ ब, ल—०मपि । १३ ब, ल—
अनंत० ।

शौचन्तो ननु सस्नेहा बान्धवाः सुहृदस्तथा ।

२२] पातयन्ति गतं स्वर्गमस्तुपातेन¹⁴ () राघव¹⁴ () ॥ २२ ॥

श्रूयते हि नरच्याघ्र पुरा परमधार्मिकः । ()

२३] भूरिद्युम्नो गतः () स्वर्गं राजा पुण्येन कर्मणा ॥ २३ ॥

स पुनर्वन्धुवर्गस्य¹⁵ शोकवाप्येण राघव ।

२४] कृत्स्ने वै क्षपिते पुण्ये पुनः स्वर्गाभिपातितः ॥ २४ ॥

तस्माच्छोकरयं¹⁶ पुत्र¹⁶ पितृस्नेहसमुत्थितम् ।

२५] त्यज त्वं नार्हसि स्वर्गात् पुनश्च्यावयितुं नृपम् ॥ २५ ॥

अतिशोकाग्निना दग्धः पिता ते स्वर्गतश्च्युतः ।

२६] शपेत्त्वां मन्युना ऽऽविष्टस्तस्मादुत्तिष्ठ मा शुचः ॥ २६ ॥*

नायं शौच्यस्तव पिता सत्कर्माजितलोकभाक् ।

२७] मृतो नायं मृता यस्य यूयं रामपुत्रेणमाः ॥ २७ ॥

धर्मात्मानो महात्मानो लोके प्रथितपौरुषाः ।

२८] देवौजसः सत्त्ववन्तो महेन्द्रवरुणोपमाः ॥ २८ ॥

एवमुक्त्वा¹⁷ वसिष्ठेन भरतो धर्मकोविदः ।

२९] त्यक्त्वा शोकमिदं वाक्यमुवाच वदतां वरः ॥ २९ ॥

ब्रुवन्ति यद् भवन्ते¹⁸ मां तथा तदिति मे मतिः ।

३०] बलवांस्तु पितृस्नेहो भृशं मोहयतीव माम¹⁹ ॥ ३० ॥

संस्तंभितो भवद्भिस्तु गुरुभिर्हितवादिभिः ।

३१] त्यक्त्वा शोकं कल्प्यामि पितुरस्यौर्ध्वदेहिकम् ॥ ३१ ॥

14 ल—स्वर्गं राजानं पुण्यकर्मणा । () म । 15 ब—बन्धुवर्गम् ।

16 ब, म, ल—च्छोक राज पुत्र । 17 ब—एवमुक्त्वा । 18 ब—ब्रुवन्तो ।

19 कै मे । * २२, २३, २४, २६. श्लोकाः पागस्करगृह्यसूत्र—हरिहर

भाष्ये ३ । १० ॥ किञ्चित्पाठभेदेनादाहताः ।

आनयन्तु यथादिष्टं भवद्भिर्नृपमन्त्रिणः ।

३२] सत्काराय^{२०} पितुर्मेऽद्य सर्वसंभारविस्तरम् ॥ ३२ ॥

इति नृपतिस्मृतस्य जल्पतः

सह नृपमन्त्रिपुरोहितैश्च तैः ।

अधिकमिव विवृद्धयामिनी

३३] शतयामेव बभूव शर्वरी ॥ ३३ ॥

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरतविलापो

नाम सर्गः ॥ [८५] ॥

[वं—८२]=[षडशीतितमः सर्गः]=[दा—८१]

तस्यां रात्र्यां व्यतीतायां भरतं मृतमागधाः ।

१] प्रसुप्तं बोधयिष्यन्तस्तुष्टुर्बुधुरस्वनाः ॥ १ ॥ [१]

सहसा चाभ्यहन्यन्तः तथा दुन्दुभयः पृथक् ।

२] प्रावाद्यन्त सुघोषाश्च शङ्खवेणुगणास्तथा ॥ २ ॥ [२]

स तूर्यघोषः सुमहान् पूरयाञ्चिव तां पुरीम् ।

३] बोधयामास भरतं शोकव्याकुलचेतसम् ॥ ३ ॥ [३]

प्रतिषिध्याथ भरतस्तं प्रबोधकनिःस्वनम् ।

४] नाहं राजेति तानुक्त्वा ततः शत्रुघ्नमब्रवीत् ॥ ४ ॥ [४]

पश्य शत्रुघ्न कैकेय्या कुर्वन्त्या लोकगर्हितम् ।

५] अयशः पातितं मूर्ध्नि ममासह्यमनागसः ॥ ५ ॥ [५]

कुलधर्मागता राज्ञः पितुमं तद्विनाकृता ।

६] परिभ्रमति राजश्रीरकर्णा नौरिवाम्भमि ॥ ६ ॥ [६]

इत्येवं भरतं तं तु विलपन्तं पुनः पुनः ।

७] दृष्ट्वा प्ररुदुः सर्वाः दुःस्वार्ता नृपयोपितः ॥ ७ ॥ [७]

भरतेन ततः सार्धं वामिष्ठो वेदवित्तमः ।

८] प्रविशेत्स सभां राज्ञस्तदा मन्त्रयितुं नृपम् ॥ ८ ॥ [९]

शातकौम्भैः स्तम्भशतैर्मणिचित्रैर्बिभृषिताम् ।

९] बृहस्पतिरिवेन्द्रेण मुधर्मा संहितः सभाम् ॥ ९ ॥ [१०]

तत्रासने रत्नचित्ते स्पर्श्यास्तरणसंस्तृते ।

१ कै—आभिहन्यन्त । २ कै—प्रतिषिध्या च । ३ म— ०निस्व-
यम् । ४ कै—दुःखेन । “ खेन ” इति पञ्चात् पूरितम् । ५ कै— तत्रा-
सने । ६ ल—स्पष्ट्यास्तरणसंभृते ।

म— ” ध्य ” ” ।

कै—स्पष्ट्यास्तरणसंस्तृते ।

१०] उपविश्य ततः सर्वानानयामास मन्त्रिणः ॥ १० ॥ [N

सुमन्त्रं जैमिनिं^७ चैव वामदेवं जयं तथा ।

११] मन्त्रिणो नैगमांश्चान्यान् प्रधानांश्च तथा जनान् ॥ ११ ॥ [N

जनौघः सुमहांस्तत्र समुपायात् समन्ततः ।

१२] सभायां भरतं द्रष्टुं शशुघ्नसहितं तदा ॥ १२ ॥ [N

ततो हलहलाशब्दः सुमहान् समजायत ।

१३] कौतूहलाज्जनौघस्य सभां प्रत्यभिधावतः ॥ १३ ॥ [१४

तत्राय भरतं दृष्ट्वा सभायां सपुरोहितम् ।

१४] प्रत्यनन्दन्^८ प्रकृतयो यथा दशरथं तथा ॥ १४ ॥ [१५

नृपजनगुरुमन्त्रिभिस्तथा

मणिकुचिरासनरत्नभूषिता ।

दशरथमुत्तशोभिता सभा

१५] सदशरथेव रराज सा तदा ॥ १५ ॥ [१६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतसभाप्रवेशो

नाम सर्गः ॥ [८६] ॥

[वं—८३]=[सप्तशतितमः सर्गः]=[दा—N]

समावृत्ते जने तस्मिन्नुदिते च^१ दिवाकरे ।

१] वसिष्ठस्तमुवाचेदं भरतं तांश्च मन्त्रिणः ॥ १ ॥

एताः प्रकृतयः सर्वा नागराश्च प्रधानतः ।

२] राजसंस्कारिकं द्रव्यमादाय समुपस्थिताः ॥ २ ॥

उत्तिष्ठ भरत क्षिप्रं मा भूत् कालासयः प्रभो ।

३] पितुः कुरु यथान्यायं संस्कारं भूरिदक्षिणम् ॥ ३ ॥

होतारस्ते पितुरिमे वेदवेदाङ्गपागाः ।

४] अप्रिहोत्रमुपादाय^२ जात्रालिप्रमुखाः स्थिताः ॥ ४ ॥

गन्धकाष्ठानि^३ चैमानि संस्कारार्थं पितुस्तव ।

५] उपादायागताः प्रेप्याः प्रतीक्षन्त^४ उपासन्तं ॥ ५ ॥

सर्पिस्तैलं च गन्धाश्च सज्जिताश्चापि ते पितुः ।

६] अंग्रः समिन्धनार्थाय गन्धमाल्यं च पुष्कलम् ॥ ६ ॥

गन्धर्तलानि गन्धाश्च धूपाश्चागुरुसम्भवाः ।

७] सज्जिता शिविका चयं पितुस्ते रत्नभृषिता ॥ ७ ॥

अथैव शिविकायां त्वं संवेशय नगाधिपम् ।

८] शिविकागतमुत्क्षिप्य^५ नयनं बहिर्गथुं वै ॥ ८ ॥

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतः प्रत्युवाच तम् ।

९] वसिष्ठं वदतां श्रेष्ठं पितुर्बहुमतं गुरुम् ॥ ९ ॥

यथाऽऽज्ञापयसि प्राज्ञ करवाणि तथाऽऽदतः^६ ।

१०] दैवतं ह्यसि मान्यश्च गुरोश्चापि गुरुर्मम ॥ १० ॥ ०

१ कै—य । २ कै—०होत्रं समादाय । ३ कै, ब, म—काष्ठानि ।

ल—काष्ठानि । ४ कै—प्रतीक्षन्तु । ५ कै—०मुत्क्षिप्य । ६ ब—

तथादतः । ० ल ।

वाक्येनानेन तस्याथ भरतस्य महात्मनः ।

- ११] आजगाम परं हर्षं वसिष्ठो द्विजसत्तमः ॥ ११ ॥
शोकवेगमसम्भवं^७ धारयन् भरतस्ततः ।
- १२] कलेवरं भूमिपतेः समस्तं तदुदैक्षत ॥ १२ ॥
नाशक्रोच्चैव शोकस्य वेगं धारयितुं तदा ।
- १३] महाऽर्णवस्यापततस्तोयवेगमिवोद्धतम् ॥ १३ ॥
तमार्चिमान् नीयमानं ततः स विलपन् बहु ।
- १४] शत्रुघ्नसहितः श्रीमान्^८ शिविकामानयन्नृपम्^९ ॥ १४ ॥
शिविकास्थं महाराजमलङ्कृत्य विधानतः ।
- १५] वाससा तु महाऽर्हेण समाच्छाद्य^{१०} सुसंवृतम् ॥ १५ ॥
अवकीर्य च माल्येन दिव्यधूपेन धूपितम् ।
- १६] मधुपुष्पैः सुरभिभिः परिकीर्य च सर्वशः ॥ १६ ॥
उवाहोत्क्षिप्य शिविकां शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
- १७] हा राजन् क्वासि गन्तेति रुदन्नार्त्तः पुनः पुनः ॥ १७ ॥
तस्मिंस्तदा प्ररुदिते वसिष्ठकरदेशिताः ।
- १८] ययुः शीघ्रतरं प्रेष्याः शिविकां परिगृह्य ताम् ॥ १८ ॥
पुरतः पाण्डुरं^{११} छत्रं बालव्यजनमेव^{१२} च ।
- १९] आनाट्य नृपतेः प्रेष्या रुरुदुः शोकविल्लवाः ॥ १९ ॥
दीप्यमानं हुतं पूर्वं जाबालिप्रमुखैर्द्विजैः ।
- २०] अग्निहोत्रं नरपतेः प्रतस्थे तस्य चाग्रतः ॥ २० ॥
शकटानि च पूर्णानि रत्नानां कनकस्य च ।
- २१] दधुर्धनं विसर्गार्थं दीनानाथातुरेषु च० ॥ २१ ॥
सथः प्रेष्यजनस्तत्र रत्नानि विविधानि च ॥०

७ कै—तु । ८ कै, ब, म, ल—श्रीमां । ९ ब, म, ल—०णा-स्य-
नमः । १० कै—समासाद्य । ११ ल—पांडुरं । १२ ल—बाहवः । १३ म, ल—

- २२] और्ध्वदैहिकदानार्थं० नृपतेर्विसृजन्ति वै ॥ २२ ॥
अग्रतः प्रययुश्चैनं सत्कर्मस्तुतिभिर्नृपम् ।
- २३] अभिष्टुवन्तो मधुरं सूतमागधवन्दिनः ॥ २३ ॥
तस्मिन्निर्हरणे^{१५} राज्ञः प्रवृत्ते मुमांस्तदा ।
- २४] आर्तनादोऽभवत् स्त्रीणां यथाऽस्य मरणे तथा ॥ २४ ॥
ततः पौरजनः सर्वः सस्त्रीवृद्धकुमारकः ।
- २५] अनुराजशरीरं तन्निर्ययौ नगराद्बहिः ॥ २५ ॥
तथा भरतश्चतुर्ग्रां शिविकां परिदृष्ट्वा ताम् ।
- २६] दुःस्वशोकसमाविष्टो रुदन्तावनुजग्मतुः ॥ २६ ॥
कौसल्या च मुमित्रा च कैकेयी च तथापराः ।
- २७] अर्धसप्तशता नार्यः प्रकीर्णांसितमूर्धजाः^{१६} ॥ २७ ॥
क्रोशन्त्यश्च रुदन्त्यश्च कुरर्य इव सर्वशः ।
- २८] अनुजग्मुः शरीरं तद्राज्ञो^१ राजीवलोचनाः ॥ २८ ॥
अथास्य सगृहीरे विविक्ते मृदुशाद्वले ।
- २९] चन्दनागुरुकाष्ठैश्च प्रेप्याश्चक्रुश्चितां तदा ॥ २९ ॥
कालीयकमृणालैश्च बालकांशीरपत्रकैः ।
- ३०] तां चितां विधिवच्चक्रुर्विपुलाभय ते जनाः ॥ ३० ॥
तस्यां चितायां नृपतेः शरीरं तन्मुहृज्जनाः ।
- ३१] आनाययुः^{१७} समुत्क्षिप्य शोकव्याकुलचेतनाः ॥ ३१ ॥
तां चितां पृथिवीपालमारोप्य क्षौमवामसम् ।
- ३२] यज्ञपात्रचयं चक्रुस्ततस्तस्योपरि द्विजाः ॥ ३२ ॥
यथास्थानेषु विन्यस्य त्रीनग्नीन् विधिवद्धुतान्^{१७} ।

० म । 13 म, कै—निहरणे । ल—निहरणे । 14 व—कीर्णा-
वरमूर्धजाः । 15 म—ते । 16 कै—अनाययुः । म, ल—आनाययत् ।
व—आनाययन् । 17 म—रजताम् । कै—मृदुतान् ।

- ३३] मन्त्रानन्तर्मनोभिश्च¹⁸ जपन्तो ऽभ्युदितस्रुचः ॥ ३३ ॥
 होतारो यज्ञपात्राणि पवित्रैर्ममृजुस्तदा ।
- ३४] प्रमृज्यानन्तरं तस्यां चितायां परिचिक्षिपुः ॥ ३४ ॥
 स्रुकुपात्राणि चषालानि मुसुलोलूखलं तथा ।
- ३५] अरणीसाहितं चैव पवित्राणि च सर्वशः ॥ ३५ ॥
 विश्वस्य च पशुं मेध्यं मन्त्रसंस्कारसंस्कृतम् ।
- ३६] अन्वास्तरिणकं¹⁹ राज्ञः समन्तात् परिचिक्षिपुः ॥ ३६ ॥
 प्राग्लाङ्गलविकृष्टां तु चिताभूमिं समन्ततः ।
- ३७] कृत्वा विधानतो धेनुं सप्तसामभ्यवासृजन् ॥ ३७ ॥
 सर्पिस्तैलवसाभिश्च ममन्तात् परिषिच्य ताम् ।
- ३८] चितां प्रज्वालयाञ्चक्रे भरतः सह वन्धुभिः ॥ ३८ ॥
 प्रज्ज्वाल²⁰ ततो²¹ वह्निः सहसैव समधितः²² ।
- ३९] महाऽर्चिष्मान् दहन् राज्ञश्चितारूढं कलेवरम् ॥ ३९ ॥
 विधिवत् संस्कृतो राजा ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ।
- ४०] जगाम परमं स्थानं यज्वनां पुण्यकर्मणाम् ॥ ४० ॥
 ततः प्रज्ज्वाल महान् समिद्धो हिरण्यरेताः प्रदहन् सधूमः ।
- ४१] दृष्ट्वा च तं प्रज्वलितं चिताभिमार्तस्वरं चक्रुरतीव नार्यः ॥४१॥
 पौराश्च सर्वे सहसा विलेपुस्तथैव राज्ञः मुहृदः सुतौ च ।
- ४२] हा नाथ हा भूमिपते किमर्थं यासित्वमस्मानवशान् विहाय॥४२॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथ-
 सत्कारः²³ सर्गः²³ ॥ [८७] ॥

18 कै—०नार्तमनोभिश्च । 19 ब, ल—०कां । 20 कै—प्र-
 जुज्वल । ल—प्रज्ज्वाल । म—प्रजुजाल । 21 कै—तुतौ । 22 कै—सम-
 धितः । 23 ल—संकरो नाम० । म—संकर दुर्गाः ।

[बं-८४]=[अष्टाशीतितमः सर्गः]=[दा-७७]

अवकीर्य च माल्येन तां चितामपसव्यतः ।

- १] सगणो भरतश्चक्रे विषपीत इव स्वलन् ॥ १ ॥ [N
विह्वलभिन दुःखेन विभ्रमन्निव चातुरः ।
- २] ननाम स पितुः पादौ निपत्य धरणीतले ॥ २ ॥ [N
तमार्तरूपं पतितं विह्वलन्तमचेतसम्^१ ।
- ३] उत्थापयामास बलात् परिगृह्य मृहृज्जनः ॥ ३ ॥ [N
अवेक्ष्य स पितुर्दीप्तिं सर्वगात्रेषु पावकम् ।
- ४] मृग्य बाहू चुक्रोश दुःखेनावससाद् च ॥ ४ ॥ [१२
मन्थरावाक्यतोयायं वग्दानमहाहृदम् ।
- N] कैकेयीनिश्चयग्राहमगाधं शोकसागरम् ॥ ५ ॥ [१३
वाष्पोपहतकण्ठश्च सदाप्पमभिनिःश्वसन् ।
- ५] शोकदुःखपरीतात्मा मदक्षीव इव श्वसन ॥ ६ ॥ [६
पृ६] विललापातिकरुणं भरतः परिविह्वलः । [N
पृ७] यस्या गतिरनाथायाः पुत्रः प्रत्राजितो वनम् ॥ ७ ॥ [७पू
उ७] ताभिमां तात कौसल्यां किमर्थं नाभिभाषसे । [७उ
पृ८] एवमाद्यतिदुःखार्तां विलपन्त्य राघवः ॥ ८ ॥ [N
उ८] भूमौ पपात शक्रस्य यन्त्रच्युत^१ इव ध्वजः । [९उ
पृ९] परिपेतुः पतन्तं तं पुरुषाः परिचारकाः ॥ ९ ॥ [१०पू
उ९] पुण्यक्षयं च्युतं स्वर्गाद्ययातिमृषयो यथा । [१०उ
पृ१०] शत्रुघ्नश्चापि भरतं पतितं समंबक्ष्य^१ तम् ॥ १० ॥ [११पू
उ१०] विसंज्ञकल्पो न्यपतच्छोचन् पितरमातुरः । [११उ

१ कै०—मचेतनम् । २ ल—कैरुषी० । ३ ल—यस० ।

म—यस० । ४ कै, व सन्धीत्य ।

- पृ११] उन्मत्त इव विप्रेक्ष्य विललाप निपत्य सः ॥ ११ ॥ [१२५
 उ११] गुणसङ्कीर्तनं कुर्वन् पितुर्वं पितृवत्सलः । [१२७
 N] इदमाह महातेजाः शत्रुघ्नः शत्रुमूदनः ॥ १२ ॥ [N
 सुकुमारं च बालं च सततं लालितं त्वया ।
 १२] क तात भरतं हित्वा विलपन्तं गमिष्यसि ॥ १३ ॥ [१४
 यतः पुरा शिशूनस्मान्भोजनाच्छादनादिभिः ।
 १३] संवर्धयासि नः सर्वान् पुनः कोऽद्य करिष्याति ॥१४॥ [१५
 एवं दुःखाभितप्तानां पृथिवी नो विदीर्यते ।
 १४] पित्रा गुणविशिष्टेन लालितानां विधुन्वताम् ॥ १५ ॥ [१६
 त्वयि राजन् गते स्वर्गे रामे चारण्यमाश्रिते ।
 १५] न जीवितुं व्यवस्यामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १६ ॥ [१७
 पित्रा हीनां तथा भ्रात्रा शून्यामिव महीमिमाम् ।
 १६] अयोध्यां न प्रवेक्ष्यामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १७ ॥ [१८
 रावमादि तयोः श्रुत्वा भ्रात्रोर्विलपितं तदा ।
 १७] सर्वः परिजनो भूयो भृशमार्तस्वरो रुदन् ॥ १८ ॥ [१९
 ततः शोकपरिश्रान्तौ शत्रुघ्नभरताबुभौ ।
 १८] विलापित्वाऽतिकरुणं ध्यानमेवान्वपद्यताम् ॥ १९ ॥ [२०
 तौ तु दृष्ट्वा ध्यानगतौ पितुरिष्टः पुरोहितः ।
 १९] बसिष्ठो भरतं वाक्यमुत्थाप्येतदुवाच ह ॥ २० ॥ [२१
 द्वन्द्वदुःखैर्जगत्सवर्माभितप्तमिदं यथा ।
 २०] अवश्यभाविनं भावं तन्न शोचितुमर्हसि ॥ २१ ॥ [N

० ल—०गुणविस्तृष्टेन । ० ब—पित्रा हीनां । म—पितृहीनं
 कै—पित्रा । हीनं ० ० गतः । ० म—प्रवश्यं ० । ल—प्रविद्वान् ० ।

*जातस्य नियतो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।

- २१] *तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥Q [N
 सुमन्त्रश्चापि शत्रुघ्नं पतितं^{१०} धरणीतलात् ।
 २२] उत्थापयदविश्रान्तः सर्वभूतहितावहम् ॥ २३ ॥ [२४
 पू२३] उत्थितौ तौ नरव्याघ्रावस्रुक्लिभौ न रेजतुः । [२५पृ
 असूणि परिमार्जन्तौ वाप्पक्लिभेक्षणौ तु तौ ।
 २४] अमात्यास्त्वरयामासुः पितुः^{१०}कर्तुं^{१०}जलक्रियाम्॥२५॥A[२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतशत्रुघ्न-

विलापो नाम सर्गः ॥ [८८] ॥

* व, म, ल—नाहित । Q गीता II. 27. 9 व—पातितं । 10 व,
 घ, झ—परिकर्तुं A व—अवगाह्य ततः पुराणं सरयुं स झु[इ'] जल ।

[४—८५]=[एकोनवतितमः सर्गः]=[दा—N]

एवं विधाय सत्कारं भरतः पृथिवीपतेः ।

१] जलाक्रियां ततः सर्वां कर्तुं समुपचक्रमे ॥ १ ॥

पुण्यां पुण्यजलां प्राप्य महर्षिगणसेविताम् ।

२] उदकं स पितुर्दातुं सरयूं सरितं ययौ ॥ २ ॥

अवगाढ्य ततः पुण्यां सरयूं समुद्दृज्जनः ।

३] ददौ पितरमुद्दिश्य भरतः मजलाञ्जलिम् ॥ ३ ॥

ददतः सलिलं तस्य भरतस्य महात्मनः ।

४] साभिध्यं सगितः पुण्याः सरय्वां विदधुस्तदा ॥ ४ ॥

विपाशा च शतद्रुश्च गङ्गा च यमुना तथा ।

५] सरस्वती चन्द्रभागा तथा ऽन्याः सरितां वराः ॥ ५ ॥

तासां नदीनां पुण्यानां सलिलेन दिवंगतम् ।

६] पितरं तर्पयापास भरतः समुद्दृज्जनः ॥ ६ ॥

स च पौरजनः सर्वः सामात्यः सपुरोहितः ।

७] तर्पयामास राजानं सलिलेन विधानतः ॥ ७ ॥

ततः कृत्वोदकं ते तु विधानेन नृपस्य च ।

८] पृथगास्थापयामासुः भरतं शोकलालसम् ॥ ८ ॥

आश्रास्यमानस्तैश्चापि प्रययौ भरतस्ततः ।

९] तैरेव सहितः सर्वे रयोध्यां नगरीं तदा ॥ ९ ॥

दूरादेव च तां दृष्ट्वा दीनातुरजनावृताम् ।

१०] पुरीमयोध्यां भरतः पौरान् वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥

गते स्वर्गे नरपतौ रामे च वनमाश्रिते ।

११] भातीयं मे निरानन्दा श्मशानसदृशी पुरी ॥ ११ ॥

ममदा हतवीरेव विचन्द्रव च शर्वरी ।

- १२] विहीना नरदेवेन पुरीयं न विराजते ॥ १२ ॥
नेच्छाम्येतामहं द्रष्टुं प्रवेष्टुं वा हतत्विषम् ।
- १३] इहैव प्रायमासिष्ये पितुर्दर्शनकाम्यया ॥ १३ ॥
किं मे पित्रा विहीनस्य जीवितेन मुखेन वा ।
- १४] इच्छामि जीवितुं नाहमनुयास्यामि भूपतिम्^१ ॥ १४ ॥
अथ राज्ञो महामात्रो^२ धर्मपाल इति श्रुतः ।
- १५] परिदेवयमानं न भग्नं वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
शोको विमुच्यतामप यः प्राप्ते भगताशु वै ।
- १६] कुलस्यं त्वस्य ते नेदमनुरूपं नृपात्मज ॥ १६ ॥
शोकं भरत नात्यर्थं त्वमेवं^३ कर्तुमर्हसि ।
- १७] सर्वस्वजननाशेऽपि नैव शोचन्ति पण्डिताः ॥ १७ ॥
शोचतो रुदतश्चापि यद्वि नाम मृतः पुनः ।
- १८] सजीवेत्स्वजनः कश्चित्तदा शोचेत् स सर्वशः ॥ १८ ॥
यदा त्ववश्यं मर्तव्यं^४ सर्वस्माभिरागतैः ।
- १९] मृत्युकाले तदा शोके नास्ति सामर्थ्यमपि ॥ १९ ॥
एषाशु त्वं सदास्माभिरयोध्यां प्रविश प्रभो ।
- २०] स्वजनं शोकसन्तप्तं समाश्वासय मा शुचः ॥ २० ॥
ततोऽनन्तरमेव त्वं स्वर्गतस्य महोपतेः ।
- २१] श्राद्धकर्म प्रयत्नेन शिधिवत् कर्तुमर्हसि ॥२१ ॥
त्वं ह्यथ नाथः सर्वेषामम्माकं स्वजनस्य च ।
- २२] शोचितुं नार्हसि त्वं नः प्रजानां नाथतां गतः ॥ २२ ॥
एवमुक्तः स विभेण धर्मपालेन धार्मिकः ।

१ ब, म, ल—भूमिपम् । २ ल—महासाधो । ३ ल—माः ।

कै—वः । ४ कै, ल—त्वमेव । ५ कै, ब, म, ल—भंतव्यं ।

- २३] प्रविवेश निरानन्दामयोध्यां सपदानुगः ॥ २३ ॥
 विशून्यचत्वरपथां विध्वस्तविपणापणाम् ।
- २४] शोकातुरजनाकीर्णो दीनस्वजननादिताम्^७ ॥ २४ ॥
 ततो विवेश स्वजनेन संवृतः
 पितुर्निवेशं भरतो ऽतिदुःखितः ।
 विहीनमिन्द्रप्रतिभेन राज्ञा
- २५] गतोत्सवाकारमिवातिनिष्प्रभम् ॥ २५ ॥
 प्रविश्य तस्मिंश्च^८ पितुर्निवेशने
 वृणानि सन्तीर्य दशाहमातुरः ।
 ततः सुसुष्वाप तमेव चिन्तयन्
- २६] पितुर्विनाशं भरतः प्रतापवान् ॥ २६ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे उदकप्रदानं
 नाम सर्गः ॥ [८०,] ॥

[वं—८६]=[नवतितमः सर्गः]=[दा—७६]

समतीते दशाहे तु कृतशौचो' नृपात्मजः' ।

१] चक्रे द्वादशिकं श्राद्धं त्रयोदशिकमेव च ॥ १ ॥ [७७ । १]

ददौ चोद्दिश्य पितरं ब्राह्मणेभ्यां धनं तदा ।

२] महार्हाणि च वस्त्राणिः गाश्च वाहनमेव च ॥ २ ॥ [७७ । २]

यानानि दासीदासं च वेङ्गमानि वसुमन्ति च ।

३] भूषणानि च मुख्यानि राज्ञस्तभ्यांर्वदेदिकम् ॥३॥ [७७ । ३]

त्रयोदशाहेऽतीते तु कृते चानन्तरे विधां ।

४] समेता मन्त्रिणः सर्वं भरतं वाक्यमब्रुवन् ॥ ४ ॥ [१]

गतः स नृपतिः स्वर्गं भर्ताऽऽसीद्यो गुरुश्च नः ।

५] प्रव्राज्य दयितं पुत्रं रामं लक्ष्मणमेव च ॥ ५ ॥ [२]

त्वमद्य भव नो राजा धर्मतो नृवगत्मज ।

६] प्राप्नोति नापदं यावदिदं राष्ट्रमराजकम्' ॥ ६ ॥ [३]

आभिषेचनिकं द्रव्यमिदमादाय सर्वशः ।

७] राजानमभिषेक्तुं त्वामिच्छन्ति नृपमन्त्रिणः ॥ ७ ॥ [४]

इदं राज्यं गृहाण त्वमन्ववायक्रमागतम् ।

८] अभिषेचय चान्मानं पाद्वि चाम्पान्नगधिप ॥ ८ ॥ [५]

इत्युक्तो भरतो द्रव्यमाभिषेचनिकं तदा ।

९] मङ्गलार्थं समालभ्य राज्ञस्तान्मन्त्रिणोऽब्रवीत् ॥ ९ ॥ [६]

ज्येष्ठो भ्राता सदा राज्यं मामतानुचितं* कुले ।

१०] भवन्तो वक्तुमर्हन्ति नैवं' मां कुशला इव ॥ १० ॥ [७]

भ्राता मे गुणवान् ज्येष्ठो राजा भवितुमर्हति । [८पू]

१ कै—कृतशौचनृपात्मजः । ब—कृतशौचे० । २ ब, म, ल—
वासांसि । ३ कै—यावदिष्टं । ४ कै—०मकंटकम् । * कै—सामगैनु-
चितं । म—मामुता नुचितं । ब—ममातानुचितं । ५ ब, म—नैव ।

- ११] राजधर्मविदां श्रेष्ठो रामो राजीवलोचनः ॥ ११ ॥ [N
भृत्यो नियोज्यस्तस्याहं रामो राजा भविष्यति । [N
- १२] वने त्वहं निवत्स्यामि^६ नववर्षाणि पञ्च च ॥ १२ ॥ [८७
युज्यतामाशु महती सेनाऽद्य चतुरङ्गिणा^७ ।
- १३] आनयिष्याम्यहं ज्येष्ठं भ्रातरं राघवं वनात् ॥ १३ ॥ [९
आभिषेचनिकं द्रव्यं सर्वमेतदशेषतः ।
- १४] पुरस्कृत्य गमिष्यामि भवद्भिः सहितो वनम् ॥ १४ ॥ [१०
तत्रैव च नरव्याघ्रमभिषिच्य पुरस्कृतम् ।
- १५] आनयिष्याम्यहं रामं हव्यवाहमिवाध्वरे ॥ १५ ॥ [११
न सकामां करिष्यामि जननीं राज्यशुद्धिणीम् ।
- १६] वने वत्स्याम्यहं दुर्गं रामो राजा भविष्यति ॥ १६ ॥ [१२
क्रियतां शिल्पिभिः पन्थाः समे वा विषमेऽध्वनि ।
- १७] दैशिकाश्च पथिज्ञाश्च कुशला यान्तु मेऽग्रतः ॥ १७ ॥ [१३
इत्येवं भरतं धर्म्यं भाषमाणं वचस्तदा ।
- १८] प्रत्यूचुर्हृष्टरोमाणः सर्वे ते नृपमन्त्रिणः ॥ १८ ॥ [१४
एवं ते भाषमाणस्य पद्माश्रीरूपतिष्ठतु ।
- १९] यस्त्वं भ्रात्रे श्रियं दातुं ज्येष्ठयेच्छसि राघव ॥ १९ ॥ [१५
अनुत्तमं ते वचनं नृपात्मज प्रजल्पतः संस्तवनं निशम्य ।
- २०] प्रहर्षजाः संप्रति वाष्पाबिन्दवः पतन्ति राजात्मजनेत्रसंभवाः [१६
युक्तार्थं वचनमथां निशम्य हृष्टास्तेऽमात्याः सपरिषदोऽद्भुवंस्तदा ।
पन्थानं नरवरभक्तितत्त्वचित्तो^८ व्यादिष्टस्तव वचनाच्च शिल्पिवर्गः ॥
२१] [१७

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरत-

भक्तिर्नाम सर्गः ॥ [१.०] ॥

[वं—८७]=[एकनवतितमः सर्गः]=[दा—८०]

अथ भूमिप्रदेशज्ञाः सूत्रकर्माविशारदाः^१ ।

- १] स्वकर्मनिरताः पौराः खनका यन्त्रकास्तथा^२ ॥ १ ॥ [१]
कर्मान्तिकाः स्थपतयः पुरुषा मन्त्रकोविदाः ।
- २] तथा वार्धाकिनश्चैव^३ दात्रिणो वृक्षरोपकाः ॥ २ ॥ [२]
कूपकाराः सभाकारा वंशकर्मकरास्तथा ।
- ३] समर्था वेदविद्वांसः^४ पुरस्ते संप्रतस्थिरं ॥ ३ ॥ [३]
विषमं च समं कर्तुं छिन्दंश्चैव पश्चिद्रुमान् ।
- ४] सेनापति र्यावावग्रे भरतस्य प्रयास्यतः ॥ ४ ॥ [N]
स तु हर्षात् समुत्क्रोशो जनौयो विपुलः^५ प्रयान^६ ।
- ५] अशोभत महावेगः पर्वणीव जलाशयः ॥ ५ ॥ [४]
पृ६] ते तु स्वमधिष्ठाय कर्म कर्मगु काविदाः । [५पृ]
- ७] कुर्वन्तः शोधयन्तश्च पन्थानं गहने वने ॥ ६ ॥ [N]
चिच्छिदुः^७ शैलमङ्कलाशान् केचिद् वृक्षान् परश्वधैः । [N]
- ८] अवक्षेषु च देशेषु केचिद् वृक्षानरोपयन् ॥ ७ ॥ [७पृ]
लतावितानगुल्मांश्च शलाकाकोशपर्वतान् । [६पृ]
- ९] केचित्कुठारैष्टुङ्गैश्च दात्रैश्चैव प्राचिच्छिदुः ॥ ८ ॥ [७उ]
अपरे चिच्छिदुः सालान् बालिनो बलवत्तराः ।
- १०] विधमन्ति स्म कुहालैः स्थलानि च समन्ततः ॥ ९ ॥ [८]
तथा कण्टकदुर्गांश्च पथश्चक्रुरकण्टकान् । [N]
- ११] पांसुभिः पूरयामासुरन्धकूपांस्तथाऽपरे ॥ १० ॥ [९पृ]
निम्नान् देशांस्तथा चान्ये समीचक्रुः समन्ततः । [९उ]

१ कै, म, ल—सूतकर्म० । २ कै, म, ल—यन्त्रकास्तथा ।

३ कै, म, ल—वार्धानिका० । ४ व—व ये० । ५ कै—विपुलाभयान् ।

६ कै, व—विच्छेदुः ।

१२] संक्रमांश्चैव कुर्वन्तस्तीर्थानि च सहस्रशः ॥ ११ ॥	[N
नदीतीरतटोच्छ्रायान् प्रकुर्वन्तः ^७ समांस्तथा ।	[N
१३] अनुमार्गं ययुः पूर्वं खनका भरताङ्गया ॥० १२ ॥	[N
विभिदु भेदनीयांश्च दुर्गदेशान् नर्गास्तथा ।०	[१०उ
१४] जलाशयांस्तथा चक्रुर्नचिरेण वहूदकान् ॥ १३ ॥	[११पृ
सागरप्रतिमान् मार्गं सुनीर्थान् विमल्लोदकान् ।	[११उ
१५] चक्रुर्देशेषु देशेषु पञ्चशः ^८ पञ्चतारणान् ॥ १४ ॥	[N
उदपानान् बहुविधान् वेदिकापरिचारिकान् ।	[१२उ
१६] समुधाकुट्टिमलतः ^९ मुपुष्पतमहीरुहः ^{१०} ॥ १५ ॥	[१३पृ
मत्तदृष्टद्विजगणः पताकाभिरलङ्कृतः ।	[१३उ
१७] चन्दनोदकमंसिक्तो नानाकुसुमभूषितः ॥ १६ ॥	[१४पृ
पृ१८] बह्वशोभत ^{११} सेनायाः पन्थाः स्वर्गपथोपमः ।	[१४उ
पृ२०] भूयस्तं शोधयामासुर्भृषाभिश्चाप्यभूषयन् ॥ १७ ॥	[१६
उ२०] नक्षत्रे सुप्रशस्ते ^{१२} च मुहूर्त्तं चैव तद्विदः ।	
पृ२१] निवेशं स्थापयामासुर्भरतस्य महात्मनः ॥ १८ ॥	[१७
उ२१] बहुपांसुचयश्चासीत् परिखापरिवारितः ।	
पृ२२] [यत्रेन्द्रक्रीडपरिखा प्रतौलीपरिवेष्टितः ॥ १९ ॥	[१८
उ२२] प्रासादतलसंसिक्तः शोधकैश्च मुसंस्कृतः । ^{११}	
पृ२३] पताकाशोभितः श्रीमान् सुनिर्मितमहापथः ॥ २० ॥	[१९
उ२३] गृहैस्तन्वाद्गिरिव खं सविटङ्कविमानकैः ।	
पृ२४] समुच्छ्रितपताकैश्च शक्रसद्योपमैर्वृतः ॥ २१ ॥	[२०

7 ल—प्राकुर्वन्तः । कै—कुर्वन्तः । ०कै । 8 ब—पदशः । 9 ल—०लताः ।
 कै, म—कूटिमलताः । 10 कै—महीवहः । म—महीरुहाः । 11 कै,
 ब, म—बहु शोभत । 12 कै—सुप्रशस्तं । 13 कै, म, ल—नास्ति ।

७२४] जाह्नवी च समासाद्य विविधद्रुमकाननाम् ।

N] शीतलामलपानीयां महामीनसमाकुलाम् ॥ २३ ॥ [२१

सचन्द्रतारागणमण्डितो यथा

क्षपाऽऽगमे वीतमलो विगजते ।

नक्षत्रमार्गः स तथा¹⁴ व्यराजत

२५] क्रमेण पन्थाः शुभशिल्पिनिर्मितः ॥ २४ ॥ [२२

इत्यार्षे रामायणो ऽयोध्याकाण्डे मार्गमत्कारो¹⁵

नाम सर्गः ॥ [६०] ॥

- [वं—८८]=[द्विनवतितमः सर्गः]=[दा—८२]
- तामार्यजनसम्पृर्णां भरतप्रग्रहां^१ सभाम्^१ ।
- १] ददर्श बुद्धिसम्पन्नो वसिष्ठो भगवानृषिः ॥ १ ॥ [१
आसनानि यथान्यायमार्याणां जुषतां ततः ।
- २] विभान्ति स्म घनापायं द्योततां^२ ज्योतिषामिव ॥ २ ॥ [२, ३
सर्वाश्च राजप्रकृतीः समन्तात् प्रेक्ष्य धर्मवित् ।
- ३] इदं पुरोहितो वाक्यं भरतं प्रत्यभाषत् ॥ ३ ॥ [४
तान राजा दशरथः स्वर्गतो धर्ममाचरन् ।
- ४] धनधान्यवतीं स्फीतां प्रदाय पृथिवीं तव ॥ ४ ॥ [५
रामस्तथा सत्यधृतिः सतां धर्ममनुस्मरन् ।
- ५] नाजहात् पितुरादेशं लक्ष्मीं^३ शीतांशुमानिव^४ ॥ ५ ॥ [६
पित्रा भ्रात्रा च ते दत्तं राज्यं निहतकण्टकम् ।
- ६] तद्गुक्ष्व त्वं सहामात्यः^५ क्षिप्रमेवाभिषिच्य च ॥ ६ ॥ [७
उदीच्याश्च प्रतीच्याश्च दाक्षिणत्याश्च केरलाः ।
- ७] कर्णधाराश्च सामुद्रा रत्नान्युपहरन्ति ते ॥ ७ ॥ [८
तच्छ्रुत्वा भरतो वाक्यं शोकेनाभिपरिल्पुतः ।
- ८] जगाम मनसा रामं धर्मज्ञो^६ धर्मकाम्यया ॥ ८ ॥ [९
सवाष्पया तदा वाचा कलहंसस्वनो युवा ।
- ९] निजगाद् सभामध्ये जगंह च पुरोहितम् ॥ ९ ॥ [१०
चरितब्रह्मचर्यस्य विद्यास्नातस्य धीमतः ।
- १०] धर्मं प्रयतमानस्य को राज्यं मद्विधो हरेत् ॥ १० ॥ [११
कथं दशरथाज्जातो भवेद्राज्यापहारकः ।

१ कै—भरतप्रग्रहं मभम् । म—भरतप्रगृहसभम् । २ कै—
द्योतितां । ३ कै—लक्ष्मीः । ४ ब, ल—सीतांशु० । ५ म—महामान्यः ।
ल—महामात्यः । कै—महान्यः । "सहामात्यः" । (ब—धर्मज्ञं ।

- १.१] राज्यमाहृत्य रामस्य नाधर्मं वक्तुमर्हसि ॥ १.१ ॥ [१.२
ज्येष्ठः श्रेष्ठश्च धर्मात्मा दिलीपनहुषोपमः ।
- १.२] लब्धुमर्हति काकुत्स्थो राज्यं दशरथो यथा ॥ १.२ ॥ [१.३
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं कुर्यां पापमहं यदि ।
- १.३] इक्ष्वाकूणां कुले जातो भवेयं कुलपांसनः ॥ १.३ ॥ [१.४
यन्मे मात्रा कृतं पापं नाहं तदभिरोच्ये ।
- १.४] इहस्थोऽहं वनस्थं तं नमस्यामि कृताञ्जलिः ॥ १.४ ॥ [१.५
राममेवानुगच्छामि स राजा द्विपदां वरः ।
- १.५] त्रयाणामपि लोकांनां राघवो राज्यमर्हति ॥ १.५ ॥ [१.६
यदि त्वार्यं न शक्यामि विनिवर्त्तयितुं वनात् ।
- १.६] अहं तत्रैव वत्स्यामि यथाऽसौ लक्ष्मणस्तथा ॥ १.६ ॥ [१.८
अयोध्यायामहं वस्तुं नोत्सहं भ्रातरं विना ।
- १.७] सर्वश्रेष्ठगुणं ज्येष्ठं रामं राजीवलोचनम् ॥ १.७ ॥ [N
पित्रा भुक्त्वा नृपश्रीर्मिं दायाद्यं तस्य धीमतः ।
- १.८] नाधिगन्तुं मया शक्या सावित्री वृषलैरिव ॥ १.८ ॥ [N
पितर्युपरते" तस्मिँल्लोकनाथे महान्मानि ।
- १.९] शरणं च गति ज्येष्ठो भ्राता चैव पिता च मे ॥ १.९ ॥ [N
तं निवर्त्तयितुं बुद्धि वनवासे कृता मया ।
- २०] न केनचिदियं शक्या प्रत्यावर्त्तयितुं" प्रभो ॥ २० ॥ [N
तद्वाक्यं धर्मसंयुक्तं श्रुत्वा सर्वं सभासदः ।
- २१] हर्षान्मुमुक्षुरस्राणि रामे निर्दत्तचेतसः¹⁰ ॥ २१ ॥ [१.७
ततः सभायां सचिवाःसोपाध्याया विचुक्रुथुः ।

7 कै, म—वाष्पलैरिव । 8 कै, ल—०र्यपरते । 9 म—प्रतिवन्तषतं ।

- २२] साधु साध्विति भूतार्थं शंसन्तो भरतं गुणैः ॥ २२ ॥ [N
 वसिष्ठस्त्वब्रवीद्दृष्टो भरतं वाष्पगद्गदम् ।
- २३] इदं परिषदो मध्ये परया भ्रवरसंपदा ॥ २३ ॥ [N
 शशाङ्कविमलं चित्तमनाश्चर्यमिदं त्वयि ।
- २४] पित्रा दशरथेन त्वं धर्मज्ञेन महात्मना ॥ २४ ॥ [N
 अभिजातोऽसि^१ शूरेण राज्ञा दानवयोधिना ।
- २५] यस्त्वं वनगतं रामं निवर्त्तयितुमिच्छसि ॥ २५ ॥ [N
 अभिजानासि रामस्य दृढं गुणवतो गुणान् ।
- २६] धन्योऽस्ति स च धर्मान्मा धन्यो यस्यासि बान्धवः ॥ २६ ॥ [N
 ईदृशा हि महात्मानो^{१ २} यत्र स्युः प्रियवान्धवाः ।
- २७] देशे किमिव तत्र स्याद्दुर्लभं वीतकल्मषे ॥ २७ ॥ [N
 त्वया ह्यपत्येन गुणैः कृतात्मना
 गतो दिवं भूमिपतिः प्रतिष्ठितः ।
 सभा समग्रा परितुष्यते त्वियं
- २८] यद्युद्यतो रामनिवर्त्तने ह्यसि ॥ २८ ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतप्रशंसा

नाम सर्गः॥ [९.२] ॥

[वं—८९] = [त्रिनवतितमः सर्गः] = [दा—८२]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो भ्रातृवत्सलः ।

२] गुरुं प्रणम्य शिरसा ततो वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [N

सर्वोपायान् प्रयुञ्जेऽहं तं निवर्त्तयितुं गुरुम्^१ ।

१] समस्रमार्यामिश्राणां गुरुणां गुरुवर्त्तिनाम् ॥ २ ॥ [१२

एवमुक्त्वा स धर्मात्मा भरतो भ्रातृवत्सलः ।

२] समीपस्थं तदा मृतं भुय एवाब्रवीदिदम् ॥ ३ ॥ [२१

वर्णमुत्थाय गच्छ त्वं सुमन्त्र मम शासनात् ।

३] यात्रामाज्ञापय क्षिप्रं बलं चैव समानय ॥ ४ ॥ [२२

एवमुक्तः सुमन्त्रस्तु भरतेन महात्मना ।

४] प्रहृष्टः सन्दिदेशाशु यथासन्दिष्टमेव तत् ॥ ५ ॥ [२३

ताः प्रहृष्टाः प्रकृतयो बलाध्यक्षप्रणोदिताः ।

५] श्रुत्वा यात्रां समाज्ञप्तां काकुत्स्थविनिवर्त्तिने^० ॥ ६ ॥ [२४

ततो ऽयोध्यागताः सर्वं हृष्टाः स्वे स्वे गृहे तदा ।^०

६] यात्रासमयमाज्ञाय^० रामस्य गमनं प्रति ॥ ७ ॥ [२५

ते ह्यै गौरथैः शीघ्रैः^२ स्यन्दनैश्च मनोहरैः ।

७] सह योषैर्बलाध्यक्षा^३ बलं सज्जमेवेदयन् ॥ ८ ॥ [२६

सर्जं तु तद्वलं ज्ञात्वा भरतो गुरुसन्निधौ ।

८] रथं मे त्वरयस्वेति सुमन्त्रं पार्श्वतोऽब्रवीत् ॥९॥ [२७

ततः सुमन्त्रस्तामाज्ञां श्रुत्वा शीघ्रपराक्रमः ।

९] रथं गृहीत्वा प्रययौ युक्तं परमवाजिभिः ॥१०॥ [२८

स राघवः सत्यधृतिः^४ प्रतापवान्

वचः सुयुक्तं दृढसत्यविक्रमः ।

1 म—गृहं । ० ब । 2 म—शीघ्र० । 3 कै—योषिर्व० । म —
योषुर्बला ० । 4 ब—सत्यधृतः ।

- गुरुं महाऽरण्यगतं यशस्विनं
 १०] प्रसादयिष्यन् भरतोऽब्रवीदिदम् ॥ ११ ॥ [२९
 तूर्णं समुत्थाय मुमन्त्रं^५ गच्छं
 योगं समाज्ञापय मे बलानाम् ।
 आनेतुमिच्छामि गुरुं वनस्थं
 ११] प्रसाद्य रामं जगतो हिताय ॥ १२ ॥ [३०
 स सूतपुत्रो भरतेन सम्यग्
 आज्ञापितः संपरिपूर्णकामः ।
 शशास सर्वान् प्रकृतिप्रधानान्
 १२] बलस्य मुख्यान् स्वमुद्वृज्जनं^६ च ॥ १३ ॥ [३१
 कल्पे समुत्थाय^७ ततः कुलीनां
 राजन्यवैश्या नगरप्रधानाः ।
 अयोजयन्नुद्गरान्^८ समन्तान्-
 १३] मत्तांश्च नागान् बहुलान् हयांश्च^{१०} ॥ १४ ॥]३२
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सेनाप्रस्थानिको^{११}
 नाम सर्गः ॥ [६३] ॥

५ म—गच्छतो समुत्र । ६ ब—सुसुद्वृज्जनं । ७ ल—कल्पे ।
 ब, म—काले । ८ कै—कुलीना । ९ ल—अयोजयन्नुद्गरान् । १० कै—
 हयांश्च । ११ ब—सेनाप्रस्थानिको ।

[वं—६०] = [चतुर्नवतितमः सर्गः] = [दा—८३]

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्तमास्थाय स्यन्दनोत्तमम् ।

१] प्रययौ भरतः श्रोमान् रामदर्शनकाम्यया ॥ १ ॥ [१]

अग्रतः प्रययुस्तस्य सर्वे मन्त्रपुरोहिताः ।

२] आधिरुह्य हयैर्युक्तान् रथान् सूर्यरथोपमान् ॥ २ ॥ [२]

दशनागसहस्राणि काल्पतानि यथाविधि ।

३] अन्वयुर्भरतं यान्तामिक्ष्वाकुकुलनन्दनम् ॥ ३ ॥ [३]

षष्टीरथसहस्राणि धान्विनां सायुधानि वै ।

४] अन्वयुर्^१ भरतं यान्तं राजपुत्रं महाबलम् ॥ ४ ॥ [४]

शतं चाश्वसहस्राणि समारूढानि राघवम् ।

५] अन्वयुर्^२ भरतं यान्तं राजपुत्रं यशाम्बिनम् ॥ ५ ॥ [५]

कैकेयी च मुमित्रा च कामल्या च यशाम्बिनो ।

६] रामानयनसंहृष्टा ययुर्यानः प्रभास्वरैः ॥ ६ ॥ [६]

प्रययौ चार्यसङ्घातो रामं द्रष्टुं मलक्ष्मणम् ।

७] तस्य चेष्टाः कथाश्चक्रुः सर्वे महृष्टमानसाः ॥ ७ ॥ [७]

मेघश्यामं महाबाहुं स्थिरमन्त्रं दृढव्रतम् ।

८] द्रक्ष्यामस्तं कदा रामं जगतः शोकनाशनम् ॥ ८ ॥ [८]

द्रष्ट एव मनःशोकमपनेप्याति राघवः ।

९] तमः कृत्स्नस्य लोकस्य समुद्यन्निव भास्करः ॥ ९ ॥ [९]

इत्येवं कथयन्तस्तं मप्रहृष्टाः कथाः शुभाः ।

१०] परिष्वजन्तश्चान्यान्य ययुर्नरगणाम्बदा ॥ १० ॥ [१०]

पुराञ्च निर्ययुः सर्वे समवायिन नैगमाः ।

११] रामदर्शनसंहृष्टाः सर्वाः प्रकृतयस्तथा ॥ ११ ॥ [११]

१ कै, म—अन्वयन् (यं—कं) । २ कै.—अन्वयन् । म—अन्वय ।

मणिकाराश्च ये केचिच्छत्रकाराश्च शोभनाः ।

१२] यन्त्रकर्मकृतश्चैव^४ तथा चास्त्रोपजीविनः ॥ १२ ॥ [१२

मायूरिका स्तैत्तिरिकाश्च छेदका भेदकास्तथा ।

१३] दन्तकाराः मुधाकारास्तथा दन्तोपजीविनः ॥ १३ ॥ [१३

स्वर्णकाराश्च विख्यातास्तथा कनकशोधकाः ।

१४] स्नापकाः स्तावका वैद्याः शौण्डिकाःपौष्पिकास्तथा ॥१४॥ [४१

१५] रजकास्तन्तुवायाश्च^५ मृतमागधनन्दिनः^६ । [१५पू

पू१६] वारुटा^७ वेत्रकाराश्च गान्धिकाः पाणिकास्तथा ॥ १६ ॥ [N

उ१६] प्रावारिकाः मृपकारास्तथा शिल्पोपजीविनः ।

पू१७] हैरण्यकाश्च प्रख्यातास्तथा बृद्धद्युपजीविनः ॥ १६ ॥ [N

उ१७] प्राकारिकास्तथा चैव तथा शास्त्रोपजीविनः ।

उ१८] स्युलवायाः^८ कांस्यकाराश्च^९ चित्रकाराश्च^{१०} योधिः ॥१७॥

उ१८] धान्यविक्रयिणश्चैव गन्धविक्रयिणस्तथा ।

पू१९] फलोपजीविनः सर्वे पुष्पमूलोपजीविनः ॥ १८ ॥ [N

उ१९] मृपकाराःस्थपतयस्तक्षणः कारपत्रिकाः^{११} ।

पू२०] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे इष्टकाकारकास्तथा ॥ १९ ॥ [N

उ२०] दिव्यमोदककाराश्च मालाकाराश्च शोभनाः ।

पू२१] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे तथा मांसोपजीविनः ॥ २० ॥ [N

उ२१] पाक्तिकाः^{१२} पायकाश्चैव^{१३} तथा चूर्णोपजीविनः । [N

पू२२] कार्पासिका धनुष्काराः मूत्रविक्रयिणस्तथा ॥ २१ ॥ [N

उ२२] वस्त्रकर्मकृतश्चैव काण्डकारास्तथैव च ।

४ कै, म—यत्रकर्मकृताश्चैव । ल—यत्रकर्मकृताश्चैव । ५ कै, म—स्तत्र । म—स्तत्रवायश्च । ६ कै, म, ल—वदिनाः । ७ वारुजा । म—वारजा । *कै—स्तुलवायाः । ल—मूलवायाः । ८ व—लोहका । कै—कराश्च । ९ कै—मंत्रिका । १० कै—पाक्तिका । व—मायिका ।

- पू२४] शलाकाश्लयहर्तारो विषवैद्याश्च शोभनाः ॥०२२॥ [N
 उ२४] भृतग्रहविधिज्ञाश्च^१ बालानां च चिकित्सकाः ।
 पू२५] आरकूटकृतश्चैव ताम्रकारास्तथैव च ॥ २३ ॥० [N
 उ२५] स्वास्तिकाराः कोशकारास्तथा भक्तोपजीविनः ।
 पू२६] भर्जकाराः^{१२} सक्तुकारास्तथा वाटाविकाश्च ये ॥२४॥ [N
 उ२६] खण्डकारास्तथा^{१३} मुख्यास्तथा वाणिजकाश्च ये ।
 पू२७] काचकाराश्छत्रकारास्तथा^{१४} बोधकशोधकाः ॥ २५ ॥ [N
 उ२७] खण्डसंस्थापकाश्चैव तथा ताम्रोपजीविनः ।
 पू२८] श्रेणीमहत्तराश्चैव ग्रामधोपमहत्तराः ॥ ०२६ ॥ [N
 उ२८] शैल्लषाश्च सह स्त्रीभिर्दृतवैतंसिकाश्च ये ।^(०) [१५३
 पू२९] सश्रेणीनिर्गमं सर्वं नगरं संकुलीकृतम् ॥ २७ ॥ [N
 उ२९] आतुरं वृद्धबालं च वर्जयित्वा पुरे जनम् । [N
 पू३०] समाहिता वेदविदो ब्राह्मणाः श्रुतसंगताः ॥ २९ ॥ [१६५
 उ३०] गोरथंभरतं यान्तमनुजग्मुः सहस्रशः । [१६३
 पू३१] सुवेशाः शुद्धवसनाः सन्तो मृष्टानुलेपनाः ॥ २९ ॥ [१७५
 उ३१] सर्वं ते विविधैर्यान्तं यानैर्भरतमन्वयुः । [१७३
 पू३२] दृष्टा प्रमुदिता सेना साऽन्वयात् केकयीसुतम्^{१५} ॥ ३० ॥ [१८३
 उ३२] श्लाघ्यदृष्टेन मार्गेण तथाऽन्यैर्द्विजसत्तमैः ।
 उ३४] अतिष्ठत् सा तदा सेना गङ्गामासाद्य वै नदीम् ॥ ३१ ॥ [२१
 निरीक्ष्य च स्थितां सेनां गङ्गां चैव बहूदकाम् ।
 ३५] भरतः सचिवान् सर्वानब्रवीद्वाक्यकोविदः ॥ ३२ ॥ [२२
 निवेशयत् मे सेनामाभिप्रायेण सर्वशः ।
 ३६] विश्रान्ताः सन्तरिप्यामो गङ्गामेतां महानदीम् ॥ ३३ ॥ [२३

० ब । 11 कै, म—भृतग्राहा० । 12ब—भक्तकाराः । 13 ख—
 कड्ग० । 14 ब—रास्त्रिकृतस्तथा । 0म । 15 ब—केकयी० ।

अस्यां तु तावदिच्छामि स्वर्गतस्य महीपतेः ।

३७] ऊर्ध्वदेहानिमित्तार्थमहं दातुं जलाञ्जलिम् ॥ ३४ ॥ [२४

तस्यैवं ब्रुवतोऽप्रात्यास्तथेत्युक्त्वा समाहिताः ।

३८] न्यवेशयन्तच्छन्देन स्वेन स्वेन पृथक् पृथक् ॥ ३५ ॥ [२५

निवेश्य गङ्गामनु तां महाचमूम्

यथाभिधानं परिवर्हशोभिताम् ।

उवास वासं भरतो महामना

३९] विचिन्तयन् रामानिवर्त्तनं च ॥ ३६ ॥ [२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतानुयानं

नाम सर्गः ॥ [९४] ॥



[वं—१.]=[पञ्चनवातितमः सर्गः]=[दा—८४]

ततो निविष्टां ध्वजिनीं गङ्गामासाद्य तां नदीम् ।

१] निषादराजो दृष्ट्वैव ज्ञातीन् स्वानिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
इयं सेना मुमहती समन्तात् परिदृश्यते ।

२] अन्तमस्या न पश्यामि विस्तृतायाः समन्ततः ॥ २ ॥ [२
इक्ष्वाकृणामियं सेना संशयो नात्र कश्चन ।

३] एष सन्दृश्यते दूरात्कोविदारध्वजो रथः ॥ ३ ॥ [३
ग्रहीष्यते हस्तिनः किं मृगयां नु चरिष्यति । [पृ४

४] हनिष्यति न खल्वस्मान् सैन्यमेतदमानुषम् ॥ ४ ॥ [N
अथो दाशरथिं रामं पित्रा प्रव्राजितं वनम् । [४३

५] सामात्यो राज्यलोभेन भरतो हन्तुमुद्यतः ॥ ५ ॥ [५३
समर्था राज्यलक्ष्मीर्हि मृश्लिष्टं भ्रातृसाहृदम् ।

६] क्षणेन विच्यावयितुं सर्वथाऽस्मि विशङ्कितः ॥ ६ ॥ [N
मम दाशरथी रामो भर्ता बन्धुः सखा गुरुः ।

७] अहं तस्य हितार्थाय गङ्गामन्वाश्रितो नदीम् ॥ ७ ॥ [६
संमन्त्रयामि यद्युक्तं मन्त्रज्ञैर्मन्त्रिभिः सह ।

८] मन्त्रयित्वाऽब्रवीत् सर्वान् वचो वनचरांस्तथा ॥ ८ ॥ [६
सुसम्भदाः सुधनुषाः सर्वे एव समाहिताः ।

९] व्युद्यन्तेनां नदीं व्याप्य मम तिष्ठत शासनात् ॥ ९ ॥ [N
नौकाशतानां पञ्चानामकैकस्य शतं शतम् ।

१०] सन्नदानां तथा यूनां तिष्ठन्तद्यतधन्विनाम् ॥ १० ॥ [८
यदि यास्यति सन्दुष्टा रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।

1 कै—विद्यावयितुं । २ कै—ममन्त्रयामि [य] यु० ।

३, ४, ५—स, म—स, मन्त्रयामि० । ३ ब—मन्त्रज्ञो । ४ ब, म—०स्तदा ।

५, ६—सधनुषः ।

- नेयं स्वस्तिमती सेना गङ्गामद्य^० तरिष्यति^० ॥११॥ [९
 रामावमाननकृतं क्रोधमद्य हृदिस्थितम् ।
- १२] सेनाव्राते विमोक्ष्यामि निर्मोकं पन्नगो यथा ॥ १२ ॥ [N
 रामं बने वासयता कैकेयीवशगेन यत् ।
- १३] कृतं पापं नरेन्द्रेण तत् प्रमोक्ष्यामि संयुगे ॥ १३ ॥ [N
 अद्य मे शरसङ्घाता मत्कार्मुकपरिच्युताः ।
- १४] निपतिष्यन्ति गात्रेषु नराश्वरयदन्तिनाम् ॥ १४ ॥ [N
 बाजिनां च सिताङ्गानां क्रुद्धस्य मम सायकाः ।
- १५] अद्य भिक्ष्वा प्रवेक्ष्यन्ति शरीराणि मयेरिताः ॥ १५ ॥ [N
 हतयोर्धा हतरथां विध्वस्तगजसादिनीम् ।
- १६] सेनामद्य करिष्यामि क्रव्यादा(द?)खगभोजनं[नाम्]१६॥ [N
 निविष्टा यत्र सेनैषा सवाजिरथकुञ्जरा ।^०
- १७] तत्र^० भूमिं^० करिष्यामि^० शरैः शोणितकर्दमाम् ॥१७॥ [N
 अद्याहं तोषयिष्यामि मृध्रगोमायुवायसान् ।
- १८] सैनिकानां समस्तानां रुधिरैः क्षतजाशिनः ॥ १८ ॥ [N
 अद्य कर्म करिष्यामि रामस्यार्थं मुदुष्करम् ।
- १९] स्वप्स्ये वाऽहं विनिहितः कथामेषः किल क्षितौ ॥ १९ ॥ [N
 निवारयिष्यामि हि वाहिनीमिमां
 धनं व्रजन्तीं बहुवाजिकुञ्जराम् ।
 गुणैर्युहीतो बहुभिर्महात्मनः
- २०] प्रियस्य रामस्य हितं चिकीर्षुः ॥ २० ॥ [N
 इत्यार्थं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहकोपो
 नाम सर्गः ॥ [१५] ॥

- [वं—१३]=[षष्णवतितमः सर्गः]=[वा—८४, ८५]
 अथोपायनमादाय मत्स्यान्^१ मांसं^१ मधूनि च ।
- १] अभिचक्राम भरतं निषादाधिपतिर्^२ गुहः ॥ १ ॥ [१०
 तमायान्तमभिमेष्य मृतपुत्रः प्रतापवान् ।
- २] भरतायाचक्षे च विनयज्ञो विनीतवत् ॥ २ ॥ [११
 वृतो ज्ञातिसहस्रेण गुहस्त्वां प्रत्युपस्थितः ।
- ३] कुशलो दण्डकारण्ये वृद्धो भ्रातुश्च ते सखा ॥ ३ ॥ [१२
 तस्मात्सौ पश्यतु त्वां त्वत्पीत्यर्थमुपागतः ।
- ४] असंश्रयमयं वेत्ति यत्र तौ रामलक्ष्मणौ ॥ ४ ॥ [१३
 एतन्नु वचनं श्रुत्वा सुमन्वाद् भरतस्तदा ।
- ५] ब्रुवाच सारथिं श्रीमान् गुहः पश्यतु मामिति ॥ ५ ॥ [१४
 लब्धाभ्यनुज्ञः संहृष्टो ज्ञातिभिः परिवारितः ।
- ६] आगम्य भरतं प्रह्वो गुहो वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥ [१५
 निष्कण्टकश्च देशोऽयमसङ्कीर्णश्च राघव ।
- ७] इदं च ते दासगृहं स्वके दासगृहे वस ॥ ७ ॥ [१६
 अस्ति मूलफलं चेह निषादैः^३ समुपार्जितम्^३ ।
- ८] अर्द्रि मांसं च शुष्कं च भक्ष्यं चोच्चावचं बहु ॥ ८ ॥ [१७
 आशंसे त्वा^४ जिताभिन्नं सौहार्दादहमीदृशम्^४ ।
- ९] अर्चितो विविधैः कामैः श्वः प्रभाते गमिष्यसि ॥ ९ ॥ [१८
 एवमुक्तस्तु भरतो निषादाधिपतिं गुहम् ।
- १०] प्रत्युवाञ्च महामाज्ञो वाक्यं हेत्वर्थसंहितम् ॥ १० ॥ [८५ । १
 सर्वे स्रष्टु कुत्साः कामस्त्वया मम गुरोः सखे ।

१ ल—मत्स्यानांसं । ब—मत्स्यां मांसं-। २ कै, म—निषादाधि-
 पतिर् । ३ ब—निषादसमुपार्जितं । ४ कै—ज्ञा । “त्वा” इति पार्श्वे
 लिखितम् । ५—त्वा । म—दा । ६ कै—मोहात्प्रादृह० ।

- ११] यो मे त्वमीदृशीं सेनामभ्यर्चयितुमिच्छसि ॥ ११ ॥ [८५ । २
इत्युक्त्वा^६ स महातेजा गुहं^७ वचनमीदृशम् ।
- १२] अब्रवीद् भरतः श्रीमान् निषादाधिपतिं पुनः ॥१२॥ [८५ । ३
कतरेण गमिष्यामो भारद्वाजाश्रमं गुह ।
- १३] गहनोऽयं भृशं देशो गजानीको दुरत्ययः ॥ १३ ॥ [८५ । ४
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
- १४] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुहो गहनगोचरः ॥ १४ ॥ [८५ । ५
दासास्त्वाऽनुगमिष्यान्ति धन्विनः सुसमाहिताः ।
- १५] अहं^८ चानुगमिष्यामि राजपुत्र महाबल ॥ १५ ॥ [८५ । ६
कश्चिन्न दुष्टो व्रजसि रामस्यालिष्टकर्मणः ।
- १६] अतिभीमा हि सेनेयं शङ्कूं जनयतीव मे ॥ १६ ॥ [८५ । ७
तमेवमभिजल्पन्तमाकाशसमनिर्मलः ।
- १७] भरतः श्लक्ष्णया वाचा गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [८५ । ८
मा मूढ स कालो धिक्कष्टं न मां शङ्कितुमर्हसि ।
- १८] राघवार्यं स हि भ्राता^९ ज्येष्ठः पितृसमो मम ॥१८॥ [८५ । ९
उपावर्षयितुं यामि काकुत्स्थं वनवासिनम् ।
- १९] बुद्धिरन्या न ते कार्या सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ॥ १९ ॥ [८५ । १०
स तु प्रहृष्टवदनः श्रुत्वा भरतभाषितम् ।
- २०] पुनरेवाब्रवीद्वाक्यं भरतं प्रतिहर्षणम् ॥ २० ॥ [८५ । ११
धन्यस्त्वं न त्वया तुल्यं पश्यामि जगतीतले ।
- २१] अयवादागतं राज्यं यस्त्वं त्यक्तुमिहेच्छसि ॥२१॥ [८५ । १२
शाश्वती खलु ते कीर्तिं लोकाननु भविष्यति ।
- २२] यस्त्वं कृच्छ्रगतं रामं प्रत्यानयितुमिच्छसि ॥२२॥ [८५ । १३

६ म—इत्युक्त्वा । ७ ब—इत्युक्तः । ७ ब, म—गुहो । ८ कै—अर्थ ।
९ कै—भ्राता । म—भ्राता ।

एवं संभाषमाणस्य गुहस्य भरतेन तु ।

२३] बभौ नष्टप्रभः सूर्यो रजनी चाप्यवर्त्त^{१०} ॥२३॥ [८५।१४

सनिवेश्य ततः सेनां गुह्येन परिसान्त्वितः ।

२४] शत्रुघ्नेन सह श्रीमान् शयनं विवशोऽगमत् ॥२४॥ [८५।१५

तत्र चिन्तापरीतः सन् न निद्रामभ्यपद्यत ।

२५] रामप्रसादमाकांक्षंस्ततस्तद्बहु चिन्तयन् ॥२५॥ [८५।१६

अन्तर्दाहेन घोरेण दह्यमानोऽनिशं तदा ।

२६] दावाग्निपरिसन्तप्तो^{११} महानाग इव श्वसन् ॥२६॥ [८५।१७

सुस्त्राव सर्वगात्रेभ्यः स्वेदं शोकाग्निसंभवम् ।

२७] हिमवानिव शैलेन्द्रो बहुधातुपरिस्रवः ॥२७॥ [८५।१८

चिन्ताविस्तारमूलेन विनिःश्वसितसानुना ।

N] दैन्यपादपसङ्गेन दुःखशृङ्गाच्छयेन^{१२} च ॥२८॥ [८५।१९

निःश्वासायामधूमन शोकासुस्रवनेन^{१३} च ।

N] अन्तः सन्तापवंशेन हीनसत्त्वोचितेन च ॥२९॥ [८५।२०

मोहसन्तापदुर्गेण^{१४} कैकेयीवाग्दवाग्निना ।

N] आक्रान्तो दुःखशैलेन भरतः कैकेयीसुतः^{१५} ॥३०॥ [८५।२०

गुह्येन सार्धं स समागतस्तदा

महानुभावो भरतः प्रतापवान् ।

सुदुःखितं तं पुनरब्रवीत् तदा

२८] गुहः समभ्यागतधर्मवत्सलः ॥३१॥ [८५।२१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहसमागमो

नाम सर्गः ॥ [९६] ॥

१० कै, म—आस्य वर्त्तत । ल—आव्यवर्त्तत । ११ कै—वषा० ।
१२ व—०वेण । १३ व—०सूषणेन । १४ कै—वर्गेन । १५ कै, व, म—
कैकेयी० ।

[वं—९३]=[सप्तनवतितमः सर्गः]=[दा—N]

स तु वाष्पसमाविष्टो गुहो ज्ञातिगणैर्दृतः ।

१] भरतं वाक्यकुशलो बद्धाञ्जलिरभाषत ॥ १ ॥

इक्ष्वाकुवंशसदृशं व्याहृतं भरत त्वया^१ ।

२] अनुरूपं गुणानां च श्रुतस्य यशसस्तथा ॥ २ ॥

यस्य त्वं वृत्तसंपन्नो गुणज्ञो बन्धुरीदृशः ।

३] धन्यश्चासौ मम सखा राघवः प्रियवान्धवः ॥ ३ ॥

यस्त्वं लब्धां श्रियं त्यक्त्वा निर्गुणामिव योषितम् ।

४] वनादुपावर्त्तयितुं यासि भ्रातरमग्रजम् ॥ ४ ॥

इदं मुदुर्लभं लोके यादृशं ते च सौहृदम् ।

५] राघवं प्रति धर्मज्ञ यत्र सत्यं प्रतिष्ठितम् ॥ ५ ॥

यः पितुर्वचनं कुर्वन् जनन्याश्च^२ तव प्रभो ।

६] सहभार्यः^३ सह भ्रात्रा प्रविष्टो निर्जनं वनम् ॥ ६ ॥

एवमुक्तस्तु भरतो राजपुत्रो गुहेन सः ।

७] प्रत्युवाच गुहं धीमान् सान्त्वपूर्वमिदं वचः ॥ ७ ॥

अनेनैव विधानेन स्निग्धेन च हितेन च ।

८] पूजितश्चार्चितश्चास्मि परितुष्टश्च ते गुह ॥ ८ ॥

किञ्चिन्नु श्रोतुमिच्छामि वक्तव्यं खलु नानृतम् ।

१०] कस्मिन्देसे वनं गच्छन्नुषितो मम बान्धवः ॥

सुखानामुचितो नित्यमसुखानामकोविदः ।

११] रामो राजीवपत्राक्षो मैथिल्या सह सीतया ॥ ११ ॥

भ्रातृस्नेहादनुगतः पृष्ठतो यः स^४ राघवम्^४ ।

१२] सौमित्रि र्लक्ष्मणो नाम कश्चित् स परितृप्तवान् ॥ ११ ॥

१ कै—भरतर्षभ । २ कै—जनन्या च । ३ कै,म—सहभार्या ।
ज—सहपत्न्या । ४ कै—सरागवम् (?) ।

कं रामः श्रियिती राज्ञौ क स्थितः क विकल्पितः ।

- १३] सीतया सह धर्मात्मा कुत्र चाऽऽसीत्परमः ॥ १२ ॥
किं चासं कृतवान् वीरः किं चासीत्तस्य भोजनम् ।
१४] मत्पूर्वः स्वापितः कस्मिन्देहे क्षितिधरोपमः ॥ १३ ॥
अस्मिन् किलेद्ब्रुदीदृशे भ्राता मे सह सीतया ।
१५] सुप्तवान् रजनीमिकां शरीरेण न चक्षुषा ॥ १४ ॥
तथा कमलपत्राक्षो धनुष्पाणिः^५ सलक्ष्मणः^६ ।
१६] तां निशां जागरितवान् समृतः सहसारायिः ॥ १५ ॥
एतदाचक्ष्व मे सर्वं यथावत् परिपृच्छतः ।
१७] तस्य देव प्रभावस्य राघवस्य विचेष्टितम् ॥ १६ ॥
एतत्तु वचनं श्रुत्वा भरतस्य महात्मनः ।
१८] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुह्यं गहनगोचरः ॥ १७ ॥ [८६]१

इत्यार्षे रामायणे ऽथोध्याकाण्डे भरतवाक्यं^७

नाम^८ सर्गः ॥ [१७] ॥

[वं—१४]=[अञ्जनवतित्तप्तः सर्गः]=[दा—८९]

अक्रचापनिभं चापं प्रवृत्त स महाभुजः ।

२] जजागार स्वर्बं रात्रिं लक्ष्मणो भ्रातृवत्सकः ॥१॥ [N

तं जाग्रतमर्दभेन वरचापेषुधारिणम् ।

३] भ्रातृगुप्यर्थवत्यर्थमहं लक्ष्मणमब्रुवम्^१ ॥२॥ [२

इवं ताव सुखा श्रम्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।

४] पर्याश्वसिहि सो [सौ]म्यास्यां सुखं राघवनन्दन ॥३॥ [३

उचितोऽयं जनः सर्वः क्लेशानां त्वं सुखोचितः ।

५] गुप्त्यर्थं जागरिष्यामि रामस्य सह सीतया ॥४॥ [४

न च रामात् भियतरो ममास्ति भुवि कश्चन ।

६] सो [मो]? त्मुको भूद् [र?] ब्रवीन्भेतदहं सत्यं तवाग्रतः ॥५॥ [५

अस्य प्रसादादाशंसे लोकेऽस्मिन् सुमहद्यशः ।

७] धर्मावाप्तिं च बहुलाभ्यर्थाकामौ न केवलौ ॥६॥ [६

सोऽहं भियसत्वं रामं शयानं सह सीतया ।

८] रक्षिष्यामि धनुष्याणिः सर्वैः स्वज्ञातिभिर्दृतः ॥७॥ [७

न हि मेऽविदितं किञ्चिद्दनेऽस्मिन्धरतः सदा ।

९] चतुरङ्गं अपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥८॥ [८

एवमस्माभिरुक्तेन लक्ष्मणेन महात्मना ।

१०] अनुनीता वयं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता ॥९॥ [९

कथं दाशरथौ भूमौ शयाने सह सीतया ।

११] शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं च सुखानि च ॥१०॥ [१०

यो न द्वेषासुरैः शक्यः सोऽहं युधि समागतैः ।

१२] त्वं पश्य गुहं संविष्टं तृणेषु सह सीतया ॥११॥ [११

[^१ त्वं—लक्ष्मणमब्रवीत् । कै—लक्ष्मणमब्रुवन् । म—लक्ष्मणमब्रवीत् ।

महता तपसा लब्धो विविधैश्च क्रियाफलैः ।

- १३] एको दशरथस्यैष पुत्रः सहस्रलक्ष्मणः^२ ॥१२॥ [१२
अस्मिन् प्रव्रजिते राजा न चिरं वर्चयिष्यति ।
- १४] विधवा मेदिनी नूनं क्षिमयेषा भविष्यति ॥१३॥ [१३
विनद्य मुमहानादं श्रयेण च युताः स्त्रियः । [१४पू
N] मृतकल्पा भविष्यन्ति निद्रया परिमोहिताः ॥१४॥ [N
निर्घोषनिनदो^३ नूनमद्य राजनिवेशने । [१४उ
N] भविष्यति महाघोरो^४ रामे प्रव्रजिते^५ वनम् ॥१५॥ [N
N] निर्घोषनिनदं श्रुत्वा चाद्य राजनिवेशने । [N
पू१६] कौसल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ॥ १६ ॥ [१५पू
उ१६] नाशंसे यदि ते सर्वे जीवेयुः शर्वरीमिमाम् । [१५उ
पू१७] जीवेदपि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ॥ १७ ॥ [१६पू
उ१७] एतद्दुःखात्तु कौसल्या वीरसूर्विनशिष्यति । [१६उ
N] अनुरक्तजनाकीर्णा मुखदुःखासहा सदा ॥ १८ ॥ [N
N] राजधानी कुलस्यास्य साऽद्य नूनं विनक्ष्याति^६ । [N
N] अतिक्रामादति^७ क्रान्तमनवाप्य^७ मनोरथम् ॥ १९ ॥ [१७पू
N] रामे राज्यमनिक्षिप्य पिता मे विनशिष्यति । [१७उ
पू१८] सिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन् काले विशेषतः ॥ २० ॥ [१८पू
उ१८] प्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मरिष्यति राघवः । [१८उ
पू१९] रम्यचस्वरसंस्थानां^८ सुविभक्तमहापथाम्^९ ॥ २१ ॥ [१९पू
उ१९] हर्म्यमासादसंवाधां तूर्यनादाविनादिताम्^{१०} । [१९उ

२ म, व—०लक्ष्मणः । ३ व—०जनदे । ४ कै, म—०घोरे । ५ व,
म—प्रवा० । ६ कै, ल—विनक्ष्यति । म—विनक्ष्यति । ७ कै, ल—
अतिक्रामादतिज्ञात० । ८ व, म—०संस्थानं । ९ व, म—०पथं ।
१० कै—दुर्बलाव० ।

पृ२०]	रथाश्वगजसंवाधां सर्वरत्नोपज्ञोभिताम् ॥ २२ ॥	[२०पू
उ२०]	सर्वकल्याणसंपन्नां तुष्टपुष्टजनयुताम् ।	[२०उ
पृ२१]	आरामोद्यानसङ्कीर्णां समाजोत्सवशालिनीम् ॥ २३ ॥	[२१पू
उ२१]	सुखिनो विचरिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम ।	[२१उ
पृ२२]	आपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्धं कुशलिनो वयम् ॥ २४ ॥	[२२पू
उ२२]	निवृत्ते समये तस्मिन्नयोध्यां प्रविशेम हि ।	[२२उ
पृ२३]	परिदेवयमानस्य तस्यैवं सुमहात्मनः ॥ २५ ॥	[२३पू
उ२३]	तिष्ठतो राजपुत्रस्य सा व्यतीयाय शर्वरी ।	[२३उ
पृ२४]	प्रभातेऽभ्युदिते मूर्धे कारयित्वा जटास्ततः ॥२६ ॥	[२४पू
उ२४]	अस्मिन् भागीरथीतीरे सुखं सन्तारितौ ^{११} मया ॥२७ ॥	[२४उ

जटाधरौ तौ कुशचीरवाससौ

महाबलौ कुञ्जरयूथपोपमौ ।

वरेषु चापासिधरौ परन्तपौ

२५] प्रजग्मतुस्तौ सह मीनया ततः ॥ २८ ॥ [२५

इत्यापि रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहवाक्यं

नाम सर्गः ॥ [६८] ॥

[वं—९५]=[नवनवतितमः सर्गः]=[दा—८७]

गुहस्य वचनं श्रुत्वा भरतो भृशमप्रियम् ।

- १] जगाम मोहं तत्रैव यत्र तच्छ्रुतवान् वचः ॥१॥ [१]
 स विह्वलितसर्वाङ्गो विवृत्तविपुलेक्षणः ।
- २] पपात सहसा भूमौ कूलभ्रष्ट^१ इव द्रुमः ॥२॥ [३]
 सुकुमारो महासत्त्वः सिंहस्कन्धो महाभुजः ।
- ३] पुण्डरीकविशालाक्षस्तरुणः प्रियदर्शनः ॥३॥ [२]
 भरतं मोहितं दृष्ट्वा विवर्णवदनो गुहः ।
- ४] बभूव व्यथितस्तत्र भूमिकंपादिव द्रुमः ॥४॥ [४]
 ततः सर्वाः समापेतुर्मातरो भरतस्य ताः ।
- ६] उपवासात्^२ कृशा^३ दीना भर्तृव्यसनकार्षिताः ॥५॥ [६]
 तास्तां निपतितं दृष्ट्वा भूमौ सुप्तं मियं सुतम् ।
- ७] संभ्रान्तहृदयास्तत्र रुदन्त्यः पर्यवारयन्^४ ॥६॥ [७]
 कौसल्या त्वभिसृर्त्यनं व्यथितं स्नेहविक्रवा । [८पू
- ८] संस्पृश्याश्र्वासयामास सुखस्पर्शेन पाणिना ॥७॥ [N
- ८९] पप्रच्छ चैव रुदती भरतं शोककार्षिता [८उ
 कश्चिद्व्याधिर्न^५ ते पुत्र शरीरं संमबाधते ।
- १०] अरथ राजकुलस्याद्य त्वदधीनं हि जीवितम् ॥८॥ [९]
 त्वां दृष्ट्वा पुत्र जीवामि रामे सभ्रातृके गते ।
- ११] त्वमिदानीं कुले नाथो मृते दशरथे नृपे ॥९॥ [१०]
 कश्चिन्न लक्ष्मणात् पुत्राच्छ्रुतं^५ ते किञ्चिदप्रियम् ।

१ कै, व—कुल० । म—कुलभ्रष्ट० । २ व—उपवासहृया । ३ कै,
 ल—परिवारयन् । ४ कै—कश्चिद्व्याधिर्न । म—कश्चिद्व्याध्या न ।
 ५ म—पुत्र...च्छ्रुतं ।

- १२] पुत्राद्वाप्येकपुत्रायाः सहभार्याद्वनाश्रयात् ॥१०॥ [११
एवमुक्त्वा जलहिनैर्वस्त्रैराशवासयत्तदा ।
- १३] कौसल्या भरतं दीनमिष्टं पुत्रमिवात्मजम् ॥११॥ [N
स मुहूर्त्वात् समुत्तस्थौ० रुदन्नेव० महायशाः० ।
- १४] कौसल्यां प्रतिपूज्याथ गुहं वचनमब्रवीत् ॥१२॥ [१२
गुह० पृच्छामि भूयस्त्वां वक्तव्यं खलु नानृतम् ।
- १५] राघवः सह वैदेहा तदा किमुपभुक्तवान्^६ ॥१३॥ [१३
लक्ष्मणो वा महातेजाः कुललक्ष्मीविवर्धनः ।
- १६] अनियुक्तोऽनुयातो वा वनवासाय राघवम् ॥१४॥ [N
सोऽब्रवीद् भरतं पृष्टो निषादाधिपतिर्गुहः ।
- १७] श्रूयतामिति वाक्यज्ञो गृहीत्वा वाष्पमाहृतम्^७ ॥१५॥ [१४
अन्नमुखावचं भक्ष्यं लेह्यं चोप्यं^८ तथैव च ।
- १८] रामायाभ्यवहारार्थं बहुशो दर्शितं मया ॥१६॥ [१५
तत्प्रीत्या च मयाऽऽनीतं प्रणयेन च राघवः ।
- १९] सर्वं न प्रतिजग्राह^९ क्षात्रं^{१०} धर्ममनुस्मरन् ॥१७॥ [१६
आह च स्म स धर्मात्मा चलितं मामधोमुखम् ।
- २०] अस्माभिर्न प्रतिग्राह्यं देयमेव तु सर्वशः ॥१८॥ [१७
चापं चोद्यम्य^{१०} योद्धव्यमेतत् क्षत्रभृतां^{११} व्रतम् । [N
- २१] लक्ष्मणेनाहृतं वारि स्वयमेव महात्माना ॥१९॥ [१८पू
तेनोपवासं काकुत्स्थश्चचार सह सीतया । [१८उ
- २२] ततस्तु जलशेषेण लक्ष्मणोऽप्यकरोत्तदा ॥२०॥ [१९पू

०म । ६ म—०मुपयु० । ७ कै, ल—०साहृतम् । ८ ल—चोहं ।
कै—चोषं । ९ कै—०प्राह्यं क्षत्रं । १० कै—चाभ्यस्य । ल—चोद्यस्य ।
११ व—क्षत्र० । म—क्षेत्र० ।

उपवास स्थितस्यैव तस्य सन्ध्याऽभ्यवर्तत ।

- २३] ततस्त्वसौ यथान्यायं रामो धर्मभृतां वरः ॥२१॥ [N
 पू२४] उपास्य सन्ध्यां तत्रैव वाग्यतः सुसमाहितः^{१२} । [१९ उ
 उ२५] अस्मिन्नुपाविशद्रामः संस्तरं सह सीतया ॥२२॥ [२१ पू
 प्रक्षाल्य च ततः पादावपचक्राम^{१३} लक्ष्मणः । [२१ उ
 एतत्तदिङ्गुदीमूलमेतदेव^{१४} च तत्तृणम् ॥२३॥ [२२ पू
 यस्मिन् रामश्च सीता च तां रात्रिं शयितावुभौ । [२२ उ
 नियम्य पृष्ठे तु तलाङ्गुलित्रवान्
 महेषुपृष्ठाविपुथी परन्तपः ।
 धनुश्च सज्यं परिगृह्य लक्ष्मणो
 २७] निशामतिष्ठन् परिपालयंस्तदा ॥२५॥ [२३
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुह्वाक्यं
 नाम सर्गः ॥ [०९]^{१५} ॥

१२ कै-ससमाहितः । १३ म, व, ल-०नुपचक्राम । १४ कै, ल
 ०गुलीमूल० । १५ कै, ल, म-नास्ति । व-६७ ।

- [वं—६६]=[शततमः सर्गः]=[दा—८८]
- श्रुत्वा तु निपुणं सर्वं भरतः सह मन्त्रिभिः ।
- १] इङ्गुदीमूलमागम्य भ्रातुः शय्यामवैक्षत ॥ १ ॥ [१
वीक्षमाणश्च तां शय्यां क्रमेण तृणसंभृताम्^१ ।
- २] बभूव भरतो दुःखी वाष्पवाक्किञ्चलोचनः ॥ २ ॥ [N
जननीश्चाब्रवीत् सर्वास्तेनह मुमहात्मना ।
- ३] शर्वरी गमिता भृमाविदं विपरिवर्चितम् ॥ ३ ॥ [२
महात्मना कुलीनेन राजराजेन धीमता ।
- ४] कथं दशरथेनाद्य जातो^२ भूमौ प्रसुप्तवान् ॥ ४ ॥ [३
अजिनोत्तरसंस्तीर्णे वरास्तरणसंभृते^३ ।
- ५] शयित्वा पुरुषव्याघ्रः कथं शेते स्म भूतले ॥ ५ ॥ [४
पुष्पसञ्चयाचित्रेषु चन्दनागुरुगन्धिषु ।
- ६] पाण्डुराभ्रप्रकाशेषु कोकिलाभिरुतेषु च ॥ ६ ॥ [६
प्रासादाप्रविमानेषु उषित्वा तेषु सर्वशः ।
- ७] हैमराजतभौमेषु सुप्त्वा^४ भूमौ प्रसुप्तवान् ॥ ७ ॥ [७
गीतवादित्रनिर्घोषैर्वराभरणानिःस्वनैः^५ ।
- ८] मृदङ्गशङ्खशब्दैश्च सततं प्रतिबोधितः ॥ ८ ॥ [८
वन्दिभिर्बोधिभिः^६ काले बहुभिः स्मृतमागधैः ।
- ९] कथाभिरनुकूलाभिः स्तुतिभिश्च समन्ततः ॥ ९ ॥ [९
सर्वश्रेष्ठे कुले जातः सर्वलोकनमस्कृतः ।
- १०] सर्वलोकप्रियां त्यक्त्वा राजश्रियमनुत्तमाम् ॥ १० ॥ [१८

१ व—०संस्तृतं । म—०सम्भृतम् । ल—०संभृतम् । २ कै,
म—जाती । व—जाता । ३ व—०संस्तृते । म—०संस्कृते । ४ व—
सुतो । म—सुता । ५ कै—वरा० । ६ व—बोधितः ।

कथमिन्दीवरश्यामो रक्ताक्षः प्रियदर्शनः ।

- ११] व्यूढोरस्की महाबाहुः सुप्तवान् भुवि तादृशः ॥ ११ ॥ [१९
अश्रद्धेयमिदं लोके न सम्यक् प्रतिभाति मे ।
- १२] सुस्रते खलु मे मावः स्वप्नोऽयामिति मे मतिः ॥ १२ ॥ [१०
नूनं न पौरुषं कश्चिद्देवं हि बलवत्तरम् ।
- १३] यत्र दाशरथी रामो भूमावेवमशेत ह ॥ १३ ॥ [११
तृणशय्या मम भ्रातुरिदं विपरिवर्तितम् ।
- १४] स्थण्डिले कथयत्येतद् रामौ विमृदितं तृणम् ॥ १४ ॥ [१३
विदेहराजस्य सुता वैदेही प्रियदर्शना ।
- १५] दायिता शायिता भूमौ स्नुषा दशरथस्य च ॥ १५ ॥ [N
मन्ये साभरणा सुप्ता यथा स्वभवने पुरा ।
- १६] तत्र तत्र हि दृश्यन्ते शीर्णाः कनकबिन्दवः ॥ ०१६ ॥ [१४
मन्ये मर्तुः सुखलाया यत्र सीता तपस्विनी ।
- १७] सुकुमारा सती दुःखं नैव जानाति मैथिली ॥ १७ ॥ [१६
उत्तरीयमिहासक्तं मन्ये तनुतरं तथा ।
- १८] यथा क्षेते प्रकाशन्ते मुक्ताः कनकतंतवः ॥ १८ ॥ [१५
सिद्धार्या खलु वैदेही पतिं यानुगता वनम् ।
- १९] बयं संशयिताः सर्वे बिना तेन महात्मना ॥ १९ ॥ [११
अकर्णधारेव हि नौः पृथिवी प्रतिभाति मे ।
- २०] गते दशरथे स्वर्गं रामे चारण्यमाश्रिते ॥ २० ॥ [२२
न च प्रार्थयते कश्चिन्मनसाऽपि वसुन्धराम् ।
- २१] वनेऽपि वसतस्तस्य बाहुवीर्याभिपालिताम् ॥ २१ ॥ [२१
शून्यामशरणामेतामचिन्तितहयाद्विषाम् ।
- २२] अपाह्वजपुरद्वारां राजधार्मीं पितुर्मम ॥ २२ ॥ [२४

अप्रातीह्यां परिच्छूनां विषमस्थामनावृताम् ।

२३] शाश्रवा^७ नाभिवृश्यन्ते^८ भक्षयान्विषयुतानिव^९ ॥२३॥ [२४

अद्यप्रभृति भूमौ हि स्वप्स्यामि कुञ्चसंस्तरे ।

२४] फलमूलाशनो नित्यं जटाचीराजिनाम्बरः ॥२४॥ [२६

इमं कालान्तरं तस्य कृते वत्स्याम्यहं वने ।

२५] तत्प्रतिश्रुतमार्यस्य नैव मिथ्या भविष्याति ॥२५॥ [२७

वसन्तं भ्रातुरर्थे मां शत्रुघ्नोऽप्यनुवत्स्यति ।

N] लक्ष्मणेन सहायोध्यामार्यो मे पालयिष्यति ॥ २६ ॥ [२८

पर्णच्छायां सुखं भोक्ष्ये वनेषु निवसन्मुनिः ।

N] राज्यच्छायामयोध्यायामार्यः समुपभोक्ष्यते ॥ २७ ॥ [N

अभिषेक्ष्यामि कानुकुस्थमयोध्यायां यशस्विनम् ।

२६] अपि देवाश्च^{१०} मे^{१०} कुर्युरिमं सत्यं मनोरथम् ॥ २८ ॥ [२९

प्रसाद्यमानः शिरसा मया स्वयं

बहुप्रकारं यदि न प्रपत्स्यते ।

ततो नु^{११} वत्स्यामि^{१२} चिराय राघवम्

२७] वनेचरं नार्हति मामुपेक्षितुम् ॥ २९ ॥ [३०

ततः प्रवृत्ता रजनी दिनक्षये

श्रयन्ति नीडानि खगाः कृतालयाः ।

विसर्जितश्चापि गुहः स्वमालयं

२८] जगाम दुःखेन सहानुजीविभिः ॥ ३० ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे इंगुदीमूलवृक्षं^{१३}

नाम सर्गः ॥ [१००] ॥

7 ब—शाश्रवा । 8 ब, म—०भियच्छते । 9 ब—वृद्धितोऽर्थं पाठः ।
मथ्या.....मिष । म—वृद्धितः पाठः । भक्षयान्विषयुतानिव.....मिष ।
10 ब—मे देवताः । म—देवता । 11 कै—व । 12 कै, ल—
वत्स्यामि । 13 ब—०मूलवर्तनं नाम । ल—वृक्षो नाम ।

[वं—९७]=[एकाधिकशततमः सर्गः]=[दा—८९]

उषित्वा रजनीमेकां गङ्गातीरे महामनाः^१ ।

- १] भरतः कल्य^२उत्थाय शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ किं शेषे शत्रुघ्न रजनी गता । [२पू
२] पद्मबाधं समुद्यन्तं पश्य सूर्य^३ तमोनुदम् ॥ २ ॥ [N
शीघ्रमानायय गुहं शृङ्गवेरपुरेश्वरम्^४ ।
३] स हि गङ्गामिमां वीर तारापिप्याति वाहिनीम् ॥ ३ ॥ [२उ
शत्रुघ्नस्त्वब्रवीच्छरं भ्रातरं प्रियवान्धवम् ।
४] भरतं सोपचाराणामभिज्ञं^५ वचसां प्रभुः ॥ ४ ॥ [N
शोकशून्येन^६ मनसा त्वयि स्वपति^७ राघव । [N
५] जागर्मे न च सुप्तोऽस्मि तवैवार्थं^८ विचिंतयन् ॥ ५ ॥ [३पू
अपि रामः प्रसादं व^९ कुर्यात् स पुरुषर्षभः ।
६] प्रसाद्यमानो भवता मया च सह मन्त्रिभिः ॥ ६ ॥ [N
एवमुक्त्वा तु शत्रुघ्नो भरतस्याङ्गया ततः ।
७] अब्रवीत्पुरुषास्तत्र गुहमानयतेति सः ॥ ७ ॥ [N
इति संभाषमाणस्य शत्रुघ्नस्य महात्मनः ।
८] अभिगम्याज^९ ि रङ्गया गुहे वचनमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [४
कञ्चित्सुखं नदीतीरे याता काकुत्स्थ शर्वरी ।
९] कञ्चित् सर्वस्य सैन्यस्य सर्वतोऽनामयं प्रभो ॥ ९ ॥ [५
अथवा समुदाचारः प्रयुक्तोऽयं मया तव ।

१ ल—महात्मनः । २ ब, ल—काल्य । म—कालम् । ३ कै—
मूहं । ४ कै—शृङ्गवीरसुरेश्वरम् । ब, म—शृङ्गवीर० । ल—शृङ्गावेर० ।
५ कै—मेपचारा० । ६ कै, ल—शोकाशून्येन । ७ कै—सुपिति । ८ ब,
म—तमेवार्थं । ९ ब, ल—नः ।

- १०] कुतो हि सुखशय्या ते स्नेहेन परितप्यतः ॥ १० ॥ [N
भ्रातरं चिन्तयानस्य मृतं च जगतीपतिम् ।
- ११] शारीरमानसैर्दुःखैःस्नेहो ऽपि न निर्वर्तते ॥ ११ ॥ [N
तथोक्तो भरतो दीनः प्रत्युवाच गुहं वचः ।
- १२] मानयन् समुदाचारं^{१०} हृदयेन च दुःखितः ॥ १२ ॥ [N
सुखं नः शर्वरी राजन् पृजिताश्च वयं त्वया ।
- १३] गङ्गां तु नौभिर्बह्वीभिर्दाशाः^{११} सन्तारयन्तु नः ॥ १३ ॥ [७
ततो गुहः सत्वरितः श्रुत्वैवेश्वरशासनम् ।
- १४] प्रति प्रविश्य नगरीं स्वज्ञातीनिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥ [८
उत्तिष्ठत प्रबुध्यध्वं ज्ञातयो भद्रमस्तु वः ।
- १५] नावः समुपकर्षध्वं तारयिष्याम[मि] वाहिनीम् ॥ १५ ॥ [९
ते तथोक्ता समुत्थाय त्वरिता राजशासनात् ।
- १६] नावां शतानि पञ्चैव समन्तात् समुपानयन् ॥ १६ ॥ [१०
काश्चित् स्वस्तिकाचिह्नाङ्काः^(०) महाघण्टधराः^{१२} पराः^{१३} ।
- १७] शोभमानाः पताकिन्यो युक्ता नावः सुसम्मताः ॥ १७ ॥ [११
ततः^० स्वस्तिकचिह्नाङ्गां पाण्डुकंवलसंवृताम् ।
- १८] आनन्दघोषां कलयर्णीं गुहो नावमुपानयत् ॥ १८ ॥ [१२
तत्रारूरोह भरतः वज्रघ्नश्च महायशाः ।
- १९] कौसल्या च सुमित्रा च याश्चान्या राजयोषितः ॥ १९ ॥ [१३
पुरोहितो ऽभवत्पूर्वं ये चान्ये ब्राह्मणाः पृथक् ।^(०)
- २०] अन्तःपुरं राजभृत्यास्तथैव शकटायनाः ॥ २० ॥ [१४
आवासमादीपयतां तीर्थानि च विधावताम् ।

10 ब—स सदाचारं । 11 ब—र्दाशाः । म, ल—र्माताः ।

0ब । 12 कै—महाघटौधराः पुराः । 0कै, ल ।

- २१] भाण्डानि च^{१३} दधानां च^{१३} घोषस्त्रिदिवमस्पृशत्^{१४} ॥२१॥ [१५
तास्तु संप्रस्थिता नावः शीघ्रैर्दाशैरधिष्ठिताः^{१५} ।
- २२] बहन्त्यस्तं जनं सर्वं पारं^{१६} जग्मुः समाहिताः ॥२२॥ [१६
नारीणां तारिताः काश्चित् काश्चित्परमवाजिनाम् ।
- २३] काश्चिन्नावो बहन्ति स्म यानयुध्यं^{१७} महाबलाः^{१६} ॥२३॥ [१७
तास्तु गत्वा परं पारमवतार्यं च तं जनम् ।
- २४] निवृत्ताः कर्णधारैश्च धावन्त्यो विपुलंबुभिः ॥ २४ ॥ [१८
सवैजयन्त्यश्च^{१७} गजा गजारोदैः प्रचोदिताः ।
- २५] आरूढाः स्म प्रकाशन्ते सध्वजा इव पर्वनाः ॥ २५ ॥ [१९
नावमारूढुः केचित् केचिदारूढुः प्लवान् ।
- २६] केचिद् गङ्गा^{१८} घटैर्भरुः केचित्तरुः स्वबाहुभिः ॥२६॥ [२०
सा सर्वा ध्वजिनी गङ्गां दाशैः^{१९} सन्तारिता तदा ।
- २७] मैत्रे मूहूर्त्ते प्रययौ प्रयागवनमुत्तमम् ॥ २७ ॥ [२१

इत्यार्षे रामायणे ऽथोध्याकाण्डे^{२०} गङ्गासन्तरणं
नाम सर्गः ॥ [१०१] ॥

१३ ल—ख दधानां च । म--चादधानां च । ब--चादधानानां ।
१४ ब--घोरस्त्रि० । १५ ब, म, ल -०र्दालैर्ग० । १६ कै-परान् । १७ ब-
यानयुध्यं । ल-यानयुध्यं । म-यानयोग्यं । १८ कै, म--०बलः ।
१९ कै--सवैजयन्तश्च । २० ब, म, ल-कुम्भ- । २१ ब, म, ल-दालैः ।
२२ कै, ब, म, ल-अयोध्या० ।

[वं—१,८]=[ह्यधिकशानतमः सर्गः]=[दा—N]

सन्तीर्य भरतो गङ्गां ससैन्यः सहमन्त्रिभिः ।

१] पुरोहितस्यानुमते गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

कतमेन तु देशेन गन्तव्यं यत्र राघवः ।

२] गुहं मार्गं समाचक्ष्व त्वं सदा वनगोचरः ॥ २ ॥

सो ऽब्रवीद् भरतस्यैवं वचः श्रुत्वा गुहस्तदा ।

३] अभिज्ञस्तस्य देशस्य यस्मिन् वसति राघवः ॥ ३ ॥

इतः प्रयागं काकुत्स्थ गम्यतां वनमुत्तमम् ।

४] नानापक्षिगणाकीर्णमुपेतं सलिलाशयैः ॥ ४ ॥

कमलप्रतिमालाभैः सुतीर्थैरल्पकर्दमैः ।

५] खगपादक्षतैः^१ पूर्णेनिरुद्धं नीलशेबलैः^२ ॥ ५ ॥

वनं प्रकोशमात्रं च प्रयागस्य नरर्षभ ।

६] तत्रोषित्वा च गन्तव्यं भरद्वाजाश्रमं प्रति ॥ ६ ॥

तत्र गत्वा राजपुत्र मुनिं तमभिवादय^३ ।

७] धर्मज्ञं तपसा सिद्धं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥ ७ ॥

तस्य त्वमाशीर्षचनं गिरश्च हृदयङ्गमाः ।

८] श्रुत्वा यास्यासि संहृष्टो द्रष्टुं भ्रातरमग्रजम् ॥ ८ ॥

उषित्वा रजनीं^४ तत्र^५ विभवेस्तेन पूजितः ।

९] दृष्ट्वा हि मोक्षयते न त्वामेकामनुगतो निशाम् ॥ ९ ॥

ब्रुवाणमेवं तु गुहं सत्कृत्य भरतस्ततः^६ ।

१०] एवमास्तिवति तं वाक्यं परिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ १० ॥

गच्छ सौम्य निवर्तस्व समस्तैर्ज्ञातिभिः सह ।

1 म—०कृतैः । 2 कै—०शेबलैः । ल—०शेबलैः । 3 कै—०वाक्येः ।

म—०वाक्ये । 4 कै, म—तत्र रजनीं । 5 व—०स्तदा ।

- १.१] सत्कृतश्चानुयातश्च भृशं प्रीतोऽस्मि ते^६ गुणैः ॥ १.१ ॥
 भ्रातुर्भे पूजितं सख्यं^७ त्वया रामस्य धीमतः ।
- १.२] अनुरागश्च भक्तिश्च सौहृदं च प्रदर्शितम् ॥ १.२ ॥
 भरतेनाभ्यनुज्ञातो गुहस्तु ज्ञातिभिः सह ।
- १.३] ययौ संपूज्य भरतं सोपाध्यायपुरोगमम् ॥ १.३ ॥
 ततः प्रतिगतो नावं गुहो ज्ञातिसमान्वितः ।
- १.४] जगाम सेनया सार्द्धं प्रयागं भरतो वनम् ॥ १.४ ॥
 मुमन्त्रं दैशिकं कृत्वा मन्त्रिणं गघवामियम् ।
- १.५] मन्त्रकर्मणि च प्राज्ञं देशे कोले च कोविदम् ॥ १.५ ॥
 सफलान् पादपान् पश्यन् पुष्पाणि च समन्ततः ।
- १.६] वन्यद्विजानां च रुतं मृष्वन्^८ श्रोत्रमनोहरम्^९ ॥ १.६ ॥
 गुणान् रामस्य कथयन् मैथिल्या लक्ष्मणस्य च ।
- १.७] अगुणांश्चात्मनो मातुः कैकेय्याः समुदाहरन् ॥ १.७ ॥
 अर्ध्यं योजनं गत्वा ददर्श मुमहद्वनम् ।
- १.८] प्रयागमिति विख्यातं यथा चैत्ररथं तथा ॥ १.८ ॥
 तत्प्रविश्याश्रमपदं सर्वकामफलप्रदम्^{१०} ।
- १.९] शोभितं पङ्कजवनैः सुतीर्थं बहुपुष्करैः ॥ १.९ ॥
 अभिगम्य प्रयागं तद्^{११} देवस्थानमनुत्तमम् ।
- २.०] प्रदक्षिणं प्रणामं च चकार भरतस्तदा ॥ २.० ॥
 ताः सर्वा मातरस्तस्य^{११} शत्रुघ्नश्च महामतिः ।
- २.१] प्रयाताश्चाप्रमत्ताश्च चक्रुरेनं प्रदक्षिणम् ॥ २.१ ॥
 ते ऽभिवाद्य निनिष्क्रम्य वनात्समादन्तरम् ।

6 ब-तैर् । 7 म-साध्यं । 8 कै-शृण्वश्चित्तमनो० । 9 ब,
 म, ज-फलदुर्गम् । 10 म-तं । 11 ब-तस्या ।

२२] आश्रमं क्रोशमान्ने तु ददृशुः पिण्डितद्रमम्^{१२} ॥ २२ ॥

भरद्वाजसगोत्रस्य^{१३} महर्षेर्भावितात्मनः ।

२३] आश्रमं भरतो दृष्ट्वा प्रहर्षमतुलं ययौ ॥ २३ ॥

आश्वास्य तां चापि चमूं महात्मा

निवेशयित्वा च यथोपजोषम् ।

द्रष्टुं भरद्वाजमृषिप्रवर्यं^{१४}

२४] गन्तुं मतिं राजसुतश्चकार ॥ २४ ॥ [८९।२२

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे^{१५} प्रयागवनगमनं

नाम सर्गः ॥ [१०२] ॥



१२ म-पीडित० । १३ म-भारद्वाज० । १४ कै-०मृषिवर्यं ।
पार्श्वे भिन्नमस्यां "सु" इति लिखित्वा ०मृषिसुवर्यं इत्वेवं पाठः
प्रदर्शितः । १५ कै, व, म, ख-अयो० ।

[वं-९९]=[त्र्युत्तरशततमः सर्गः]=[दा-९०]

भरद्वाजाश्रमं गत्वा दूरोदेव नरर्षभः ।

१] बलं सर्वमवस्थाप्य जगाम सह मन्त्रिभिः ॥ १ ॥ [१]

पद्मघामेव स धर्मज्ञो न्यस्तशस्त्रपरिच्छदः ।

२] वसानो वाससी क्षौमे पुरस्कृत्य पुरोहितम् ॥ २ ॥ [२]

सूपद्वारं सुसंमृष्टं कदलीवनशोभितम् ।

३] ज्ञान्तव्यालमृगाकीर्णं वेदीमण्डलमण्डितम् ॥ ३ ॥ [N]

स्वर्गस्य विवृतं^१ द्वारं भ्राजमानं वनश्रिया ।

४] नातिदूरं ततो गत्वा स ददर्श तमाश्रमम् ॥ ४ ॥ [N]

तत्प्रविश्याश्रमपदं भरतः सपुरोहितः ।

५] ददर्श परमोदारमृषिं ज्वलनतेजसम् ॥ ५ ॥ [N]

ततः सन्दर्शने तस्य भरद्वाजस्य राघवः ।

६] मन्त्रिणस्तत्र विन्यस्य जगाम सपुरोहितः ॥ ६ ॥ [३]

ततो वसिष्ठं दृष्ट्वैव भरद्वाजो महातपाः ।

७] सञ्च चालासनात्तस्माच्छिष्यान् पाद्यमिति ब्रुवन् ॥७॥ [४]

समागम्य वसिष्ठेन भरतेनाभिवादितः ।

८] अबुध्यत महातेजाः पुत्रौ दशरथस्य तौ ॥ ८ ॥ [५]

दस्वा च स ऋषिस्ताभ्यामपि मूलफलादिकम् ।

९] आनुपूर्व्यात्^३ स धर्मात्मा सर्वाश्चैवानुपायिनः^४ ॥ ९ ॥ [६]

पमच्छ कुशलं चास्य राज्ये कोशे पुरे तथा ।

१०] ज्ञात्वा मृतं दशरथं स राजानं न पृष्टवान् ॥ १० ॥ [७]

1 व, म, ल—दृष्ट्वा । 2 म—विवृत- 3 म, व, ल—अनुपूर्व-

ल पुस्तके केनचित् पश्चात् “आनु” इत्येवं कृतम् । 4 कै—०वात्र-
वायिनः । म, ल—०वात्रयायिनः ।

वसिष्ठभरतौ चैनं पप्रच्छतुरनामयम् ।

- १.१] शरीरे चाग्निहोत्रे च शिष्येषु मृगपाक्षिषु ॥ १.१ ॥ [८
तथेति च प्रतिज्ञाय भरद्वाजो महातपाः ।
- १.२] भरतं प्रत्युवाचेदं राघवापेक्षया मुनिः ॥ १.२ ॥ [९
किमागमनकृत्यं ते परित्यज्य नृपश्रियम् ।
- १.३] एतदाचक्ष्व मे सर्वं न हि तुप्यति^५ मे मनः ॥ १.३ ॥ [१०
सुषुप्ते यमभिन्नघ्नं कौसल्याऽऽनन्दवर्द्धनम् ।
- १.४] यो^६ वनं^६ चीरवसनः प्रयातः सह सीतया ॥ १.४ ॥ [११
नियुक्तः स्त्रीनियुक्तेन^७ पित्रा यः सत्यवादिना ।
- १.५] भव त्वं वनवासीति समाः किल चतुर्दश ॥ १.५ ॥ [१२
कश्चित् त्वं तस्य^८ रामस्य धार्मिकस्य क्षमावतः ।
- १.६] निःस्नेहो^९ राज्यलोभेन विकत्यितुमिहागतः ॥ १.६ ॥ [N
तस्यापापस्य पापं त्वं^{१०} न कश्चित्कर्तुमर्हसि ।
- १.७] अकण्टकं भोक्तुमना राज्यं तस्याग्रजस्य च ॥ १.७ ॥ [१३
न खल्वपापे पापं ते कार्यं तस्मिन्महात्मनि ।
- १.८] यदसौ त्वत्कृते^{११} पित्रा वनमेव विवासितः ॥ १.८ ॥ [N
एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन^{१२} धीमता ।
- १.९] विवर्णवदनो भूत्वा प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ॥ १.९ ॥ [१४
हतोऽस्मि भगवन्नेवं यदि मामवगच्छसि ।
- १.१०] भयि ते या विशद्वेयं नाहं तां कर्तुमुत्सहे ॥ २.० ॥ [१५
न मे तदिष्टं^{१३} माता मे यदवोचन्मदन्तरे ।

५ व—शुष्यति । म—श्रुति । ६ ल—पुत्राम् । ७ ल—स्त्रीणि-
शुक्तैः । म—त्रीणिशुक्तेन । ८ व—किल । ९ कै, म, ल—निस्नेहो ।
१० कै—नास्ति । ११ ल—त्वत्कृते । १२ म—भारद्वाजेन । १३ कै,
ल—तमिहं ।

- २१] नाहमेतां समीक्षेयं नैतद्वचनमाददे ॥ २१ ॥ [१६
पातितं^{१४} ह्ययशो मूर्ध्नि मात्रा मे राज्यलुब्धया ।
- २२] तन्नाहमनुमन्येयं न चैतद्विदितं मम^{१५} ॥ २२ ॥ [N
को जातो भूमिपालानां शशाङ्काविले कुले ।
- २३] ज्येष्ठस्य भ्रातुरिष्टस्य द्रुक्षेत् व[च]त निर्घृणः ॥ २३ ॥ [N
न मे राज्यश्रिया कार्यं न सुखेन न चात्मना ।
- २४] तमेव राघवं ज्येष्ठं भ्रातरं वनवासिनम् ॥ २४ ॥ [N
अहं तु तं नरव्याघ्रं प्रसादयितुमागतः ।
- २५] अभिनेतुमयोध्यायां^{१६} पादौ वाप्युपसेवितुम् ॥ २५ ॥ [१७
तन्माभेवंगुणं मत्वा प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
- २६] शंस मे भगवान्^{१७} रामः क संप्रति महामतिः ॥ २६ ॥ [१८
एतत्तु वदतस्तस्य भरतस्य महात्मनः ।
- २७] रामस्नेहाभिभूतस्य सहसा वाप्पमागतम्^{१८} ॥ २७ ॥ [N
वाष्पक्लिन्नमुखं चैनं भरद्वाजोऽब्रवीदिदम् ।
- २८] उपपन्नमिदं पुत्र तवाद्य वचनं शुभम् ॥ २८ ॥ [N
परितुष्टं च विज्ञाय तमाकारैर्महामुनिम् ।
- २९] प्रष्टुवास्त्रुणि भरतः पुनर्वाक्यमुवाच ह ॥ २९ ॥ [N
यद्यस्ति मयि विश्वासो यद्यपेक्ष्योऽहमस्मि ते ।
- ३०] शंस मे भ्रातरं रामं कससंप्रति वर्तते ॥ ३० ॥ [N
तस्यैवं भाषमाणस्य राघवं परिपृच्छतः ।
- ३१] मनश्चक्रे भरद्वाजो वक्तुमेनं महामुनिः ॥ ३१ ॥ [N
पृजयित्वा यथान्यायं^{१९} भग्द्वाजस्नपोधनः ।

१४ कै, ल—पतितं । १५ ब—तव । १६ ब, म, ल—०योध्यां
तु । १७ ब, म—भगवन् । १८ ब, म—वाष्प आगतम् । १९ कै, ब—
यथान्याय्यं ।

- ३२] उवाचेदं महातेजाः महसन् भरतं वचः ॥३२॥ [१९
एवं त्वयि नरव्याघ्र युक्तमिक्ष्वाकुबन्धजे^{२०} । [२०पू
- ३३] उपावर्तयितुं यस्त्वं वनादिच्छसि राघवम् ॥३३॥ [N
गुरुद्विर्दमश्चैव सानुक्रोशगुणसमा^{२१} । [२०द्व
- ३४] एतान्येव सुवर्णानि शरीरे भूषणानि^{२२} ते ॥३४॥ [N
विदित्वा तस्त्वश्चैव सद्यः^{२३} शौचगुणं तव ।
- ३५] भवतः^{२४} श्रोत्रुकामेन मियमेतदुदाहृतम् ॥३५॥ [N
श्रूयतां तु महाबाहो धर्मज्ञ गुरुवत्सल ।
- ३६] यत्र राजीवताम्राक्षो बन्धुस्तव स राघवः ॥३६॥ [N
पू३७] जाने चाप्यन्तरस्थं ते भावं चन्द्राशुनिर्मलम् । [पू२१
पू३८] देहे च चित्रकूटस्य राघवः सह भार्यया ।
- उ३८] निवसत्याश्रमे रामो लक्ष्मणेनानुपालितः ॥३७॥ [२२
श्वो गन्ताऽसि सहामात्यो वस त्वं समुहजनः ।
- ३९] त्वामघार्चितुमिच्छामि काममेतत्^{२५} कुरुष्व मे ॥३८॥ [२३
ततस्तयेत्येवमुदारदर्शनः
प्रतीतरूपो भरतोऽब्रवीद्वचः ।
चकार बुद्धिं च महाश्रमे मुनेस्
४०] तदा निवासाय नराधिपात्मजः ॥३९॥ [२४
इत्थार्धे रामात्यगेऽयोध्याकाण्डे भारद्वाजाश्रमनिवासे^{२६}
नाम सर्गः ॥ [१०३] ॥



२० व-बकुमि० । २१ व,म-गुणाक्षमा । ल-नुक्रोशं गुणाः
क्षमाः । २२ व, म-भाषणानि । २३ व, म सत्य- । २४ व-भवता ।
२५ व, म-काममेतं । २६ भरद्वा० ।

[वं-१००]=[चतुर्हस्तरशततमः सर्गः]=[दा-९१]

कृतदुर्द्धिं निवासाय तत्रैव स मुनिस्तद ।

१] भरतं मेकरीपुत्रमातिथ्येन न्यमन्त्रयत् ॥१॥ [१]

अब्रवीद् भरतस्त्वेनं यदिदं भवता कृतम् ।

२] पाद्यमर्घ्यमथातिथ्यं बने यदुपपद्यते ॥२॥ [२]

अथोवाच महातेजा भरतं प्रीतिमान्वचः ।

३] जाने त्वां मत्स्ये युक्तं तुष्टस्त्वं येन केनचित् ॥३॥ [३]

सेनायास्तु तवैतस्याः कर्तुमिच्छामि भोजनम् ।

४] प्रीतिः कृता ममाप्येव^१ भविष्यति नरर्षभ ॥४॥ [४]

किमर्थं चास्य^२ निक्षिप्य दूरे बलमिहागतः ।

५] कस्मान्नोपयातोऽसि सबलः सहवाहनः ॥५॥ [५]

भरतः प्राञ्जलिस्त्वेवं प्रत्युवाच तपोधनम् ।

६] न बलेनोपयातोऽस्मि भगवन् भयतोभयात् ॥६॥ [६]

मनुष्या वाजियुक्ताश्च मत्ताश्च वरवारणाः ।

७] मच्छाद्य महतीं भूमिं भगवन्ननुयान्ति माम्^३ ॥७॥ [८]

त वृक्षानुदकं भूमिमाश्रमेषूटजास्तथा^४ ।

८] मा हिंस्युरिति तेनाहमायातो गुरुभिः सह ॥८॥ [९]

आनीयतामितः सैन्यमित्यादिष्टो महर्षिणा ।

९] तथा चक्रे स भरतस्तेन प्रीतो ऽभवन्मुनिः ॥ ९ ॥ [१०]

पू१०] अधिष्ठातां प्रविश्याथ वारि स्पृष्ट्वा^५ च^६ संयुतः [११पु]

N] समाधिभवलंग्याथ भरतस्य च पूजने ॥१०॥ [N]

१ व, म, ल-ममाप्येवं । २ व-वासि । ३ ल-ताम् । ४ ल-

माश्रमेषूटजास्तथा । म-माश्रमेषूटजास्तथा । ५ कै-स्पृष्ट्वाथ ।

दिव्येन योगेन तदा चिन्तयामास वै मुनिः ।

N] विशिष्टतरमेवास्य करोम्यातिथ्यमथ वै ॥११॥

[N

वसिष्ठप्रमुखा विभास्संमात्ता मेऽथ चाश्रमम् ।

N] परमं यत्रमासाथ दिव्यज्ञानान्वितो मुनिः ॥१२॥

[N

उ१०] आतिथ्यार्थं भरद्वाजो विश्वकर्माणमाह्वयत् ।

[११.उ

उवाच विश्वकर्माणमयं^६ त्वष्टारमेव च ।

११] आतिथ्यं कर्तुमिच्छामि तत्तु मे संविधीयताम् ॥१३॥

[१२

प्राक्स्रोतसश्च या नद्यः प्रत्यक्स्रोतस एव च ।

१२] पृथिव्यामन्तरिक्षे च ता इहायान्तु सर्वज्ञः ॥१४॥

[१४

अन्याः स्रवन्तु भैरेयं सुरामन्याः मुनिष्टि [ष्टि] ताः ।

१३] अपराश्रोदकं शीतमिष्टुदण्डरसोपमम् ॥१५॥०

[१५

आह्वये^७ देवगन्धर्वान्^७ विश्वावसुहहाहुहू[न] ।

१४] तथैवाप्सरसो दिव्याः किभराश्चैव सर्वज्ञः ॥१६॥०

[१६

पू१५] घृताचीं मेनकां रम्भां मिश्रकेशीमलंबुसाम् ।

N] तिलोत्तमां च हेमां च मुञ्जकेशीं^८ वरुथिनीम् ॥१७॥

[१७

उ१५] इन्द्रार्दींस्त्रिदशांश्चैव ब्रह्माणं^९ च महाश्रुतिम् ।

पू१६] सर्वास्तुम्बुरुणा^{१०} सार्द्धमाह्वयेः^{११} सपरिच्छदान्^{११} ॥१८॥[१८

उ१६] वन्यं^{१२} कुरुष्व मे दिव्यं वासः पुष्पाविलेपनम् ।

N] दिव्यनागफलं चैव कारयेस्त्वमिहाथ तु ॥१९॥

[१९

इह मे भगवान् सोमो विदधात्वभमुपमम् ।

१७] मरुपं भोज्यं च चोष्यं^{१३} च लेहं च विविधं बहु ॥२०॥ [२०

६ कै, म, ल--०मासं मयं । ० म । ७ कै, म, ल--आह्वये देव० ।

८ व--मुक्के० । ९ व--ब्रह्माणं । ल--ब्रह्माणं । १० म--सर्वास्तु० ।

११ कै, म--०माह्वयेस्त्वपरि० । १२ म--वाक्यं । १३ कै, व--चूष्यं ।

कै पुस्तके पश्याम् "चोष्यं" इति कृतम् । म--दूषं ।

विधिनाणि च साख्यानि साख्याश्च बहुभ्युतः ।

१८] सुरादीनि च पेयानि मांसानि विविधानि च ॥२१॥ [२१

एतत् समाधिना युक्तस्तेजसा नियमेन च ।

१९] शिलास्वरसमायुक्तं^{१४} तपसा चात्रवीम्सुनिः ॥२२॥ [२२

मनसा ध्यायतस्तस्य प्राङ्मुखस्य कृताञ्जलेः ।

२०] आजग्मुस्तानि सर्वाणि दैवतानि पृथक् पृथक् ॥२३॥ [२३

मस्यान्^{१५} मन्दराद्यैश्च सेव्यः स्वेदनुदोऽनिलः ।

२१] सुगन्धिः प्रववौ तत्र हर्षयन् सर्वज्ञो जनान् ॥२४॥ [२४

ततोऽभ्यवर्षन्त घना दिव्याः कुमुमदृष्टयः ।

२२] देवगन्धर्वनिर्घोषो दिष्ट सर्वासु शुश्रुवे ॥२५॥ [२५

प्रववुश्चोत्तमा गन्धा ननृतुश्चाप्सरो गणाः ।

२३] प्रजगुर्देवगन्धर्वा^{१६} वीणाद्यैवाप्यवादन^{१७} ॥२६॥ [२६

स शब्दो ध्यां च भूमिं च प्राणिनां श्रवणानि च ।

२४] विवेक्षोच्चारितः सम्यग् देवधिष्णेषु युक्तिमान् ॥२७॥ [२७

तस्मिन्नुपरते शब्दे दिव्यश्रोत्रपथानुगे^{१८} ।

२५] ददर्श भरतः सर्वं विहितं विश्वकर्मणा ॥२८॥ [२८

वभूव सुसमा^{१९} भूमिं^{२०} समन्तात् पथयोजनम् ।

२६] श्राद्धैर्महामिच्छन्ना नीलवैर्दयं सांजमैः ॥२९॥ [२९

तत्र दिव्याः कपिस्थाश्च पनसा वीजपूरकाः ।

२७] आमलकवृक्षश्च शंखश्च चूताश्च^{२१} फलभुषणाः ॥३०॥ [३०

चन्दरेभ्यः कुरुभ्यश्च वनं दिव्योपभोगवत् ।

१४ व—विद्यास्वर । ज—शिलाङ्गुर । १५ व—मस्यान् । म—मलयं ।

१६ व—महामिच्छन्ते । १७ म—०शब्दादि वादनम् । १८ व—दिव्ये

जीवः । १९ व—सुसमा । व—सुमा । २० व—भूमिः । २१ व—चूताश्च ।

- २८] अङ्गनाम् अर्धे दिव्या तत्र चापि सरस्वती ॥३१॥ [३१
 अन्याश्च नद्यो बहुचोऽथ नानारसवहास्तथा ।
- २९] आजग्मु र्वचनात्तस्य महर्षे र्भावितात्मनः ॥३२॥ [N
 चतुः^{२२} शालानि शुभ्राणि शालाश्च गजवाजिनाम् ।
- ३०] इर्म्यमासादसङ्गान्श्च तोरणानि महान्ति च ॥३३॥ [३२
 सितमेधमभं चापि राजवेश्म सतोरणम् ।
- ३१] शुक्रमाख्यास्तरास्तीर्णं गन्धतोयसमुत्थितम् ॥३४॥ [३३
 चतुरश्रमसंबार्धं शयनासनयानवद ।
- ३२] दिव्यैः^{२३} सर्वरसैर्युक्तं दिव्यमोजनवस्त्रवद ॥ ३५ ॥ [३४
 उपकल्पितसर्वाङ्गं धौतनिर्मलभाजनम् ।
- ३३] क्लृप्तादिव्यासनं श्रीमदास्तीर्णशयनोत्तमम् ॥ ३६ ॥ [३५
 मविशेष महाबाहुरनुज्ञातो महार्षिणा ।
- ३४] वेष्म तद्रत्नसम्पन्नं भरतः केकयीमुतः ॥ ३७ ॥ [३६
 अनुजग्मुश्च ते^{२४} सर्वे मन्त्रिणः सपुरोहिताः ।
- ३५] वभूवुश्च मुदा युक्ता दृष्ट्वा वेष्मविधिं ततः ॥ ३८ ॥ [३७
 तत्र राजासनं दिव्यं व्यजनं छत्रमेव च ।
- ३६] भरतस्याभवसुक्तमनुरूपं^{२५} च^{२५} मंत्रिणाम् ॥३९॥ [३८
 आसनं पूरयामास रामाद्यापि प्रणम्य सः ।
- ३७] बालव्यजनमादाय वीजयन् भरतस्तदा ॥ ४० ॥ [३९पू
 N] वी जायित्वा ऽर्धयित्वा च न्यवीदत्परमासने । [३९उ
- पू३८] आनुपूर्व्याभिषेदुश्च सर्वे मन्त्रिपुरोहिताः ॥ ४१ ॥ [४०पू
 उ३८] ततः सेनापतिः पश्चात् प्रशस्ता^{२६} च^{२६} निषेदतुः । [४०उ

२२ व-अमुम् । २३ कै-दिव्यैल् । व-दिव्य- । २४ व, म, क-
 र्त । २५ व-०मनुरूपम् । २६ व-प्रयास्ताम् । क-प्रयादस्तुम् ।

- पृ३९] ततः परममातिथ्यं^{२७} गन्धरूपरसान्वितम् ॥ ४२ ॥ [N
 उ३९] वसिष्ठपूर्वं काकुत्स्थः प्रतिजग्राह धर्मवित् । [N
 पृ४०] ताश्च सर्वा मुहूर्तेन नद्यः पायसकूर्दयाः ॥३॥ [पृ४१
 उ४०] उपातिष्ठन्त भरतं भरद्वाजस्य शासनात् । [उ४१
 पृ४१] तासामुभयतः कूलं पाण्डुमृत्तिकलेपनाः ॥४४॥ [पृ४२
 उ४१] रम्याश्चावसथा दिव्या ब्राह्मणस्य प्रसादतः । [उ४२
 पृ४२] ततश्चैव मुहूर्तेन दिव्याभरणभूषिताः ॥४५॥ [४३५
 उ४२] आजग्मुर्बहुसाहस्राः कुबेरप्रदिताः स्त्रियः । [४४३
 पृ४३] सुवर्णताराप्रतिमाः पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः ॥४६॥^{२८} [४४५
 यामिर्मृष्टीतः पुरुषो भवत्युत्तमचेतनः ।
 ४४] आसन् भिन्नतिसाहस्राः स्त्रियो वै नन्दनाद्विनात् ॥४७॥ [४५
 नारदस्तुम्बुरुगोपः पर्वतः सूर्यमण्डलः ।
 ४५] एते गन्धर्वराजानो भरतस्याग्रतो जगुः ॥४८॥ [४६
 अलंबुसा मिश्रकेशी पुण्डरीकाऽथ वामना ।
 ४६] उपातृत्यन्त भरतं भरद्वाजस्य^{२९} शासनात् ॥४९॥ [४७
 यानि माल्यानि देवानां यानि चैत्ररथे बने ।
 ४७] प्रयागे तान्यदृश्यन्त भरद्वाजस्य शासनात् ॥५०॥^O [४८
 दिव्यगन्धरसास्तत्र क्षम्यग्राहा^{३०} विभीतकाः ।
 N] अश्वत्या रक्तमालाश्च भरद्वाजनियोजिताः ॥५१॥ [४९
 रसाक्लाश्चैव तालाश्च तिलकाश्चैव बंजुलाः ।
 N] प्रयुष्टास्तत्र संपेतुः ककुभाश्चैव^{३१} वामनाः ॥५२॥ [५०

27 कै, म—०मातिष्ठं । 28 व, म, ल—आजग्मुर्बहुसाहस्राः
 पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः । सुवर्णताराप्रतिमाः कुबेरप्रदिताः [ल-प्रतिमा]
 स्त्रियः ॥ 29 म—भारद्वाजस्य । Oम, ल । 30 व, म, ल शस्य० ।
 31 व, म—ककुभाश्चैव ।

- शिञ्जपाऽऽमलका जम्ब्वस्तयान्याः कानने लताः ।
 ४८] प्रमदाविग्रहं कृत्वा भरद्वाजाश्रमे^{३२} वसन् ॥५३॥ [५१
 सुरां सुरापास्त्वपिवन् पायसं च बुभुक्षिताः ।
 ४९] मांसानि च महार्हाणि भक्ष्यं वै^{३३} यावदीप्सितम् ॥५४॥ [५२
 आच्छादयन्तः क्लान्तश्च नदीतीरेषु बल्गुषु ।
 ५०] अप्येकमेकं पुरुषं^{३४} प्रमदाः^{३४} पञ्च पञ्च वै ॥५५॥ [५३
 संवाहयन्त्युपासीनाः शुभा रुचिरलोचनाः ।
 ५१] परिगृह्य तथाऽन्योन्यं पाययन्ति वराङ्गनाः ॥५६॥ [५४
 हयानश्वानजानुष्ट्रास्तथैव सुरभीसुतान् ।
 ५२] इक्षुंश्च मधुरास्वादान भोजयामासुरेव च ॥ ५७ ॥ [५६पू
 इक्ष्वाकुवरयोधास्ते^{३५} चोदयन्तो महाबलाः । [५६उ
 ५३] नाश्वन्धोऽश्वमहासीन् न गजं कुञ्जरग्रहः ॥ ५८ ॥ [५७पू
 मत्तोन्मत्तसमाकीर्णां सेवमासीन्महा चमूः । [५७उ
 ५४] तर्पिताः सर्वकामैस्ते दिव्यचन्दनभूषिताः ॥ ५९ ॥ [५८पू
 अप्सरोगणसंघुष्टाः^{३६} सैन्यो^{३७} वाच^{३७} उदैरयन् । [५८उ
 ५५] नैवायोध्यां गमिष्यामो गमिष्यामो न दण्डकम् ॥६०॥ [५९पू
 कुञ्जलं भरतस्यास्तु रामस्यास्तु तथा सुखम् । [५९उ
 ५६] इत्यबोचन्त योधास्ते हस्त्यश्वारोहबन्धकाः^{३८} ॥६१॥ [६०पू
 N] अनाथास्तं विधिं लब्ध्वा पुण्या^{३९} वाच उदैरयन् । [६०उ
 संमहृष्टाः मतिजगुर्नरास्तत्र सहस्रशः ।
 ५७] भरतस्यानुयातारः स्वर्गोऽयमिति चाङ्गुवंशं ॥ ६२ ॥ [६१

32 म—भारद्वा० । 33 व, म, ल—वा । 34 व, म, ल—प्रमदाः ।
 पुरुषं । 35 ल—इक्ष्वाकुवर० । 36 व—संघुष्टाः । 37 म, ल—सैन्य- ।
 व—सैन्यवादा । 38 ल—गन्धकाः । 39 म, ल—पुण्य ।

- ततो मुक्तवता तेषां तदन्नममृतोपमम् ।
 ५८] दिव्यानामय^{४०} भोगानामभवद् मत्तणे मतिः ॥६३॥ [६३
 ब्रह्मचारियुहस्याश्च वानमस्याश्च सर्वज्ञः ।
 ५९] बभूवुः सुभृशं वृक्षाः सर्वे चाहतवाससः ॥०६४॥ [६४
 कुञ्जराश्च खरोष्ट्राश्च गोवाजियुगपक्षिणः ।०
 ६०] बभूवुः सुभृशं तत्र नानाविधगतिस्वराः ॥ ६५ ॥ [६५
 नाशुक्रवासास्तत्रासीत्^{४१} क्षुधितो मलिनोऽपि वा ।
 ६१] रजसा ध्वस्तकेसो वा नरः कश्चिदयामवत् ॥६६॥ [६६
 बभूवुर्वनपान्थेषु हृदाः पायसकर्दमाः ।
 ६७] ताश्च कामवहा नयो द्रुमाश्चैव मधुश्च्युतः ॥ ६७ ॥ [६७
 वाप्यो मैरेयपूर्णाश्च मिष्टमांसचयैर्दृताः ।
 ६८] प्रतप्तपिठिरैश्चैव मार्गमायूरतैश्चिरैः ॥ ६८ ॥ [७०
 आजैरथ च वाराहै र्मिष्टान्नवरसञ्चयैः ।
 ६९] फलैर्निर्व्यूहसम्बद्धैः^{४२} स्रूपैः पूषैश्च संस्कृतैः ॥ ६९ ॥ [६९
 दृश्यन्ते चाक्षपूर्णानि सुशुभानि च तत्र वै । [N
 ७०] पात्रीणां^{४३} च सहस्राणि श्वातर्कौभान्यनेकज्ञः ॥७०॥ [७१
 स्यात्पुःकुंभाः कलश्यश्च^{४४} दध्नः पूर्णाः^{४५} सुसंस्कृताः^{४६} ।
 ७१] गोरसस्य च तक्रस्य कपित्थसमगन्धिनः ॥ ७१ ॥ [७२
 हृदाः पूर्णाज्जालाश्च^{४७} दध्नः श्वेतस्य चापरे ।
 ७२] बभूवुः पयसश्चापि चर्करायाश्च^०सधयाः० ॥ ७२ ॥ [७३
 कश्चकूर्णकषावाश्च वासांसि विविधानि च ।०
 ७३] ददुर्मोक्ष्य रसांश्चापि^०तीर्थेषु सरिता वराः ॥ ७३ ॥ [७४

। 40 व, म, ड—cमदि० । 0म । 41 के—स शुक्र० ।

42 के, ड—०निर्व्यूह । 43 व—पात्राणां । 44 व—कक्षयैश्च ।

45 व, म, ड—पूर्णाश्च संस्कृताः 46 व—पूर्णाश्च शाकाश्च ।

APPRECIATION OF THE WORK.

Dr. M. Winternitz writes from Germany.—

As far as I can see, the edition is well done and I am looking forward with keen interest to the continuation of the work.

Dr. Sylvain Levi writes from Paris.—

The work of collation seems to be done very carefully and accurately, the print is a very good one.

Dr. W. Caland writes from Utrecht:—

I have looked superficially through the two parts of the Ayodhya Kanda of the N. W. Ramayana Recension, and I find it very interesting, and full of readings preferable to those of the Benary edition the only one I possess

Dr. Jacoby writes from Bonn —

I wish you success in your great undertaking



प्रकाशित ग्रन्थ		यन्त्रस्थ ग्रन्थ
१-पञ्चपटलिका	१॥	१-काठकगृह्यसूत्रम्
२-श्रुग्वेद पर व्याख्यान	१॥	Ed. by Dr. W. Caland
३-जैमिनोय उपनिषद्ब्राह्मणम् २॥		२-रामायणम् अयोध्या काण्डम्
४-दस्योष्टविधिः	॥	Fasc. V. सं० पं० रामलभाय
५-अथर्ववेदीया माण्डूकीशिक्षा १)		३-वैदिक कोषः, Fasc I'
६-अथर्व० बृहत्सर्वांशुक्रमणी ४)		सं० श्री हंस्राज पुस्तकाध्यक्ष
७-रामायणम् अयो०कां ४अङ्क ६)		४-बारायणीयशाखामन्त्रार्थाध्यायः
८-वैदिक कोष १ अंक १॥	१॥	सम्पादक भगवद्दत्त ।
		५ यास्किय छन्दोविधिनिम्नम्
		सम्पादक भगवद्दत्त

Apply for purchase of the publications of the series to

BHAGAVAD DATTA

Suppl. Research Dept, D. A. V. College, LAHORE

रक्षयिषानंशुभवर्षैश्च दक्षपावनसञ्चयान् ।

६९] अस्मन्वन्दचक्रकर्त्तव्यं समुद्रेषु च विद्युतः ॥ ७४ ॥ [७५

दर्पणा परिसृष्टांश्च^{५६} माल्यानि विविधानि च ।

७०] पादुकोपानहर्षैश्च युग्यानि च सहस्रशः । । ७५ ॥ ० [७६

अन्नन्यः कंकताः कूर्वा [ः] शस्त्राणि विविधानि च ।

७१] तनुत्राणि विचित्राणि शयनान्यासनानि च ॥ ७६ ॥ ० [७७

प्रतिपानहृदाः पूर्णाः स्वरोद्भृगजवाजिनाम्^{५९} ।

७२] अवगाह्याः सुतीर्याश्च हृदाः सोत्पलपुष्कराः^{५०} ॥ ७७ ॥ [७८

नीलवैर्ह्यवर्णाश्च मृष्टानावाससञ्चयान्^{५१} ।

७३] निवासार्थं पशूनां च ददृशुस्तत्र तत्र इ ॥ ७८ ॥ [७९

व्यस्मयन्त मनुष्यास्ते स्वप्नकल्पं^{५२} तदद्भुतम्^{५२} ।

७४] दृष्ट्वाऽऽतिथ्यं कृतं तादृग् भरतस्य महाविणा ॥ ७९ ॥ [८०

इत्येवं रममाणानां देवानामिष नन्दने ॥

७५] भरद्वाजाश्रये रम्ये सा रात्रिर्व्यत्यवर्षत^{५३} ॥ ८० ॥ [८१

प्रतिजग्मुश्च ता नार्यो गन्धर्वाश्च यथागतम् ।

७६] भरद्वाजमनुज्ञाप्य ताश्च सर्वा वराङ्गनाः ॥ ८१ ॥ [८२

तथैव मत्ता मदिरोत्कट्य नरास्

तथैव दिव्यागुरुचन्दनोक्षिताः ।

तथैव दिव्या विविधोत्तमस्रजः

७७] पृथक् प्रकीर्णा मनुजैः प्रमार्दिताः ॥ ८२ ॥ [८३

इत्यार्षे रामायणेऽथोध्याकाण्डे भरद्वाजातिथ्यं

नाम सर्गः ॥ [१०४] ॥

४७ म—कल्याण ।

ब—कल्याण ।

४८ म—परिसृष्टा ।

म, ल ० ।

म, ल ० ।

४६ म—करोदण्ड ।

४० म—सोत्पल ।

४१ ल—सृष्ट ।

ब—नावस ।

४२ म—कल्याणमण्ड ।

४३ ल म—व्यतिषर्त ।

[बं-१०१]=[पञ्चोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६२]

रजनीं तामुपित्वाऽथ भरतः सपरिच्छदः ।

१] कृतातिथ्यं भरद्वाजं कथ्ये'ऽभ्येत्याभ्यवादयत् ॥१॥ [१]

तद्युधिः पुत्रपञ्चाग्रं संमेष्व माञ्जलिं स्थितम् ।

२] हुत्वाग्निहोत्रो' भरतं भरद्वाजोऽभ्यभाषत ।।२॥ [२]

कथित्' पुत्रं सुत्वेनेयं तवाथ रजनीं गता ।

३] समयप्रयोजनं कथिवातिथ्यं शंस मेऽनघ ॥३॥ [३]

तद्युवाचाञ्जलिं कृत्वा भरतोऽभिप्रणम्य च ।

४] आभवाद्गतिक्रान्तमृषिद्वयमतेजसम् ॥४॥ [४]

सुखोपितोऽस्मि भगवन् समयन्निबलवाहनः ।

५] तर्पितः'सर्वकार्यैश्च भगवन् सर्वशस्त्वया ॥५॥ [५]

अपेतकल्लेष्टसन्तापाः सुमिच्छाः सुप्रतिष्ठिताः ।

६] अपि भेष्यानुपादाय सुखिनः स्म सुखोपिताः' ॥६॥ [६]

आमन्त्रये त्वां भगवन् मायनुजातुमर्हसि' ।

७] भ्रातुस्समीपं यास्यामि शुभेनेक्षस्व चक्षुषा ॥७॥ [७]

आभवं तस्य धर्मज्ञं राघवस्य महात्मनः ।

८] आचक्ष्व केन मार्गेश्च गच्छेयं भगवज्जहम् ॥८॥ [८]

योजने' कथिभिरचैव कस्मिन् देशे स आभयः ।

९] ससीवाश्च स्वयसखो धर्मात्मा यत्र वर्तते' ॥९॥ [९]

१ व-कार्येभ्येत्या ।

न-कार्येभ्योऽभ्येत्या ।

२ व, स-हुत्वाग्निहोत्र ।

३ व, स, न-कथित् ।

४ व-तर्पिताः ।

५ व-सुखोपिताः ।

६ व-मर्हसि ।

७ व, स, न-तिष्ठति ।

इति पृष्टस्तदा तेन भरतेन महात्मना ।

- १०] ततः स भरतं धीमान् महर्षिरिदमब्रवीत् ॥१०॥ [६
 भरतार्द्धतृतीयेषु योजनेष्वजने वनेः ।
- ११] चित्रकूटो गिरिस्तात रम्यो निर्जनकाननः^८ ॥११॥ [१०
 उत्तरं पार्श्वमाश्रित्य तस्य मन्दाकिनी नदी ।
- १२] पुष्पितद्रुमसंख्यया नानापक्षिनिषेविता ॥१२॥ [११
 तामन्तरा च सरितं चित्रकूटं च पर्वतम् ।
- १३] ततः पर्णकुटीं तत्र द्रष्टाऽसि त्वं सुसंहताम्^९ ॥१३॥ [१२
 N] बाल्मीकेराश्रमे दिव्ये महर्षेस्तत्र राघवः ।
- १४पू] कृत्वाऽऽश्रमपदं रम्यमेकान्ते सहस्रक्षयणः ॥१४॥ [N
 १४उ] सीतया भार्यया सार्द्धं वसतीति मया श्रुतम् । [N
 १५पू] दक्षिणेनैव मार्गेण दक्षिणाशामदक्षिणा । १५॥ [१३पू
 १५उ] गजबाजिगणाकीर्णा बाहिनी^{१०} यादु राघव । [१३उ
 १६पू] मयाणमिति च श्रुत्वा भरद्वाजस्य वै तदा ॥१६॥ [१४उ
 १७उ] कौसभ्या प्रतिजग्राह कराभ्यां चरञ्चाकुभौ ।
 १८पू] असमृद्धेन कामेन सर्वलोकेषु गर्हिता ॥१७॥ ० [१६
 १८उ] कैकेयी चापि जग्राह महर्षेःशरणौ तदा ॥ ०
 १९पू] प्रदक्षिणं समागम्य^{११} भगवन्तं महाशुनिम् ॥१८॥ [१७

८ व--निर्जरं ।

९ व, क-वसितं ।

१० क-सुसंहताम् ।

११ क-बाहिसोपास ।

म-० ।

१२ व, म क-समासात् ।

- १६४] सुमित्रा भरताभ्यासे तस्थौ हृदि समाकुला । [N
 २०५] ततः पप्रच्छ भरतं भरद्वाजो दृढव्रतः ॥१६॥ [१८४
 २०६] विशेषं ज्ञातुमिच्छामि मातृणां तिसृणां तव ।
 २१५] एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धार्मिकः ॥२०॥ [१६
 २१६] उवाच भ्राज्जलिर्वाक्यमिदं बचनकोविदः ।
 २२५] वामिनां भगवन् दीनां शोकोपहतचेतसाम्^{१३} ॥२१॥ [२०
 २२६] स्थितां साभ्युत्सीं^{१४} साध्वां देवतामिव पर्यसि ।
 २३५] एषा तं पुरुषव्याघ्रं सिंहविक्रान्तगामिनम् ॥२२॥ [२१
 २३६] कौसल्या मुपुवे रामं धातारमदितिर्धया ।
 २४५] अस्या वामजं श्लिष्टा येषा तिष्ठति दुर्मनाः ॥२२॥ [२३
 २४६] कर्षिकारस्य शाखेव शीर्षपर्यां वनान्तरे । [२३४
 २४५] एतस्यास्तौ सुतौ ब्रह्मन् कुमारौ देवरूपिणौ ॥२४॥ [२४५
 २४६] उभौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ वीरौ सत्यपराक्रमौ । [२४६
 २६५] पर्याभ्युद्दिष्टा दयाममहृष्टमुत्सीं स्थिताम् ॥ २५ ॥ [N
 २६६] सुमित्रां जननीमेतां लक्ष्मणस्योपधारय । [N
 २७५] यस्याः कृते नरक्याघ्नौ वनवासमितो गतौ ॥२६॥ [२४५
 २७६] राजपुत्रां नरेन्द्रस्य स्वर्गं दशरथो गतः । [२४६
 २८५] देवर्षिकामां^{१५} कैकेयीमनार्यापतिघातिनीम् । २७॥ [२६६
 २८६] क्वेतां मातरं विद्धि वृशंसां कुक्षपांसुनीम् । ० [२७५
 २६५] सैषा तिष्ठति कैकेयी वृशंसा पापनिधया ॥२८॥ [N.

१३ कौ—केवलं ।

१४ व. म. क—वाभ्युत्सीं ।

१५ म—देवर्षिकामा कैकेयी वृशंस
 पापनिधया इतिपाठः ।

म-०

- २६७] अतोमूलं हि परयामि व्यसनं महदात्मनः । [२७७
 ३००] इत्युक्त्वा स नरव्याघ्रो वाष्पगद्गदया गिरा २६॥ [२८०
 ३०७] निशरवास मुताम्राक्षः क्रुद्धो वनगजो यथा । [२८७
 ३१०] भरद्वाजो महर्षिस्तु ब्रुवाणं भरतं तथा ॥३०॥ [२९०
 ३१७] प्रत्युवाच महाशुद्धिरिदं वचनमर्थवत् । [२९७
 ३२०] न दोषेणावमन्तव्या कैकेयी भरत त्वया ॥३१॥ [३००
 ३२७] राममम्राजनं ह्येतत् सुखोदकं^{१६} भविष्यति । [३०७
 ३३०] अभिवाप्य तु संसिद्धं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ॥३२॥ [३२०
 ३३७] आमन्त्र्य^{१७} भरतः सैन्यं युज्यतामित्यचोदयत् । [३२७
 ३४०] ततोवाजिरथान्पु कान्^{१८} दिव्यहेमपरिष्कृतान् ॥३३॥ [३३०
 ३४७] अध्वारो हत् प्रयाणार्थं बहून् बहुविधो जनः । [३३७
 ३५०] गजयोषा गजांश्चैव हेमकक्ष्याः पताकिनः ॥३४॥ [३४०
 ३५७] जीमूता इव घर्मान्ते संहृष्टाः संप्रतस्थिरे । [३४७
 ३६०] विविधान्यथ यानानि दृहन्ति च लघूनि च ॥३५॥ [३५०
 ३६७] प्रययुः स्म^{१९} महार्हाणि पदस्थाश्च पदातयः । [३५७
 ३७०] अथ यानप्रवेकैस्ताः कौसन्यामशुक्ताः स्त्रियः ॥३६॥ [३६०
 ३७७] रामदर्शनकाक्षिययः^{२०} प्रययुर्मदितास्तदा । [३६७
 ३८०] स चापि तरुणाकार्काभां सुयुक्तां^{२१} शिबिकां शुभाम् ॥३७॥ [३७०

१६ म-सुखोदकं ।

१७ म-आमन्त्र्य ।

म-आमन्त्र्य ।

१८ व-० दयासु० ।

१६ व, म, ल-०युः सुमहा० ।

२० ल-काक्षियय ।

म-काक्ष्या ।

२१ व-सुमकां ।

३८७] आस्वाय प्रवयो धीमान् भरतः सपरिच्छदः । [३७७

४०५] सा^{२२} प्रयाता बभौ सेना गजवाजिसमाकुला ॥ ३८८ ॥ [३८५

४०६] दक्षिणं दिशमास्थाय महामैघ इवोत्थित^{२३} । [३८७

३८५] सुमन्त्रभानुयात्रेण^{२४} सहित^{२५} सपताकिना^{२६} ॥ ३८६ ॥ [N

३८७] सज्जवारणयन्त्रेण^{२७} वीरो भरतमन्वगात् [३८६

४१५] बनानि च व्यतिक्रम्य जुष्टानि मृगपक्षिभिः ॥ ४०॥

४१] अगाधामीनकखिलां^{२८} यमुनापतरभदीम् । ४१ ॥ [N

सा संमहृष्टद्विपवाजियोधा

वित्रासयन्ती मृगपक्षिसङ्घान्^{२९} ।

महाबनं तत् परिगाहमाना

४२] नरेन्द्रपुत्रस्य रराज सेना ॥ ४२ ॥ [४०

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतानुयान^{३०}

नाम सर्गः ॥ [१०५] ॥

२२ क. म—स ।

२३ व—इवोत्थिताम् ।

२४ म—समय ।

२५ म—कहिता सा ।

२६ व, म—पताकिनी ।

२७ म—वाचन० ।

२८ म—मीन० ।

२९ म—संगति ।

३० व—भरतानुयानं ।

म—भरतानुयानं ।

[वं-१०२] = [अङ्गुस्तरशततमः सर्गः] = [द्वा-६३]

तथा महत्या बाहिन्या^१, ध्वजिन्या वनवासिनः ।

१] अर्दिता यूषपास्तत्र स्रयूया विमदङ्गुवुः ॥ १ ॥ [१]

श्रुत्वाः^२ पृषतसंघाम् रुषश्च समन्ततः ।

२] दृश्यन्ते वनराजीशु^३ पर्वतेषु नदीषु च ॥ २ ॥ [२]

स संप्रतस्थे धर्मात्मा भीमान् दशरथात्मजः ।

३] वृतो योषैर्महावीरैः शब्दबालापवेषिभि ॥ ३ ॥ [३]

भरतस्तु महाभागो भ्रातृदर्शनकांक्षया ।

४] मृगव्याखानुचरितं प्रविवेश महद्गन्ध^४ ॥४॥ [N]

सागरौघनिभा सेना भरतस्यानुगामिनी ।

५] महीं संप्रज्ञादयामास प्रावृषि धामिवाम्बुदः ॥५॥ [४]

“तुरगोषैरवतता” बारखौभाचलोपमैः ।

६] अनालक्ष्या चिरं कालं तस्मिन् देशे बभूव सा ॥६॥ [५]

स गत्वा^५ दूरमध्वानमपरिभ्रान्तवाहनः ।

७] उवाच भरतो भीमान् शत्रुघ्नं शिष्टसंमतम् ॥ ७ ॥ [६]

यादृशं लक्ष्यते क्वं यादृशं च भ्रुतं मया ।

८] व्यक्तं प्राप्तोऽस्मि तं देशं भरद्वाजो यथाऽब्रवीत् ॥८॥ [७]

अयं गिरिभिन्नकूट इयं मन्दाकिनी नदी ।

१ व, म, ल-बाहिन्या ।

२ व-श्रुत्वाः ।

म-दृष्टम् ।

३ म-वनराज्येषु ।

४ म महागुणम् ।

५ व, ल, म-तुरगोषैः ।

६ व-०रवतती ।

७ म-गता ।

- ६] एतत् प्रकाशते दूराभीक्ष्णमेघनिर्म वनम् ॥ ६ ॥ [८
 गिरेस्साङ्गि रम्याणि चित्रकूटस्व संप्रति ।
 १०] वारयौरवमृचन्ते^१ मामकैः पर्वतोपमैः ॥ १० ॥ [६
 मुञ्चन्ति कुसुमं चित्रं नगाः पर्वतसानुषु^२ ।
 ११] नीला इवातपापाये^३ तोयं जलदराशयः ॥ ११ ॥ [१०
 एते मृगगणा भान्ति शीघ्रवेगाः प्रधाविताः ।
 १२] वायुमनुभा^४ शरदि मेघराज्य^५ इवांबरे ॥ १२ ॥ [१२
 किन्नराचरितं चेमं पश्य शत्रुघ्न पर्वतम् ।
 १३] ह्यैर्मदीयैराकीर्णं सागरं मकरैरिव ॥ १३ ॥ [११
 कुर्वन्ति कुसुमापीत्वा^६ शिरांसि सुरभीण्यपि ।
 १४] मेघप्रकाशैः फलकैर्दाक्षिणात्यास्सुयोधिनः^७ ॥ १४ ॥ [१३
 निष्कृजमिव भातीदं वनं घोरप्रदर्शनम् ।
 १५] अयोध्येव जनाकीर्णा संप्रति प्रतिभाति मे । १५ ॥ [१४
 सुरोद्धृता रेणुराजी दिवमाहृत्य तिष्ठति ।
 १६] तं बहृत्यनिलः शीघ्रः कुर्वन्मिव मम प्रियम् ॥ १६ ॥ [१५
 स्यन्दनांस्तुरगोपेतान् सूतमुख्यैरधिष्ठितान् ।

८ क-० रेव इत्यंत ।

ब-: रेव० ।

म बचमृचयते ।

६ म-मामुषः ।

१० क-इवातपापाये ।

११ ब प्रणुजाः ।

१२ क मेघराजा ।

१३ क सुपपी कीडा ।

ब कुसुमापीडा ।

म-कुसुमैः पीडा ।

४ ब - दाक्षिणात्याः ।

म -दाक्षिणाभ्यास्त योधिनः ।

- १७] एतान् संपततः पश्य शीघ्रं^{१५} शम्भुं^{१६} कानने^{१७} ॥१७॥ [१६
 एतान् वित्रासितान् पश्य बर्हिणः श्रियदर्शनान् ।^{१८} [१७पू
 १८] मनोद्गरूपा ये भान्ति कुसुमैश्चित्रिता इव ॥१८॥ [१६उ
 मृगा मृगीभिस्सहिता बहवः पृष्टतां वने । [१६पू
 १९] एते चाध्यासते शैलमधिवासं पतत्रिणाम् ॥१९॥ [१७उ
 अतिमात्रमयं देशो मनोद्गः प्रतिभाति मे ।
 २०] तापसानां निवामोऽयं व्यक्तं स्वर्गपथो यथा ॥२०॥ [१८
 साधु सैन्याः प्रतिष्ठंतां विचिन्वन्तु च काननम् ।
 २१] यथा तौ पुरुषव्याघ्रौ पश्येयं तद्विधीयताम् ॥२१॥ [२०
 भरतस्य वचः श्रुत्वा पुरुषाश्शस्त्रपाणयः ।
 २२] विविशुस्तद्वनं धीरा धूमं च ददृशुस्तदा ॥२२॥ [२१
 ते तदालोक्य धूमाग्रमूचुर्भरतमीश्वरम् ।
 २३] नामाग्रैव^{१९} भवत्यग्निर्नमग्रैव राघवः ॥२३॥ [२२
 अथ वा तौ नरव्याघ्रौ राजपुत्रौ महाबलौ ।
 २४] अन्येऽप्यनुभविष्यन्ति तापसा वनगोचराः^{२०} ॥२४॥ [२३
 तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां भरतः साधुसंमतः ।^०
 २५] सैन्यानुवाच सर्वास्तानमित्रबलमर्दनः ॥२५॥ [२४
 यथा भवन्तस्तिष्ठन्तु नेतो गन्तव्यमन्यतः ।
 २६] अहमेको गमिष्यामि सुमन्त्रो वृष्णिारेव च ॥२६॥ [२५

१५ क-बर्हिणः श्रियदर्शिनः ।

क-०

१६ क, म-नामनुष्ये ।

क-ममनुष्यो ।

१७ क, म-बनवासिनः ।

क, म-० ।

एवमुक्त्वा ततः सेनां स प्रतस्थे महाबलः ।

२७] भरतो यत्र धूम्राग्रं दृष्टं^{१८} तत्र समादधत् ॥२७॥ [२६

व्यवस्थिता सा महती तदा चमू-

निरीक्ष्य दृग्दन्तुधूममग्रतः ।

बभूव हृष्टा पुनरेव भारती

२८] निशम्य रामस्य समागमं तदा ॥२८॥ [२७

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे^{१९}

रामाश्रमदर्शनं नाम सर्गः ॥[१०६]॥

[वं-१०३]=सप्तोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-९४]

दीर्घकालोषितस्तस्मिन् गिरौ गिरिवनप्रियः ।

- १] वैदेह्याश्च प्रियं कुर्वन् स्वं च चित्तं विनोदयन् ॥१॥ [१
दर्शयंश्चिकूटं च रमणीयं शिवं प्रियम् ।
- २] उवाच रामो वैदेहीं शचीमिव पुरन्दरः ॥२॥ [२
न राज्याद् भ्रंशानं सीते न सुहृद्भिर्विवासजम् ।
- ३] मनो मे बाधते दृष्ट्वा रमणीयमिदं वनम् ॥३॥ [३
परयेममचलं सीते नानाद्विजगणाहतम् ।
- ४] शिखरैः स्वमिवाविद्वैर्धातुमद्भिर्विभूषितम् ॥४॥ [४
केचिद् रजतसङ्कुशाः केचित् चतस्रसभिभाः ।
N] केचिदर्ककराभाश्च केचित् कनकसमभाः ।
- ६उ] विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य शतशरच विभूषिताः ॥५॥ [६
शास्त्रामृगमृगद्वीपितरक्षुगणसेवितैः ।
- ७] सान्नुभिर्भात्ययं गौलो नानाहृत्तोपशोभितः ॥ ६ ॥ [७
आम्रजम्बसनेरोधैः पियालैः कङ्कुभैर्धवैः ।
- ८] अक्षोटमव्यपनसैबिन्वतिन्दुकवेषुभिः ॥७॥ [८
काश्मर्यरिहवरणैर्मधुकैस्तिलकैस्तथा ।
- ९] वदर्यामलकैर्नीपैर्वेप्रचन्दनबीजकैः ॥८॥ [९
पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावन्निर्मनोरमैः ।
- १०] एवमादि भिरध्यास्तः प्रियं पुष्यत्ययं गिरिः ॥९॥ [१०
शौक्यस्येषु रम्येषु परयैतान् देवरूपिणः ।

१ ल-विनोदयत् ।

६ म-राज्यभ्रंशानं ।

३ ल-०श्रुतसभिभाः ।

४ म-०द्वक० ।

५ व, ल-कश्मीर्व० ।

म-कश्मीर्व० ।

६ व, ल, म-पुष्पा० ।

- ११] किन्नरान्^७ दृन्दृशो^८ भद्रे रममाणान् मनस्विनः ॥१०॥ [११
शास्वावशक्तस्वङ्गांश्च प्रवराण्यं वराणि च ।
- १२] पश्य विद्याधरस्त्रीणां क्रीडोद्देशान् मनोरमान् ॥११॥ [१२
जलप्रपातैर्बहुभिरुद्देशैश्च क्वचित् क्वचित् ।
- १३] स्रवद्भिर्भात्ययं शैलः स्रवन्मद इव द्विपः ॥१२॥ [१३
गुहाभ्यं सुरभिर्गंधो नाना पुष्पगुणान्वितः ।
- १४] भ्राणतर्पण उज्ज्वतः कं नरं न प्रहर्षयेत् ॥१३॥ [१४
यद्यहं शरदोऽनेकास्त्वयासार्धमनिदिते ।
- १५] क्लृप्तमणेन च वत्स्यामि न मां शोकः प्रधक्ष्यति ॥१४॥ [१५
नाना पुष्पफले रम्ये नाना द्विजगणायुते ।
- १६] विचित्रशिखिरे ह्यस्मिन्कृतवासोस्मि भामिनि ॥१५॥ [१६
अनेन वनवासेन मया प्राप्तं महत्फलम् ।
- १७] अनृणत्वं पितुर्धर्माद्भरतस्य प्रियं तथा ॥१६॥ [१७
वैदेहि रमसे कषिषिन्नकूटे मया सह ॥
- १८] पश्यंती विविधान्भावान्^९ मनोवाक्कायसंयतान् ॥१७॥ [१८
इदमेवामृतं प्राहुः मीते राजर्षयः परे^{१०} ।
- १९] वनमेव तपोर्याय प्राप्तं मे प्रपितामहाः ॥१८॥ [१९
शिलाः शैलस्य राजंते विशालाः शतशास्त्रिणाः ।
- २०] बहुधा बहुभिर्बर्षेणैर्नीर्लपीतसितारुणैः ॥१९॥ [२०
शृङ्गैर्भात्यचलेन्द्रोयं हुताशनशिखामभैः^{११} ।

७ म-किन्नराण्यन्वयः ।

८ म-रममाणाः ।

९ ब. ल. म-कष्याम्भिः ।

१० म-विचिधा भाषा ।

११ म-पुरे ।

१२ म-०शाक्षिप्रभैः ।

- २१] ओषध्यश्च^{१५} प्रभालक्ष्या आजमानाः सहस्रशः ॥२०॥ [२१
 केचिद्वेश्यप्रभा देशाः केचिदुद्यानसंस्थिताः ।
- २२] केचिदेकशिला भान्ति पर्वतस्यास्य भामिनि ॥ २१॥ [२२
 भित्त्वेव धरणीं भाति चित्रकूटस्समुच्छ्रितः ।
- २३] चित्रकूटस्सुकूटोयं गुह्यकैः^{१६} सेवितरिशवैः ॥२२॥ [२३
 कुन्दपुभागवहुलभूर्जपत्रपरिच्छदान् ।
- २४] कामिनां संस्तरान्पश्य कौशेयानिव भामिनि ॥२३॥ [२४
 मुदिताश्चापविद्धाश्च भान्त्येताः कूलसंगताः^{१७} ।
- २५] तथा भान्ति लताश्चेमा वृक्षेभ्यश्च पृथक् पृथक् ॥२४॥ [N
 २५] कानने^{१८} वनिते पश्य फलानि विविधानि च ॥२५॥ [२५
 वस्वोकसारं नलिनीं पश्यैताश्चोत्तरान्कुरून् ।
- २६] पर्वते चित्रकूटेस्मिन्न[भि]भ्यभूतगलाभये ॥२६॥ [२६
 इमं हि कालं विहरन्विरानने
 त्वया स ह्येन च लक्ष्मणेन ह ।
 रतिं प्रपत्स्ये कुलधर्मवर्धिनीं
- २७] गिरिस्थितोहं नियमे पितुः स्थितः ॥ २७ ॥ [२७
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे चित्रकूटवर्णनं
 नाम सर्गः ॥ [१०७]

१५ म-ओषधश्च ।

१६ व-गुह्यकः ।

१७ व, म, ल-कुल० ।

१८ म-कपने ।

[वं-१०४]=[अष्टोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६५]

अथ शैलाद् विनिष्क्रम्य मैथिलीं कोसलोत्तरः ।

१] अदर्शयच्छुविजलां रामो मन्दाकिनीं नदीम् ॥ १ ॥ [१

अब्रवीच्च वरारोहां चारुवक्त्रनिभाननाम् ।

२] विदेहराजतनयां रामो राजीबलोचनः ॥ २ ॥ [२

विचित्रपुलिनां रम्यां हंससारससेविताम् ।

३] कुमुदोत्करसंच्छन्नां पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥ ३ ॥ [३

नाना वृक्षैस्तीररुहैः संवृतां फलपुष्पदैः ।

४] राजन्तीं राजराजस्य नलिनीमिव सर्वशः ॥ ४ ॥ [४

मृगयूथानुपीतानि कलुषाम्भांसि सम्प्रति ।

५] तीर्थानि रमणीयानि प्रीतिं सञ्जनयन्ति मे ॥ ५ ॥ [५

जटाजिनधरां सिद्धा बन्कलाजिनवाससः ।

६] ऋषयोऽप्यवगाहन्ते कन्ये मन्दाकिनीं नदीम् ॥ ६ ॥ [६

आदित्यमुपतिष्ठन्ति नियता ऋध्वबाहवः ।

७] इमे परे विशालाक्षि मृगयः संशितव्रताः ॥ ७ ॥ [७

मारुतोद्भूतशिखराः पतन्त इव पर्वते ।

८] पादपाः पुण्यवर्षेण किरन्त्येते च मेदिनीम् ॥ ८ ॥ [८

आधूतान् वायुना पश्य समन्तात् पुण्यसञ्चयान् ।

९] दोधूयमानानपरान् प्रवृत्तानिव पर्वते ॥ ९ ॥ [१०

१ व, म, ल - चारुवक्त्र० ।

२ व, ल, म - कुमुदोत्कर० ।

३ व - राजन्ते ।

४ ल - यूथान्वपी ।

५ म - जटाजिन० ।

६ म - बन्कल० ।

७ ल - काले ।

८ व, ल - पर्वताः ।

म - पर्वतः ।

९ व, म - पर्वतान् ।

कथिन्मणिनिभामेनां क्वचित् पुलिनशालिनीम्^{१०} ।

- १०] क्वचिज्जनपदाकीर्णां पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥१०॥ [६
एते हि बन्धुवचसः स्वकानाहयते द्विजाः ।
- ११] अवरोहन्ति कल्याणि विक्रजन्तः^{११} शुभा गिरः ॥११॥ [११
दर्शनाधिग्रहणस्य मन्दाकिन्याश्च^{१२} सर्वशः ।
- १२] अधिकं पुरवासेन मन्ये च तव दर्शनात् ॥ १२ ॥ [१२
विधूतकल्पवैः^{१३} सिद्धैस्तपोधनसमन्वितैः ।
- १३] नित्यविद्योभितजलां विगाहस्व मया सह ॥ १३ ॥ [१३
यथावच्च विगाहस्व सीते मन्दाकिनीं नदीम् ।
- १४] प्रसन्नां सुबर्हां नित्यतरङ्गां हृदभूषणाम् ॥ १४ ॥ [१४
जनैरिव नगैः पूर्णामयोध्यामिव सर्वतः ।
- १५] पश्यस्युत्फेनतां^{१४} नित्यं सरयूमतिर्मा नदीम् ॥१५॥ [१५
क्षत्रमणश्चापि धर्मात्मा मन्दिदेशे^{१५} व्यवस्थितः ।
- १६] त्वां चानुकूला वैदेहि प्रीतिं बर्द्धयसीव मे ॥ १६ ॥ [१६
फलमूल्यानि भुञ्जाना^{१६} सलिलानि च भामिनि ।
- १७] पाणिभ्यां पद्मपत्राभ्यां^{१७} विगाहस्व सरिद्वराम्^{१८} ॥१७॥ [१७]

म—पर्वता ।

१० ल—मन्दाकिनीम् ।

११ ल—विक्रजन्तः ।

११ म—मन्दाकिन्या च ।

१३ ल—०मवैः ।

१४ व, म—०स्युत्फेनितां ।

ल—०स्युत्फेनितां ।

१५ ल, म—सन्दिदेशे ।

१६ म—भुञ्जानं ।

१७ म—०पत्राक्षं ।

१८ म—०द्वरम् ।

उपस्पृशंस्त्रिवर्षा^{११} मांसमूलफलाशनः^{१०} ।

१८] नायोध्यायै न राज्याय स्पृष्टयामि त्वया सह ॥१८॥ [१७

इमां हि परयन् मृगयूथलोलिताम्^{११}

निपीततोर्या गजसिंहवानरैः ।

सुषुषितैस्तीररुहैरलङ्कृतां^{१२}

१९] न सोऽस्ति योऽस्यां न गतक्रमो भवेत् ॥१९॥ [१८

इत्येव रामो बहुसङ्गतं वचः

मियाद्वितीयः^{१३} सरितं प्रति^{१४} ब्रुवन् ।

चचार रम्यं नयनाञ्जनप्रभं

२०] स चित्रकूटं रघुवंशवर्धनः ॥ २० ॥ [१९

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे मन्दाकिनी-

वर्णनं नाम सर्गः ॥ [१०८] ॥

१६ म—०द्विसर्वम् ।

२० क—०फलाशना ।

२१ ब, क, म—>लोहितां ।

२२ क—०पुष्टितैः ।

२३ ब—पिबद्वितीया ।

२४ ब—सरितमिति ।

[वं-१०५] = [नद्योत्तरशततमः सर्गः] = [दा-प्रक्षिप्त]

रामस्तु नलिनीं रम्यां चित्रकूटं च पर्वतम् ।

१] पुत्र्या^१ जनकराजस्य दर्शयित्वा न्यवर्त्तत ॥ १ ॥

स तथा तु गिरेः पादे^२ चित्रकूटस्य राघवः ।

२] ददर्श कन्दरं रम्यं शिलाघातुसमाचितम् ॥ २ ॥

सुखप्रदेशच^३ तरुभिः^३ पुष्पभारावलम्बिभिः^३ ।

३] संवृतं सरहस्यं च मत्तद्विजगणायुतम् । ३ ॥

तद्दृष्ट्वा सर्वभूतानां मनो दृष्टिहरं वनम् ।

४] उवाच राघवः सीतां वनदर्शनविस्मिताम् ॥ ४ ॥

वैदेहि रमते चक्षुस्तवास्मिन् गिरिकन्दरे ।

५] परिश्रमविघातार्थं साधु तावदिहास्यताम् ॥ ५ ॥

त्वदर्थमिव^४ विन्यस्तः शिलायां सुखसंस्तरः ।

६] यस्याः पार्श्वे तरुः पुष्पैर्विनष्ट^५ इव केसरैः ॥ ६ ॥

राघवेषौवमुक्ता सा सीता प्रकृतिमुन्दरी ।

७] उवाच प्रणयात् स्निग्धमिदं श्लक्ष्णातरं वचः ॥ ७ ॥

अवश्यकार्यं वचनं तव^६ मे^६ रघुनन्दन ।

८] भूतलं चैवं पश्यामि एवं पुष्पितकाननम् ॥ ८ ॥

एवमुक्ते तथा तस्मिन्नुपविष्टः शिलातले ।

९] सह पत्न्या विशालाक्ष्या वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ९ ॥

गजदन्ताचितान्^७ वृक्षान् पश्य निर्यासवर्षिणः ।

१०] भ्राष्ट्रिकाषिरुतैर्दीर्घै^८ रुदन्तीव समन्ततः ॥ १० ॥

१ ल-प्रस्था ।

२ व, पुस्तके चोत्थं-सुखोत्थ तरुभिः

पुष्पफलभा० ।

३ ल, म-०र्धमिह ।

४ व, ल, म-विभ्रष्ट ।

५ ल-तवैव ।

६ म-०र्वितान् ।

७ व, ल-भ्रिष्टिका ।

- पुत्रमियोऽसौ शकुनिः पुत्र पुत्रेति भाषते ।
 ११] मधुरां करुणां वाचं पुरेव जननी मम ॥ ११ ॥
 विहङ्गो भृङ्गराजोऽयं सालस्कन्धमृपाश्रितः ।
 १२] सङ्गीतमिव कुर्वाणः कोकिलां चानुकूजति ॥ १२ ॥
 अयं च बालकः शंके कोकिलानां विहङ्गमः ।
 १३] असम्बद्धमसम्बद्धं तथा हृषेभ मभाषते ॥ १३ ॥
 एषा कुसुमितं चूतं पुष्पभारतनता लता ।
 १४] दृश्यते'' मामिवात्यर्थं यथा देवि त्वमाश्रिता ॥ १४ ॥
 एवमुक्त्वा म्रियस्याकुं मैथिली म्रियभाषिणी ।
 १५] भूयस्तथाऽनवद्याङ्गी सनारोहत भामिनी ॥ १५ ॥
 विवर्त्तमाना चोत्सङ्गे सीता सुरसुतोपमा ।
 १६] हर्षयामास रामस्य हृदयं म्रियदर्शना ॥ १६ ॥
 स निघृष्याङ्गुलिं रामो गिरौ धौतमनःशिले ।
 १७] चकार तिलकं पत्न्या ललाटे रुचिरं तदा ॥ १७ ॥
 बालार्कसमवर्णेन तेन सा गिरिघातुना ।
 १८] ललाटे विनिष्ठेन सूषयन्ती निशाऽऽगमम् ॥ १८ ॥
 N] मुखचन्द्रस्तु वैदेह्या रक्तेन गिरिघातुना ।^(१)
 अङ्घ्रियस्सन्ध्यया पूर्यो निशाकर इषावधौ ॥ १९ ॥
 N] समनःशिल्लातिलकं चन्द्रं पङ्कजसमिमम् ।
 N] रक्तोत्पलविशाखालं पुण्डरीकमिषावधौ ॥ २० ॥

= व, ल-पुरीष ।

६ ल-विहंगे ।

१० ल, म-०स्कन्ध ।

१० लै-०मयाश्रितः ।

११ व-पश्यते ।

अ ० ।

- केसरस्य तु पुष्पाणि करेणामृष्य राघवः ।
 १६] अलकान्^{१२} पूरयामास मैथिन्याः प्रीतिमावहन् ॥२१॥
 अभिगम्य तथा तस्यां शिलायां रघुनन्दनः ।
 २०] अन्वीयमानो वैदेह्या^{१३} देशमन्यं जगाम सः ॥२२॥
 विचरन्ती तदा सीता ददर्श हरियूथपम् ।
 २१] बने बहुमृगाकीर्णैः सा भयाद् राममाभिता ॥ २३ ॥
 रामस्तामपि बाहुभ्यां परिरभ्य^{१४} महाशुभ्रः ।
 २२] सान्त्वयामास वामोरुमभिलक्ष्य स वानरम् ॥ २४ ॥
 मनःशिलायास्तिलकः सीतायाः सोऽयं वक्षसि ।
 २३] समदृश्यत सङ्क्रान्तो रामस्य विपुलौजसः^{१५} ॥ २५ ॥
 प्रजहास तदा सीता गते वानरयूथपे ।
 २४] दृष्ट्वा भर्त्सरि सङ्क्रान्तं^{१६} तिलकं समनःशिलाम्^{१७} ॥ २६ ॥
 अपश्यदथ वैदेही बने तस्मिन् मनोहरम् ।
 २५] अविदूरादशोकानां प्रदीप्तमिव काननम् ॥ २७ ॥
 दृष्ट्वा च साब्रवीद् राममशोककुसुमार्थिनी ।
 २६] सार्धं तदभिगच्छावो वनमिच्छाकुनन्दन ॥ २८ ॥
 तस्याः मिथार्थं रामस्तु देव्या दिव्यान्तरूपया^{१८} ।
 २७] सहितस्तदशोकानां विशोकः प्रययौ वनम् ॥२९॥
 तदशोकवनं रावः सभार्यो व्यचरत्तदा ।
 २८] गिरिपुष्या पित्राकीव सह हैमवतं वनम् ॥ ३० ॥

१२ क-अलंका ।

१३ म-वैदेही ।

१४ म-परिरत्न ।

१५ क-विपुलौ ।

१६ म-सङ्क्रान्तो ।

१७ क-शिलाम् ।

१८ क-दिव्यान्तरूपया ।

- तावन्योन्यमशोकस्य पुष्पैः पल्लवभारिभिः^{१९} ।
 २६] समल्लञ्जकुरुभौ कामिनौ नीललोहितौ ॥ ३१ ॥
 आबद्धवनमालौ द्वौ कृतापीडावतंसकौ ।
 ३०] भार्यापती तावचलं शोभयाञ्जकृतुस्तदा ॥ ३२ ॥
 एवं स विविधान् देशान् दर्शयित्वा मिर्या मियः ।
 ३१] आजगामाभ्रमपदं घुसंमृष्टमलङ्कृतम् ॥ ३३ ॥
 प्रत्युज्जगाम संक्रान्तो^{२०} लक्ष्मणो गुरुवत्सलः ।
 ३२] दर्शयन् विविधं कर्म सौमित्रिः स्वदृत्तं^{२१} तदा ॥ ३४ ॥
 शुद्धबाणहर्तास्तत्र मेध्यान् कुष्णमृगान् दश ।
 ३३] राशीकृतान् पुष्टमासानन्यास्त्यक्त्वा च कौश्विन ॥ ३५ ॥
 त [ह] दृष्ट्वा कर्म सौमित्रेभ्रतामीतोऽभवत्तदा ।
 ३४] क्रियन्तां बलयश्चेति रामः सीतामथान्वशात् ॥ ३६ ॥
 अग्रं प्रदाय भूतेभ्यः सीताऽथ वरवर्णिनी ।
 ३५] तयोरप्यददद्द् भ्रात्रोर्मेध्यं मांसं च सम्भृतम् ॥ ३७ ॥
 तयोस्तुष्टिमथोत्पाद्य वीरयोः कृतशौचयोः ।
 ३६] विधिवज्जानकी साऽथ चक्रे स्ना^{२२} प्राणधारणाम्^{२३} ॥ ३८ ॥
 शिष्टं मांसं निकृत्तं यच्छोषणायोपकल्पितम्^{२४} ।
 ३७] तद्द रामवचनात् सीता काकेभ्यः पर्यरक्षत ॥ ३९ ॥
 तां ददर्श ततो भर्त्सा काकेनायासितां धृशम् ।
 ३८] यः स सारान्तरचरः^{२५} कामचारी विहङ्गमः ॥ ४० ॥
 काकेनासोढयमानां तां रामो व्यहसदाचराम् ।
 ३९] साधुकोपानवधार्त्नी भर्त्सुः प्रणयदर्पिताम् ॥ ४१ ॥

१९ ल-भारिभिः ।

२० व, ल, म-सन्क्रान्तो ।

२१ व, ल, म-सुकृतं ।

२२ व-स्नं प्राणधारणम् ।

२३ म-०८८शोषणा० ।

२४ व-सारान्तरचरः ।

- इत्श्चेतश्च तां काको वारयन्तीं पुनः पुनः ।
 ४०] पक्ष्मणुण्डनस्वाग्रैश्च कोपयामास कोपनाम् ॥ ४२ ॥
 तस्याः प्रस्फुरमाणौष्ठं भ्रुकुटीपुटशोभितम् ।
 ४१] मुखमालोक्य काकुत्स्थस्तं काकं प्रत्यषेधयत् ॥ ४३ ॥
 स घृष्टमानी बिहगो राममप्यविचिन्तयन् ।
 ४२] सीतामभिपपातैव तत्श्चुक्रोध राघवः ॥४४ ॥
 सोऽभिमन्त्र्य शरैषीकामिषीकाम्नेण वीर्यवान् ।
 ४३] काकं तमभिसन्धाय ससर्ज पुरुषर्षभः ॥४५ ॥
 स तयाऽभिद्रुतः काकस्त्रीञ्चोकान् पर्यधावत ।
 ४४] देवैर्दत्तवरः पत्नी धारान्तरचरो लघुः ॥४६ ॥
 यत्र यत्रागमत् काकस्तत्र तत्र ददर्श ह ।
 ४५] इषीकाभूतमाकाशं स^{२५} रामं^{२५} पुनरागमत् ॥४७ ॥
 स मूर्धन्यपतत् काको राघवस्य महात्मनः ।
 ४६] सीतायास्तत्र पश्यन्त्या मानुषीमीरयन् गिरम् ॥४८ ॥
 प्रसादं कुरु मे राम प्राणैः सामग्र्यमस्तु मे^{२६} ।
 ४७] अस्त्रस्यास्य प्रभावेन शरणां न लभे क्वचित्^{२७} ॥४९ ॥
 तं काकमग्रवीद्रामः पादयोः शिरसा नतम् ।
 ४८] सानुक्रोशतया धीमानिदं वचनमर्थयत् ॥५० ॥
 यया रोषपरीतेन सीतामियचिकीर्षणा ।
 ४९] अस्त्रमेतत् समाधाय त्वद्दधायाभिमन्त्रितम् ॥५१ ॥
 यतो मे चरणौ मूर्द्ध्ना नतस्त्वं जीवितेऽज्या ।
 ५०] अथ^{२८} त्वंवेत्ता^{२८} त्वयि मे रक्ष्यो हि शरणागतः ॥५२ ॥

२५ व, क, म—रामं सपुन० ।

२६ म—०मस्तुते ।

२७ म—कुचित् ।

२८ क—वयत्त्व० ।

अमोघं क्रियतामस्त्रमङ्गमेकं^{२२} परित्यज ।

५१] किमङ्गं शातयत्वेषा ° शरैषीकेति कथ्यताम् ॥५३॥

एतावद्धि मया शक्यं तव कर्तुं मियं स्वग ।

५२] एकाङ्गहीनो जीव त्वं जीवितं मरणाद्वरम् ॥५४॥

एवमुक्तस्तु रामेण सम्प्रधार्याथ वायसः ।

५३] अध्यवस्य द्वयोरक्षणोस्त्यागमेकस्य परिहृतः ॥५५॥

सोऽब्रवीद्राघवं काको नेत्रमेकं त्यजाम्यहम् ।

५४] एकनेत्रोऽपि जीवेयं त्वत्प्रसादाभराधिप । ५६॥

रामानुज्जातमस्त्रं तत् काकनेत्रमशातयत् ।

५५] बैदेही विस्मिता तत्र काकस्य नयने हते ॥५७॥

निपत्य शिरसा काको जगामाशु यथेप्सितम् ।

५६] लक्ष्मणानुचरो रामश्चकारानन्तराः क्रियाः ॥५८॥

अथ सैन्यस्य महतो गजवाजिरयोद्धतः ।

५७] शुश्रुवे तुमुलः शब्दः सागरस्येव मध्यतः ॥५९॥

अथ स विबुधराजविक्रमः

कमलदलायतदृष्टिरब्रवीत् ।

किमिदमिति समीक्ष्य लक्ष्मणं

५८] स गुरुवचः प्रतिपूज्य बोधितः ॥६०॥

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे इषीकास्त्राविसर्जनं

नाम सर्गः ॥ [१०९] ॥

[६-१०६]=[दशाधिकशततमः सर्गः]=[१०६]

अथ रामे तदासीने लक्ष्मणे चापि गच्छति ।

- १] तस्य सैन्यस्य महतः प्रादुरासीन् महास्वनः ॥११॥^० [N
तेन स्वनेन महता वर्धमानेन बोधिताः ।
- २] गुहास्सन्तत्यजुर्व्याघ्रा निलिप्युर्वनवासिनः ॥२॥ [N
समुत्पेतुः खगास्तत्र मृगयूथाश्च दुद्रुवुः ।
- ३] अक्षाश्रोत्वृज्य वृक्षाग्रान् प्रपेतुर्हरयो गुहाः ॥३॥ [N
दवाग्नेरिव विभ्रस्ता दुद्रुवुर्गजयूथपाः ।
- ४] व्यजृम्भन्त महासिंहा महिष्याश्च^१ व्यलोकयन् ॥४॥ [N
विलानि विविशुर्व्यालाः स्वस्ति जेपुर्द्विजातयः^२ ।
- ५] विद्याधराः समुत्पेतुः किन्नरा भोजिरे दरीः ॥५॥ [N
तमभ्यासमनुभाप्तं तस्य देशस्य लक्ष्मणः ।
- ६] सैन्यस्यागच्छतः शब्दमेत्य रामे न्यवेदयत् ॥६॥ [N
तद्बुवाच ततो रामः मुमित्रा मुमजास्त्वया ।
- ७] महास्वनोतिगम्भीर स त्वया ज्ञायतामिति ॥७॥ [७
स लक्ष्मणश्च त्वरितः सालमारुह्य पुष्पितम् ।
- ८] दिशः क्रमेण सम्प्रेक्ष्य प्राचीं दिशमवैक्षत ॥८॥ [११
उदङ्मुखः स सम्प्रेक्ष्य ददर्श महतीं चमूम् ।
- ९] रथान्भगजसम्पूर्णा यच्चैर्गुप्तां पदातिभिः ॥९॥ [१२
शंसमानो नरव्याघ्रो लक्ष्मणः परवीरहा ।
- १०] शशंस सेनामायान्तीं वचनं चेदमब्रवीत् ॥१०॥ [१३
अग्निं संशमयत्वार्यां सीता चाविगतां गुहाम् ।
- ११] कुरु सज्ज्ये च धनुषी कवचं धारयस्व च ॥११॥ [१४

० ब, ल, म ।

१ ब, ल, म—महिषाश्च ।

२ ल—०जातिभः ।

नागाश्वरथसम्पूर्णां तां चमूं सभिश्चम्य सः ।

१२] रामः पप्रच्छ सौमित्रिं कस्येमां मन्यसे चमूं ॥१२॥ [१५

राजा वा राजपुत्रो वा बनेऽस्मिन् मृगयाङ्गतः ।

१३] मन्यसे वा यथा तत्त्वं तथा लक्ष्मण शंस मे ॥१३॥ [६

एवमुक्तोऽथ रामेण लक्ष्मणो वाक्यमब्रवीत् ।

१४] दिधत्तुरिव कोपेन ज्वलितो हृव्यवाहनः ॥१४॥ [१६

सपत्नो राज्यकामोऽयं व्यक्तं राज्ञाऽभिषेचितः ।

१५] आवां हन्तुमिहाभ्येति^३ भरतः केकयीसुतः ॥१५॥ [१७

असौ हि सुमहास्कन्धो^४ विटपीव महाद्रुमः ।

१६] विराजते गजस्कन्धे^५ कोविदारध्वजो यथा ॥१६॥ [१८

भजन्ति च यथा ऽऽकाशमश्वा वायुजवा द्रुताः । [१६पू

१७] गृहीतधनुषश्चापि योधाः सज्जो भवानघ ॥१७॥ [२०पू

अथ वा त्वं गिरिगुह्यं सभार्यः प्रविश स्वयम् । [N

१८] अपि मेऽद्य समागच्छेत् कोविदारध्वजो रणे ॥१८॥ [२१पू

N] बाहोर्यदुचितं सर्वं तत्करिष्यामि राघव ।

N] अहमेकः करिष्यामि त्वत्प्रेष्यस्योचितं यथा ॥ १९ ॥ [N

अथ मत्कार्मुकोत्सृष्टारशराः कनकभूषणाः ।

N] पास्यन्ति रुधिरं नृणां हृदयादचिरादिव ॥ २० ॥ [N

एते भ्राजन्ति संहृष्टा ह्यानारुह्य सादिनः । [१९उ

१९] समन्तात् परियातास्ते रामशूलमुपाभिताः ॥ २१ ॥ [N

अपि परयेयमद्याहं^६ भरतं यत्कृते^७ महत् । [N

२०] राघव त्वमिह प्राप्तो दुस्त्वं वै सहितो मया ॥२२॥ [२२उ

३ क, ब, म—०मिवाभ्येति ।

६ ब—०मद्याहं ।

४ ल-स्कन्धो ।

७ ब—यत्कृतं ।

५ ल-स्कन्धे ।

- यत्कृते त्वमितो राज्यात् प्रच्युतो रघुनन्दन । [२२पू
 २१] स सम्प्राप्तोऽप्ययं पापो भवतो बाणगोचरम् ॥२३॥ [२३पू
 २२पू] भरतस्य वधे दोषं नाहं पर्यामि राघव । [२३उ
 N] पूर्वापकारिणं हन्याद् धर्मोऽयं तु विधीयते ॥ २४ ॥ [२४पू
 N] पूर्वापकारी भरतस्त्यक्तधर्मश्च राघव । [२४उ
 २२उ] तस्मिन् विनिहतेऽथ त्वमनुशाधि वसुन्धराम् ॥२५॥ [२५पू
 अथ पुत्रे हते साऽथ कैकेयी राज्यकामिनी । [२५उ
 २३] पुत्रं पर्यतु दुःखार्ता हस्तिभग्नमिव द्रुमम् ॥ २६ ॥ [२६पू
 कैकेयीं च हरिष्यामि सानुबन्धां सबान्धवाम् । [२६उ
 २४] कलुषेणाथ महता मेदिना संमृच्यताम् ॥२७॥ [२७पू
 अयमे सञ्चितं क्रोधमसत्कारं च राघव । [२७उ
 २५] प्रतिमोक्ष्यामि योधेषु कक्षेष्विव हुताग्नम् ॥ २८ ॥ [२८पू
 अथेदं^१ चित्रकूटस्य काननं निशितैः^१ शरैः । [२८उ
 २६] क्षिप्वा शत्रुशरीराणि करिष्ये शोणितोदकम् ॥२९॥ [२९पू
 शरैर्निर्मिष्यद्दद्यान् कुञ्जरांस्तुरगांस्तथा । [२९उ
 २७] भूताधिराय भक्तानां नरांस्त्वभिहतान् भुवि ॥३०॥ [३०पू
 शराणां धनुषश्चाहमनृणोऽस्मिन् महाबने । [३०उ
 २८] ससैन्यं भरतं हत्वा भवेयं नात्र संशयः ॥३१॥ [३१उ

प्रमथितहयनागां स्यन्दजोत्त्रिस्रचक्रां

विमथितनरगार्गां शोणितार्द्रां नरेश ।

भरतवृपतितसेनां पर्य चेमां शयानां

३०] मृगस्वणहृकङ्कामथ महाणभिन्नाम् ॥३२॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अथोऽध्याकाण्डे लक्ष्मणकोपो

नाम सर्गः ॥[११०]॥

- [६-१०७]=[एकादशाधिकशततमः सर्गः]=[६-६७]
 अन्वकोपं च सौमित्रि लक्ष्मणं क्रोधमूर्च्छितम् ।
 १] रावः संशयमाभास वचनं चेदमब्रवीत् ॥१॥ [१
 विमियं कृतपूर्वं नौ कदा नु भरतेन किम् ।
 २] अनिष्टं^१ भरतात् किं नौ येन त्वं^२ हन्तुमिच्छसि ॥२॥ [१४
 किमत्र घनुषा कार्यमसिना चर्षवर्मणा ।
 ३] महेश्वासे महामाहे^३ भ्रातरि स्वयमागते ॥३॥ [२
 प्राप्तकालो यदेषोऽस्मान् भरतो द्रष्टुमिच्छति ।
 ४] अस्मासु मनसाऽप्येष नाहितं कर्तुमर्हति^४ ॥४॥ [१३
 न च ते निष्ठुरं वाच्यो भरतो नाहितं वचः ।
 ५] अहं त्वमियद्युक्तः^५ सर्वा भरतस्थाभिरे कृते ॥५॥ [१५
 कथं नु पुनः पितरं हन्यात् कस्याश्चिदापदि ।
 ६] भ्राता वा भ्रातरं हन्यात् सौमित्रे मियमात्मनः ॥६॥ [१६
 यदि वा राज्यहेतोस्त्वमिमां वाचं प्रभाषसे ।
 ७] वक्ष्यामि भरतं दृष्ट्वा राज्यमस्मै प्रदीयताम् ॥ ७ ॥ [१७
 उच्यमानो हि भरतो मया लक्ष्मण तत्वतः ।
 ८] राज्यमस्मै प्रवच्छेदि वास्तमित्येव वक्ष्यति ॥८॥ [१८
 तथोक्तो धर्मशीलोऽत्र भ्रात्रा^६ तस्य हिते रतः ।
 ९] लक्ष्मणः प्रविवेकेन स्वानि मात्राणि लक्ष्मणा ॥९॥ [१९
 तद्वाक्यं लक्ष्मण. भुक्त्वा व्रीडितः प्रत्युवाच ह ।
 १०] त्वां मन्ये^७ द्रष्टुमायातो भ्राता^८ ते भरतः स्वयम् ॥१०॥ [२०
 व्रीडितं लक्ष्मणं दृष्ट्वा रावणः प्रत्युवाच ह ।
 ११] एव मन्ये महाबाहुरस्मान् द्रष्टुमिहागतः ॥ ११ ॥ [२१

१ व, क, म-आनष्टं ।

२ क-त्वां ।

३ क-० महे ।

४ क-० मिच्छति ।

५ व, म-नु मिय० ।

६ क, म-भ्राता ।

७ व, क, म-मन्ये त्वां ।

८ व, क-भ्राताक्ये ।

- १] वनवासकृतं दुर्लं चिन्तयन् भ्रातृवत्सलाः । [N
 इमां च प्रेक्ष्य वैदेहीमत्यन्तदुःखसेविनाम् ।^०
- १२] वनवासमनुभ्याय गृहं^१ नेतुमिहानतः^२ ॥१२॥ [२३
 एतौ तौ सम्प्रकाशेते शोभयन्तौ महाहृजौ ।
- १३] बायुवेगोपमैर्नीतावगतौ जवनैर्हयैः ॥ १३ ॥ [२४
 एष वै स महाकायो राजते वाहिनीध्रुवे ।
- १४] नागः शत्रुञ्जयो नाम वृद्धस्तातस्य सम्मतः ॥१४॥ [२५
 इति सम्प्रापमाद्यस्तु रामः संमित्रिणा सह ।
- १५] तां चमूं हर्षसंभर्मा ददर्श सह सीतया ॥ १५ ॥ [N
 अबतीर्य च शैलाग्राह्णकमथो खञ्जया नतः ।
- १६] रामस्य पार्ष्वमागत्य वीरस्तस्यावधौध्रुवः ॥१६॥ [२८
 भरतेनाथ सन्दिष्टा सम्मर्दो वा भवेदिति ।
- १७] समन्तात् तस्य देशस्य सेनावासमकण्ठकम् ॥१७॥ [२९
 अध्यर्धमिच्छवाकुचमूर्योजनं पर्वतस्थ च ।
- १८] आहृत्वात्वासिताऽरण्ये गजकाजिसमाकुलाः ॥१८॥ [३०
 निवेश्य सेनां स विदुः पद्भ्यां पादधर्ता वरः †
- १९] अभिगन्तुं स काफुत्स्वमिवेथ गुरुवत्सलाः ॥ २० ॥
 सा चित्रकूटे भरतेभ्यः सेनां
 धर्मं पुरस्कृत्य विहाय वर्षम् ।
 प्रसादनार्थाय तदाऽप्रजस्य
- २०] विराजते नीतिविदा मणीषा^३ ॥ २१ ॥ [३१
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे लक्ष्मणवाक्यं
 नाम सर्गः ॥ [१११] ॥

[वं-N]=[द्वादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-९८]

निविष्टायां तु सेनायां यथाऽऽदिष्टं विनीतवत् ।

भरतो भ्रातरं वाक्यं शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [२

क्षिप्रमिदं वनं सौम्य नरसिंहः^१ समन्ततः ।

लुब्धकैः सहितः सर्वैः समन्वेषितुमर्हति ॥ २ ॥ [३

गुहो^२ ज्ञातिसहस्त्रेण शरचापासिधारिणा ।

वने बसन्तं काकुत्स्थमस्मिन् परिवृतस्त्वया ॥ ३ ॥ [४

रामं यावन्न पर्यामि लक्ष्मणं च महाबलम् ।

वैदेहीं च महाभागां न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ४ ॥ [६

[यावन्न चन्द्रसंकाशं पर्यामि शुभमाननम् ।

भ्रातुः पणपलाशाक्षं न मे शान्तिर्भविष्यति] [A

यावन्न चरणौ भ्रातुः पार्थिवव्यञ्जनान्वितौ ।

शिरसा प्रगृहीष्यामि न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ५ ॥ [७

परिष्वङ्गं श्रुजाभ्यां तु यावन्न वदतां वरः ।

स करिष्यति धर्मात्मा न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ६ ॥ [N

यावन्न चंद्रसंकाशं पर्यामि शुभमाननम् ।

भ्रातुः पणपलाशाक्षं न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ A [N

यावन्न राज्ये राज्यार्हः पितृपैतामहे स्वके ।

न निवेक्ष्यति काकुत्स्थो राजीवाक्षो महापुतिः ॥७॥ [१०

कुतकार्वा महाभागा वैदेही जनकात्मजा ।

मर्तारं च समागत्य पृथिवीं नाभिगच्छति ॥८॥^O [११

१ व-नरसिंह ।

२ व-गुहो० ।

A व, ल-इत्यधिकम् ।

म-0 ।

स्वस्ति^३ नक्षिन्नकूटोऽयं^४ गिरिराजो महाघृतिः ।
यस्मिन् वसति काकुत्स्थः कुबेर इव मन्दिरे ॥ १० ॥ [१२
कृतकार्यमिदं दुर्गं वनं व्यालनिषेवितम् ।
अध्यास्ते यन्महातेजाः रामः शस्त्रभृतांवरः ॥११॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुर्भरतः पुरुषर्षभः ।
पद्मपायेव महातेजाः प्रविवेश महद्वनम् ॥ १२ ॥ [१४
स तानि द्रुमजालानि जातानि गिरिसानुषु ।
पुष्पिताग्राणि मध्येन जगाम बदतां वरः ॥१३॥० [१५
स गिरेश्चिन्नकूटस्य साबून्यन्विष्य वेगितः ।
रामाभ्रमकुतस्याग्नेर्दृष्टवान् धूममुत्थितम् ॥१४॥ [१६
तं दृष्ट्वा भरतः श्रीयान् मुमोद सह बान्धवः ।
अस्ति राम इति ज्ञात्वा गतः पारमिबाम्भसः ॥१५॥ [१७
स चिन्नकूटोऽयं गिरौ निशम्य
रामाभ्रं पुण्यजनोपसेवितम् ।
गुहेन सार्धं त्वरितो जगाम
पुनर्व्यवस्थाप्य चर्म महात्मा ॥१६॥ [१८
इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतगमनं
नाम सर्गः ॥ [११२] ॥

३ ल- स्वस्थिरः ।

० म ।

० ल- ।

४ ल-०मुत्थितः ।

५ ल-गत्वा ।

६ ल म-०षु ।

[सं-१०८]=[त्रयोदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१९]

त्रिविष्टायां तु सेनायामुत्सुको भरतस्तदा ।

१] जगाम भ्रातरं द्रष्टुं शत्रुघ्नसहितो विभुः ॥१॥ [१

श्रुतिं वसिष्ठं सन्दिश्य मातुर्मे शीघ्रमानय ।

२] इति त्वरितमग्रे स जगाम गुरुवत्सलः ॥२॥ [२

सुमन्त्रस्त्वय शत्रुघ्नं त्वरावानन्वपद्यत ।

३] रामदर्शनजो हर्षो भरतस्येव तस्य हि ॥३॥ [३

पृच्छन्नेवाथ भरतस्तापसानाद्यपस्वितान् ॥४॥

४] ददर्श च वने तस्मिन् महतः सञ्चयान् कृतान् ।

वृगाणां महिषाणां च करीषानम्बिकास्त्रात् ॥५॥ [७

५] गच्छन्नेव महाबाहुर्धुतिमान् पुरुषर्षभः ।

अमात्यानमपीत् सर्पान् भरतः सत्कृताभितः ॥६॥ [८

६] मन्ये माताः स्व तं देशं भरद्वाज्येयममवीत् ।

नातिदूरामहं मन्ये नदीं मन्दाकिनीमिसः ॥७॥ [९

७] इदं फलानां संश्लिष्टं पुष्पाण्यवचितानि च ।

काष्ठानि परिभ्रष्टानि मूकान्यावेष्टितानि च ॥८॥ [१०

८] उच्चैर्बद्धानि चीराणि कक्षमयेन तथैव च ।

अभिघ्नानादितः पन्या विमल्लोऽनस्रमीयुषाम् ॥९॥ [१०

९] अयं पायद्वरदन्तानां कुञ्जराणां तरस्विनाम् ।

शौक्यपारथे समाक्रान्तुमन्योन्यमभिगर्जताम् ॥१०॥ [११

१०] यमप्यापातुमिच्छन्ति तापसाः सततं वने ।

तस्यासौ हरयते धूमः सङ्कुलः कुण्डवर्त्मनः ॥११॥ [१२

१ क—०सास्तात्रुप० ।

२ क—०राद्दृ० ।

३ क—अभिघ्ना० ।

४ क, ल—०कान्तम० ।

५ क, ल—यमप्यापातु० ।

- ११] अहं तं पुरुषम्यात्रं पितुरादेशकारिणम् ।
अयं द्रक्ष्यामि काकुत्स्थं महर्षिसमदर्शनम् ॥१२॥ [१३
- १२] अथ गत्वा गृहूर्ते स चित्रकूटं समीपतः ।
मन्दाकिनीमनुप्राप्य तं जनं वाक्यमब्रवीत् । १३॥ [१४
- १३] अयं स पुरुषव्याघ्र आस्ते वीरासने रतः ।
नरेन्द्रो निर्जनं प्राप्तो लोकनाथो महाश्रुतिः ॥१४॥ [१५
- १४] मत्कृते व्यसनं प्राप्तो लोकपालोपमोऽवशः ।
सर्वान् कामान् परित्यज्य बने बसति राघवः ॥१५॥ [१६
- १५] तस्याहं लोकनाथस्य पादयोः सम्यसादयन् ।
रामस्य निपतिष्यामि सीतायाश्च पुनः पुनः ॥१६॥ [१७
- १६] एवं लालप्यमानः स बने दशरथात्मजः ।
ददर्श महतीं पुण्यां पर्यशालां मनोरमाम् ॥१७॥ [१८
- १७] सालतालाश्वकर्णानां पर्यैर्बहुमिराचिताम् ।
विशालां गृदुविस्तीर्णां द्रुमैर्बेदीभिवाध्वरे ॥ १८ । [१९
- १८] शक्रायुषनिकाशाभ्यां कार्मुकाभ्यां विशूचिताम् ।
महज्ञर्षां रुक्मपृष्ठाभ्यां नागाभ्यामिव चाचिताम् ॥१९॥ [२०
- १९] अर्करश्मिप्रतीकाशैर्घोरैस्सूखगतैः शरैः ।
शोभितां दीप्तवदनैर्नागैर्मोमवतीमिव ॥ २० ॥ [२१
- २०] महारजतकान्ताभ्यामसिभ्यां च विरामिताम् ।
रुक्मविन्दुषिचित्राभ्यां चन्द्रभ्यामुपशोभिताम् ॥२०॥ [२२
- २१] गोषाडुखिनैरासप्तैश्चित्रैः कनकधूपलैः ।
अरिसंघैरनामृष्टां नरैः सिंहशुभाभिव ॥ २२ ॥ [२३

१ व, स, म—अथ ।

७ स०—वाक्युप० ।

= स—कार्मुकाभ्यां ।

६ व-० रजादभ्या ।

- २२] प्रागुद्दिष्टे^१ बनोद्देशे वेदीं सन्दीप्तपावकाम् ।
ददर्श भरतस्तत्र पुण्यां रामनिवेशने ॥ २३ ॥ [२४
- २२] स विलोक्य मुहूर्त्तं तु ददर्श भरतो गुरुम् ।
२४७] उदजे राममासीनं जटाबन्कलधारिणम् ॥२४॥ [२५
- N] तं तु कृष्णाजिनधरं जटिकां चीरवाससम् ।
N] ददर्श राममासीनमभितः पावकोपमम् ॥२५॥ [२६
- २४८] सिंहस्कन्धं महाबाहुं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।
पृथिव्याः सागरान्ताया गोक्षारं धमेधारिणम् ॥२६॥ [२७
- २५] महात्मानं महाभागं ब्रह्माण्डमिव शारवतम् ।
सहोपविष्टमासीनं सीतया लक्ष्मण्येन च ॥२७॥^० [२८
- २६] तं दृष्ट्वा भरतः श्रोमान् दुःस्वशोकपरिष्कृतः ।
अभ्यवादत धर्मात्मा भ्रातरं केकयीसुतः ॥२८॥ [२९
- २७] दृष्ट्वा च विललापातों वाष्पसन्दिग्धया गिरा ।
अशक्नुवन् वारयितुं शोकं वचनमब्रवीत् ॥२९॥ [३०
- N] यः संतदि प्रकृतिभिः सततं परिचार्यते ।
२९८] वन्यैर्धृगैः परिहृतः सोऽज्यमास्ते ममापजः ॥३०॥ [३१
- ३०] वांसोभिर्बहुसाहस्रैर्यो महात्मा परिष्कृतः ।
३१] मृगाजिनधरः सोऽज्य मसुप्तो जगतीतले ॥ ३१ ॥ [३२
- अधारवद् यो विविधरिचक्राः सुमनसां सजः ।
३३] सोऽयं जटाभारमिमं बहते राघवः कथम् ॥३२॥ [३३
- मभिमिचमिदं प्राप्तो दुःखं रामः सुलोचितः ।
३४] चिन् जीवितं नृशंसस्य मम लोकविमर्हिणम् ॥३३॥ [३६

इत्येवं विलापन् दीनः प्रस्विन्नमुखपङ्कजः ।

३५] पादाबुपेत्य रामस्य प्रापतद् भरतो भुवि ॥ ३४ ॥ [३७

दुःखाभिभूतो भरतो राजपुत्रो महाबलः ।

३६] उत्तवाऽऽर्येति सकृद् दीन पुनर्नोवाच किञ्चन ॥ ३५ ॥ [३८

वाष्पाभिहितकण्ठो^१ हि रामं दृष्ट्वा यशस्विनम् ।

३७] हा ऽऽर्येत्येवं समाभाष्य व्याहर्तुं न शशाक ह ३६ ॥ [३९

शत्रुघ्नश्चापि रामस्य वबन्दे चरणौ रुदन् ।

३८] ताबुभौ तु समालिङ्ग्य रामोऽप्यभ्रूण्यवर्षयत् ॥ ३७ ॥ [४०

ततः मुग्धेण च तेन चैव

समीयिवान् राजसुतावरण्ये ।

दिवाकररचैव निशाकरश्च

३९] यथाम्बरे शुक्रवृहस्पतिभ्याम् ॥ ३८ ॥ [४१

तान् पार्थिवान् वारणमुख्यकन्यान्^२ ।

समागतास्तत्र महत्यरण्ये ।

वनौकसः प्रेक्ष्य समेत्य सर्वे

४०] कृपागृहीता रुरुदुस्तदानीम् ॥ ३९ ॥ [४२

इत्यार्षे रामायणं अयोध्याकाण्डे भरतदर्शमं

नाम सर्गः ॥ [११३] ॥

[वं०-१.०६]=[चतुर्दशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१००]

आघ्राय च स तं मूर्ध्नि परिष्वज्य च राघवः ।

१] अङ्गे भरतमारोप्य पर्यपृच्छत् समाहितः ॥१॥ [३

क नु तात पिता ते ऽभूद् यदरण्यं त्वमागतः ।

२] न हि त्वं जीवतस्तस्य गुरोरागन्तुमर्हसि ॥ २ ॥ [४

चिरस्य बत पश्यामि दूराद्भरतमागतम् ।

३] दुष्पणीतमरण्ये ऽस्मिन् किं तन्न वनमागतः ॥ ३ ॥ [५

कश्चिद् दशरथो राजा कुशली सत्यसङ्गरः ।

४] राजसूयाश्वमेधानामाहर्ता धर्मतत्त्ववित् ॥ ४ ॥ [=

स कश्चिद् ब्राह्मणो विद्वान् धर्मनित्यस्तपोधनः ।

५] इच्छाकूलामुपाध्यायो यथावत् तात पूज्यते ॥ ५ ॥ [६

तात कश्चिच्च कौसल्या सुमित्रा च तपस्विनी ।

६] सुखिता कश्चिदार्या च देवी नन्दति कैकयी ॥६॥ [१०

कश्चिद्द विनयसम्पन्नः कुलपुत्रो बहुश्रुतः ।

७] अनसूयुरनुमष्टा सत्कृतस्ते पुरोहितः ॥ ७ ॥ [११

कश्चिदग्निषु ते युक्तो ब्राह्मणो मतिमानृजुः ।

८] हुतं च होष्यमाणं च काले वेदयते सदा ॥ ८ ॥ [१२

इष्वक्ने परमाचार्यमर्थशास्त्रविशासदम् ।

९] सुधन्वानमुपाध्यायं कश्चिन्वं नावमन्यसे ॥९॥ [१४

कश्चिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रियाः ।

१०] कृतज्ञाभोजितज्ञाना भक्तास्ते तात मन्त्रिणः ॥१०॥ [१५

१ व—०माहंता ।

क—०माहता ।

२ म—कश्चिद् ।

३ व, क, म—०मस्वयास्व० ।

- मन्त्रमूलो हि विजयो राज्ञां भवति राघव ।
 ११] सुसंवृतो मन्त्रिवरैरमात्यैर्मन्त्रकोविदैः ॥ ११ ॥ [१६
 कश्चिभिद्रावशं नैषि कश्चित् काले विबुध्यसे ।
 १२] कश्चिच्चापररात्रेषु चिन्तयस्पर्यमर्थवित् ॥ १२ ॥ [१७
 कश्चिन्मन्त्रयसे नैकः कश्चिन्न बहुभिः सह ।
 १३] कश्चिन्नामन्त्रितो मन्त्रो न राज्यमनुधावति ॥१३॥ [१८
 कश्चिदर्थं विनिश्चित्य लघुमूलं महोदयम् ।
 १४] क्षिप्रमारभसे कर्तुं न विघ्नयसि राघव ॥ १४ ॥ [१९
 कश्चिन्न क्रियमाणानि कश्चित्तत्प्रवणानि वा ।
 १५] विदुस्ते सर्वकार्याणि कर्तव्यानि नरेश्वराः ॥१५॥^० [२०
 N] कश्चिन्न राज्यहेतोवा चयापचयशङ्किना ।
 १६] त्वया चाप्यथवाऽमात्यैर्विध्यन्ते तात मानवाः ॥१६॥^०[२१^३
 कश्चिन् मूर्खसहस्रेणाप्येकं क्रीणासि पण्डितम् ।
 १७] पण्डितो ह्यर्थकृद्भेषु ब्रूयाभिःश्रेयसं वचः ॥१७॥ [२२
 सहस्रैरपि मूर्खाणां यो नृपः पर्युपास्यते ।
 १८] तथैवाप्ययुतैस्तस्य नास्ति तेषु सहायता ॥ १८ ॥ [२३
 एको ह्यमात्यो मेधावी शूरो दान्तो विचक्षणः ।
 १९] राजानं राजपुत्र वा प्रापयेत् महतां श्रियम् ॥१९॥ [२४
 कश्चिन् मुख्या महत्स्वेव मध्यमेषु च मध्यमाः ।
 २०] जघन्याश्च जघन्येषु भृत्यास्ते तात योजिताः ॥२०॥ [२५
 कश्चित् कृषिकरास्तात सुनिविष्टा जनाकुलाः ।
 २१] देवस्थानैः प्रपाभिश्च तडागैश्चापसेविताः^४ ॥ २१ ॥ [४३
 महानरनारीक^५ समाजोत्सवभूषितः^६ ।

० कै—नास्ति ।

० ल, म—नास्ति ।

० ल, म—नास्ति ।

४ ब—०शबोपशोभिताः ।

५ ल—०रोकाः ।

६ ल—भूषिताः ।

- २२] सुकृष्टस्तेमः पशुमान् विहिंसापरिवर्जितः ॥२२॥ [४४
 अदेवद्रोहक कश्चिदापञ्चिरचैव वर्जितः । [५
 २३] कच्चिज्जनपदः स्फीतः सुखं वसति राघव ॥२३॥ [४६ उ
 N] महृष्टनरनारीकाः सुनिरुद्धिप्रगोकुलाः । ० [N
 २४] कच्चिचत्ते निरता वैश्याः कृषिगोरक्ष्यकर्मसु ॥ २४ ॥ [४७ पू
 २५] रक्ष्या हि राज्ञा धर्मेण सर्वे विषयवासिन ॥२५॥^० [४८ उ
 कच्चित् त्रिया समयसि कच्चित्ताश्च सुरक्षिता ।
 २६] कश्चिन्न भ्रष्टास्यासां कच्चिद् गुह्यं न भाषसे ॥२६॥^० [४९
 कच्चिन्नागबलं गुह्यं कैकेयी सुप्रजास्त्वया ।
 २७] कश्चिदुभयतदन्तानां कुञ्जरार्णा न तृप्यसे ॥ २७ ॥ [५०
 कच्चित् सभायो स्मसे कच्चित् काले विबुध्यसे ।
 N] कच्चिच्च पररात्रेषु^० धर्मार्थे विप्रबुध्यसे ॥ २८ ॥ [N
 कच्चित् सकृद्गमनीतिन्नः शूरस्ते बाहिनीपतिः ।
 २८] असंहार्योऽनुरक्तो^० हि लोको नित्यं च तिष्ठति ॥२८॥ [N
 कच्चिच्च लोकायतिकान् ब्राह्मणानुपसेवसे ।
 २९] अनर्थकुशला ह्येते मृदाः^० पण्डितमानिनः ॥३०॥ [३०
 शास्त्रेष्वन्येषु गुरुषु विद्यमानेषु दुर्बुधाः ।
 ३०] बुद्धिमान्बीजिकां प्राप्य न निन्दां वर्धयन्ति^० ते ॥३१॥ [३१
 कच्चिचर्शयसे नित्यं मनुष्यान् समलङ्कृतान् ।
 N] उत्थायोत्थाय पूर्वाह्ने युत्वा च विदितं जनम् ॥३२॥ [५१
 कच्चित् का [क] न्ये^० च सायं च तवासीनस्य चाग्रतः ।

० व, म - नास्ति ।

७-कै-अस्यश्लोकस्य पूर्वार्धं
 लुटितं प्रतीयते ।

०-व, म-नास्ति ।

६-व, व, म-कच्चिन्ना० ।

६-व, व, म-अस्यश्लो० ।

१०-व, व, म-भूयः ।

११-व, म-कारयन्ति ।

१२-व-काले ।

- ८] पिबन्ति मदिरां नागा भुञ्जते भोजनानि च ॥ ३३ ॥ [N
 कच्चित् पितरि सद्गृष्टिं वर्तसे पुरुषर्षभ ।
- ३१] पितामहानामपि वा वर्तसे तुल्यगौरवः ॥ ३४ ॥ [N
 अमात्यानुपधाज्जीतान् पितृपैतामहान् शुचीन् ।
- ३२] ज्येष्ठान् ज्येष्ठेषु कच्चिच्च नियोजयसि कर्मसु ॥३५॥ [२६
 कच्चिद्बभक्ष्यं तथा भोज्यमेको नादसि राघव ।
- ३३] कच्चिदार्शंसमानेभ्यो भ्रातृभ्यः^१ सम्प्रयच्छसि ॥३६॥ [७५
 कच्चिदध्वांश्च नागार्श्च भोजयन्ति तवागृतः ।
- ३४] शस्त्रकर्मकृतो^२ वैद्या दत्ता कुशलमानिनः ॥ ३७ ॥ [N
 कच्चिच्चे वाहनं गुप्तं वज्रका न हभन्ति ते ।
- ३५] कच्चिन्न राष्ट्रं वर्तन्ते पररत्नापहारिणः ॥३८॥ [N
 कच्चित् त्वां नावजानन्ति याजका पतितं यथा ।
- ३६] उग्रं प्रतिगृहीतारं कामयानमिव स्त्रियः ॥ ३९ ॥ [२८
 ये बालिगा^३ ये च दत्ता ये मूढा ये^४ च पण्डिताः ।
- ३७] दृष्ट्वा^५ तं जीवितं तेषां कच्चिच्चे ते सुरक्षिताः ॥४०॥ [N
 उपायकुशलं वैद्यं धृत्यं सम्भाषणो रतम् ।
- ३८] शूरमैश्वर्यकामं च यो न युङ्क्ते^६ स वर्षते ॥४१॥ [२९
 कच्चित् ते बलिनो मुख्याः सर्वयुद्धविशारदाः ।
- ३९] दृष्ट्वापदानविक्रान्तास्त्वया सत्कृत्य मानिताः ॥४२॥ [३०
 कच्चिद् धृष्टश्च शून्धं घृष्टिमान् प्रतिमान् शुचिः ।
- ४०] कुलीनधामप्रसन्नं दत्तः सेनापतिस्ताव ॥ ४३ ॥ [३१

१-व, क, म-भृत्येभ्यः ।

२-क-कृते ।

३-क-बालिगाश्च ये दत्ताः ।

१-व, क, म-सूत्रां० ।

२-व, क, प-तिष्ठन्तं ।

३-व-निवृत्ते ।

कश्चिद् बलस्य भक्तं च वेतनं च यथोचितम् ।

४१] सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विशङ्कसे ॥४४॥ [३२

कालातिक्रमणादेव भक्ष्यदातव्यवर्जिता ।

४२] भर्तुरप्यकुर्वन्ति सोऽन्यथः सुमहान् भवेत् ॥ ४५ ॥ [३३

कश्चित् पूर्वानुरक्तास्ते कुलपुत्राः प्रधानतः ।

४३] आहवेषु म्रियान् प्राणान् सन्त्यजन्ति समाहिताः ॥४६॥ [३४

कश्चिद् दानवशो विद्वान् दक्षिणः प्रतिभानवान् ।

४४] यथोक्तवादी' दूतस्ते कृतो भरत पण्डितः ॥४७॥ [३५

कश्चिदष्टादशान्येषु स्वपत्ने दश पञ्च च ।

४५] त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातेर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः ४८ ॥ [३६

कश्चित्त्वं युध्यतामग्रे प्रतिपन्नश्च सर्वशः ।

४६] सुदुर्बलान् वारयंश्च वर्तसे रिपुसूदन ॥ ४९ ॥ [N

वीरैरध्युषितां' नित्यमस्माकं तात पूर्वजैः ।

४७] सत्यनाम्नीं हृद्द्वारां हस्त्यश्वरथसङ्कुलाम् ॥ ५० ॥ [४०

ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः रतैस्तात स्वकर्मुषु ।

४८] जितेन्द्रियैर्महोत्साहैर्हृदवीर्यैः सहस्रदैः ॥ ५१ ॥ [४१

मासादेर्विषिधाकारैर्धृतां दिग्पैरलङ्कृताम् ।

४९] कश्चिच्च मुदितां स्फीतामयोध्यां परिरक्षसि ॥५२॥ [४२

कश्चिन् मनुष्यशार्दूल मनुष्यान् समलङ्कृतान् । ०

५०] जत्वायोत्थाय पूर्वांहे राजपुत्राभिबीक्षसे ॥ ५३ ॥ [५१

कश्चित् सदा ते दुर्गाणि धनधान्यायुषादिकैः^{२१} ।

५२] यन्त्रैश्च परिपूर्णाणि तथा शिल्पैर्धनुर्धरैः ॥ ५४ ॥ [५३

१६-स युक्कोर्यवादी ।

०-म-नास्ति ।

२०-स,म-वीरैःशिल्पिः ।

२१-म-न्यायुषादिकैः ।

आयस्ते विपुलः कश्चित् कश्चित्स्वल्पतरं व्ययः ।

- ५३] अपात्रेषु नते कश्चित् कोषो गच्छति राघव ॥५५॥ [५४
 देवतार्येषु पितृषु ब्राह्मणाभ्यागतेषु च ।
- ५४] योषेषु मित्रवर्गेषु कश्चिद् गच्छति ते व्ययः ॥५६॥ [५५
 कश्चिदार्यो विशुद्धात्मा क्षपितश्चोरुर्कर्मणा ।
- ५५] अदृष्टशास्त्रकुशलैर्नायं ध्यायति मानवः ॥ ५७ ॥ [५६
 गृहीतलोक आरक्षः^{२२} कुशलो दृष्टकारणः ।
- ५६] कश्चिन्न मुर्यते वीरो धनलोभाभरर्षभ ॥५८॥ [५७
 कश्चिच्चाविदितार्येषु बलिनो दुर्बलस्य च ।
- ५७] अपक्षपातात् पश्यन्ति कार्येष्वधिकृता नराः ॥ ५९ ॥ [N
 यानि मिथ्याऽभिगस्तानां पतन्त्यश्रूणि रोदताम्^{२३} ।
- ५८] तानि पुत्रपशून् घ्नन्ति तेषां मिथ्याऽभिर्शांसिनाम् ॥६०॥[५९
 कश्चिद् वृद्धाश्च बालाश्च मुख्यान् वैद्यांश्च सम्मतान् ।
- ५९] दानेन वचसा चैव यथावच्चार्षसे जनघ ॥ ६१ ॥ [६०
 कश्चिद् गुरुंश्च वृद्धांश्च तापसान् देवताऽतिथीन् ।
- ६०] पूज्यांश्च सर्वान् सिद्धार्थान् ब्राह्मणांश्च नमस्यसि ॥६२॥[६१
 कश्चिदर्येण वा धर्ममर्थं धर्मेण वा पुनः ।
- ६१] उभौ वा प्रीतिसारेण न कामेन प्रबाधसे ॥६३॥ [६२
 कश्चिदर्यं च धर्मं च कामं च बदतां वर ।
- ६२] विभज्य काले कालान् सर्वान् भरत सेवसे ॥ ६४ ॥ [६३
 कश्चित् ब्राह्मणाः सर्वे धर्मकामार्थकोविदाः ।
- ६३] न शोचन्ति महामात्राः पौरजानपदैः सह ॥ ६५ ॥ [६४

नास्तिक्यमनृतं क्रोधः प्रमादो दीर्घसूत्रता ।

६४] अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पापवृत्तिता ॥ ६६ ॥ [६७

एकं चित्तमर्यानामनर्यरचोपमन्त्रणम्^{२४} ।

६५] निश्चितानां च नारम्भो मन्त्रस्यापरिरक्षणम् ॥६७॥ [६६

N] मङ्गलानामयोगरच^{२५} प्रीत्युत्सर्गरच सर्वशः ।

कश्चित् त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषान् चतुर्दश ।

६६] यैराविष्टः श्रियं क्षिप्रं नाशयेत्पृथिवीपतिः ॥६८॥ [६७

तथा तं चानुपृच्छन्तं रामं व्यथितचेतनः ।

११०-१] अज्ञापयत शोकात्तो भरतो मरणं पितुः ॥ ६९ ॥ [N

त्वामेव शोचंस्तव दर्शनेप्सु-

स्त्वय्येव तां तामषिचार्यं बुद्धिम् ।

त्वया विहीनस्तव शोकरुद्ध^{२६}-

३] स्त्वदर्थमेवास्तमितः पिता नः ॥ ७० ॥ [N

पूर्वं च राजास्तमिहानुपुज्य

भुत्वा च वाक्यं भरतस्य तस्य ।

विक्कीर्णमाणो रघुनन्दनस्तदा

४] पितुः प्रतिज्ञां स बभूव तूष्णीम् ॥ ७२ ॥ [N

इत्यार्षे । रामायणे अयोध्याकाण्डे

कश्चित्को नाम सर्गः ॥ ११४ ॥

- [वं-११०]=[पञ्चदशाधिकशतततमः सर्गः]=[दां-१०१]
 तं तु रामः समाश्रास्य भरतं गुरुवत्सलम् । [१५०]
 N] उत्थाप्य मूर्ध्नि चाघ्राय पादयो पतितं तदा ॥१॥ [N]
 किमेतदिच्छेयमहं श्रोतुं यद् व्याहृतं त्वया ।
 N] कस्मात् त्वमागतो देशमिमं चीरजटाधरः ॥२॥ [२]
 यन्मिमत्तमिमं देशं कृष्णोजिनजटाधरः ।
 N] हित्वा राज्यं प्रविष्टस्त्वं तत् सर्वं वक्तुमर्हसि ॥३॥ [३]
 इत्युक्तः केकयीपुत्रः काकुत्स्थेन महात्मना ।
 N] प्रमृष्य बाष्पं बाहुभ्यां प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥४॥ [४]
 आर्यो राज्यं परित्यज्य कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।
 २] गतः स्वर्गं महाबाहुः पुत्रशोकाभिपीडितः ॥५॥ [५]
 दुष्टां स्त्रीबुद्धिमास्थाय कैकेयी राज्यकामिनी । [N]
 ५] चकार सुमहत्पापमिदं मम यशोहरम् ॥६॥ [६]
 सा राज्यफलमप्राप्य विधवा शोककर्षिता ।
 ६] पतिष्यति महाघोरे निरये जननी मम ॥७॥ [७]
 तस्य मे दासभूतस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
 ७] अभिषिच्यस्व चानेन राज्येन मघवानिव ॥८॥ [८]
 इमाः प्रकृतयः सर्वा विधवा मातरश्च मे ।
 ८] त्वत् सकाशमनुप्राप्ताः प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥९॥ [९]
 त्वमानुपूर्वतो युक्तं युक्तं कामेन मानद ।
 ९] राज्यं प्राप्नुहि धर्मेण सकामान् सुहृदः कुरु ॥१०॥ [१०]
 भवत्वविधवा भूमिस्त्वया पत्या समन्विता ।
 १०] शाशना विमलेनेव शारदी रजनी यया ॥११॥ [११]

१ व-सद् ।

२ व, न-त्वमानुपूर्वतो ।

ल-त्वामनुपूर्वतो ।

मातृभिः सखिवैः सर्वैः शिरसा बाचितो यथा ।

- ११] भ्रातुः प्रियस्य दासस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥१२॥ [१२
तदिदं शान्धतं सर्वं पित्र्यं सखिचमण्डलम् ।
- १२] पूजितं मनुजव्याघ्र नावमानितुमर्हसि ॥१३॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुः सत्त्वाढ्यः केकयीसुतः ।
- १३] रामस्य पादौ शिरसा जग्राह भरतस्तदा ॥१४॥ [१४
१४पू] तमाचमिव मातङ्गं निःश्वसन्तं मुहुर्मुहुः । [१४पू
१४पू] कुलीनः सत्त्वसम्यग्भस्तेजस्वी चरितव्रतः ॥१५॥ [१६पू
१४उ] रामोऽप्यथाब्रवीद् वाक्यं भरतं केकयीसुतम् । [१५उ
१४उ] राज्यहेतोः कथं पापमाचरेन्मद्विधो जनः ॥१६॥ [१६उ
न दोषं त्वयि पश्यामि सूक्ष्ममप्यरिसूदन ।
- १६] न चापि जननीं बाच्यात् त्वं विगर्हितुमर्हसि ॥१७॥ [१७
यावत् पितरि धर्मज्ञे गौरवं मम मानद ।
- १७] तावदेव जनन्यां मे कैकेय्यामपि गौरवम् ॥१८॥ [१८
स तान्यां धर्मशीलाभ्यां वनं गच्छेति राघव ।
- १८] मातापितृभ्यामुक्तः सन् कथं कुर्यामतेऽप्यग्न ॥१९॥ [१९
त्वया राज्यमयोध्यन्त्यां प्राप्तव्यं लोकसत्कृतम् ।
- १९] वस्तव्यं दण्डकारण्ये यथा वन्द्यव्याससा ॥२०॥ [२०
एवं कृत्वा ब्रह्मभानो विभानं लोकसन्निधौ ।
- २०] व्यादिश्य चैव धर्मात्मा दिवं दत्तरो वचः ॥२१॥ [२१
स चेत् प्रकृतं राजेन्द्रो राजा लोकशुक्लव ।
- २१] पित्रा दर्श क्वाभानुपमोक्तुं त्वमर्हसि ॥२२॥ [२२

के० (त्वकं मासि प्र-देव) के० (त्वकं मासि प्रमादेव ।)

३ व, क, म-शान्धतं ।

चतुर्दशसमाः सौम्य दण्डकारण्यमाश्रितः ।

२२] उपभोच्ये यथादत्तं भागं पित्रा महात्मना ॥२३॥ [N*

यदब्रवीन्मां घुरलोकसत्कृतः

पितर महात्मा विबुधोपमो नृपः ।

तदेव मन्ये परमात्मसंहितं

२३] न सर्वलोकेश्वरताऽपि सत्कृता ॥२४॥ [२६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामब्रह्मणे

नाम सर्गः ॥११५॥



[वं-११.] = [षोडशाधिकशततमः सर्गः] = [दा-१ = २, १०१]

रामस्य तु वचः श्रुत्वा भरतः प्रत्युवाच ह ।

१] किं मे धर्माद् विहीनस्य राजधर्मः करिष्यति ॥ १ ॥ [१

शाश्वतो ज्यं सदा धर्मं स्थितो जस्माकं नरर्षभ ।

२] ज्येष्ठे त्वयि स्थिते राजन् न कनीयान् भवेन् नृपः । २ ॥ [२

सुसमृद्धजना रम्यामयोर्ध्या गच्छ राघव ।

४] अभिषेचय चात्मानं कुलस्यास्य भवाय नः ॥ ३ ॥ [३

राजानं मानुषं प्राहुर्देवस्त्वं संमतो मम ।

४] यस्य धर्मार्थचरितं वृत्तमाहुरमानुषम् ॥ ४ ॥ [४

केकयस्थे मयि श्रीमंस्त्वयि चारण्यमाश्रिते ।

५] दिवं यातो महाराजः पिता न. संमतः सताम् ॥ ५ ॥ [५

वसिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामुदकं पितुः ।

६] अहं चायं च शत्रुघ्नः पूर्वमेव कृतोदको ॥ ६ ॥ [७

मियेण किल दत्तं हि पितृलोकेषु राघव ।

७] अक्षय्यं भवतीत्याहुर्भवास्तस्य मियः सुतः ॥ ७ ॥ [८

तां श्रुत्वा करुणां वाचं पितुर्मरणसंहिताम् ।

८] राघवो भरतेनोक्तो बभूव गतचेतनः* ॥ ८ ॥ [१

९] बाग्बज्रं भरतेनोक्तममनोऽहं परन्तपः । [२३

१०] प्रपृष्ट रामो बाहुभ्यां पुष्पिताग्रो द्रुमो यथा ॥ ९ ॥ [३५

१०] बने परशुना कृत्तस्तथा भूर्मा पपात सः । [३६

११] तथा निपतितं रामं जगत्यां जगतीपतिम् ॥ १० ॥ [४५

११] कूलपातपरिभ्रष्टं प्रसुप्तमिव कुञ्जरम् । [४६

१२] भ्रातरस्तं महेष्यासं द्विगुणं शोककषितम् ॥ ११ ॥ [५५

१ म-राजा ।

[* अक्षय्यलोकादारभ्य दक्षिणोत्तरदिशि चतुर्दशशततमः सर्ग आरभ्यते]

- १२७] रुदन्तः सह वैदेहा सिषिचुर्नेत्रवारिणा । [५७
 १२८] स तु संभ्रां पुनर्लब्ध्वा नेत्राभ्यां बाष्पमुत्सृजन् ॥१२८॥ [६५
 १२९] उपचक्राम काकुत्स्थः कृपणं बहुभाषितुम् । [६७
 N] कस्तां नृपतिना हीनामयोर्ध्यां पालयिष्यति ॥ १३ ॥ [८७
 किं तु तस्य मया कार्यं दुर्जनेन महात्मनः ।
 १४] यो मृतो मम शोकेन त्वया चापि न संगतः ॥१४॥ [६
 अहो त्वं बत सिद्धार्थो येन राजा त्वयाऽनघ ।
 १५] शत्रुघ्नेन च सर्वेषु प्रेतकार्येषु सत्कृतः ॥ १५ ॥ [१०
 निष्मधानामनेकाग्रां हीनां नरवरेण ताम् ।
 १६] निवृत्तवनवासो ऽपि नायोर्ध्यां गन्तुमुत्सहे ॥ १६ ॥ [११
 सम्पूर्णवनवासं मामयोर्ध्यायां पुनर्गतम् ।
 १७] कोऽनुशासिष्यति पुनस्ताते लोकान्तरं गते ॥१७॥ [१२
 पुरा प्रोष्य निवृत्तं मां यान्याह परिसान्त्वयन् ।
 १८] कृतः श्रोष्यामि वाक्यानि तानि कर्णमुत्खान्यहम् ॥१८॥ [१३
 एवंमुक्त्वा ऽथ भरतं भार्यामभ्येत्य राघवः ।
 १९] उवाच शोकसन्तप्तः पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥ १९ ॥ [१४
 सीते मृतस्ते श्वशुरः पित्रा हीनश्च लक्ष्मणः ।
 २०] भरतो दुःखमाचष्टे स्वर्गतं पृथिवीपतिम् ॥ २० ॥ [१५
 जानकी श्वशुरं श्रुत्वा सर्वलोकगुणं मृतम् ।
 २१] नेत्राभ्यामभ्रपूर्णाभ्यां न शशाक निरीक्षितुम् ॥२१॥ [१८
 ततो बहुगुणं तेषामसु (भ्रु ?) नेत्रैरजायत ।
 २२] तथा ब्रुवति काकुत्स्थे कुमारार्णा यशस्विनाम् ॥२२॥ [१६
 ततस्ते भ्रातरः सर्वे आर्त्तमात्मास्य राघवम् ।

- २३] अत्रुवन् जगतीपालं बाष्पसन्दिग्धया गिरा ॥ [N
उचिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामृदकं पितुः ॥२३॥ [१७
- २४] अहं चार्यं च शत्रुघ्नः पूर्वमेव कृतोदकौ ॥ २४ ॥ [N
स रामः सम्परिष्वज्य रुदन्तीं जनकात्मजाम् ।
- २५] प्रोवाच लक्ष्मणं प्रेक्ष्य दुःखितं दुःखितो वचः ॥५२॥ [१६
आनयेर्गुण्डपिण्याकं चीरमानय चोत्तमम् ।
- २६] जलक्रियास्य तातस्य गमिष्यामि परन्तप ॥२६॥ [२०
सीता पुरस्ताद् व्रजतु त्वं चैनामभितो व्रज ।
- २७] अहं पश्चाद् गमिष्यामि गतिरेषा सनातनी ॥ २७ ॥ [२१
ततो नित्यानुगस्तेषां विजितात्मा महाद्युतिः ।
- २८] मृदुः क्षान्तश्च दान्तश्च रामे च दृढभक्तिमान् ॥ २८ ॥ [२२
मुमन्वस्तैर्नृसुतैः सार्धमारवास्य राघवम् ।
- २९] अवातारयदालम्ब्य नदीं मन्दाकिनीमनु ॥२९॥^(०) [२३
ते च तीर्थी नदीं कृच्छ्रादुपगम्य यशस्विनः ।^(०)
- ३०] पुण्यां मन्दाकिनीं रम्यां नित्यपुष्पितपादपाम् ॥३०॥ [२४
शीघ्रस्रोतां समागम्य शिवतीर्थमकर्दमाम् ।^(०)
- ३१] असिञ्चन्नुदकं सर्वे पितुरेतेद्भवत्विति ॥ ३१ ॥ [२५
परिवृष्ट रघुश्रेष्ठो जलपूरितमञ्जलिम् ।
- ३२] दिशं याम्प्यामभिमुखो रुदन् वचनमब्रवीत् ॥३२॥ [१६
एतत् ते नृपशार्दूल विमलं दिव्यमक्षयम् ।
- ३३] पितृलोकेषु पानीं महत्समुपतिष्ठतु^५ ॥ ३३ ॥ [२७

ततो मन्दाकिनीतीरे शुचौ देशे^१ नराधिपः ।

३४] पितुर्न्यवर्त्तयन्^२ श्रीमान् निवापं भ्रातृभिः सह ॥३४॥ [३८

ऐङ्गुदं बदरोन्मिश्रं पिण्याकं दर्भसंस्तरे ।

३५] न्युप्य रामः सुदुःखार्था इदं वचनमब्रवीत् ॥३५॥ [२६

इदं भुञ्च्य महाराज पिब तोयं च निर्मलम् ।

३६] यदन्नः पुरुषो राजस्तदन्नास्तस्य देवताः ॥३६॥ [३०

ततस्तेनैव मार्गेण प्रत्युत्तीर्य नराधिपः ।

३७] आरुरोह नरव्याघ्रो रम्यसानुं महीधरम् ॥३७॥ [३१

ततः पर्णकुटीद्वारमागत्य जगतीपतिः ।

३८] प्रतिजग्राह पाणिभ्यामुभौ भरतलक्ष्मणौ ॥३८॥ [३२

गृहीत्वा तौ रुरोदारतो^३ राघवः सह सीतया ।

६५] तेषां तु रुदतां गब्दं श्रुत्वा भरतसैनिकाः ॥३६॥ [३६५

अ_वंश्चैव रामेण सङ्गतो भरतोऽधुना ।

४१] तेषामेष महान् शब्दः शोचतां पितरं मृतम् ॥४०॥ [३५

अथ वासं परित्यज्य सर्वे तेऽभिमुखाः स्वयम् ।

४२] अप्येकतः समाजगमुर्^४थावत्संप्रधाविताः ॥४१॥ [३६

अचिरप्रोषितं रामं चिरविप्रोषितं यथा ।

४३] द्रष्टुकाभो जनः सर्वो जगाम सहसा ऽऽश्रमम् ॥४२॥ [३८

भ्रातॄणां त्वरितास्ते तु द्रष्टुकामाः समागमम् ।

४४] ययुर्बहुविधैर्यानैस्त्बरा ऽऽविष्टाः समाकुलाः ॥४३॥ [३६

अश्वैरन्ये गजैरन्ये रथैरन्ये स्वलङ्कृतैः ।

४५] सुकुमारास्तथैवान्ये^५ पद्मयामेव मदद्भुवुः ॥४४॥ [३७

१ ब-ख ख

७ ल-भिर्बर्तयत् ।

२ कौ-रुरोदन्तौ ।

३ ल-मुकसारास्तथैवान्ये ।

सा भूमिर्बहुभिर्यानैः खुरनेमिसमाहता ।

४६] मुमोच तुमुलं शब्दं घौरिवाभ्रसमागमे ॥४५॥ [४०

तेन वित्रासिता नागाः करेणुपरिवारिताः^{१०} ।

४७] नासहंस्तुमुलं शब्दं जग्मुरन्यद्वनं च ते ॥४६॥ [४१

वराहमृगसिंहाश्च महिषाश्च वनेचराः ।

४८] व्याघ्रगोमायुसर्पाश्च वित्रेसुर्धूपैः सह ॥४७॥ [४२

रथाङ्गशाङ्गदात्यूहहंसकारणहवसवा ।

४९] तथा कोकिलसङ्घाश्च विसंन्ना भेजिरे दिशः ॥४८॥ [४३

तेन शब्देन वित्रस्तैराकाशं पत्तिभिः३तम् ।

५०] मनुष्यैरावृता भूमिरुभयं प्रबभौ तदा ॥४९॥ [४४

तान् नरान् बाष्पसम्पूर्णान् समीक्ष्य च मुदुःखितान् ।

५१] पर्यपृच्छत धर्मज्ञः पितृवन् मातृवच्च सः ॥५०॥ [४७

स तत्र कांश्चित् परिषस्वजे नरान्

नराश्च तं के विदथाम्यवादयन् ।^(०)

चकार सर्वैरपि^{११} संविदं तदा

५२] यथाऽर्हमासाद्य तदा नृपात्मजः ॥ ५३ ॥ [४८

तथा तु तेषां रुदतां महात्मनां

दिवं च त्वं चानुननाद निस्वपः ।

गिरेर्गुहाश्चैव दिशश्च नादयन्

५३] मृदङ्गघोषप्रतिमः स शुश्रुवे ॥ ॥ ५४ ॥ [४९

इत्थार्थे रामायणे ऽप्योध्याकाण्डे उदकप्रदानं

नाम सर्गः ॥ [११६] ॥

[वं-११२]=[सप्तदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१०४]

वसिष्ठः पुरतः कृत्वा दारा दशरथस्य सः ।

१] अभिचक्राम तं देशं रामदर्शनकर्त्तया ॥१॥ [१

राजपत्न्यस्तु गच्छन्त्यो^१ नदीं मन्दाकिनीं प्रति ।

२] ददृशुस्तास्तदा सर्वा रामं लक्ष्मणसेवितम् ॥२॥ [२

कौसल्या वाष्पपूर्णेन मुखेन परिशुष्यता ।

३] सुमित्रामब्रवीद् दीनां याश्चान्या राजयोषितः ॥३॥ [३

इदं तेषामनाथानां शुभमक्लिष्टकर्मणाम् ।

४] वने प्राक् केवलं तीर्थं ये ते निर्विषयीकृताः ॥४॥ [४

इतः सुमित्रे रामार्थं जलमादाय वीर्यवान् ।

५] सदा गच्छति सांमित्रिर्मम पुत्रस्य कारणात् ॥५॥ [५

दुष्करं कुरुते पुत्रः सुमित्रे तत्र धार्मिकः ।

६] शुश्रूषते तु धर्मेण ज्येष्ठं यो भ्रातरं वने ॥६॥ [N

स्त्रीमधानेन यः पित्रः त्यक्तो निरपराधवान् ।

७] भ्रष्टश्च सानुजो राज्यात् सीतया भार्यया सह^२ ॥७॥

एवं विलपमाना सा कौसल्या शोकविह्वला^३ ।

८] ददर्शोद्गदपिण्याकैर्निवापं पुलिने कृतम् ॥८॥ [N

दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु सपुण्ड्रेषु^४ निधापितम् ।

९] उपहारं पितुर्दत्तं भर्तुरायतलोचना ॥९॥ [९

१ व-गच्छन्त्यः ।

२ कुरुते ।

३ व, ल-ज्येष्ठं ।

४ व, ल म-सह भार्यया ।

५ व ल, म-शोककर्षिता ।

६ ल-सुपुण्ड्रेषु ।

- सा तमिद्गुदपिण्याकं दृष्ट्वा द्विगुणदुःखिता । [N
 १०] उवाच देवी कौसल्या सर्वा दशरथस्त्रियः ॥१०॥ [६
 इदमिच्छाकुनाथस्य राघवेण महात्मना ।
 ११] पितुरिद्गुदपिण्याकं न्युप्तं पश्यत यादृशम् ॥११॥ [१०
 तस्य देवसमस्येदं पार्थिवस्य महात्मनः ।
 १२] नैतदौपायिकं मन्ये भुक्तभोगस्य भोजनम् ॥१२॥ [११
 चतुरन्ता महीं भुक्त्वा महेन्द्रसदृशो बिभुः ।
 १३] कथमिद्गुदपिण्याकं स भुङ्क्ते वसुधाधिपः ॥१३॥ [१२
 अतो दुःखतरं लोके न किञ्चित् प्रतिभाति मे ।
 १४] यत्र रामः पितुर्दत्ते तापसाद्यन्नमीदृशम् ॥१४॥ [१३
 रामेणेद्गुदपिण्याकं पितुर्दत्तं समीक्ष्य वै ।
 १५] कथं ममेदं हृदयं विशीर्येन्न सहस्रधा ॥१५॥ [१४
 श्रुतिश्च खन्वियं सत्या सुमित्रे प्रतिभाति मे ।
 N] यदन्नः पुरुषो हि स्यात् तदन्नास्तस्य देवताः ॥१६॥ [१५
 N] एवमार्ता सपत्नीभिस्ताभिराश्वासिता तदा । [१६
 १६पू] सा जगामाश्रमपदं कौसल्या यत्र राघवः ॥१७॥ [N
 १६इ] ततस्तास्त्वरितं गत्वा सर्वा नृपतियोषितः । [N
 १७पू] अपश्यन्नाश्रमे रामं स्वर्गाच्च्युतमिवामरम् ॥१८॥ [१६उ
 १७उ] सम्भोगैः सम्परित्यक्तं रामं दृष्ट्वैव मातरः ।
 १८पू] आर्ता ह्यमुचुरभूणि सस्वराः शोककर्षिताः ॥१८॥ [१७

- १८] तासां रामः समुत्थाय जग्राह चरणाञ्छुभान् ।
 १९] मातृणां पुरुषन्याग्रः सर्वासामनुपूर्वशः ॥२०॥ [१८
 १९] पाणिभिः सुखसंस्पर्शैर्भद्रकुलितलैः शुभैः । [१९
 २०] मूर्धन्याघ्राय ता रामं रुरुदुः पार्थिवस्त्रियः ॥२१॥ [N
 २०] सौमित्रिरपि ताः सर्वाः समातः शोककर्षिताः ।
 २१] अभ्यवादयत प्रहो दीनो रामादनन्तरम् । २२॥ [२०
 २१] आशीर्वादैश्च रामस्य लक्ष्मणस्य तथैव च ।
 २२] देशकालानुरूपैश्च मातृभिः सम्प्रयोजितैः ॥२३॥ [N
 २२] यथा रामे तथा तस्मिन् सर्वा ववृतिरे स्त्रियः ।
 २३] वृत्तिं दशरथाज्जाते लक्ष्मणे शुभलक्षणे ॥२४॥ [२१
 २३] सीताऽपि रुदती तासां पादान् स्पृष्ट्वा सुदुःखिता ।
 २४] श्वश्रूणामश्रुपूर्णाक्षी सा बभूवाग्रतः स्थिता ॥२५॥ [२२
 २४] तां परिष्वज्य कौसल्या माता दुहितरं यथा ।
 २५] वनवासकुशां दीनामिदं वचनमब्रवीत् ॥२६॥ [२३
 २५] विदेहराजस्य सुता स्नुषा दशरथस्य च ।
 २६] रामपत्नी कथं दुर्गे वनं प्राप्ताऽसि जानकि ॥२७॥ [२६
 २७] पद्ममातपसन्तप्तं परिक्रिन्ममिवोत्पलम् । [२५
 काञ्चनं रजसा ध्वस्तं दिवा चन्द्रमिवाप्रभम् [२५
 २७] सुखं ते मेद्य मां शोको दहत्यग्निरिवाश्रयम् ॥२८॥ [२६
 भृशं तवेह वैदेहि न्यसनारणिसंभवः । [२६

८ व, ल, म तथा ।

६ कै-तं ।

○ व, ल, म-नास्ति ।

- २८] दहत्यग्निर्मुक्तं कान्तं निस्तोयमिव पङ्कजम् ॥२६॥ [N
 ब्रुवन्त्यामेवमार्तायां जनन्यां भरताग्रजः ।
- २९] पादाबासाद्य जग्राह वसिष्ठस्य महात्मनः । ३०॥ [२७
 पुरोहितस्याग्निसमस्य तस्य
 बृहस्पतेन्द्रि इवामराधिपः ।
 निपीडय पादौ स समिद्धतेजसः
- ३०] सहैव तेनोपविदेश राघवः ॥३१॥ [२८
 तत्रोपविष्टेन च तेन मन्त्रिभिः
 पुरप्रधानैश्च सहैव सैनिकैः ।
 गुह्येन धर्मद्वयमेन धर्मवित्
- ३१] सहोपविष्टः समुपेत्य राघवः ॥३२॥ [२९
 ततोपविष्टस्तु^१ तथैव वीरं
 ततः स धर्मेण सहैव राघवम् ।
 भ्रिया ज्वलन्तं भरतः कृताञ्जलिः
- N] यथा महेन्द्रः प्रयतः प्रजापतिम् ॥३३॥ [३०
 किमेष वाक्यं भरतोऽथ राघवं
 प्रणम्य सत्कृत्य च साधु वक्ष्यति ।
 इतीव तस्याथ जनस्य तत्त्वतो
 बभूव कांतूहलासुखमं तदा ॥३४॥ [३१

स राघवः सत्यधृतिश्च लक्ष्मणो

महानुभावो^{११} भरतश्च धर्मवित् ।

दृताः सुहृद्भिः प्रविरेजुरोजसा

३३] यथा सदस्यैर्ज्वलितान्नयोऽग्नयः ॥३५॥ [३२

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे मातृसमागमो

नाम सर्गः ॥११७॥



११ कै-(पूर्वं वृद्धितं पद्मात् 'शत्रुघ्नसहितो' इति पदेन विभिन्नमत्र
परित्यक्तम्) ।

[वं-११३]=[अष्टादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१०६]

- अथोपबिष्टं ध्यायन्तं रामं प्रकृतिसंसदि । [N
 १] उवाच भरतश्चित्रं धार्मिको धार्मिकं वचः ॥१॥ [२पू
 प्रोषिते मयि यन्मात्रो पापं मत्कारणं कृतम् ।
 २] चुद्रया न तदिष्टं मे प्रसीदतु भवान् मम ॥२॥ [८
 धर्मबन्धानुबद्धोऽस्मि येन स्वां नेह मातरम् ।
 ३] हन्मि तीव्रेण दण्डेन दण्डार्हामपकारिणीम् ॥३॥ [६
 कथं दशरथाज्जातः शुद्धाभिजनकर्मवान् ।
 ४] अहं भ्रातृव्यवद् भ्रातुः कुर्यां कर्म विगर्हितम् ॥४॥ [१०
 गुरुः क्रियावान् वृद्धश्च राजा प्रेतः पितेति च ।
 ५] तातं तेन न गर्हामि दैवतं च परं मम ॥५॥ [११
 धर्मार्थाभ्यां हि कां हीनमीदृशं कर्म गर्हितम् ।
 ६] स्त्रियः मियचिकीर्षार्थं कुर्याद् धमञ्ज धर्मवित् ॥६॥ [१२
 अन्तकाले हि भूतानि मुह्यन्तीति परिश्रुतम् ।
 ७] राज्ञा योवाहिता' लोके प्रत्यक्षा सा श्रुतिः कृता ॥७॥ [१३
 तस्यैतं मतिसम्प्लोहमन्तकालसमुद्भवम् । [N
 ८] तातस्य समतिक्रान्तं प्रत्याहर्तुं त्वमर्हसि ॥८॥ [१४३
 पितुर्हि समतिक्रान्तं यः साधु कुरुते सुतः ।
 ९] तदपत्यमिति प्रोक्तमनपत्यमतोऽन्यथा ॥९॥ [१५
 तदपत्यं भवानस्तु मास्म भू[द्] दुष्कृतं पितुः । [१६पू
 १०] अनुवर्त्तस्व काकुत्स्थ मार्गं साधुनिषेवितम् ॥१०॥ [N

- कैकेयीं मातरं मां च सुहृदो बान्धवाश्च नः ।
 ११] पौरजानपदान भृत्यास्त्रायस्व सकलानिमान् ॥११॥ [१७
 क चारण्यं क च क्षत्रं क जटा परिपालनम् ।
 १२] इदं शाठ्यात्मकं कर्म न भवान् कर्तुमर्हति ॥१२॥ [१८
 अथ क्लेशजमेव त्वं धर्मं चरितुमिच्छसि ।
 १३] संगृह्य चतुरो वर्णास्तेन क्लेशमवाप्नुहि ॥१३॥ [२१
 चतुर्णांमाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमाश्रमम् ।
 १४] आहुर्वन्द्यं हि धर्मज्ञास्तं कथं त्यक्तुमिच्छसि ॥१४॥ [२२
 त्वत्तश्च बुद्ध्या ज्ञानेन जन्मनाऽप्यवरो ह्यहम् ।
 १५] स कथं पालयिष्यामि मेदिनीं त्वयि तिष्ठति १० ॥१५॥ [२३
 हीनबुद्धिबलो बालो हीनज्ञानस्तथैव च ।
 १६] भवन्तं च विना भूप न वर्त्तयितुमुत्सहे ॥१६॥ [२४
 इदं निरिवलमव्यग्रं पित्र्यं राज्यमकण्ठकम् ११ ।
 १७] अनुशाधि स्वधर्मेण धर्मज्ञ सह बन्धुभिः ॥१७॥ [२५
 इहैव त्वाभिषिञ्चन्तु सर्वाः प्रकृतियस्त्विमाः ।
 १८] ऋत्विजः सवसिष्ठाश्च ऋषयो मन्त्रकोविदाः ॥१८॥ [२६
 अभिषिक्तस्त्वमस्माभिरयोध्यागमनं कुरु । .

३ व-क्षत्र ।

८ व, ल. म ०मुत्तमं ।

४ व, ल, म-कजटाः क च पालनम्

९ व, ल म-धर्म्यं ।

५ व, म साध्यात्मकं ।

१० व, ल म तिष्ठति । ?

६ कर्तुं ।

११ ल, म-०मकण्ठकम् ।

७ व-वदि ।

- १६] निक्षिप्य तरसा लोकान् मरुद्भिरिव वासवः ॥१६॥ [N
 ऋणानि ग्रीण्यपाकुर्वन् दुर्हृदः साधु कर्षयन्^{१२} ।
- २०] सुहृदः पूरयन् कामैर्वसंस्तत्र प्रशाधि नः ॥२०॥ [२८
 अथ वै^{१३} मुदिताः सन्तु सुहृदस्तेऽभिषेचने ।
- २१] अथ भीताः पलायन्तां दुर्हृदस्ते दिशो^{१४} दश ॥२१॥ [२६
 किन्विषं मम मातुश्च प्रमार्जं पुरुषर्षभ ।
- २२] अथ तत्र भर्वास्तं च पितरं रत्न किन्विषात् ॥२२॥ [३०
 २३] धर्मो ह्येष परः प्रोक्तः क्षत्रियस्याभिषेचनम् ।
- N] यो धर्मेण महाभ्रातृ प्रजाश्च परिपालयेत् ॥२३॥ [N
 शिरसा त्वाऽभियाचेऽहं^{१५} कुरुष्व कर्तुणां मयि ।
- २४] बान्धवेषु च सर्वेषु भूतेष्विव महेश्वरः ॥२४॥ [३१
 अथ मां पृष्ठतः वृत्वा वनमेव^{१६} भवानितः ।
- २५] गमिष्यति गमिष्यामि भवता सार्द्धमप्यहम् ॥२५॥ [३२
 तमृत्विजो^{१७} मागधसूतबन्दिनः

सुतप्रिया वाष्पकलाश्च मातरः ।

तथा सुवर्तं भरतं प्रतुष्टुवुः

- २६] प्रणम्य रामं च ययाचिरे सह ॥२६॥ [३५

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतवाक्यं

नाम सर्गः ॥११८॥

१२ व-कर्षयन् ।

१३ व-अथैव ।

१४ व. क, म-०ऽभिषेचने ।

१५ व-त्वमियाचेऽहं ।

१६ व-वनवासे ।

१७ ल तस्यत्विजो ।

[वं-११४]=[एकानविंशत्यधिक-

शततमः सर्गः]=[दा-१०५, १०६]

स तथा भरतेनोक्तो रामो धर्मपथे स्थितः ।

१] इदं वचनमङ्गीवं मध्ये परिषदोऽब्रवीत् ॥१॥ [N

नात्मनः कामकारोऽस्ति पुरुषोऽयमनीश्वरः ।

२] इतश्चेतश्चरन्तं तं कृतान्तः परिकर्षति ॥२॥ [१५

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।

३] संयोगा विमयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥३॥ [१६

यथा फलानां पक्कानां नान्यत्र पतनाद् भयम् ।

४] तथा नराणां जातानां नान्यत्र मरणाद् भयम् ॥४॥ [१७

यथाऽऽगारं दृढं स्थूलं शीर्षं भृत्वाऽवसीदति ।

५] तथैव सीदन्ति नरा मृत्युपाशवशात्कृताः ॥५॥ [१८

सहैव मृत्युर्ब्रजति सह मृत्युश्च तिष्ठति ।

६] गत्वा सुदूरमध्वानं सह मृत्युर्निवर्त्तते ॥६॥ [२२

अहोरात्राणि वर्त्तन्ते सर्वेषां प्राणिनामिह ।

७] आयंषि कर्षयन्त्याशु ग्रीष्मे जलमिवांशवः^१ ।७॥ [२०

आत्मानमनुशोच त्वं किमन्यमनुशोचसि^२ ।

८] आयुस्ते क्षीयते पश्य स्थितस्य चरतस्तथा^३ ॥८॥ [२१

गात्रेषु मलयः प्राप्ताः श्वेताश्चैव शिरोरुहाः ।

९] जरया पुरुषः कीर्णः किं हित्वेह मुक्ती भवेत् ॥९॥ [२३

इमे चोदित आदित्ये तथा चास्तमिते त्विह ।

१०] आत्मनो नावबुध्यन्ते पुरुषा जीवितक्षयम् ॥१०॥ [२४

१ व-०मिवांशवः ।

३ व, ल, म--अचरतस्तथा ।

२ व, ल, म--०बुद्ध्योचसि ।

हृष्यत्युरुफलं दृष्ट्वा नवं नवमिवागतम् ।

- ११] ऋतूर्ना^४ परिवर्त्तेन^५ प्राणिर्ना प्राणसंज्ञयः^६ ॥११॥ [२५
यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ ।
- १२] समेत्य च व्यपेयातां स्थित्वा किञ्चित् क्षणान्तरम् ॥१२॥ [२६
एवं भार्याश्च पुत्राश्च सुहृदश्च वसूनि च ।
- १३] समेत्य^७ व्यबधीयन्ते ध्रुवं तेषां परामवः ॥१३॥ [२७
न कश्चिदन्यथाभावं प्राणी समतिवर्त्तते ।
- १४] तेन नास्तीह सामर्थ्यं^८ प्रेतस्य ह्यनुशोचतः ॥१४॥ [२८
यथा हि सार्धं^९ गच्छन्तं ह्रूयात् कश्चित् पथि स्थितः ।
- १५] अहमप्यनुयास्यामि पृष्ठतो भवतामिति ॥१५॥ [२९
यः^{१०} पूर्वैः प्राकृतो मार्गः पितृपैतामहो ध्रुवः ।
- १६] तमापन्नः कथं शोचेद् यस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥१६॥ [३०
पयसः^{११} सवमानस्य स्रोतसो वाऽतिवर्त्तिनः ।
- १७] आत्मा धर्मेऽभियोक्तव्यो धर्मज्ञेन विपश्चिता ॥१७॥ [३१
धर्मात्मानः शुभैर्दृष्टैः क्रतुभिश्चाप्तदक्षिणैः । [३२पृ
- १८] धर्मात्मानो गताः स्वर्गं पितृमातृनिषेवितम् ॥१८॥ [N
मृत्यानां भरणं कृत्वा मजानां परिपालनम् ।
- १९] अर्पदानं^{१२} च साधुभ्यः पिता नस्त्रिदिवं गतः ॥१९॥ [N
इष्ट्वा यज्ञैर्बहुविधैर्भोगांश्चावाप्य केवलम् ।
- २०] उत्तमं वपुरासाय स्वर्गतो जगतीपतिः ॥२०॥ [N
सञ्जीर्णं^{१३} मानुषं देहं परित्यज्य पिता मम ।

४ ऋ - ऋतवः ।

५ व, क, म - परिवर्त्तन्ते ।

६ ल - प्राणसंज्ञये ।

७ ल - लाजीत्य ।

८ व, क, म - वैः ।

९ व, क, म - वयसः ।

१० व - अर्पदानं ।

- २१] दैवीं गतिमनुमासो दिव्यलोकविहारिणाम् ॥२१॥ [३३
तत्र नैवंविधः कश्चित् प्राज्ञः शोचितुमर्हति ।
- २२] त्वद्विधो मद्विधो वाऽपि श्रुतिमान् मतिमान् नरः ॥२२॥ [३४
एते बहुविधाः शोका विलापो रुदितं तथा ।
- २३] विसर्जनीया धीरेण सर्वावस्थासु धीमता ॥२३॥ [३५
असंशयं ततः शोकं मा शुचो वसतां पुरीम् ।
- २४] यथा पित्रा नियुक्तोऽसि तथा कुरु नरर्षभ ॥२४॥ [३६
यत्राहमपि तेनैव नियुक्तः पुत्रकर्मणि ।
- २५] तदेवाहं करिष्यामि पितुरार्यस्य शासनम् ॥२५॥ [३७
न मया शासनं तस्य शक्यं त्यक्तुमरिन्दम ।
- २६] नन्वयं सहितो ऽमात्यैर्दैवतं परमं पिता ० ॥२६॥ [३८
स एवमुक्तो भरतो रामं वचनमब्रवीत् ।
- २७] कियन्तस्तादृशा लोके यादृशोयमरिन्दम । २७॥ [३९
न त्वां प्रव्यथयेद्द दुःखं सुखं वाऽपि प्रहर्षयेत् ।
- २८] संमतरचासि वृद्धानां शक्रो नाकौकसामिव ॥२८॥ [४०
यथा मृते तथा जीवे यथाऽसति तथा सति । [१०६सर्गः]
- २९] कस्यैव बुद्धिलाभः स्याद् यथा ते मनुजाधिप ॥२९॥ [४१
३००] एवं च व्यसनं प्राप्य न विपत्तुं त्वमर्हसि । [५३
३२०] आसाद्य हि निवर्षन्ते सन्तापास्त्वामरिन्दम ॥३०॥ [४२
३२३] अस्माकमिह काकुत्स्थ परशुर्षीर पातितः ।
३३०] अहं तु रहितो धीर्मास्त्वया दशरथेन च ॥३१॥ [४३
३३३] न जीविष्यामि दुःखार्तो रुरुर्दिग्घहतो यथा ॥३२॥ [४४

वसन्तमार्यं सह लक्ष्मणेन

सभार्यमायस्तमनाः समीक्ष्य ।

प्राणान् न जह्यां विजने यथाऽहं

३४] तथा कुरु त्वं पृथिवीं प्रशाधि ॥३३॥ [N

तथा तु रामो भरतेन तेन

प्रसाद्यमानः शिरसा महीपतिः ।

मतिं न चक्रे गमनाय सत्ववान् ।

३५] स्थितः पितुस्तद्वचनं समीक्ष्य ॥३४॥ [३३

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामभरतसंवादो

नाम मर्गः ॥ [११०] ॥



[वं-११६]=[विंशत्याधिक-ज्ञानतमः सर्गः]=[दा-१०७]

पुनरेवं ऋषाणां तु भ्रातरं भरताग्रजः ।

१] उवाच रामो धर्मात्मा भरतं धर्मवत्सलम् ॥१॥ [१

उपपन्नमिदं वीर त्वयि सर्वं नरर्षभ ।

२] यस्त्वं जातो दशरथात् कैकेयानन्दवर्धनः ॥२॥ [२

३पू] पुरा तात महाराजो मातरं ते समुद्रहन् । [३पू

देवासुरे च संग्रामे जनन्यास्तव पार्थिवः ॥३॥

४] महष्टः प्रददौ राजा वरौ द्वौ याचितः प्रभुः ॥४॥ [४

ततः सा तौ प्रतिस्मृत्य तव माता यशस्विनी ।

५] अयाचत नृपं गत्वा द्वौ वरौ वरवर्णिनी ॥५॥ [५

तव राज्यं नरव्याघ्र मम प्रब्राजनं तथा ।

६] तत्रै राजा तदा तस्या नियुक्तः प्रददौ स्वयम् ॥६॥ [६

तेन पित्रा ममाप्यत्र नियागः पुरुषर्षभ ।

७] चतुर्देश बने वासस्तव वर्षाणि भूतले ॥७॥ [७

सोऽहं वनमिदं दुर्गं निर्जनं लक्ष्मणान्वितः ।

८] ससीतभागतो वीर सत्यवाक्ये स्थितः पितु ॥८॥ [८

भवानपि तथा क्षिप्रं पितरं सत्यवादिनम् ।

९] कर्तुमर्हति राजेन्द्रं शाधि राज्यमकण्टकम् ॥९॥ [९

शृण्वान्मोक्षय राजानं कैकेयानन्दवर्धन' ।

१०] पितरं प्राहि धर्मज्ञ मातरं चापि पालय ॥१०॥ [१०

भूयते च पुरा तात श्रुतिर्गीता तपस्विभिः ।

११] गयस्य यजमानस्य यजतः स्वपितृनपि ॥११॥ [११

पुंनाम्नो नरकाह यस्मात् पितरं श्रायते मुतः ।

१२] तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंश्रुवा ॥१२॥ [१२

इष्टव्या बहवः पुत्रा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।

१३] तेषां हि समवेतानां यद्येको गुणवान् भवेत् ॥१३॥ [१३

इत्पूचुर्ऋषय सर्वे प्रतीता रघुनन्दन ।

१४] तस्मात् त्राहि नरश्रेष्ठ पितरं नरकात् प्रभो ॥१४॥ [१४

अयोध्यां गच्छ भरत प्रकृतीरजुपालय ।

१५] शत्रुघ्नसहितो वीर सह सर्वैर्द्विजातिभिः ॥१५॥ [१५

प्रवेक्ष्यामि महाऽरण्यमहं च मुनिभिः सह ।

१६] आभ्यां च सहितो राजन् वैदेह्या लक्ष्मणेन च ॥१६॥ [१६

त्वं राजा भरत भवाद्य नागराणां

वन्यानामहमपि वने मृगाणाम् ।

गच्छ त्वं पुरुषवराद्य संप्रहृष्टः

१७] शान्तात्मा त्वमहमपि दण्डकान् प्रवेक्ष्ये ॥१७॥ [१७

द्यायां ते दिनकरभाः प्रचोद्यमानं

सञ्चरं भरत करोतु मूढर्षिं शुभ्रम् ।

एतेषामहमपि काननद्रुमाणां

१८] द्यायां तामतिशिशिरां समाभ्रयिष्ये ॥१८॥ [१८

शत्रुघ्नः कुशलतरोऽस्ति ते सहायः

सौमित्रिर्मम विहित. स्वयं विधात्रा ।

चत्वारस्तनयवरा वयं नरेन्द्र

१९] सत्यं तं वत ऊरवाम मा विषीद ॥१९॥ [१९

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामवाक्यं

नाम सर्गः ॥ [१२०] ॥

२ व, म—०वर्षनः ।

५ व ल, म— महमपि वै वने ।

३ ल—श्रुतिगीता ।

६ व, ल, म—शिरसा ।

४ ल स्वतः ।

७ व, म—०स्तु ।

[वं-११६]=[एकविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-१८८]

- आश्वासयन्तं भरतं जाबालिर्ब्राह्मणोत्तमः ।
 २] उवाच रामं धर्मज्ञं धर्मोपेतमिदं वचः ॥१॥ [१
 साधु राघव मा ते भूद् बुद्धिरेवं निरर्थका ।
 ३] नरस्य प्राकृतस्येव धीरबुद्धेस्तपस्विनः ॥२॥ [२
 कः कस्य पुरुषो बन्धुः किं कार्यं केन कस्य चित् ।
 १२] यद्येको जायते जन्तुरेक एव विनश्यति ॥३॥ [३
 तस्मान्माता पिता चैव प्रतिश्रयसमाबुधौ ।
 १३] उत्तमस्तु स विज्ञेयो योऽत्र जानानि वै नरः ॥४॥ [४
 यथा ग्रामान्तरं गच्छन् नरः कस्मादपि क्वचित् ।
 १४] उत्सृज्य च तमावासं प्रतिष्ठेतापरेऽहनि ॥५॥ [५
 एवमेव मनुष्याणां पिता माता गृहं बभूव ।
 १५] अबाममात्रं काकुत्स्थ तत्र सज्जति वै नरः ॥६॥ [६
 निरर्थं जनमुत्सृज्य स नार्हसि नरोत्तम ।
 १६] आसितुं विषमं दुर्गं विपिनं बहुकण्टकम् ॥७॥ [७
 समृद्धायामयोध्यायामात्मानमभिषेचय ।
 १७] एकत्रेणीधरा हि त्वां नगरी संप्रतीक्षते ॥८॥ [८
 राजभोगाननुभवन् महात्मन् पार्थिवो भव ।
 १८] विहर त्वमयोध्यायां यथा शक्रस्त्रिविष्टपे ॥९॥ [९
 न ते कश्चिद्द दशरथस्त्वं च तस्य न कश्चन ।
 १९] अन्यो राजा त्वमप्यन्यस्तस्मात् कुरु यदुच्यसे ॥१०॥ [१०
 गतः स नृपतिस्तत्र गन्तव्यं तेन यत्र वै ।
 २१] महत्तिरेषा भूतानां त्वं तु मिथ्याऽनुतप्यसे ॥११॥ [११
 N] परलोकगता ये ये तांस्ताञ् शोचति को नरः ।

- २२७] ते हि दुःखं परिम्राप्य विनाशं प्रेत्य मेजिरे ॥१२॥ [१३
 अष्टका ऽपि ततः कार्या इत्येवं प्राकृतो जनः ।
- २३] अन्नस्योपद्रवं पश्य मृतो हि किमशिष्यते ॥१३॥ [१४
 यदि भुक्तमिहान्येन देहमन्यस्य गच्छति ।
- २४] दद्यात् प्रवसतः श्राद्धं नास्य पाथेयमाहरेत् ॥१४॥ [१५
 दानसत्त्वपरा ह्येते ग्रन्था मेधाविभिः कृताः ।
- २५] यजस्व देहि दीक्षस्व तपस्तप्यस्व सन्त्यज ॥१५॥ [१६
 अनास्तिकपरामेवं कुरु बुद्धिं महापते ।
- २६] भृत्यं यत्तदातिष्ठ परोक्षं पृष्ठतः कुरु ॥१६॥ [१७
 अमृष्यमाणाः पुनरुग्रतेजा
 निशम्य^२ तं नास्तिकवाक्यमुक्तम् ।
 अथाब्रवीत् नृपतेस्तनूजो
- २] विगर्हमाणो वचनानि तस्य ॥१७॥ [१८#
 त्वत्तो जनाः पूर्वतराः परे च
 बहूनि कर्माणि शुभानि कृत्वा ।
 जित्वा ह्यदोषं परमं च लोकं
- ३] कस्मात् परत्रास्ति हुतं कृतं च ॥१८॥ [१९†
 निन्दाम्यहं कर्म पितुः कथं नु
 यस्तामगृह्णाद् भृशमर्थबुद्धिम् ।
 बुद्ध्या तयैवंविधया चरन्त-
- ४] मनास्तिकं धर्मपथाव्यपेतम् ॥१९॥ [२०†

२ ल तथा ।

ब-पितुः ।

३ ब-सेवाविधिः ।

४ ब-०तप्यंम् ।

५ ल-दानसत्त्वपरामेवं ।

६ ब, ल, म-भिरस्य ।

* दाक्षिणात्ये पाठे मबोमर
 शतमे सर्गे दृश्यम् ।

७ ब-तयैवविधया ।

+ दाक्षिणात्ये पाठे ११० सर्गे
 दृश्यम् ।

[त्रं-११६]=[त्रयोविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११०]

क्रुद्धमात्राय रामं तु वसिष्ठः प्रत्यभाषत ।

१] जाबालिरपि^१ जानाति लोकस्यास्य गर्वा^२ गतिम्^३ ॥१॥ [१

निवर्त्तयितुकामस्त्वापेतद्वाक्यमयाब्रवीद् ।

२] इमां लोकसमुत्पत्तिं लोकनाथ निबोध मे ॥२॥ [२

पूर्वं सलिलमेवासीत् पृथिवी यत्र निर्मित्वा ।

३] ततः समभवद् ब्रह्मा स्वयंभू र्वरदः प्रभुः ॥३॥ [३

विष्णुर्वराहरूपेण उज्जहार^४ वसुन्धराम्^५ ।

४] असृजच्च^६ जगत् सर्वं पुत्रैः सह महर्षिभिः ॥४॥ [४

आकाशमभवो ब्रह्मा शारवतोऽथाक्षयो^७ ऽम्बकः ।

५] तस्मान्मरीचिः संजज्ञे मरीचेः करयपः सुतः ॥५॥ [५

ससर्जागिरसं ब्रह्मा प्रचेतसमवाङ्मिराः ।

N] मनुः प्रचेतसः पुत्रः इच्छाकुस्तु मनो [ः] सुतः ॥६॥ [६

यस्यैयं प्रथमं^८ वृत्ता समृद्धा^९ मनुना गरी ।

७] स इच्छाकुस्मोध्यायां राजा ऽभूद् विधिपूर्वकम् ॥७॥ [७

इच्छाकोस्तु सुतः भीमान् कुक्षिरित्यतिविभुतः^{१०} ।

८] कुक्षेरप्यात्मजो वीरो विदुक्षिः समपद्यत ॥८॥ [८

विदुक्षेस्तु महातेजा बाणः पुत्रः^{११} प्रतापवान् ।

९] अनरण्यन्तु पुत्रोऽभूद् बाणस्यामिततेजसः ॥९॥ [९

१-क, म-जाबालिरमि ।

२-ल, म-गतागतिम् ।

३ ल, म-तज्जहार ।

४ ल, म-वसुन्धरम् ।

५ व-असृजच्च ।

६ व-शाबतंवाङ्मयो० ।

७ ल, म-प्रथमा ।

८ ल-सवृत्ता ।

९ व, ल, म-कुक्षिरित्यति०

१० के-वाचपुत्रः ।

नाऽजाहृष्टिरभूत्स्मिन्न दुर्मित्तं कथञ्चन ।

- १०] अनरण्ये महाभागे तस्करो वै न कञ्चन ॥१०॥ [१०
 अनरण्यान्महातेजाः पुत्र पृथुरजायत ।
- ११] तस्मात् पृथोर्महाभागात् त्रिशङ्कुरूप(द)पद्यत ॥११॥ [११
 स सत्यवचनाद् धीर. सशरीरो दिवं गतः ।
- १२] त्रिशङ्कोरभवत् स्रुर्धुन्धुमारो महायशाः ॥१२॥ [१२
 धुन्धुमारान्महाबाहुर्धुवनारवो ऽभवत् सुतः ।
- १३] धुवनारवसुतश्चापि मान्धाता सत्यसङ्गरः ॥१३॥ [१३
 मान्धातुस्तु महातेजा. सुसन्धिरुदपद्यत ।
- १४] सुसन्धेरपि पुत्रौ द्वौ ध्रुवसन्धिः प्रसेनजित् ॥१४॥ [१४
 वगस्वी ध्रुवसन्धेस्तु भरतो नाम धर्मवित् ।
- १५] भरतात्तु महाबाहुरसितः समजायत ॥१५॥ [१५
 तस्यान्ते प्रतिराजान उदपद्यन्त शत्रवः ।
- १६] हैहयास्तालजंघाश्च सर्वे^{११} च शशबिन्दवः^{१२} ॥१६॥ [१६
 तांस्तु स प्रतियुध्यन् वै युङ् राजा क्षयं गतः । [१७पू
- १७] द्वे चास्य नायौ गर्भिण्यौ बभूवतुरिति श्रुतिः ॥१७॥ [१७
 ततः शैखरं रम्यं तपस्यभिरतो मृनिः । [१७उ
- १८] भार्गवश्चवनो नाम हिमवन्तगुपाभितः ॥१८॥ [२०पू
 तस्यपि चाप्युपागम्य गर्भं देवी न्यवेदयत् । [२०उ
- २०] स तामप्यवदद् विमो वरेष्णुं^{१३} पुत्रजन्मनि ॥१८॥ [२१पू
 ततः सा गृहमागत्य देवी पुत्रं व्यजायत । [२३उ

- २१] सह तेन गरेखौव ततः^{१५}स^{१५}सगरोऽभवत्^{१५} ॥२०॥ [२४ब
 पू२२] ऐकाकः सगरो नाम यः समुद्रमस्तानयत् ।
 N] तच्छणा पर्वणि बेगेन भासय(यं)तमिमाः मजाः ॥२१॥ [२४
 असमञ्जास्तु पुत्रोऽभूत् सगरस्येति नः भुतम् ।
 २३] जीवन्नेव निरस्तस्तु स पित्रा पापकर्मकृत्^{१५} ॥२२॥ [२६
 अंशुमान्नाम पुत्रोऽभूद् वीर्यवानसमंजसः ।
 २४] दिलीपोंऽश्रुमतः पुत्रो दिलीपस्य भगीरथः ॥२३॥ [२७
 N] येन भागीरथी गङ्गा त्रिदिवादवतारिता । [N
 पू२५] भगीरथात्तु काकुत्स्थः काकुत्स्थेत्युच्यसे यतः ॥२४॥ [२८पू
 उ२५] काकुत्स्थस्य च पुत्रोऽभूद् रघुर्येनासि राघवः । [२८ब
 पू२६] रघोस्तु पुत्रस्तेजस्वी सौदासः पुरुषादकः ॥२५॥ [२६पू
 योऽरिभिः सह सङ्ग्रामे बलवन्निर्महाबलः ।
 N] शुष्यमानो निहत्यारीन् सहसैन्यो^{१६} न्यबर्चत ॥२६॥ [N
 सङ्गी^{१५} तु तस्य पुत्रोऽभूत् तस्य श्रीमान् सुदर्शनः ।
 २८] सुदर्शनस्याग्निवर्णो अग्निवर्णस्य शीघ्रगः ॥२७॥ [३१
 शीघ्रगस्य मनुः पुत्रो मनोः पुत्रः प्रमुस्तकः ।
 २९] प्रमुस्तकस्य पुत्रोऽभूद् मन्वरीषो महाद्युतिः ॥२८॥ [३२
 अम्वरीषस्य पुत्रस्तु नहुषः सत्यसङ्गरः ।
 ३०] नहुषस्य तु पुत्रोऽभूद् ययातिरिति नः भुतम् ॥२९॥ [३३
 ययातेरपि धर्मात्मा पुत्रोऽजः समजायत ।
 ३१] अजस्यापि हि धर्मात्मा राजा दशरथः सुतः ॥३०॥ [३४
 पू३२] तस्य पुत्रोऽसि वै ज्येष्ठो राम इत्यभिसंश्रितः ।

१४ ब क—सगरः स ततोऽभवत् । १६ क—ससैन्योऽपि ।

१५ क—पापकर्मकृत् ।

१७ ब—सङ्गधीः ।

- [N] प्रतिशुहीष्य राज्यं स्वमवेक्ष्य जगन्नुप ॥३१॥ [३५]
- पू३३] इक्ष्वाकूणां तु सर्वेषां राजा भवति पूर्वजः ।
- [N] पूर्वजाभावरः पुत्रो राज्ये समभिषिच्यते ॥३२॥ [३६]
- स राघवेभ्यं बत बंशमात्मनः
सनातनं नाथ बिहातुमर्हसि ।
- प्रभूतरत्नामनुशाधि मेदिनीं
- ३४] सशुद्धराज्यां पितृवन्महायणाः ॥३३॥ [३७]
- इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं
नाम सर्गः ॥ १२३ ॥



वं-१२०-१२१]=[चतुर्विंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-१११

वसिष्ठस्तु तदा राममुत्तरा राजपुरोहितः ।

१] अत्रवीद्वर्षसंयुक्तं पुनरेवापरं वचः ॥१॥ [१

पुरुषस्येह जातस्य भवन्ति सुरवस्त्रयः ।

२] आचार्यश्चैव काकुत्स्थ पिता माता च ते त्रयः ॥२॥ [२

पिता जनं जनयति माता संवर्षयत्यपि ।

३] प्रज्ञा ददाति चाचार्यस्तस्मात्स गुरुश्च्यते ॥३॥ [३

स तेऽहं पितुराचार्यस्तव चैव महाद्युते ।

४] मम त्वं वचनं राम नातिक्रमितुमर्हसि ॥४॥ [४

वृद्धाया धर्मशीलाया मातुरर्हसि पूजितुम् ।

६] अस्यास्तु वचनं कुर्वन् सतां पन्थानमाव्रज ॥५॥ [६

भरतस्य वचः कुर्वन् याचतो रघुनन्दन ।

७] नात्मानमभिवर्षेथाः सत्वधर्मपरायणः ॥६॥ [७

एवं मधुरमुक्तस्तु गुरुणा राघवः स्वयम् ।

८] प्रत्युवाच तमासीनं वसिष्ठं पुरुषर्षभः ॥७॥ [८

माता पितृभ्यां यां वृत्तिं सम्यक् कुर्वन्ति मानवाः ।

९] न सुप्रतिकरं ताभ्यां पित्रा मात्रा च यत्कृतम् ॥८॥ [९

तथाऽशनप्रदानेन शयनाच्छादनादिना ।

१०] नित्यं च श्रियवादेन तथा संवर्धनेन च ॥९॥ [१०

राजा गुरुर्दशरथस्तथा जनयिता मम ।

११] संभुतं यन्मया तस्य न तन्मिध्या भविष्यति ॥१०॥ [११

एवमुक्ते तु रामेण भरतस्तदनन्तरम् ।

१ क-पुनरेव० ।

३ क-राघव ।

२ क-याचन्त्वा ।

४ क-एवमुक्ते ।

कै-याचन्त्वा ।

- १२] उवाच चक्षितोरस्कः सूतं परमदुर्मनाः ॥११॥ [१२
इह मे स्थण्डिले शीघ्रं कुशानास्तर सारथे ।
- १३] अहं प्रत्युपवेक्ष्यामि यावदार्यः प्रसीदति ॥१२॥[○] [१३
निराहारो निरालंबो धनहीनो यथा द्विजः ।
- १४] पुनः शयिष्ये शय्यायां वनं यावन्न यास्यति ॥१३॥[○] [१४
स तु राममवेक्षन्तं सुमन्त्रः प्रेक्ष्य दुर्मनाः) ।
- १५] कुशांस्तीरेभ्युपस्थाप्य भूमावेवास्तरत् स्वयम् ॥१४॥[○] [१५
तमुवाच महातेजा रामो राजीवलोचनः ।
- १६] किं मां भरत कुर्वाणमिह प्रत्युपवेक्ष्यसि[○] ॥१५॥ [१६
ब्राह्मणो छेकपार्वेन स्वयमास्तीर्य संविशेत् ।
- १७] न तु मूर्धाभिषिक्तानां विधिः प्रत्युपवेशने[○] ॥१६॥ [१७
उचिष्ठ राजशार्दूल हित्वैतद्धारुणं व्रतम् ।
- १८] पुरिचर्यामितः क्षिप्रमयोर्ध्यां गच्छ राघव ॥१७॥ [१८
आसीनस्त्वेव भरतः पौरजानपदं जनम् ।
- २०] उवाच सर्वान् संप्रेक्ष्य किमार्यं नानुयाचय ॥१८॥ [१९
पूर१] ते तमूचुर्महात्मानं पौरजानपदा जनाः ।
- पूर२] अभिजानीमं काकुत्स्थं सम्यक् क्षिप्रति राघव ॥१९॥ [२०
- पूर३] पितुर्यथा महाभागो वचने तिष्ठति ध्रुवम् ।
- पूर४] अतो न शक्रुमो ह्येनं विवर्तयितुमोजसा ॥२०॥ [२१
तेषां वचनमाज्ञाय रामो वचनमाब्रवीत् ।
- N] एतन्निबोध वचनं सर्वेषां धर्मवज्जुषात् ॥२१॥ [२२

५ व -- इहस्थे ।

६ व -- प्रत्युपवेक्षणे ।

○ व -- वाचि ।

७ व -- मूर्धाभिषिक्तानाम् ।

= व -- परिचाराभितः ।

९ व -- अभिजानीहि ।

उ०] इतच्छैबोमयं भुत्वा सम्यक् संपश्य राघव ।

N] उचिष्ठ त्वं महाबाहो संस्पृशस्व तयोदकम् ॥२२॥ [२३

[संगः १२१]

उ११] अथोत्थाय जलं स्पृष्ट्वा भरतो वाक्यमब्रवीत् ।

पू१२] मृष्टवन्तु मे परिषदो मन्त्रिणः श्रेण्यस्तथा ॥२३॥ [२४

न याचे पैतृकं राज्यं नानुशोचामि मातरम् ।

१४] आर्यं परमधर्मज्ञं नानुजानामि राघवम् ॥२४॥ [२५

यदि त्ववश्यं गन्तव्यं कर्तव्यं वचनं पितुः ।

१५] अहमेव निवत्स्यामि चतुर्दश समा वने ॥२५॥ [२६

धर्मात्मनः स तेनाथ भ्रातुर्वाक्येन विस्मितः ।

१६] उवाच रामः संप्रेक्ष्य पौरजानपदं जनम् ॥२६॥ [२७

विज्ञान]माहृतं^१ क्रीतं यत् पित्रा जीवता^२ मम ।

१७] न तत् कोपयितुं शक्यं मया वा भरतेन वा ॥२७॥ [२८

उपधिना मया कार्यो वनवासो जगुप्सितः ।

१८] अमुयोक्तं हि कैकेय्या पित्रा मे मुकृतं कृतम् ॥२८॥ [२९

जानामि भरतं क्षान्तं गुहसत्कारकारकम्^३ ।

१९] सर्वमेवात्र कल्याणं सत्यसन्धे महात्मनि ॥२८॥ [३०

अनेन धर्मशीलेन वनात् प्रत्यागतः पुनः ।

२०] भ्रात्रा सह भविष्यामि पृथिव्यामहमीश्वरः ॥३०॥ [३१

कृतं हि मातुः कैकेय्या वचनं तन्मया प्रियम् ।

२१] अतृणान्मोक्षयानेन पितरं तं महामतिम् ॥३१॥ [३२

N] आसीत् पित्रानिशुक्तं यत् तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥३२॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामयाचनं

नाम सर्गः ॥ १२४ ॥

१० क—विज्ञानमाहृतम् ।

१२ क—गुहसंकर० ।

११ क—जीवितं ।

[वं १: २]=[पञ्चदशत्यधिक-सप्ततमः सर्गः]=[दा-१]१२]

- N] 'अथ' सं देशवाग्म्य गन्वर्षसहिता द्विजाः । [N
 ७] भ्रातरौ तौ महावीरौ काकुत्स्थौ प्रशशंसिरे ॥१॥ [२४
 धन्यः स बस्य पुत्रौ वा धर्मज्ञौ सत्यविक्रमौ ।
 ३] भुत्वा वा तात संभाषमुभाभ्या स्पृहयामहं ॥२॥ [३
 ततो देवगणा सर्वे दशमीववधौषिणः ।
 ४] भरतं राजशार्दूलमित्यूचुः सङ्गता मिथः ॥३॥ [४
 भो भो भरत सिद्धार्थ निवर्त्तस्व स्वतो लघु ।
 N] देवकार्यमशेषेण कर्तव्यं राघवेण वै ॥४॥ [५
 रामोऽथ लक्ष्मणः सीता मुखेन वनचारिणः ।
 N] अग्निभिश्च स्वनुध्याता वने बत्स्यन्ति वै त्रयः ॥५॥ [N
 ७] गजवर्षयश्च धर्मज्ञाः स्वं स्वं स्थानं ततो गताः ॥६॥ [७३
 हादितास्तेन वाक्येन शुभेन शुभदर्शनाः ।
 ८] राघः संहृष्टबदनस्तानृषीन्ध्यादयत् ॥७॥ [८
 स्रस्तगात्रस्तु भरतो वाचा संसज्जमानया ।
 ९] कृताञ्जलिरिदं वाक्यं राघवं पुनरब्रवीत् ॥८॥ [९
 राजधर्ममिमं प्रेक्ष्य कुलधर्मानुसन्ततिम् ।
 १०] कर्तुमर्हसि काकुत्स्थ मम मातुश्च वाचतीः १ ॥९॥ [१०
 रक्षितुं मुमहद्वाण्यमहमेकस्तु मोत्सहे ।
 ११] पौरजानपदांश्चापि यन्नसङ्गयितुं नृप ॥१०॥ [११
 ज्ञातयद्बैव योषाश्च विजाणि सुहृदश्च वः ।
 १२] त्वामेष मत्किञ्चिन्ते पर्जन्यमपि कार्षकाः २ ॥११॥ [१२

१ व—अथ ।

२ व, क—वाचतो ।

३ व—कार्षिकाः ।

न—कर्षकाः ।

इदं राज्यं महाराज प्रतिपद्यस्व सर्वतः ।

- १३] शक्तिमानसि काकुत्स्थ लोकस्य परिपालने ॥१२॥ [१३
पादयोरपतद्भ्रातु भ्ररतो ऽथ प्रसादयन् ।
- १४] भृशमाराधयामास राममेवं प्रियंवदः ॥१३॥ [१४
तमङ्गे भ्रातरं कृत्वा रामो वचनमब्रवीत् ।
- १५] श्यामं नलिनपत्राक्षं हंसवल्गुस्वरः स्वयम् ॥१४॥ [१५
इयं ते यादृशी बुद्धिः स्थिरा विनयसंभृता ।
- १६] भृशमुत्सहसे कृत्स्नां रक्षितुं पृथिवीमिवाम् ॥१५॥ [१६
अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च बुद्धिमद्भिश्च मन्त्रिभिः ।
- २५] सर्वकार्याणि संमन्त्र्य कारयेस्त्वं सदा ऽनघ ॥१६॥ [१७
लक्ष्मीश्चन्द्रादपक्रामेद्धिमवान्वा परिव्रजेत् ।
- २६] सागरो वा त्यजेद्द वेलां न प्रतिज्ञामहं त्यजे ॥१७॥ [१८
कामाद् वा यदि वा लोभान्मात्रा ते यदिदं कृतम् ।
- २७] न तन्मनसि कर्तव्यं वतितव्यं च मातृवत् ॥१८॥ [१९
एवं श्रुवायां रामं तु वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ।
- २८] तेजसाऽऽदित्यसङ्काशं प्रतिमानं धनुष्मताम् ॥१९॥ [२०
प्रयच्छ पादुके पुत्र भरताय महात्मने ।
- N] एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं करिष्यतः ॥२०॥ [२१
इत्युक्तः स वसिष्ठेन रामोऽप्यानाय्य पादुके ।
- N] प्रयच्छत् प्रीतिमान् भ्रात्रे भरताय महात्मने ॥२१॥ [२२
स पादुके ते भरतः प्रतापवा-

स्तदा ऽनुरूपे प्रतिशृणु धर्मवित् ।

- प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं
 A N] चकार चैवोत्तमनागमूर्धनि ॥२२॥ [२६
 अथानुपूर्व्या प्रतिपूज्य तं जनं,
 गुरुन् वसिष्ठमश्रुत्वास्तथा ज्ञुजान् ।
 म्यसर्जयद्राघववंशवर्धनः,
 स्थितः स्वधर्मे हिमवानिवाचलः ॥२३॥ [३०
 तं मातरो वाण्यपरीतकण्ठयो
 दुःखेन वामन्वयितुं न शक्नुः^५ ।
 स एव मातृरभिवाद्य सर्वा
 A N] उदक्कुटीं संप्रविवेश रामः ॥२४॥० [३१
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रतियानं
 नाम सर्गः ॥[१२५]॥



A अस्मिन् पाठेऽयं श्लोकः १२३ | ५ कै—शुक्लः ।
 छर्मे दृश्यः । | ० क—

[वं-१२४]=[षड्विंशत्याधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११३]

ततः शिरसि कृत्वा तु पादुके भरतस्तदा ।

१] आरुरोह रथं दृष्टः शत्रुघ्नेन समन्वितः ॥ १ ॥ [१

वसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिश्च दृढव्रतः ।

२] [प्र] यतः [।ः] प्रययुस्तस्य मन्त्रिणः सर्व एव ते । २ ॥ [२

नदीं मन्दाकिनीं प्राप्य प्राङ्मुखाः प्रययुस्ततः ।

३] मद्दक्षिणं च कुर्वाणश्चित्रकूटं महागिरिम् ॥३॥ [३

तस्य धातुसहस्राणि रम्याणि गिरिसानुषु ।

४] व्यतियान्तो ऽन्वपश्यन्त भरतस्यानुयायिनः ॥४॥ [४

अन्तरा चित्रकूटस्य ददर्श भरतस्ततः^३ ।

५] आश्रमं यत्र स मुनि भ्ररद्वाजः कृतालयः ॥५॥ [५

स तमाश्रममासाद्य भरद्वाजस्य बुद्धिमान् ।

६] अत्रतीर्य रथात् पादौ बबन्दे कुलानन्दनः^४ ॥६॥ [६

प्रदृष्ट्वा भरद्वाजो भरतं प्रत्युवाच ह ।

७] अपि कृत्यं कृतं तात रामेण च समागतः ॥७॥ [७

एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धीमता ।

८] प्रत्युवाच भरद्वाजं वसिष्ठो धर्मवत्सलम् ॥८॥ [८

याच्यमानोऽपि गुरुभि र्मया च दृढनिश्चयः ।

९] राघवः परमप्रीतस्तत्रेदं वाक्यमब्रवीत् ॥९॥ [९

पितुः प्रतिज्ञां धर्मेण पात्रयिष्याम्यतन्द्रितः ।

१०] चतुर्दश हि वर्षाणि प्रतिज्ञा या कृता पुरा^५ ॥१०॥ [१०

१ व, ल, म - अग्रतः ।

२ व - मन्दाकिनीं नदीं ।

३ व, ल - भरतस्तदा ।

४ ल - कुलवर्षणः ।

५ व, ल, म - पुस्तकेषु चोत्थमस्ति-

पितुः प्रतिज्ञा धर्मेण

प्रतिज्ञा वा कृता पुरा ।

सा पात्रनीवा धर्मज्ञ

पात्रनीवा ममाद्य वै ॥

- एवमुक्ते महातेजा वसिष्ठः प्रत्युवाच तम् ।
 ११] वाक्यज्ञं वाक्यकुशलो राघवं वचनं महत् ॥११॥ [११
 एते प्रयच्छ संहृष्टः पादुके स्वर्णभूषिते ।
 १२] अयोध्याया नरव्याघ्र योगक्षेमाय राघव ॥१२॥ [१२
 एवमुक्तो वसिष्ठेन राघवः प्राङ्मुखः स्थितः ।
 १३] पादुके स्वर्णविकृते मम राज्याय वै ददौ ॥१३॥ [१३
 निवृत्तोऽहमनुज्ञातो रामेण विधृतात्मना ।
 १४] अयोध्यामेव गच्छामि गृहीत्वा पादुके शुभे ॥१४॥ [१४
 एतच्छ्रुत्वा शुभं वाक्यं भरतस्य महात्मनः ॥
 १५] भरद्वाजस्तु भरतं मुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥१५॥ [१५
 नाश्चर्यमेतद् राजेन्द्र शीलवृत्तवर्ता वर ।
 १६] यच्छुभं त्वयि तिष्ठेत राजपुत्र महाबल ॥१६॥ [१६
 न मृतः स महाभागः पिता दशरथस्तव ।
 १७] यस्य त्वमीदृशः पुत्रो धर्मात्मा गुरुवर्त्तकः ॥१७॥ [१७
 तमृषिं भरतः श्रीमानुक्तवाक्यं कृताञ्जलिः ।
 १८] आमन्त्रयितुमारभे चरणानुपगृह्य ह ॥१८॥
 ततः प्रदक्षिणीकृत्य भरद्वाजं महामुनिम् ।
 १९] भरतः प्रययौ श्रीमानयोध्यां सह मन्त्रिभिः ॥१९॥ [१९
 नागैश्च शकटैश्चैव हयैर्यानिश्च सा चमूः ।
 २०] पुनर्निवृत्ता विस्तीर्ण्य भरतस्यानुयायिनी ॥२०॥ [२०
 ततस्त्रिपथगां दिव्यां पुण्यां फेनोर्मिमालिनीम्^१ ।

- इदं राज्यं महाराज प्रतिपद्यस्व सर्वतः ।
- १३] शक्तिमानसि काकुत्स्थ लोकास्य परिफलने ॥१२॥ [१३
पादयोरपतद्भ्रातु भ्ररतो ऽय प्रसादयन् ।
- १४] भृशमाराधयामास राममेवं प्रियंवदः ॥१३॥ [१४
तमङ्गे भ्रातरं कृत्वा रामो वचनमब्रवीत् ।
- १५] श्यामं नलिनपत्राक्षं हंसवल्गुस्वरः स्वयम् ॥१४॥ [१५
इयं ते यादृशी बुद्धिः स्थिरा विनयसंभृता ।
- १६] भृशमुत्सहसे कृत्स्नां रक्षितुं पृथिवीमिषाम् ॥१५॥ [१६
अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च बुद्धिमद्भिश्च मन्त्रिभिः ।
- २५] सर्वकार्याणि संमन्त्र्य करयेस्त्वं सदा ऽनघ ॥१६॥ [१७
लक्ष्मीश्चन्द्रादपक्रामेद्धिमवान्वा परिव्रजेत् ।
- २६] सागरो वा त्यजेद्द बेलां न प्रतिज्ञामहं त्यजे ॥१७॥ [१८
कामाद् वा यदि वा लोभान्मात्रा ते यदिदं कृतम् ।
- २७] न तन्मनसि कर्तव्यं वतितव्यं च मातृवत् ॥१८॥ [१९
एवं भ्रुवाणां रामं तु वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ।
- २८] तेजसाऽऽदित्यसङ्कुशं प्रतिमानं धनुष्मताम् ॥१९॥ [२०
प्रयच्छ पादुके पुत्र भरताय महात्मने ।
- N] एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं करिष्यतः ॥२०॥ [२१
इत्युक्तः स वसिष्ठेन रामोऽप्यानाय्य पादुके ।
- N] प्रयच्छत् प्रीतिमान् भ्रात्रे भरताय महात्मने ॥२१॥ [२२
स पादुके ते भरतः प्रतापवा-

स्तदा ऽनुरूपे प्रतिगृह्य धर्मवित् ।

- प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं
 A N] चकार चैवोचमनागमूर्धनि ॥२२॥ [२६
 अथानुपूर्व्या प्रतिपूज्य तं जनं,
 गुरुन् वसिष्ठप्रदुर्वास्तथा ऽनुजान् ।
 व्यसर्जयद्राघववंशवर्धनः,
 स्थितः स्वधर्मे हिमवानिवाचलः ॥२३॥ [३०
 तं मातरो वाष्पपरीतकण्ठयो
 दुःखेन वामन्प्रयितुं न शकुः^५ ।
 स एव मातृरभिवाद्य सर्वा
 A N] उदक्कुटीं संप्रविवेश रामः ॥२४॥० [३१
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रतियानं
 नाम सर्गः । [१२६]॥



A अस्मिन् पाठेऽयं श्लोकः १२३ | ५ कै—शकः ।
 सर्गे दृश्यः । | ० क—

[वं-१२४]=[षड्विंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११३]

ततः शिरसि कृत्वा तु पादुके भरतस्तदा ।

१] आरुरोह रथं हृष्टः शत्रुघ्नेन समन्वितः ॥ १ ॥ [१

वसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिश्च दृढव्रतः ।

२] [प्र] यतः [।ः]¹ प्रययुस्तस्य मन्त्रिणः सर्व एव ते । २॥ [२

नदीं² मन्दाकिनीं³ प्राप्य प्राङ्मुखाः प्रययुस्ततः ।

३] मद्क्षिणं च कुर्वाणश्चिन्नकूटं महागिरिम् ॥३॥ [३

तस्य धातुसहस्राणि रम्याणि गिरिसानुषु ।

४] व्यतियान्तो ऽन्वपश्यन्त भरतस्यानुयायिनः ॥४॥ [४

अन्तरा चिन्नकूटस्य ददर्श भरतस्ततः³ ।

५] आश्रमं यत्र स मुनि भ्ररद्वाज. कृतालयः ॥५॥ [५

स तमाश्रममासाद्य भरद्वाजस्य बुद्धिमान् ।

६] अश्वतीर्य रथात् पादौ बबन्दे कुलनन्दनः⁴ ॥६॥ [६

महृष्टस्तु भरद्वाजो भरतं प्रत्युवाच ह ।

७] अपि कृत्यं कृतं तात रामेण च समागतः ॥७॥ [७

एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धीमता ।

८] प्रत्युवाच भरद्वाजं धर्मिष्ठो धर्मवत्सलम् ॥८॥ [८

याच्यमानोऽपि शुभभि र्मया च दृढनिश्चयः ।

९] राघवः परमप्रीतस्तत्रेदं वाक्यमब्रवीत् ॥९॥ [९

पितुः प्रतिज्ञां धर्मेण पालयिष्याम्यतन्निवृतः ।

१०] चतुर्दश हि वर्षाणि प्रतिज्ञा या कृता पुरा⁵ ॥१०॥ [१०

१ व, ल, म - अग्रतः ।

२ व - मन्दाकिनीं नदीं ।

३ व, ल - भरतस्तदा ।

४ ल - कुलवर्चनः ।

५ व, ल, म - पुस्तकेषु चेत्यमस्ति-

पितुः प्रतिज्ञा धर्मेण

प्रतिज्ञा वा कृता पुरा ।

सा पालनीया धर्मिणः

पालनीया ममाद्य वै ॥

एवमुक्ते महातेजा वसिष्ठः प्रत्युवाच तम् ।

- ११] वाक्यज्ञं वाक्यकुशलो राघवं वचनं महत् ॥११॥ [११
एते प्रयच्छ्व संहृष्टः पादुके स्वर्णभूषिते ।
- १२] अयोध्याया नरव्याघ्र योगक्षेमाय राघव ॥१२॥ [१२
एवमुक्तो वसिष्ठेन राघवः प्राङ्मुखः स्थितः ।
- १३] पादुके स्वर्णविकृते मम राज्याय वै ददौ ॥१३॥ [१३
निवृत्तोऽहमनुज्ञातो रामेण विभृतात्मना ।
- १४] अयोध्यामेव गच्छामि गृहीत्वा पादुके शुभे^(१) ॥१४॥ [१४
एतच्छ्रुत्वा शुभं वाक्यं भरतस्य महात्मनः^(२) ।
- १५] भरद्वाजस्तु भरतं मुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥१५॥ [१५
नाश्चर्यमेतद् राजेन्द्र शीलवृत्तवर्ता वर ।
- १६] यच्छुभं त्वयि तिष्ठेत राजपुत्र महाबल ॥१६॥ [१६
न मृतः स महाभागः पिता दशरथस्तव ।
- १७] यस्य त्वमीदृशः पुत्रो धर्मात्मा गुरुवर्त्तकः ॥१७॥ [१७
तमृषिं भरतः श्रीमानुक्तवाक्यं कृताञ्जलिः ।
- १८] आमन्त्रयितुमारभे चरणानुपगृह्य ह ॥१८॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य भरद्वाजं महामुनिम् ।
- १९] भरतः प्रययौ श्रीमानयोध्यां सह मन्त्रिभिः ॥१९॥ [१९
नागैश्च शकटैश्चैव हयैर्यामैश्च सा चमूः ।
- २०] पुत्रनिवृत्त्या विस्तीर्य भरतस्यानुयायिनी ॥२०॥ [२०
ततस्त्रिपथगां दिव्यां पुण्यां फेनोर्मिमालिनीम्^३ ।

- २१] ददृशुस्ते पुनः सर्वे गङ्गां पुण्यजनाहताम् ॥२१॥ [२१
 तां नक्रमकराकीर्णामुत्तीर्य सह बन्धुभिः ।
- २२] शृङ्गवेरपुरं रम्यं प्रविवेश ससैनिकः ॥२२॥ [२२
 शृङ्गवेरपुरं गच्छन्नयोध्यां स ददर्श ह । [२३ पू
- २३] भरतो दुःखसन्तप्तस्तत्र सूतमथाब्रवीत् ॥२३॥ [२४ पू
 सारथे पश्य नगरीमयोध्यां शून्यकाननाम् । [२४ उ
- २४] निराकारां निरानन्दां दीनां प्रतिहतस्वनाम् ॥२४॥ [२५ पू
 वियुक्तां पुरुषेन्द्रेण समुतेन महात्मना ।
- २५] राज्ञा दशरथेनेह नोत्सहं प्रतिवीक्षितुम् ॥२५॥ [N
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतनिवर्त्तनं
 नाम सर्गः ॥ [१२६] ॥



[बं-१२५]=[सप्तविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा०११४]

स्निग्धगंभीरघोषेण स्यन्दनेनोपयान् प्रभुः ।

१] अयोध्यां भरतः क्षिप्रं प्रविवेश महायशः ॥१॥ [१

मार्जारोलूकचरितां मलिनाम्बरधारिणीम् ।

२] तिमिराभ्याहतां कालीममकाशां निशामिव ॥२॥ [२

राहुग्रस्तां चन्द्रपत्नीं म्रियां प्रज्वलितामिव ।

३] प्रहेणाभ्युदितामेकां रोहिणीं पीडितामिव ॥३॥ [३

४पू] अत्युष्णस्वन्यसलिलां रुद्धस्वरविहङ्गाम् । [४ पू

N] विध्वस्तकनकस्तंभां गजबाजिविवर्जिताम् ॥४॥ [६ पू

हतप्रवीरां विध्वस्तां चमूमिव महाहवे । [६ उ

N] सफेनामम्बरोद्भिर्भां सागरस्य समुत्थिताम् ।

प्रशान्तमारुतोद्धतां जलोर्मीमिव विस्वनाम् ॥५॥ [७

N] त्यक्तयज्ञोत्सवैः सर्वैः सोमपैश्च सयाजकैः ।

N] पर्वकाले तु संवृषे वेदीं गतशिखामिव ॥६॥ [८

गोष्ठमध्ये स्थितामार्त्तामाचरन्तां नवं तृणम् ।

६] गोवृषेण परित्यक्तां गोकन्यामिव सोत्सुकाम् ॥७॥ [९

प्रभाकराभैः सुस्निग्धैः प्रज्वलन्निर्महाशित्वैः ।

७] विमुक्तां मणिभिर्जात्यैर्नागमुक्ताबलीमिव ॥८॥ [१०

सहसा चलितां स्थानान्महीं पुण्यक्षयादिब ।

८] संहतद्युतिविस्तारां तारामिव नभभ्युताम् ॥९॥ [११

पुष्पनदां वसन्तान्ते मत्तभ्रमरनादिताम्^३ ।

९] घोरदावाग्निविष्णुष्टां कान्तां वनलतामिव ॥१०॥ [१२

- समूहब्राह्मणजनां वित्तित्त विपणापणाम् ।
 १०] प्रच्छन्नशशिनक्षत्रां घामिवांबुधरैर्वृताम् ॥११॥ [१३
 क्षीणपानोत्तमैर्भिन्नैः शरावैरभिसंहताम् ।
 ११] गतशौण्डामिव ध्वस्तां पानभूमिमसंस्कृताम् ॥१२॥ [१४
 रुक्ताभूमिलतां निम्नां वृक्षगुल्मसमावृताम् ।
 १२] उपयुक्तोदकां भिन्नां प्रपां निपतितामिव ॥१३॥ [१५
 शुष्कतोयां महामत्स्यां कूर्मैश्च बहुभिर्हृताम् ।
 प्रभिन्नापतिविस्तीर्णां वापीमिव इतोत्पलाम् ॥१४॥ [A
 पुरुषस्याप्रहृष्टस्य प्रतिसिद्धानुलोपनाम् । []
 १६] सन्तप्तामिव शोकेन गात्रयष्टिमभूषणाम् ॥१५॥ []
 प्रावृषीव महाभ्रौघप्रविष्टस्याविसञ्चराम् । [N
 प्रच्छन्नां नीलजीमत्तैर्भास्करस्य प्रभामिव ॥१६॥ [१७
 भरतस्तु रथस्थोऽथ श्रीमान् दशरथात्मजः ।
 १८] बाहयन्तं रथश्रेष्ठं सारथिं वाक्यमब्रवीत् ॥१७॥ [१८
 किं नु स्वल्बध गंभीरो मूर्द्धितो न निशम्यते ।
 १९] यथा पूर्वमयोध्यायायां गीतवादिन्ननिःस्वनः ॥१८॥ [१९
 वारुणीपानमत्तैश्च नरैरुत्तानगायिभिः ।
 २०] संपतद्भिरयोध्यायां नाभिभान्ति दिशो दश ॥१९॥ [N
 वारुणीमण्डगन्धाश्च माल्यगन्धाश्च मूर्द्धिताः ।
 २१] धूपेनागुरुगन्धाश्च नाद्य बान्ति समन्ततः ॥२०॥ [२०
 यानप्रवरघोषश्च स्निग्धश्च हयनिस्वनः ।
 २२] महानागनिनादश्च श्रयते न यथा पुरा ॥२१॥ [२१
 अयोध्यां तु प्रविरयैव जगाम भवनं पितुः ।
 २३] तेन हीनं नरेन्द्रेण सिंहहीनां गुहामिव ॥२२॥ [२२
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रवेशो
 नाम सर्गः ॥ [१२७] ॥

[वं-१२६, १२७] अष्टाविंशत्याधिक-सप्ततमः सर्गः । [१२६]

अयोध्यायां तु निक्षिप्य मातृः सर्वाः परन्तपः ।

१] भरतः शोकसन्तप्तो गुरुन् सर्वान्नुवाच ह ॥१॥

नन्दिग्रामं गमिष्यामि सर्वानामन्त्रयामि वः ।

२] तत्र दुःस्वमिदं सर्वे सहिष्ये रक्ष्यं विना ॥२॥ [२

पिता प्रेतश्च मे राजा वनस्थश्चैव राघवः ।

३] रामागमप्रतीक्षो ऽहं पालयिष्ये वसुन्धराम् ॥३॥ [३

एतच्छ्रुत्वा महद्वाक्यं भरतस्य महात्मनः ।

४] अद्भुवन् मन्त्रिणः सर्वे ते वसिष्ठपुरोगमाः ॥४॥ [४

सदृशं श्लाघनीयं च यदुक्तं भरत त्वया ।

५] वचनं भ्रातृवात्सल्यादनुरूपमिदं तव ॥५॥ [५

एतच्चे भ्रातृवृन्धस्य तिष्ठतो भ्रातृसौहृदे ।

६] आर्यमार्गप्रवृत्तस्य कः पुमान् न प्रशंसति ॥६॥ [६

स' मन्त्रिवचनं' श्रुत्वा यथाऽभिलषितं तदा ।

७] अब्रवीत् सारथिं वाक्यं रथो मे युज्यतामिति ॥७॥ [७

१२ अर्गः]संप्रहृष्टमना मातृशुंक्षाप्यभिवाद्य सः ।

१] भरतो रथमारोहन्क्षत्रुघ्नश्च परन्तपः ॥८॥ [८

आरुह्य तुं रथं दीप्तं भ्रातरौ सहितानुभौ ।

२] ययतुः परमप्रीतौ वृतौ मन्त्रिपुरोहितैः ॥९॥ [९

अग्रतस्तु ययुस्तस्य वसिष्ठप्रमुखा द्विजाः ।

३] सर्वे च मन्त्रिप्रमुखा मन्दिग्रामो यतोऽभवत् ॥१०॥ [१०

४८] बलं च सर्वमाहूय रथनागात्सङ्कुलम् ।

४९] प्रययु र्भरतस्याग्रे श्रेष्ठाश्च पुर वासिनः ॥११॥ [११

- २१] ददृशुस्ते पुनः सर्वे गङ्गां पुण्यजनावृताम् ॥२१॥ [२१
 तां नक्रमकराकीर्णामुत्तीर्य सह बन्धुभिः ।
- २२] शृङ्गवेरपुरं रम्यं प्रविवेश ससैनिकः ॥२२॥ [२२
 शृङ्गवेरपुरं गच्छन्नयोध्यां स ददर्श ह । [२३ पू
- २३] भरतो दुःखसन्तप्तस्तत्र सूतमथाब्रवीत् ॥२३॥ [२४ पू
 सारथे पश्य नगरीमयोध्यां शून्यकाननाम् । [२४ उ
- २४] निराकारां निरानन्दां दीनां प्रतिहतस्वनाम् ॥२४॥ [२५ पू
 वियुक्तां पुरुषेन्द्रेण समृतेन महात्मना ।
- २५] रामा दशरथेनेह नोत्सहं प्रतिवीक्षितुम् ॥२५॥ [N
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतनिवर्त्तनं
 नाम सर्गः ॥ [१२६] ॥



[बं-१२५]=[सप्तविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा०११४]

- स्निग्धगंभीरघोषेण स्यन्दनेनोपयान् प्रभुः ।
 १] अयोध्यां भरतः क्षिप्रं प्रविवेश महायशः ॥१॥ [१
 मार्जारोलूकचरितां मलिनाम्बरधारिणीम् ।
 २] तिमिराभ्याहतां कालीमप्रकाशां निशामिव ॥२॥ [२
 राहुप्रस्तां चन्द्रपत्नीं म्रियां प्रज्वलितामिव ।
 ३] ग्रहेणाभ्युदितामेकां रोहिणीं पीडितामिव ॥३॥ [३
 ४पू] अत्युष्णस्वन्यसलिलां रुक्मस्वरविहङ्गमाम् । [४पू
 N] विध्वस्तकनकस्तंभां गजवाजिविवर्जिताम् ॥४॥ [६पू
 हतप्रवीरां विध्वस्तां चमूमिव महाहवे । [६उ
 N] सफेनामम्बरोद्भिर्भा' सागरस्य समुत्थिताम् ।
 प्रशान्तमारुतोद्धतां जलोर्धामिव विस्वनाम् ॥५॥ [७
 N] त्यक्तयज्ञोत्सवैः सर्वैः सोमपैश्च सयाजकैः ।
 N] पर्वकाले तु संवृषे वेदीं गतशिस्वामिव ॥६॥ [८
 गोष्ठमध्ये स्थितामार्त्तमाचरन्तीं नवं तृणम् ।
 ६] गोवृषेण परित्यक्तां गोकन्यामिव सोत्सुकाम् ॥७॥ [९
 प्रभाकरामैः घृन्निग्धैः प्रञ्चलन्नि र्महाशित्वैः ।
 ७] विमुक्तां मणिभिर्जात्यै नर्गमुक्तावलीमिव ॥८॥ [१०
 सहसा चलितां स्थानान्मर्द्दां पुण्यक्षयादिषु ।
 ८] संहतद्युतिविस्तारां तारामिव नभश्च्युताम् ॥९॥ [११
 पुष्पनर्दां वसन्तान्ते मत्तन्नमरनादिताम् ।
 ९] घोरदावाप्रविप्लुष्टां कान्तां वनलतामिव ॥१०॥ [१२

- संमूढब्राह्मणजनां वित्तिस्र विपणापणाम् ।
 १०] प्रच्छन्नशशिनक्षत्रां घामिवांबुधरैर्वृताम् ॥११॥ [१३
 क्षीणानोत्तमैर्भिन्नैः शरावैरभिसंहताम् ।
 ११] गतशौण्डामिव ध्वस्तां पानभूमिमसंस्कृताम् ॥१२॥ [१४
 रुक्मभूमिलतां निम्नां वृक्षगुल्मसमावृताम् ।
 १२] उपयुक्तोदकां भिन्नां प्रपां निपतितामिव ॥१३॥ [१५
 शुष्कतोयां महामत्स्यां कूर्मैश्च बहुभिर्हृताम् ।
 प्रभिन्नापतिविस्तीर्णां वापीमिव हतोत्पलाम् ॥१४॥ [A
 पुरुषस्याप्रहृष्टस्य प्रतिसिद्धानुलेपनाम् । []
 १६] सन्तप्तामिव शोकेन गात्रयष्टिमभूषणाम् ॥१५॥ []
 प्रावृषीव महाभ्रौघप्रविष्टस्याविसञ्चराम् । [N
 प्रच्छन्नां नीलजीमूतैर्भास्करस्य प्रभामिव ॥१६॥ [१७
 भरतस्तु रथस्थोऽथ श्रीमान् दशरथात्मजः ।
 १८] बाहयन्तं रथश्रेष्ठं सारथिं वाक्यमब्रवीत् ॥१७॥ [१८
 किं नु स्वप्नवथ गंभीरो मूर्च्छितो न निशम्यते ।
 १९] यथा पूर्वमयोध्यायायां गीतवादिभ्रानिःस्वनः ॥१८॥ [१९
 वारुणीपानमत्तैश्च नरैरुत्तानगायिभिः ।
 २०] संपतन्निरयोध्यायां नाभिभान्ति दिशो दश ॥१९॥ [N
 वारुणीमण्डगन्धाश्च मान्यगन्धाश्च मूर्च्छिताः ।
 २१] धूपेनागुरुगन्धाश्च नाद्य वान्ति समन्ततः ॥२०॥ [२०
 यानप्रवरघोषश्च क्लिग्धश्च ह्यनिस्वनः ।
 २२] महानागनिनादश्च श्रयते न यथा पुरा ॥२१॥ [२१
 अयोध्यां तु प्रविरयैव जगाम भवनं पितुः ।
 २३] तेन हीनं नरेन्द्रेण सिंहरीनां गुहामिव ॥२२॥ [२२
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रवेशो
 नाम सर्गः ॥ [१२७] ॥

[वं-१२६, १२७]अष्टाविंशत्याधिक-सप्ततमःसर्गः]=[दा११५]

अयोध्यायां तु निक्षिप्य मातृः सर्वाः परन्तपः ।

१] भरतः शोकसन्तप्तो गुरुन् सर्वाब्रुवाच ह ॥१॥

नन्दिग्रामं गमिष्यामि सर्वानामन्त्रयामि वः ।

२] तत्र दुःखमिदं सर्वं सहिष्ये राघवं विना ॥२॥ [२

पिता भेतश्च मे राजा वनस्थश्चैव राघवः ।

३] रामागमप्रतीक्षो ऽहं पालयिष्ये वसुन्धराम् ॥३॥ [३

एतच्छ्रुत्वा महद्वाक्यं भरतस्य महात्मनः ।

४] अब्रुवन् मन्त्रिणः सर्वे ते वसिष्ठपुरोगमाः ॥४॥ [४

सदृशं श्लाघनीयं च यदुक्तं भरत त्वया ।

५] वचनं भ्रातृवात्सल्यादनुरूपमिदं तव ॥५॥ [५

एतत्ते भ्रातृबन्धस्य तिष्ठतो भ्रातृसौहृदे ।

६] आर्यमार्गप्रवृत्तस्य कः पुमान् न प्रशंसति ॥६॥ [६

स' मन्त्रिवचनं' श्रुत्वा यथाऽभिलषितं तदा ।

७] अब्रवीत् सारथिं वाक्यं रथो मे युज्यतामिति ॥७॥ [७

१२७सर्गः]संप्रहृष्टमना मातृर्गुरुंश्चाप्यभिवाच सः ।

१] भरतो रथमारोहन्ब्रुवन्नश्च परन्तपः ॥८॥ [८

आरूढं तु रथं दीप्तं भ्रातरौ सहिताबुधौ ।

२] ययतुः परमप्रीतौ वृतौ मन्त्रिपुरोहितैः ॥९॥ [९

अग्रतस्तु ययुस्तस्य वसिष्ठममुस्ता द्विजाः ।

३] सर्वे च मन्त्रिममुस्ता नन्दिग्रामो यतोऽभवत् ॥१०॥ [१०

४] बलं च सर्वमाहूय रथनागान्सकुलम् ।

४] प्रययु भरतस्याग्रे श्रेष्ठाश्च पुर वासिनः ॥११॥ [११

- रथस्थः स तु धर्मात्मा भरतो गुरुवत्सलः ।/
- ५] पादुके शिरसि न्यस्य नन्दिग्राममुपागमत्^२ ॥१२॥ [१२
ततस्तु भरतः क्षिप्रं नन्दिग्रामं प्रविश्य ह ।
- ६] अत्रतीर्य रथाक्षूर्णं गुरुनिदग्धवाच ह ॥१३॥ [१३
एतद्राज्यं मम भ्रात्रा दत्तं मे न्यासवत् स्वयम् ।
- ७] योगक्षेमकरे चेमे पादुके स्वर्णशुषिते ॥१४॥ [१४
- १३] इदानीं पालयिष्यामि राघवागमनं प्रति ॥१५॥
- N] क्षिप्रमद्यैव संयोज्य राघवस्य च पादुके ।
चरणौ पद्मसदृशौ गुरोर्द्रक्ष्याम्यहं यदा ॥१६॥ [१८
N] निक्षिप्याहं तदा भारं राघवेण समागत ।
N] निर्यात्य गुरुवे राज्यं वतिष्ये रामशासने ॥१७॥ [१६
राघवस्य तु सन्यस्य पादुके रुचिरे त्विमे ।
- ११] राज्यं चेदमयोध्यायां दत्त्वा वत्स्यामि निर्धृतः^३ ॥१८॥[२०
अभिषिक्तते तु काकुत्स्थे प्रहृष्टमुदिते जने ।
- १२] भीतिर्मम यशश्चैव भवेद्राज्याच्चतुर्गुणः ॥१९॥ [NA
एवं तु विलपन्वीरो भरतः सुमहायशः^४ ।
- १३] नन्दिग्रामे ऽकरोद्राज्यं राघवस्य गुणान् स्मरन् ॥२०॥[NA
जटावन्कलधारी च मुनिवेशधरः प्रभुः ॥२०॥
- १४] नन्दिग्रामेऽवसदीरः ससैन्यो भरतस्तदा ॥२१॥ [२१
रामागमनमाकाञ्चन् भरतो गुरुवत्सलः ।

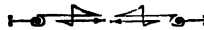
२ म—०मुपागतः ।

३ व, ल, म—निर्धृतः ।

४ व, ल—सुमहायशः ।

१ अयं श्लोकः दक्षिणात्ये पाठे
क्षेपकरूपेण विन्यस्तः ।

- १५] आतुर्वचनकारी च तस्य पादुकयोस्तदा ॥२२॥ [५५
 १६] स बालव्यजनं ह्यत्रं धारयामास वै स्वयम् ॥२२॥ [२२पू
 स पादुकेऽभिषिच्याय नन्दिग्रामे वसंस्तदा । [५६
 १७] भरतः शासनं सर्वं पादुकाभ्यां न्यवेदयत् ॥२३॥ [२२उ
 एवं कालोऽतिचक्राम भरतस्य महात्मनः ।
 १८] यावदागमनं तस्य रामस्य कृतकर्मणः ॥२४॥ [५
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतव्रतग्रहणं
 नाम सर्गः [॥२८॥]
 समाप्तव्यायमयोध्याकाण्डः ॥



॥ सूचियां ॥

(शब्दविशेषसूची- १)

अ		क	
अकुतोभयः	२०६।१६॥	कृतुः	४५८।११॥
अनास्तिकः	४६४।१६॥	कृषिः	३७।१३॥
अन्ववेक्षा	२१८।१४॥	के	
अपेक्षा	२०६।१८॥	केकुन्दम्	४४७।३०॥
अर्थशास्त्रम्	६२।१८॥	क	
अर्धमत्तशताः	१७३।१०॥	कनकशोधकाः	३६५।१५॥
	१८८।३६॥	कपिलावधः	३३२।२०॥
अभ्यमेघः	४३४।४॥	कर्मात्मिका	३३६।१॥
अस्त्रोपजीविनः	३६५।१२॥	काञ्चकाराः	३६६।२६॥
आ		काण्डकाराः	३६५।२०॥
आगमाः	१३६।३६॥	कारपत्रिकाः	३६५।१६॥
आत्मा	२७१।३९॥	कार्पासिकाः	३६५।२१॥
मायर्वेद्याः	१३८।२०॥	कालदण्डः	३६६।३८॥
मारकूटकृतः	२५५।२७॥	कुलपांसनी	२९।२६॥
ई		कुसुमापीडा	२०८।११॥
इकुदिपिय्याकम्	४४२।८॥	कूपकाराः	३५६।३३॥
	४५०।१०,११,१३,१६॥	कोजाच्यहः	१७७।५॥
इन्द्रमचनम्	१४६।१२॥	कोजकलाः	३६६।४४॥
इष्टकाकारकाः	३६५।१८॥	क्रतुशतम्	२६५।१६॥
उ		क	
उटजम्	४३२।२४॥	काण्डकाराः	३६६।२५॥
उपाध्यायः	२२२।३४॥	काण्डसंस्थापकाः	३६६।३६॥

कनकाः	३५९।१॥		अ	
खेलम	२६२।१८॥	अवनाः		२०२।१५॥
	ग	ज्योतिर्गतिषु		२।२६॥
गणिकाः	८४।१२॥			१२।२६॥
गवाक्षः	२५८।१४॥		त	
गन्धर्वविद्या	५।२५॥	तक्ष्माणः		३६५।१६॥
	८।४॥	तन्तुवायः		३६५।१५॥
गन्धर्विकविणः	३६५।१८॥	ताम्रकाराः		३६६।२३॥
गणिकागणः	२१८।१८॥	ताम्रोपजीविनः		३६६।२६॥
गाथाः	१२६।११॥	तैत्तिरिकाः		३६५।१३॥
गान्धिकाः	३६५।१५॥	तैत्तिरीयाः		१६२।१७॥
गायकः	८।१४॥	त्रिदिक		२६५।३०॥
	४६।१४॥	त्रिलोकनाथः		१३९।३६॥
गृहस्थाः	४=०।६४॥	त्रिविष्टपम्		८८.५०॥
गोकुलम्	२०६।५॥		द	
ग्रहाः	१३८.२८॥	दन्तकाराः		३६५।२३॥
	ख	दन्तोपजीविनः		३६५.१३.।
खत्वरः	२१.८।१८॥	दात्रिणः		३५६।२४।
खुतुप्पयः	२१.८।१८॥	दाराः		२०८।८॥
खूर्णोपजीविन.	३६५।२१॥	दुर्जातम्		२५०।२०॥
खैत्रः	३१।४॥	देवः		३७।१३॥
ख्यावयेम्	२३४।९॥	देवरः		१८७.२६॥
	क	देवर्षयः		१३८।२६॥
कुम्भकाराः	३६५।१२, १३॥	देवलोकः		७४।१॥
	३६६।२५॥	देवासुराः		२१६.६॥
		द्विजाः		४५।७॥

	२०२२०॥२०३२॥	निवापः	२४७२६॥
	२०८४॥२५८१०॥	नियामयन्	२५१२३॥
द्विजातयः	२०२११४॥	नीतिशास्त्रम्	१२२८॥
	२९९११॥ ३००१२॥	नीतिशास्त्रार्थः	८२॥
द्विजसत्तमाः	३६६३३॥		
		प	
	ध	पर्णकुटी	४०३१३॥
धनाध्यक्षः	१६४३२, ३४॥		४४७३८॥
धनुर्वेदः	१२१२८॥	पर्णशाला	२४७१२१॥
	१७१९८॥	पाङ्किकाः	३६५१२१॥
	२८१२०॥	पाणिकाः	३६५१२५॥
धनुष्काराः	३६५१२१॥	पिनरः	१४११४॥
धर्मज्ञैः गुरुभिः	२५६१२१॥		३७१३॥२४७१२८॥
धर्मराजः	२८५१२५॥	पितृलोकः	४४४७॥
धर्मशास्त्रम्	१५१२५॥	पिशाचाः	१३८३३०॥
धर्मसञ्चयः	२७१३६॥		१६८२२॥
धर्मः सनातनः	१०१५॥	पुराणम्	११४१२१॥
धान्यविक्रयिणः	३६५१२८॥	पेयम्	२१५१४॥
		पौराण्यः	२६४९॥
	न	पौराणम्	१३६१२०॥
नक्षत्राणि	१३८१२८॥	पौराणमिह भागम्	२४०१२५॥
नः टनर्तकसंघाः	७६११४॥	पौष्पिकाः	३६५१२४॥
नानागिल्पविद्	८४॥	प्रकृतयः	२०११४॥
नालीकः	२२२१२३॥		२०२१२२॥
नास्तिकाः	३०११२६॥		
निर्हराः	२०९१२४॥		२०६१२५॥ २०११४
निर्वषट्कारप्रकृत्याः	२५८१२८॥	प्राकारिकाः	३६५१२७॥
निकयः	२०५१३॥	प्राचारिकाः	३६५१२६॥

प्रेतः	१६३।१५॥	भूतेभ्यः	२७७।१९॥
प्रेतकार्थम्	७७५।१५॥	भूतग्रहविधिनाः	३६६।२३॥
प्रेष्याः	२१५।१५॥	मेदका	३६५।१३॥
	क	भोज्यम्	२१५।१५॥
फलोपजीविनः	३६५।१८॥		म
	ख	मञ्जरी	२०८।११॥
बालानां चिकित्सकाः	३६६।२३॥	मणिकाराः	३६५।१२॥
बार्धनिकाः	३६६।२॥	मन्त्रकोविदा	३५६।२॥
बार्हस्पत्यो याग	१७२।११॥	मन्त्रपारगः	७।५॥
बोधकाः	३६६।२५॥	मन्त्रवित्	७७॥
ब्रह्म	२०८।५॥	महर्षयः	१३६।७।१॥
ब्रह्मचारी	७००।६३॥	मायूरिकाः	३६५।१३॥
ब्रह्मवादी	१७०।२०॥	मालाकाराः	३६५।२०॥
ब्रह्मर्षयः	१३८।२६॥	मोदककाराः	३६५।२०॥
ब्राह्मणः	२०३।२८॥	मांसोपजीविन	३६५२०॥
ब्राह्मणसंघाः	२०३।२८॥	म्लेच्छाः	३२।१।१॥
भक्तोपजीविनः	३६६।२५॥		२।५५॥
भक्त्युत्थ	८३। ३॥		य
भद्रहाज्याभमः	३३६।७,८॥	यज्ञः	१३८।३०॥
	३३६।७।१९०।११॥		३३१।१०॥
	३२९।५३॥		७७८।६॥
	७०१।८॥	यज्ञशीलाः	३००।२२॥
भर्तृकाराः	३६६२५॥	यज्ञवा	३७७।४०॥
भर्तृपरमयज्ञा	२५५।११॥	यन्त्रकर्मकृतः	३६५।१२॥
भस्वम्	२१५।१५॥	यन्त्रकः	३६५।११॥
भवित्सारमाजः	२०३।३५॥	यज्ञस्तोत्रम	२५६।२५॥ १८५।२३॥

यवसम	२८५।१०॥	ब	
	२१।२४॥	न्दिन	२६८।३॥
	२१६।१५॥	वराङ्गना	४०।२१॥
यवसेनार्थी	२१६।२२॥	वराहरूपेण	४६५।४॥
यवनाः	३२।११॥	वक्र, यमी	३९५।१७॥
युधराजः	३१।२॥	वक्रकर्मकृतः	३६५।२५॥
	२०।१९॥	वाजपेयिकैः	२०३।२३॥
योगक्षेमः	२०६।१८॥	वाणिजकाः	३६६।२५॥
	२०, २१॥	वानप्रस्थाः	४००।६३॥
यौवराज्यम्	२६।२॥	वारणस्थलम्*	३१०।७॥
	२६४।८॥	वारमुच्यते	७।४०॥
यौवराज्यपदम्	३१७.५२॥	वारुणी	२२५।२२॥
		वारुणीतीर्थम्*	३०३।१२॥
	र	वारुटाः	३६५।१५१
रजकः	३६५।१५॥	विनय	२१८।१२॥
रथशिक्षा	१२।२८॥	विषवैद्याः	३६६।२२॥
रक्षः	१६८।२२॥	विष्णोः पदम्*	३०३।१५॥
रक्षोघ्नी (ओषधी)	१३७।१६॥	वृक्षरोपकाः	३५६।२५॥
रात्रसूयः	४३४।४॥	वेत्रकारः	३६५।१५॥
रुद्रः	२१।२९॥		
	ल	वेदाः	५।२३॥१२।२८॥
लेखम्	२१५।१४॥		
लोककर्म	९२।२०॥		
लोकपालाः	१२२।२४॥		
	४३१।१५॥		२०३।२५॥ ३३१।३३॥

वेदपारगः	१४२।१५॥	शैलूषाः	३६६।२७॥
वेदमन्त्रानुसारिणी	१६१।६॥	शौण्डिकाः	३.५।२.०॥
वेदवित्	२०३।२४॥	शुनम्	४६७।२२॥
वेदविद्वांसः	३६६।२९॥	श्रुतिः	४।२३॥२६४।६॥
वेदविद्याः	३५६।३॥		४५०।१६॥
वेदवेदाङ्गपारगाः	११।२ ॥		४५४।७॥
वेदवेदाङ्गशास्त्राणि	३४४।४॥	श्लोकः	४६६।१७॥
	३२१।०॥		३६४।६॥
	६।०॥		
	९।१०॥	सकतुकाराः	३६६।२४॥
वेद्याः	७।४०॥	सगरापत्यानि	११५।३७॥
वेदिकाः	३।५॥	सप्तकवयः	२५०।१८॥
वेद्याः	३६५।१४॥	सप्तर्षयः	१३०.२०॥
वैश्वकर्माकराः	३५६।३॥	सभाकाराः	३।६।३॥
व्यपेक्षणम्	२०६।२१॥	सरीसृपः	२५३।६५
		सर्वविद्याविद्यारत्नः	८।५.९॥
शकाः	३२।११॥	सर्वशास्त्रागमेन च	१८।२८॥
शकलो हः	२२०.१६॥	सर्वशास्त्रवित्	१।१२०॥
शर्बरी	२१८।२३॥	सागरङ्गमा	२२०।३॥
	२१६।१३॥	साध्याः	१३८।२०॥
शापः	२८१।४०॥	सुबाहाराः	३६५।१३॥
शास्त्रम्	५।२३॥१।१२९॥	सुरलोकः	४४३।२४॥
	३३.१।१९॥	सुवर्णविद्यारत्नाः	३५६।१॥
शास्त्रोपजीवी	३६५।७॥	सुवर्णविष्णिः	३६५।११॥
शिल्पम्	५।२५॥	सुपकाराः	३६५।६. १९॥
	४३.८।५४॥	सेनानयः	१७।१९॥

सोमपाः	७७८।६॥		६
स्तावकाः	३६६।१७॥	हरितीर्थम्*	३११।१७॥
स्वपतयः	३६६।१७॥	हर्म्यम्	२१८।१७॥
स्यूलवायाः	३६५।१७॥		२५८।१॥
ज्ञापकाः	३६५।१७॥	हविः	२५७।२७॥
स्तुषा	२६२।१३॥	हस्तिशिक्षा	१२।२८॥
खर्गः	३९९।६२॥	हुताग्निहोत्रः	२३२।१२॥
खर्जकाराः	३६५।१३॥	हैरण्यकाः	३६५।१६॥
खस्तिकाराः	३६६।२७॥	होतारः	३७५। ७॥

(सूची-२)

॥ व्यक्तिविशेषनाम ॥

अ		अलर्कः	७८।६॥
अगस्त्यः	२७९।१३॥	असमञ्जाः	७६७।२५॥
	१३०।१६॥		१७८।१६, १६, २०॥
अङ्कुराः	७६५।६॥	असिताः	७६६।१५॥
अग्निवर्षाः	११०।३९॥	अंशुमान्	७६०।२३॥
अनरण्यम्	७६५।९॥	आङ्गिरः	१६५।३८॥
अन्तकः	११०।३९॥	आदित्यः	१३८।२२, २५॥
अमरेन्दुः	३०९।२७॥		२३३।११॥
अम्बरीषा	७६७।२८॥		२९९।११॥
अर्कः	२१३।२७॥		६
अर्यमा	१३८।२१॥	इस्वाकुः	२५।३।२७।१०, १५॥
अलम्बुस्ता	३६५।१७॥		७०।७०॥
	३६८।७६॥		२०७।२५।२१।११, १२,

	१५॥२१७॥		२०॥३८३॥२८॥
	२२१॥१५॥२३०॥		३८७॥३॥
	७, ८ ॥२४३॥१॥		४१॥२॥४२॥१०॥
	२३७८॥२८८॥१५१॥		३६०॥१२॥
	२९९॥७॥		३७१॥१६॥
	३०१॥३१॥३६०॥१३॥		३७६॥२८॥
	३६८॥३॥		३८३॥२८॥
	३६३॥३॥		३८७॥९॥
	४३५॥३॥		४६७॥२५॥
इन्द्रः	३२२॥१८॥		४१॥२॥
	४३॥२७॥	काश्यपः	११०॥२७॥
क		कुक्षिः	४३५॥७८॥
कचुः	२३॥३७॥	कुब्जा	४८६, ९॥
	११५॥३६॥		४९॥१२॥५१॥२०॥
काश्यपः	४३५॥५॥		५६॥१॥३०॥३६॥
	४६५॥५॥		६०॥४३॥३१॥४६, ५२॥
	३३॥२४॥		६२५॥४॥
	२६६॥२॥		६३॥ ४५॥
	१७०॥१९॥		६४८, ९, १०, १२॥
काकुत्स्थः	४१॥२॥४२॥१०॥		६५॥१६, १६, २२॥
	२०८॥३॥, १०॥२०९॥१५॥		२९७॥१७॥
	२१२॥१८॥२३७॥९॥		३२३॥२, ६, ८॥
	२२९॥२९॥२३१॥१२॥		३२७॥१३, १४, १७, २६॥
	२३७॥६॥२३९॥१९॥		३२८॥२४, ३०॥
	२१॥३६०॥१२॥३६७॥	कुबेरः	२७॥६७॥
	२५॥३७१॥१६॥३७६॥		३८५॥५॥ ३६८॥४६॥

कृतास्तः	४२९।१०॥		३७५।१०॥३७५॥
	११८।१०॥११९।१२॥		११८॥३७५०॥
	३२६५॥		३७६।१२, १५॥
	३२९।२, ३, ५, ६॥		३७६।१०॥३७५०, १७५॥
	३२६।६॥		३७६।१०, २, १०॥
केकयराजः	३२९।११॥		४२५।३, १६॥
	३२०।११॥		४५५।३२५॥
केतुः	३२५।७०॥	गुणकः	४१३।२२५॥
कौशिकः	१६२।१६॥	गोपः	३६८।४८॥
	ख	गोतमः	२९५।२५॥
कङ्गी	४६७।२७॥		घ
	ग		घृताची
गया	४६१।११॥		३९५।१७५॥
गार्ग्यः	१६२।१६॥		घ
गुहः	२१३।२७।२१४।९॥	चन्द्रमा	३७७।१२॥
	२१५।११, १२, १७, १९॥		३०७।८५॥
	२१६।२४, २५, २६॥	चित्ररथः	१६२।१६॥
	२१७।१, ६॥ २१६।२७॥	च्यवनः	४६६।१८५॥
	२२०।४, ७।२३०।१, २,		ज
	५, ६, ७।२३१।१२॥	जनकः	२९६।१९५॥
	२३२।२२, ३०॥	जाबालिः	१७०।१६॥२६६।२॥
	२३३।३९॥२४५।१॥		३३९।२०॥
	२५७।७५।३७०।१,		४६६।११॥
	५, ६॥३७१।१२,		४७५।२५॥
	१४, १७॥३७२।२४,		४६५।१५॥
	३१॥३७३।१, ७, ८॥	जामदग्न्यः	११५।३३५॥

शैमिकिः	३४३।११॥	प	
	त	पद्मा	९१।८॥
तालवज्रंघः	४६६।१६॥	पर्वतः	३९८।४८॥
तिमिष्वजाः	५७।१२॥	पुण्डरीकः	३६८।४८॥
तिलोत्तमा	३६५।१७॥	पुरन्वरः	४११।२॥ २६६॥ ३२३।२२॥
तुम्बुल	३६५।४८॥		१२६।१३॥
मिजटा	१६५।३६, ४१, ४५॥	पूषा	१३६।२१॥
	१२५।४६॥	पृथुः	४६६।११॥
मिद्याकु	४४६।११॥	पौलोनी	१६९।१०॥
त्वष्टा	३९५।१३॥	प्रजापतिः	१३७।२०॥
	द	प्रचेतः	४६५।६॥
दिवाकरः	२००।२२॥ ३४५।१॥	प्रसुस्तकः	४६७।२८॥
देवराजः	२६२।१८॥	प्रसेनजित्	४६६।१४॥
शुमस्तेनः	१५५।६॥		व
	घ	वलिः	७६।८॥
धन्वन्तरिः	२२२।२९॥	वाणः	१२५।४१॥ ४६५।६॥
धर्मपालः	३५२।१५॥ २३॥	बृहस्पतिः	१७२२॥ ४३।२२॥ ४३२।
धाता	१३८।२॥		३८॥ १३६।२८॥ ४५२।३१॥
धुन्धुमारः	४६६।१२॥	महा	२५५।२०॥ ४६५।६॥ ४३२।२७॥
ध्रुवसन्धिः	४६६।१४॥		३९५।१८॥ १३९।३५॥ १३७।२०॥
	ग		म
महुषः	४२।१०॥	मरुताजः	२३९।२०॥ २४०।२८॥ २४१।
	४६७।२९॥		३५॥ २४३।२, ९॥ ३९९।२३,
मारवाणः	४५।१, ३॥		२४॥ ३९०।६॥ ३९१।१२, १९
मारुदः	१३६।२८॥ ३३६।४८॥		३९२। २८, ३१, ३२॥ ३६८।
			४४, ४९, ५०॥ ४०१।२१॥

४०२१, २॥४०३१११॥४०४	मौल्यः	२९, २१॥	
१९, २०॥ ४०५३०५४०७	य		
३॥ ४०६१५, ६, ७, ८॥ ४०६	यज्ञवल्कः	२८३६१२८५१२६॥	
१५, १९॥	यमः	९२५२१॥	
भगः	१३६१२१॥	ययातिः ४२१०॥७४१३३६१२०॥	
भगीरथः	४६७१२४॥	४६७१२९॥	
भार्गवः	४६६१२८॥	युजाजित ११२॥३१३१५, ७॥३३ १२१॥	
म		युवनाम्बः ४६६१२२, १३॥	
मधुसूदनः	९११८॥	र	
मन्थरा ४९॥ १०, १४, १५॥ ५११३०,	रघुः	४६७१२५॥	
३१, ३२॥ ५२११, ७॥ ५३१२४॥	रुमाः	३३५११७॥	
५३११७॥ ५६१५, ७, ८, ९॥ ५६१३३॥	रविः	३३१२१॥	
६११५८॥	राहुः	३०७१९॥	
मनुः १२६१११॥ २१२१११॥ ४६५१५॥	रोहिणी	९४३६॥	
४६७१२८ ॥	व		
मतीचिः	४६५१५॥	वज्री	१२३१३७॥
महेन्द्रः ८८५५४, ५५॥ ६६११६॥ १३८	वज्रघरः	६२५२१॥	
२३॥ १८२१२३॥ २२८१२९॥	वरुणः	६२५२२॥ १३८१२१॥	
महेश्वरः	१३८१२७	वसिष्ठः ३१३॥ ४१११॥ ४२११५ ॥	
मातलिः	८५१२५॥ १६०१२६॥	१६०३२॥ १७०१२९॥ १९३॥	
मान्वाता	४६६१२३॥	५३६१२२१२५॥ २९७१४६, ५०॥	
मार्कण्डेयः	२६१२५॥	२६९१, २६९॥ ३०१३११३०२१	
मित्रः	१३८१२५॥	१, ४, १०॥ ३३८६०॥ ३१९१	
मिथकेयी	३६५११७॥ ३६८५७२॥	११॥ ३३६१२४॥ ३३६१२, ५॥	
मुञ्जकेयी	३९५११७॥	३३६१२०॥ ३३०१२६॥ ३३२१	
मेवका	३६५११७॥	८॥ ३३७१८, ९॥ ३३५१ १६	

२४६।१४, १८॥२४८॥ ३३॥	शतकव्या	३०३।१४॥	
४०३।१२॥४०७।१॥४१४॥	शरद्वृष्टा	३०३।१२॥॥	
३, ३॥४१५।१०, १२, १४॥	शाल्यकर्तना	३१०।३॥	
४३०।७।४३१।१२॥४३४६।	शाल्मली	३०३।१६॥	
३०॥ ४४७।३४॥४७५।३॥	शिला	३१०।३॥	
माळिनी	२४५।१४॥	स	
य	सप्तस्पर्धा	३११।११॥	
यमुना ८३।३॥२३८।२, ६॥२४०।२२॥	सरयू १७८।२०॥ १७९।२३॥ २१०।		
२४३।३॥ २४४।१४, १५॥३१०।	१०।२१२।१३, १४, १७।२७८		
५, ६॥ ३५१।५॥ ४०६।४१॥	१७। २८२, ४५॥ २८४।१२॥		
ष	३५१।२, ३, ४॥ ४१५।१६॥		
विनता	३१४।१५॥	सरस्वती ३०३।१२॥३५१।५॥३९७।	
विपाद्या	३०३।१५॥३५१।५॥॥	३१॥	
वीजावटी	३१०।३॥	सुदर्शना	२३३।३३॥
श		स्थानवती	३११।१२॥
यतद्रुः	३१०।२॥ ३५१।५॥	द्विरण्योवा	३१०।७॥

(सूची—५)

॥ पर्वत नाम ॥

क	१८॥ २४८॥३३॥ ४०३।
कैलासः ३३।१७।४५।१५।८०।४३॥	११, १३ ॥ ४०७।९ ॥
८८।६३॥३३।१७॥	४०८।१० ॥ ४११।२९ ॥
ग	४१२।१७ ॥ ४१३।२९,
गन्धमादनः २४१।३१, ३८॥२४३।	२६॥ ४१६।२०॥ ४१७।
२५।२४५॥, १०॥२४६।	१, २५।२५।२६॥४५॥

१०, १४, १६।४३१।	मलयाः	४४।५३॥३९६।२४॥
१३।४७५।३, ५॥	मेरुः	३३।२१॥४५।२६॥३३५।६॥
म		ह
मन्दरः	२७०।३०॥३९६।२४॥	हिमवान्
		२१४।२।३७२।२७॥

(सूची—६)
॥ वन नाम ॥

	अ		द
आञ्जवनम्	२४३।७॥२७८।८॥	दण्डकारण्यम्	१०१। ३६, ३६ ॥
क			१०३।५३ ॥ ४४२॥
कदलीवनम्	३६०।३॥		२०॥४४३॥२३॥
कर्णिकारवनम्	२४५।४॥	न	
च		नीलम्	२४४।१९॥
चित्रकूटवनम्	२४५।७॥	पलाशवनम्	२७८।८॥
चन्द्ररथम्	३१०।४॥३६८।५०॥	प्रयागवनम्	३८६।२७॥
न		शाल्यवनम्	३१०।९॥
नपोवनम्	२०६।२०॥	हैमवतं वनम्	४१९।३०॥

(सूची—७)
॥ देश नाम ॥

	अ	काशिः	६४।१५॥
अङ्ग	३८।१५॥	कुल्लोत्रम्	३०३।२२॥
अमरकण्डकाः	३१०।३॥	कुल्याङ्गलाः	३०४।२१॥
उ		केकयः	६०॥३५॥४४४।५॥
उत्तरकुल	३६६।३१॥	केरला	३५६।७॥
क		कोसला	३८। १५ ॥ १३०। ७ ॥
कर्णिकारः	३५२।४॥		२३५।१३॥

त		व	
तोरणः	३१०७॥	वंगः	६८१५॥
प		स	
पञ्चालः	३०२।११॥	सामुद्राः	३५६।७॥
म		सिन्धुः	६८१५॥
मगधः	६८१५॥	सुरसावर्तयः	६८१५॥
		सौवीरः	६८१५॥

(सूची—८)

॥ शस्त्रास्त्र नाम ॥

अ		ट	
मसिः १२३ । ३७ ॥ ४२६ । ३ ॥		टङ्कः	३५६।८॥
४२८।३॥		द	
अस्तिरा	१२३।३५॥	दात्रय	३५६।२॥
अश्वकर्षाः	४३१।१८॥	ध	
इ		घण्टु १२३।३५ ॥ १५९।१९॥ १६०	
इषीकास्त्रम् ४२१।४५, ७७। ४२२।		२४, २८।१६६।६॥४२५।३१॥	
५३ ॥		४२६।३॥	
क		न	
कार्मुकः ६० । २ ॥ ४२४ । २० ॥		निर्मिशः २००।१६॥२१६।२७॥	
४३१।१९॥		प	
कुदाका	३५६।९॥	पिटकः	१५९।१९॥
कुठारः	३५६।८॥	प्रासाः	६०।२॥
ख		श	
खनित्रम्	१५९।१९॥	शरः २३।३५॥४२५।३१॥४२२।३॥	
खड्गः	१६०।५॥१५९।१९॥	शरासनम्	१२३।७०॥

(१८)

(सूची—६)

॥ वृक्ष-लता आदि नाम ॥

अ	इ	ई	उ
अगुरुक	३४६।३०॥	दीपक	४६।१८॥
अयोफः	४१६।२७, २८, ३०॥	न	
अश्वत्थाः	३९८।११॥	न्यग्रोधः	२३०।२॥ २३३।३८॥ २३४।
आमलकः	१४६।१८॥ ३६६।५३॥	१ ॥ २३८।१२ ॥ २४४।५ ॥	
आमलकव्यः	३९६।३०॥	२४४।२५, २८॥	
इ		प	
इक्षुवः	१४२।१८॥	पनसः	२४५।९॥ ३९६।३०॥
इक्षुदी २१४।६ ॥ ३७४।१४॥ ३८०।		पलाशः	२४३।४॥
२३॥ ३८१।१॥		पियाळः	१४६।१८॥
इसुः	३६६।५७॥	ब	
क		कदरः	१४६।१८॥
कपित्थाः	३९६।३०॥	वित्थः	२४५।९॥ ३९६।३०॥
कुन्दः	२८२।६५॥	म	
किर्युकः	२४५।७॥	मल्लतकः	२४५।६॥
ख		म	
खन्दनम	३४६।२६॥	मयूकः	२४३।७॥
खूतः	३६६।३०॥ ४१८।१४॥	र	
ख		रत्ताळः	३९८।१२॥
खम्बः	३६६।३०॥ ३९९।५३॥	ब	
त		वज्रकः	३६६।५२॥
ताळः	३६८।५४। ४३१।१८॥	वटः	३३३।३२॥
तिन्तुकः	१४२।१८॥ २४५।९॥		

शिक्षावः	३९९।१४३॥	समूहवैत्यम्	३०३।१३॥
इयामः	२४३।५॥२४७।१५॥	साकः	३५६।३१७।२७।२५।३१।२८॥
इयामाकः	१४६।१८॥		

(सूची—१०)

॥ उपमार्ये ॥

अथाचिदिश्ये पतितेव किञ्चरी	३६।२४॥
अनिन्दवात्मनात्मानं सुरां पीत्वेव वेदवित्	१७१।२३॥
अवेक्षमाणः सखेहं बध्नुषा प्रपिबन्निव	२०१।१४॥
आदाय तानि वैदेही सपत्ना श्रीरिवाभवत्	२३३।३७॥
इति नाग इवारण्ये सहसा बन्धनं गतः	३२५।३९॥
उपासाञ्चकिरे प्रीताः महेन्द्रमिव देवताः	३२।५६॥
कामयानमिव स्त्रियः	४३७।३३॥
कुबेरमिव नेर्द्धताः	२४।६४॥
कौञ्ची ययातीमिव सारसङ्गी	३२७।३०॥
गन्धर्वराजप्रतिमम्	३२।१३॥
गुणैर्विकल्पे रामो हीसैः सुर्य इवाङ्गुभिः	१७।२४॥
गौर्विबस्सेव विह्वला	२८५।२८॥
प्रहेत्याभ्युदितामेकां रोहिणीं पीडितामिव	४७७।३३॥
चरणौ पद्मचर्चसौ	३६२।१३॥
क्षिष्टिकाचिस्तेर्दीर्घैः क्वन्तीव समन्ततः	४१७।१०॥
तमोदृता सौरिव महमास्करा	३६।२५॥
त्रासविष्यति मां भूयः कृष्णाहिरिव बेशमनि	१६६।३३॥
दिङ्गीफनबुचोपमः	३६०।१२॥
दिव्यतोषामिवाहिन्या मन्दाकिन्या यथा दिवम्	२३३।२५॥

धन्वस्तरिखि व्रणम्	२२२।२९॥
मरुतारायणाधिब	२५४।१०॥
निशाश्वास महासर्पो बिलस्थ इव रोषितः	१२०।२॥
निशाकरपरिभ्रष्टां ताराहीनां निशामिब	२४९।१५॥
पपाल सहसा भूमौ कूलभ्रष्ट इव द्रुमः	३७८।२॥
पर्वसूदीर्णवेगस्य सागरस्येव गर्जतः	४७।२७॥
पिता पुत्रानिबौरसान्	२८।२४॥
पीतसोममिबाध्वरे	२७०।२८॥
पुरन्धरेणेव यथामरावती	१९५।१९॥
पूजयामास तां देवीमदिनि मघवानिब	१०८।१३॥
बृहस्पतिरिवेन्द्रेण सुधर्मात्	३४२।६॥
भूमिकम्पाधिब द्रुमः	३७८।४॥
मत्समानङ्गामिनम्	२२।१३॥
मरुतामिब वासवः	३२।१२॥
मबद्गिरिब वासवः	४५३।१९॥
यतीब संप्रमत्तः	२८२।४८॥
यदृच्छया देवलोकारसंप्राप्तमिब वासवम्	१८७।१८॥
रराजामलनाराक्यं शारदं गगनं यथा	३२७।१६॥
लक्ष्मीं शीतांशुमामिब	३५९।५॥
लतामिब विनिष्कृतां पतितां देवतामिब	६७।५॥
कुनपक्षाधिब द्विजौ	२८३।३॥
विजलां पक्षिनीमिब	२४९।५॥
विमलमहनक्षत्रा शारदी घौरिवेन्दुना	३३।२२॥
बिलपद् प्राविशद्राजा गृहं सूर्य इवाभ्युदय	१६८।२३॥
त्रिवेश पार्थिवः, शशीब तारागणमण्डितं नमः	४४।२६॥
ध्यपेनबन्ध्रेब च निष्प्रमा निरा	२९८।५४॥

व्याघ्रामिपन्नो बलवानिवोक्षा	७३५४॥
शचीपतेः केतुरिवोत्सवक्षये	३२५१४०॥
सहसा खलितां स्थानान्महीं पुण्यक्षयादिषु	४७८१॥
सिंहेनेव गिरेर्गुहा	२६२११९॥
सिंहो यथा पर्वतकन्दरस्यः	३२११२६॥
खड्गिर्भार्त्ययं शैलः खड्गमद इव त्रिपः	४१२१२२॥
हन्यवाहमिषाध्वरे	३५५१२५॥
हंस्तानामिव पञ्ज्यः	२०३१२२॥

दयामन्द महाविद्यालय संस्कृत-प्रःक्षमाला ।

प्रकाशित ग्रन्थ

१—अथर्ववेदीया पञ्चपटलिका	१॥)
२—ऋग्वेद पर व्याख्यान	१॥)
३—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मणम्	२॥)
४—इत्थोष्ठविधिः	१॥)
५—अथर्ववेदीया माण्डूकी शिक्षा	१)
६—अथर्ववेदीया गृह्यसर्वानुक्रमणिका	७)
७—रामायणम्, अयोध्या-काण्डम् (समग्र)	७॥)
८—वैदिक कोष प्रथम भाग	१२)
९—काठकपुस्तकम् with extracts from three com. Ed. by Dr. W, Caland.	७)

यन्त्रस्थ

- १—बाराणसीय शास्त्रा मंत्रार्णव्याय
- २—ऋग्वेदभाष्य-उदीयाचार्यकृत [सायण से प्राचीन]

SUPDT. RESEARCH DEPARTMENT,

D. A. V. College, Lahore.